# द्वन्द्व

(श्रीमती सरोजकुमारीदेवी के इसी नाम के
बँगला उपन्यास का अनुवाद)

अनुवादक

पंडित ठाकुरदत्त मिश्र

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९४०

# द्वन्द्व

(श्रीमती सरोजकुमारीदेवी के इसी नाम के
बँगला उपन्यास का अनुवाद)

अनुवादक
पंडित ठाकुरदत्त मिश्र

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग
१९४०

मूल्य २।।≈)

# द्वन्द्व

## ( १ )

शरद-ऋतु का सुन्दर प्रभात था। आकाश निर्मेघ था। बाल-सूर्य्य की सुनहरी किरणें बगीचे के घास-पौधों पर पड़ पड़ कर चमचमा रही थीं। ठंडी ठंडी हवा चल रही थी। हरसिंगार के पुष्पों की सुगन्धि से वह सुवासित थी। खिड़की के बाहर आम की डाली पर बैठी हुई एक छोटी-सी चिड़िया गा रही थी।

अपनी मेज पर बैठी हुई मिसेज राय कोई आवश्यक पत्र लिखने में व्यस्त थीं। कमरे के बाहर चपरासी मेम साहब की आज्ञा की प्रतीक्षा में चुपचाप खड़ा था। चारों ओर सन्नाटा था। बँगले के पास केवल दर्जी की एक मशीन समानरूप से खरखराती हुई वहाँ की निस्तब्धता भंग कर रही थी। मिसेज राय के मस्तक पर बिजली का पंखा निस्तब्धभाव से चलता हुआ मेज पर के कागज-पत्र बिखरा रहा था। उसने उनके अञ्चल का वस्त्र उड़ा कर हटा दिया था और बिखरे हुए बालों को आँखों तथा मुँह पर उड़ा उड़ा कर उनके साथ अठखेलियाँ खेल रहा था। "आह पंखे ने तो नाक में दम कर दिया !" यह मृदु स्वर से अपने आप से ही कह कर मिसेज राय बिखरे हुए कागजों को सँभालने लगीं।

घर के बाहर आम की डाली पर बैठी हुई चिड़िया उस समय भी गा रही थी। उसकी दृष्टि स्वच्छ तथा निर्मेघ आकाश पर लगी थी, मानों किसी सुदूर देश की पुकार उसके कानों में गूँज रही थी। उस पुकार में ही मानो वह किसी असीम में विलीन होकर उड़ जाना चाहती थी।

कुछ क्षण तक मिसेज राय खिड़की के मार्ग से टकटकी लगा कर चिड़िया की ओर ताकती रहीं। उस समय उनका हृदय शून्य था। उनका गर्व

से उज्ज्वल मुख आज न जाने किस चिन्ता से मुरझा गया था, नेत्रों की दृष्टि विषादमय थी। आज से तीन मास पहले का एक सुखमय चित्र उनके अन्तःकरण में उदित हो होकर उन्हें शोकाकुल कर रहा था।

थोड़ी देर के बाद गाना समाप्त करके चिड़िया उड़ गई। मिसेज राय ने भी एक लम्बी साँस लेकर कार्य्य की ओर अपना ध्यान आकर्षित किया।

एकाएक वहाँ की निस्तब्ध गंभीरता को भंग करती हुई कमरे के बाहर हँसी की एक मधुर ध्वनि सुनाई पड़ी। पैरों की आहट से चकित होकर मिसेज राय टेबिल पर से मस्तक उठा कर देखने लगीं। क्षण ही भर में उनकी कनिष्ठ पुत्री लीला आँधी की-सी अबाध गति से दौड़ती हुई कमरे में आकर खड़ी हो गई।

उसकी ओर दृष्टि जाते ही रोष और विरक्ति के भाव से मिसेज राय का मुँह लाल हो गया।

लीला ढाका की साड़ी पहने थी। उस पर जगह-जगह कीचड़ में सने हुए कुत्ते के पैरों के दाग थे। इतनी देर तक धूप में दौड़ते-दौड़ते उसका मुँह लाल हो गया था। घने और काले बालों की राशि वेणी से खुलकर आँख, मुँह तथा पीठ पर फैल रही थी, वह भी पसीने से तर थी। एक छोटा-सा कुत्ता उसके कन्धे पर से मुँह बढ़ाकर सुप्रसन्न दृष्टि से ताक रहा था।

कमरे में पैर रखते ही लीला हाँफते-हाँफते माता के पास आकर खड़ी हो गई।—ओह! आज मैदान में ऐसी दौड़ पड़ी थी मा! यदि तुम एक बार देखतीं। इतने बड़े धान के खेत के पूरे दस चक्कर लगाये। ओह, दम घुट गया।

मिसेज राय ने झल्लाकर कहा—यह तो तुम्हारा चेहरा ही देखने से भली भाँति मालूम हो जाता है। परन्तु तुम्हारी यह चाल ढाल देख कर मुझसे कुछ कहा ही नहीं जाता लीला! ज़रा देखो तो कि तुम्हारे पैर की और दरी का क्या दशा हो रही है?

माता की यह विरक्तिमय बात सुनकर लीला ने अपनी गोद में टेरि-यर को जरा-सा बगल कर दिया और झुककर देखा तो बरामदे से लेकर कमरे की दरी भर में कीचड़ से सने हुए जूतों के दाग ही दाग पड़े थे।

परन्तु अपराधी ने इससे किसी प्रकार की लज्जा या ग्लानि का अनु-भव नहीं किया, बल्कि उसकी चञ्चल आंखें कौतुक और दुष्टता से परि-पूर्ण हो उठीं। माता को और भी चिढ़ाकर एक तुलनामूलक समालोचना सुनने की इच्छा से उसने खूब प्रसन्नभाव से कहा—परन्तु वीणा कभी ऐसा गन्दगी का काम नहीं कर सकती, क्यों मा ?

मिसेज राय के विचार में वीणा सौंदर्य और शील की आदर्श थी। वे सदा ही कोई न कोई बहाना खोजकर दुर्विनीत लीला को वीणा के आदर्श का अनुसरण करने की शिक्षा दिया करतीं। लीला की बात सुनकर उन्होंने अत्यन्त गम्भीरभाव से रुखाई के साथ कहा—अवश्य नहीं कर सकती ! मेरे दिमाग में भी ऐसी बात नहीं आती कि वह कभी इस तरह का कोई नादानी का काम कर सकेगी। तुममें और उसमें कितना अन्तर है, यह बात तुम अपने आप समझ सकी हो, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। सवेरे-सवेरे इस तरह सारे शरीर में कीचड़ लपेट कर कहाँ से आ रही हो ? क्या किसी भी काल में तुम्हें जरा-सा ज्ञान न होगा ?

मिसेज राय ने बिस्कुट खाकर थोड़े से वहीं टेबिल पर छोड़ दिये थे। लीला ने उनमें से कई बिस्कुट उठा लिये और उन्हें कुत्ते के मुँह में डाल-कर सुप्रसन्नभाव से कहने लगी—सवेरे उठते ही जिमी को लेकर मैं मैदान में घूमने गई थी। धान के खेत में होकर एक खरगोश भगा जा रहा था। उसे देखते ही मेरा टेरियर उसके पीछे दौड़ पड़ा। साथ ही साथ मैं भी दौड़ने लगी। इसी से तो आज इतनी देर हो गई है ! ओह ! इतनी भूख लगी है मुझे !

मिसेज राय क्षण भर स्थिरभाव से कन्या की अस्त-व्यस्त मूर्ति देखती रहीं। उनकी नाक-भौं चढ़ आई और अत्यन्त ही विषाद तथा क्षोभ की रेखा मुखमण्डल पर झलकने लगी। न इस बात के लिए कोई

भी अच्छा उपाय नहीं निर्दिष्ट कर पाती थीं कि लीला की गँवारू और उजड्ड प्रकृति वर्तमान सभ्यता तथा सौजन्य की सीमा में लाकर किस प्रकार नियन्त्रित की जाय। यह लड़की तो दिन-दिन एक विषम समस्या होती जा रही है। इस अद्‌भुत और गन्दी हालत मे यदि कोई जान-पहचान का आदमी इसे देख लेता! मिसेज राय के मस्तक पर पसीने की बूँदें झलकने लगीं।

परन्तु लीला के सम्बन्ध मे उसकी माता के हृदय में जो दुश्चिन्ता और असन्तोष के भाव बढ़ रहे थे उनकी अवहेलना करके वह अपने प्यारे कुत्ते का दुलार करने लगी।

ज़रा देर के बाद मिसेज राय ने कहा—दो दिन और बीत जायें तो तुम पूरी बीस वर्ष की हो जाओगी, अब भी तुम्हें साधारण-सी बुद्धि नहीं आई! मेरा सारा जीवन तुमने बिलकुल अशान्तिमय बना डाला! पटना के जज की लड़की सारे शरीर मे कीचड़ और धूल लपेट कर कुत्ते के पीछे-पीछे दौड़ रही है! लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे? यह बात जब मन में आती है तब सारा शरीर सूख जाता है। मैदान मे किसी जान-पहचान के आदमी से तो तुम्हारी भेंट नहीं हुई?

"नहीं, केवल किरण से मुलाक़ात हुई थी। वह भी मेरे साथ-साथ खेल मे भाग ले रहा था।"

"किरण?" आश्चर्य की अधिकता से मिसेज़ राय की आवाज़ बन्द हो गई।

माता का भाव देखते ही उपेक्षा के साथ मुँह उठाकर लीला ने कहा—हाँ किरण। बसन्तपुर का जमींदार किरण चौधरी। वह तो रोज सुबह-शाम घर पर आता है। उसे पहचानती नहीं हो?

क्रोध के मारे गर्ज कर मिसेज़ राय ने कहा—खूब पहचानती हूँ। तुमसे उसका परिचय पूछने की मुझे आवश्यकता नहीं है।

तुम्हारी निर्लज्जता और ढिठाई दिन दिन इतनी बढ़ी जा रही है कि मुझसे कुछ कहा ही नहीं जाता ! सबसे अधिक लज्जा और क्लेश की बात मेरे लिए इस कारण है कि तुम मेरी ही कन्या हो।

लील ने आश्चर्य में आकर कहा—क्यों ? क्या किया है मैंने ?

अत्यन्त उत्तेजित होकर मिसेज राय ने कहा—इससे बढ़कर और क्या करोगी ? जरा-सा अपने सम्मान या समाज के शिष्टाचार का ज्ञान नहीं, लज्जा का तो तुममें लेश भी नहीं है ! क्या यही सब सीखने के लिए इतने रुपये खर्च करके तुम्हें लंदन में रक्खा था ? तुम्हारी ही तरह वीणा भी तो इतने दिन तक लंदन में रह आई है ! इतनी लिखी-पढ़ी है, इसे तो कभी मुझे एक बात भी नहीं कहनी पड़ती। और तुम ? जरा-सा सामाजिक 'एटिकेट' तक तुम्हारे दिमाग़ में नहीं आता ! किरण चौधरी एक बाहरी आदमी है। उससे अपना कोई सम्बन्ध नही। उसके साथ तुम्हारा कितने दिन का परिचय है, जो उन्नीस-बीस वर्ष की लड़की होकर उसका नाम लेकर पुकारती हो और उसे भी अपने साथ घनिष्ठ व्यवहार करने का अधिकार देती हो ? ऐसा करने में क्या तुम्हें जरा भी लज्जा नहीं आती ? समाज के लोग यह सब बेहूयापन देखकर क्या कहेंगे, जरा बताओ तो सही।

लीला इतनी देर तक माता की फटकार ध्यान लगाकर सुन रही थी। अन्त में अभियोग का कारण समझकर बहुत ही लापरवाही के साथ कहा—ओह, यह बात है ! जिसके लिए इतना बड़बड़ा रही हो ? वास्तव में एक ज़रा-सी बात को इतना बढ़ा कर किस तरह तुम लोग उसकी चर्चा कर सकती हो, यह देखकर अवाक् रह जाती हूँ। तुम्हें रुष्ट होते देखकर मुझे हँसी आती है मा ! सच कहती हूँ तुमसे।

अपनी इस प्रचण्ड वक्तृता का उत्तर इतने थोड़े शब्दों में लीला से पाकर मिसेज राय आग के समान जल उठीं। यह लड़की तो

इतनी उद्दण्ड और ओछी प्रकृति की है कि इतनी बड़ी बड़ी समस्याओं के सम्बन्ध में गम्भीरता का अनुभव करना जानती ही नहीं। परन्तु मुँहजले आदमी तो भीतर की यह सब बात जानते नहीं, व्यर्थ में मुझे ही दोषी ठहराते हैं। कहते हैं कि अगर मा की किसी तरह की हाँक-दाब या शिक्षा होती तो लड़की का यह हाल होता? घर के बाहर लीला के सम्बन्ध में कैसी कैसी बातें उठती है?

प्रकट रूप से अपनी लाल-लाल आँखें लीला की ओर फेर कर उन्होंने कहा—तुम्हारे लिए यह सब ज़रा-सी बातें हैं? वीणा से तो किरण का तुम्हारी अपेक्षा अधिक पुराना परिचय है। वह किसी दिन उसके साथ ऐसा व्यवहार करती है?

लीला ने उत्तर दिया—मैं जानती हूँ कि वह नहीं करती। करने ही क्यों लगी? उसका भी अपना कोई हृदय है या अपनी इच्छा-शक्ति है! वह तो तुम्हारे समाज के अदब-क़ायदे की अपने ढंग की एक चालू मशीन भर है। तुम्हारे बँधे हुए पैमाने से नाप नापकर वह हँसती-बोलती है और नाप नाप कर ही चलती-फिरती है। ठीक कठपुतली की तरह। यह सब तो मेरे बूते का नहीं है, यह बात कितनी ही बार कह भी चुकी हूँ। मैं किसी भी काल में वीणा या समाज की अन्य लड़कियों के समान नहीं हो सकूँगी। मुझ से यह आशा रखकर तुम स्वयं भी दुःखी होगी और मुझे भी कष्ट दोगी। अस्तु, जिस बात पर इतना वितण्डावाद खड़ा किया गया है उसके सम्बन्ध में मेरी सम्मति यह है कि वास्तव में जिस व्यक्ति के साथ निष्कपट और सच्ची मित्रता या घनिष्ठता उत्पन्न हो जाय उसके प्रति बाध्य होकर बहुत-सा निरर्थक सम्मान प्रदर्शित करना और बँधे हुए शब्द दोहरा कर बातें करना मेरे विचार से ढोंग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मेरी और किरण की मित्रता में इस तरह की कोई भी बात नहीं आ पावेगी। इसी लिए हम लोग सामाजिक शिष्टाचार और अदब-क़ायदा छोड़-

कर परस्पर एक दूसरे का नाम लेकर पुकारते हैं। इसमें तुम्हें या समाज के अन्य लोगों को लज्जा का कौन-सा कारण मालूम पड़ता है, यह बात तो मेरी बुद्धि के बाहर है।

लीला की इस जोरदार वक्तृता के बाद परास्त होकर मिसेज़ राय ने निराशभाव से कहा—तुमसे और कोई बात मैं कहना नहीं चाहती। इस सम्बन्ध में मुझे जो कुछ कहना होगा वह तुम्हारे बाबू जी से कहूँगी। उन्होंने ही तो दुलार के मारे तुम्हारा दिमाग़ ख़राब कर दिया है। वे स्वयं अब तुमसे अपना हिसाब-किताब समझेंगे। परन्तु इस समय तुमसे मुझे एक बात कहनी है। तुम जाओ, पहले नहा-धोकर साफ़ होओ, इस तरह की गन्दगी मुझसे नहीं सही जाती। किसी नौकर को बुलाती जाओ, आकर बरामदा और दरी साफ़ कर दे। तुम भी जल्दी जाकर गीला जूता खोल डालो, देर मत करो।

मिसेज राय की बात समाप्त होने से पहले ही लीला मसलिन का सुहावना पर्दा उतावली के साथ उठाकर कमरे के बाहर निकल गई। उसकी तीव्र और उच्च सीटी का स्वर बड़ी देर तक दूर-दूर तक ध्वनित होता रहा।

मिसेज राय बड़ी देर तक इस दुर्दान्त कन्या की गति-विधि देखती रहीं। क्रोध और विरक्ति के मारे उनके माथे पर बल पड़ गये थे। कुछ देर के बाद उन्होंने मन ही मन कहा—बिलकुल 'होपलेस'। इसके सुधरने की अब कोई आशा नहीं है! एक लम्बी साँस लेकर वे फिर अपने काम में लग गईं।

## ( २ )

मिसेज़ राय के पास से लौटकर लीला अपने कमरे में आई। सीटी बजाना बन्द करके उसने ऊँचे स्वर से पुकारा—क्षेन्ति !

उसके प्रबल कण्ठ-स्वर से नीचे की मंजिल के नौकर-नौकरानियाँ

चकित और भयभीत हो उठीं। उसके बाद ही क्षेन्ति को बुला देने के लिए एक साथ बहुत-से तीक्ष्ण कण्ठों की तेज से तेज आवाजें विचित्र स्वर से चारों ओर गूँजने लगीं।

पाँच मिनट के बाद क्षेन्ति उर्फ़ क्षान्तमणि अपना मोटा-ताजा, काला और बेडौल शरीर लिये हाँफते-हाँफते दौड़ कर आ पहुँची। उसके बाद ही वहाँ एक बड़े जोर का झगड़ा-सा मच खड़ा हुआ।

"बाप रे, यह क्या? देखो न, सूरत कैसी बनी है? सबेरे जब घूमने गई हो, तब से सारे शरीर की यह दशा करके, कीचड़ और धूल लपेट कर अब लौट रही हो? तुमसे से तो कुछ कहते ही नहीं बनता बिटिया? आज सबेरे ही यह साड़ी अलमारी से निकाल दी थी न? उसे फाड़ भी डाला, और कीचड़ से लपेट दिया। छिः छिः, ऐसी उपद्रवी लड़की तो जीवन भर में कभी देखी ही नहीं! देखो न, एक लड़की और भी घर में है, उसे तो कभी ऐसा उपद्रव करते हमने नहीं देखा।"

क्षान्त की इन अनर्गल बातों की धारा रोक कर लीला ने कहा—जा जा, तुझे दलाली करने की जरूरत नहीं है। बीसों बार कह चुकी हूँ कि तू ऐसी बातें मत किया कर! क्या तू समझती है कि मैं अब भी वही जरा-सी बच्ची हूँ?

क्षान्त ने हाथ हिलाकर और मुँह टेढ़ा करके कहा—जी नहीं। बच्ची तुम्हें कौन कहता है? तुम तो अब हमारी पुरखिन हो गई हो! इसी लिए न जब चाहती हो डाँट लेती हो? जब जरा-सी थी, न रात को रात समझा और न दिन को दिन समझा, पाल-पोस कर इतनी बड़ी किया, तब क्या इसका फल नहीं मिलेगा? मेरा ऐसा खोटा कर्म ही है कि और कहीं ठिकाना नहीं लगता, यहीं पड़ी हूँ। इसी लिए तो मेरी इतनी दुर्दशा हो रही है। जिसे मैंने अपने हाथ से पाल-पोस कर इतना बड़ा किया है, वही मेरा अपमान करे?

क्षान्त का सप्तम सुर क्रमशः धीमा होते देखकर लीला शङ्कित हो उठी। इसके बाद क्या क्या होगा और कौन कौन-सी बात आवेगी, यह सब पुराने अनुभव के अनुसार उसे मालूम था। इससे पहले ही सन्धि की आशा से लीला ने नम्र स्वर से कहा—व्यर्थ में बकबक करके क्यों मरती है? मैंने तुझे क्या कहा है, जरा बता तो? जब मैदान में खेलने गई थी, तब धोती में जरा-सा कीचड़ लग गया, इसी के लिए अभी तक मा पचासों बातें सुनाती रहीं, वहाँ से लौट कर जैसे ही आई, तूने आरम्भ कर दिया! जाओ तुम लोग जैसा चाहो, वैसा करो। आज न तो मैं स्नान करूँगी, न खाऊँगी, चुपचाप लेटी रहूँगी।

इस बात का प्रभाव पड़ने मे विलम्ब नहीं हुआ। क्षान्त को जैसे ही यह बात मालूम हुई कि लीला मा के पास से डाँट खा आई है, उसका सारा क्रोध और अभिमान हवा हो गया। वह स्वयं लीला को चाहे जितना डाँट-फटकार लेती, इसमें कोई हानि नहीं थी, परन्तु दूसरा कोई यदि उसे आधी बात भी कह देता तो वह उसे असह्य हो जाती।

लीला के जूते खोल कर मोजे उतारते-उतारते क्षान्त ने कहा—मा डाँटें न तो क्या करें? तुम्हारा यह बेढंगापन देख देख-कर मेरी ही हड्डियाँ सुलगने लगती हैं, फिर वे तो मा हैं। दस आदमी दस तरह की बातें कहेंगे। कुछ भी हो। मा के दिल में चोट तो लगेगी ही। इसी से कभी कभी दो चार बातें कह देती हैं।

लीला जब से पैदा हुई है, तब से क्षान्त ने ही उसे पाल-पोस कर इतनी बड़ी किया है। इसलिए वह समझती थी कि लीला पर मेरा बहुत बड़ा अधिकार है। यही कारण था कि अब भी वह लीला से जरा भी नहीं दब कर चलती थी। घर में भी उसका बड़ा प्रताप था। उसे कोई एक बात कहता तो वह चार

बातें सुना देती। यहाँ तक की उसकी पैनी जबान के भय से मिसेज राय को भी यथासम्भव उससे दब कर ही चलना पड़ता।

काम के साथ ही साथ क्षान्त का बकवाद भी बराबर जारी रहा। लीला किसी तरह अपने को सँभाले हुए चुपचाप बैठी रही। यदि कुछ प्रतिवाद करती तो और भी बुरा परिणाम होने की सम्भावना थी। अन्त में जब उससे न रहा गया तब कहने लगी—"व्यर्थ में जब बकने लगती है तब तो दम तक नहीं लेती, परन्तु काम के समय कहीं पता भी नहीं रहता। घर में आकर जब बार-बार पुकारती हूँ तब भी तेरी सूरत नहीं दिखाती। मा ने कहा है कि स्नान करके अभी ही मेरे पास आओ। कहीं देर हो गई तो फिर दस बातें सुनावेंगी, कहेंगी कि अभी तक कहाँ थी।"

लीला के भौंरे के समान काले काले बालों की उलझन छुड़ाते हुए क्षान्त ने कहा—जाऊँगी कहाँ? रात को जमादार साहब ने ताड़ी पी ली थी। उसी के नशे में आकर अपनी स्त्री को इतना मारा कि मारते मारते अधमरी कर डाला। बेचारी फूट फूट कर रो रही थी। उसका माथा तो फूल कर ढोल हो गया है। इसी लिए ज़रा उसे देखने गई थी। परन्तु जैसे ही वहाँ जाकर खड़ी हुई, क्षेन्ति क्षेन्ति की चिल्लाहट शुरू हो गई। बाप रे, क्षण भर के लिए भी आग के सामने से हटने की फ़ुरसत नहीं!

यह बात सुनते ही क्रोध में आकर लीला ने कहा—क्या कहा? फिर उसने मारा है? मैंने उस दिन कह दिया था न उससे कि अब कभी ऐसा करेगा तो निकाल दूँगी? इतने पर भी वह नहीं माना?

यह सब अत्याचार लीला नहीं सह सकती थी। किसी को भी वह कभी ऐसा अत्याचार करते देखती तब सारे घर में तहलका मचा देती। इसलिए यह बात लीला से कह डालने का क्षान्त को बड़ा पछतावा हो रहा था। उसे दबाने के लिए उसने तुरन्त ही

अपनी बात का ढंग बदल दिया और कहने लगी—ज़रा-सा मार ही दिया तो क्या हो गया? तुम तो सभी बातों में इतना क्रुद्ध हो जाती हो! स्वामी-स्त्री में तो यह सब होता ही रहता है। इसके फेर में तुम कहाँ तक पड़ी रहोगी? फिर भी उसने ऐसे तो मारा नहीं—ताड़ी पीने पर क्या आदमी को किसी बात का ज्ञान रह जाता है?

लीला ने गम्भीरभाव से कहा—तब ताड़ी ही वह क्यों पीता है? पचास बार रोक चुकी हूँ न? ताड़ी पीकर आदमी की जान मार डाले और उससे कुछ कहें तो कह दे कि नशे में मार डाला है! इस अन्धेर का ठिकाना है? मैं तो यहाँ यह सब अत्याचार न होने दूँगी। आज दूसरे वक्त जमादार का बन्दोबस्त मैं खूब अच्छी तरह से कर दूँगी।

क्षान्त ने व्यस्तभाव से कहा—इस सबके लिए चिन्ता करने की तुम्हें कोई आवश्यकता नहीं है बिटिया रानी! यदि तुम जाकर देखो तो शायद अब उन दोनों में मेल हो गया होगा। जमादार को कोई बात कहने लगोगी तो उल्टा उसकी स्त्री ही आकर तुमसे हाथ-पैर जोड़ने लगेगी। पति-पत्नी के झगड़े में दूसरे का न पड़ना ही अच्छा है।

लीला ने जब सोचकर देखा तब इस विषय में क्षान्त की ही बात ठीक उतरी। इससे पहले स्त्री पर अत्याचार करने के अपराध में वह जब जब जमादार को दण्ड देने गई थी तब तब वह अत्याचार-पीड़ित स्त्री ही रो-रोकर और अनुनय-विनय करके पति के लिए क्षमा माँगने आती थी।

बहुत ही विरक्त होकर लीला ने कहा—ऐसा करते करते तो तुम्हीं लोगों ने पुरुषों का साहस इतना बढ़ा दिया है। वे समझते हैं कि हम जो भी अत्याचार करते जायंगे, वह सब स्त्रियाँ मुंह बन्द करके सहती जायेंगी। यदि ऐसी बात न होती तो भला पुरुष कभी इतना साहस कर सकते?

क्षान्त ने शान्तभाव से कहा—तो किया ही क्या जाय? स्वामी को कोई स्त्री फेंक तो सकती नहीं।

"इसमें फेंकने की कौन-सी बात है? स्त्री स्वामी को छोड़ तो सकती है? जमादार जब इतना अत्याचार करता है तब उसकी स्त्री मुँह बन्द किये चुपचाप सहती क्यों जाती है? जमादार को छोड़ देने से ही तो सारा झंझट दूर हो जायगा?"

क्षान्त लीला के स्लीपरों की धूल झाड़ रही थी। उन स्लीपरों को यों ही छोड़ कर कुछ क्षण तक वह लीला के मुँह की ओर ताकती रही। अन्त में उत्तेजित होकर उसने कहा—छोड़ दे? ऐसी बात मुँह से फिर कभी न निकालना बिटिया रानी। हिन्दू-घरों में स्त्रियों का काम ही है सब कुछ सहती रहना। मनुष्य को जीवन में कितने दुःख-क्लेश सहने पड़ते हैं! तब स्वामी के हाथ से ज़रा-सी मार खा लेने में ही इतना दुःख क्यों होता है? स्त्री यदि अपने श्वशुर का घर और पति को त्याग कर निकल आवे तो क्या फिर उसकी किसी तरह की लज्जा रह जाती है? जमादार तो आदमी बुरा नहीं है। स्त्री को अच्छी तरह से खिलाता है, कपड़े देता है, गहने भी दे रक्खे हैं। परन्तु कभी कभी जो तंग करता है, वह नशे के जोर से। इस बात की तो परवा भी न करनी चाहिए। पुरुष के बिना कहीं क्षण भर भी स्त्री का निर्वाह हो सकता है? खाना-कपड़ा कहाँ से मिलेगा? गहने कहाँ से आवेंगे? पुरुष ही तो चार पैसे कमा लाते हैं।

"तू तो एक ज़बरदस्त 'फ़िलासफ़र' मालूम पड़ती है। तेरी युक्तियाँ भी बहुत ही अमूल्य और अकाट्य हैं। परन्तु पहले मेरे स्लीपर साफ़ कर दे तब फिर अपनी यह फ़िलासफ़ी झाड़ना।"

लीला स्लीपर पहन कर हँसते हँसते कमरे से निकल गई। क्षान्त कमरे की सारी चीजें झाड़ झाड़ कर सजाने लगी। वह मन ही मन गुनगुनाती भी जाती थी—जब से बिलायत से यह

आई है, बिलकुल ईसाई हो आई है। मैं तो पहले ही से जानती थी कि इन सब अभागे देशों में जाने से आदमी को न तो किसी तरह की ज्ञान-बुद्धि रह जाती है और न उसका धर्म-कर्म रह जाता है। सारा दीन-धर्म नाश करके ये लोग न जाने कैसी और किस प्रकृति के हो गये हैं। सीता-सावित्री की बात तो चूल्हे में गई, कहती है, स्वामी को छोड़ क्यों नहीं देती? एकदम भ्रष्ट हो गई? म्लेच्छों का-सा ही सारा कारखाना है? राम! राम!

( ३ )

मिसेज़ राय उस समय भी पढ़ने-लिखने के ही काम में मग्न थीं। लीला स्नान से निवृत्त होकर इस बार बहुत कुछ शान्त-भाव से उनके पास जाकर खड़ी हुई। शरद्-ऋतु की हवा से उत्फुल्ल होकर एक बर्रे शायद दूसरा स्थान खोज निकालने की आशा से कमरे में आ पड़ा था, और उसे खोज निकालने से पहले ही बाहर जाने का रास्ता भूलकर पर्दे के आस-पास वह भन-भनाता हुआ भटक रहा था। उसकी दुर्दशा देखकर लीला के हृदय में दया आ गई और उसने पर्दा हटा कर उसे बन्धन से मुक्त कर दिया।

काग़ज़ों पर से मस्तक उठाकर मिसेज़ राय ने लीला की ओर देखा। बाद को किसी तरह से प्रसन्नता का भाव व्यक्त करके उन्होंने कहा—कहो, स्नान कर आई हो? ख़ैर, फिर भी अब ज़रा ज़रा देखने लायक़ तुम्हारा चेहरा हो गया। वह कुर्सी खींच कर बैठ जाओ। तुमसे बहुत-सी बातें करनी हैं। अब तुम बड़ी हो गई हो, परिवार के सुख-दुःख में तुम्हें भी और लोगों की तरह समानरूप से भाग लेना चाहिए। हम सब लोग तुमसे इस बात की आशा करते हैं।

मिसेज़ राय इस तरह नर्मी के साथ कभी बात नहीं करतीं

थीं। आज माता की बातों में एकाएक ऐसा परिवर्तन देखकर किसी अज्ञात आशङ्का से लीला का हृदय काँप उठा। वह शङ्कित-भाव से एक कुर्सी खींच कर बैठ गई और उत्सुक दृष्टि से माता की ओर ताकने लगी।

क़लम की स्याही साफ़ करके मिसेज़ राय ने उसे क़लमदान में रख दिया और फिर लीला की ओर ताक कर कहने लगीं—आज सवेरे चाय पीने के बाद वीणा को अरुण की एक चिट्ठी मिली। बम्बई के अस्पताल से उसने लिखा है कि फ़्रांस के युद्ध-क्षेत्र में एक तोप फट गई थी, उसी के कारण उसकी दोनों आँखें फूट गईं।

"अरुण अन्धा हो गया? ओह, ईश्वर!" अतर्कित दुःसंवाद से लीला पहले-पहल चौंक कर निस्तब्ध होगई। बाद को देखते ही देखते उसकी काली और बड़ी बड़ी आंखें आँसुओं की धारा में डूब गईं।

विषाद से मुँह नीचा करके मिसेज़ राय कुछ क्षण तक लीला की ओर ताकती रहीं। सदा से उनकी यही धारणा थी कि लीला बहुत ही हृदयहीन और निष्ठुर प्रकृति की है, स्त्री-सुलभ दया-ममता या स्नेह का उसमें लेश भी नहीं है। आज अरुण के दुख में हृदय फाड़ कर उसे रोते देखकर उनका चित्त लीला के प्रति बहुत कुछ कोमल हो गया। वे स्वयं भी रूमाल से आँखें पोंछ कर कहने लगीं—अब तुम यह अनुभव कर पाती होगी कि इस दुःसंवाद का वीणा के हृदय पर कितना सांघातिक प्रभाव पड़ा होगा। जब से उसे यह पत्र मिला है तब से वह कमरे से निकली तक नहीं। मेरे नेत्रों में तो सवेरे से आँसू ही आँसू आ रहे हैं। मेरी इतने दिनों की अभिलाषा, इतनी आशा, इस दुर्घटना से सारी की सारी मिट्टी हो गई।

लीला ने अरुण को कभी देखा नहीं था। वीणा के कमरे में उसका जो नयनाभिराम चित्र टंगा था उसे देखकर ही वह उससे

मित्र के समान स्नेह करने लगी थी। कैसा सुन्दर उसका चेहरा था, उसके हृदय का भी ऐश्वर्य बड़ा मनोहर था। अरुण ने समर-भूमि से वीणा को जितने पत्र लिखे थे उन्हीं के द्वारा उसके सरल, उन्नत और परिमार्जित हृदय का परिचय लीला को मिला था। मृत्यु की बिभीषिका से परिपूर्ण उस भयङ्कर स्थान में रातदिन संहार का जो भयङ्कर ताण्डव-नृत्य हुआ करता उसमें निवास करते हुए क्षण भर के लिए भी अरुण ने अपने उत्साह तथा स्फूर्ति को नष्ट नहीं होने दिया। किस विशालता और प्रतिभा से पूर्ण था उसका हृदय! वीणा के ही प्रति उसका कैसा ज्वलन्त प्रेम था! उसके किसी पत्र में कभी उच्छ्वास का लेश नहीं रहता था, फिर भी उसके पत्रों की एक एक पंक्ति में उसके संयमशील हृदय का स्वाभाविक अनुराग विकसित हो उठता था। वही अरुण! वह एक साथ ही सैनिक था, साहित्यिक था और कवि था! आज उसका सर्वस्व नष्ट हो गया। आज उसके नवीन चिर-सुन्दर नेत्रों पर चिर-अन्धकार का बहुत ही मोटा पर्दा पड़ गया है! जीवन की सारी आशा, सारा आनन्द और सारा उत्साह, सब व्यर्थ हो गया, निष्फल हो गया! लीला कोई भी बात कह न पाई। अरुण के उस भयङ्कर परिणाम की बात सोच सोच कर वह केवल व्यथित और उच्छ्वसित हृदय से रोने लगी।

मिसेज़ राय भी कुछ क्षण तो निस्तब्ध रहीं, बाद को उन्होंने कहा—आज केवल वही तीन मास पहले की बात मुझे याद आ रही है। किरण का वह घनिष्ठ मित्र है। उसके पास जब वह यहाँ घूमने आया था, सारे शहर में एक तरह की धूम मच गई थी। जैसा सुन्दर उसका रूप है, वैसी ही शिक्षा है और वैसी ही शान्त एवं सरल प्रकृति है! इतने बड़े लक्षपति के घर का वह लड़का है और ऐसा सरल उसका स्वभाव है! क्या खेलने-कूदने में, क्या गाने-बजाने में, और क्या शिकार में, सारे शहर

को उसने मोह लिया था। तुमने तो उसे नहीं देखा था न? तो तुम क्या समझ पाओगी कि वह कैसा अच्छा लड़का था! कितने ही लोगों ने उसे पाने की कितनी चेष्टा की। परन्तु उसने जिस दिन से वीणा को देखा था, उसी दिन से फिर उसने किसी की ओर घूम कर देखा तक नहीं। अहा! बेचारा कितना चाहता था वीणा को! वीणा के पास जब वह बैठता तब देख देखकर आनन्द और तृप्ति से मेरा हृदय परिपूर्ण हो उठता। मन में यही बात आती कि जैसी घर को चमका देनेवाली लड़की है वैसा ही सुन्दर दामाद भी मिल गया। कैसे अशुभ अवसर पर यह युद्ध छिड़ा है, कैसे अशुभ मुहूर्त में फ्रांस-सरकार ने बंगालियों की सेना भेजी! उसी के कारण मेरे भाग्य का सब कुछ जाता रहा।

बातें समाप्त करके मिसेज राय ने अपनी भीगी आँखें रूमाल से पोंछ लीं और तुरन्त ही उन्होंने फिर कहना आरम्भ किया—इसी लिए मैं सवेरे से ही तुम्हें खोज रही थी। इस समय वीणा को जरा-सी सान्त्वना देने की आवश्यकता है। परन्तु यह अधिक अच्छा होगा कि इस समय उसके पास जाकर तुम्हीं बैठो और उसे शान्त करो। मेरा जाना भी इतना अच्छा नहीं है, जितना कि तुम्हारा। आह! बेचारी को कितनी चोट पहुँची है। मैं तो सवेरे से इसी सोच-विचार में पड़ी हूँ कि मैं अब उसे किस तरह शान्त करके सँभाल सकूँगी।

आँखें पोंछ कर लीला उसी समय उठ कर खड़ी हो गई। उसने कहा—मैं अभी उनके पास जाती हूँ मा।

जैसे ही लीला ने आगे की ओर पैर बढ़ाया—मिसेज राय ने कुछ व्यस्तभाव से कहा—ज़रा-सा ठहर जाओ, तुमसे एक बात और कह देनी है। वीणा से कहना कि अभी इतनी जल्दी अरुण के पत्र का उत्तर देने की कोई आवश्यकता नहीं है। दो एक दिन के बाद खूब सोच-समझ कर ही उत्तर देना अधिक अच्छा

होगा। मेरा मतलब समझ रही हो न? मैं नहीं चाहती हूँ कि वीणा अरुण को कोई ऐसी बात लिखे, जिससे उसके मन में फिर किसी तरह की आशा रह सके। क्योंकि इस घटना के बाद से उसके साथ हमारा कोई भी सम्बन्ध न रह सकेगा।

यह बात सुनकर लीला चलती चलती ठमक कर खड़ी हो गई। इतनी देर के बाद सारा मामला उसकी समझ में आया। अब उसके दिल में यह बात जम गई कि मा अरुण के साथ किसी तरह का सम्पर्क नहीं रखना चाहतीं, परन्तु वीणा से यह बात कहने में उन्हें लज्जा आती है, अतएव इसे मुझसे कहलाना चाहती हैं।

मा का तात्पर्य समझ कर लीला को मन ही मन बड़ी वेदना हुई। जिस हतभाग्य पर दुर्दैव ने ही इस तरह का वज्र-प्रहार किया है, उसे मनुष्य भी इसी तरह की विडम्बना पहुँचावेगा? इतने घोर सङ्कट के समय अपने प्रियजन से वह जरा भी स्नेह का स्पर्श तथा सान्त्वना की दो एक बातें भी न प्राप्त कर सकेगा?

लीला का कर्त्तव्यनिष्ठ एवं परदुखकातर हृदय इस निर्णय को स्वीकार करने के लिए किसी तरह तैयार नहीं था। उसने बहुत ही कातर तथा विनीत स्वर से कहा—यह कार्य तो उचित न होगा मा? ये दिन उसके बड़े दुख के दिन हैं, बड़ी निराशा के दिन हैं? आज उसे तुम लोगों को छोड़ कर और कहीं से भी शान्ति न मिलेगी। उसकी भी मा तुम हो। इतने दिनों तक उससे स्नेह किया करती थीं, इतना प्यार करती थीं, आज उसे दूर कैसे कर देंगी? या वीणा ही उसे यह बात कैसे सूचित कर सकेगी? यह तो बड़ा भारी अन्याय होगा मा।

मिसेज राय ने इस बात पर कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया। उन्होंने उदासीन भाव से कहा—अब तो ऐसा नहीं हो सकता लीला। आज यदि वीणा हृदय के आवेग में आकर ऐसा जीवन-व्यापी त्याग करे भी तो यह उसकी बड़ी भारी भूल होगी। ऐसा करके वह

जीवन में सचमुच कभी न सुखी हो सकेगी। अरुण की इस दुर्घटना से मेरे हृदय पर कितना आघात पहुँचा है, इस बात को यदि कोई अन्तर्यामी हैं, तो वे ही जान सकेंगे। परन्तु यह सब होने पर भी अपनी सन्तान की भलाई-बुराई तो मुझे पहले देखनी पड़ेगी? इतनी बड़ी विपत्ति जान-बूझ कर अपने सिर पर कौन लाद सकता है? मैं खूब समझती हूँ कि इस विवाह से वीणा का सारा जीवन ही बिलकुल नष्ट हो जायगा।

इस बात से लीला का चित्त शान्त न हुआ। सचमुच जो मा है, वह क्या अपनी सन्तान के ही शुभ-अशुभ पर ध्यान देती है? और किसी की ओर दृष्टि फेरने का उसे अवसर ही नहीं है? अरुण भी तो किसी दिन 'मा' कहकर अपने को स्नेह का अधिकारी प्रमाणित करते हुए सामने आकर खड़ा हुआ था? वीणा के ही लिए इन्हें इतनी चिन्ता क्यों है? मानव-जीवन में क्या स्नेह, प्रेम तथा कर्तव्यबुद्धि आदि किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं पड़ती? क्या अपना ही सुख सबसे बड़ी चीज है? दो ही दिन पहले जब उसका स्वास्थ्य, रूप, शक्ति आदि ज्यों के त्यों बने थे, तब वीणा उससे प्रेम करती थी।

उसने कहा—मान लीजिए कि इन लोगों का विवाह हो जाने पर कहीं ऐसी दुर्घटना होती तब तुम क्या कर सकतीं? क्या उस समय भी इसी तरह निःसंकोच भाव से उसे परित्याग कर सकतीं?

मिसेज़ राय के चेहरे पर अप्रसन्नता की रेखा विकसित हो आई। उन्होंने मन ही मन कहा—इस लड़की का व्यवहार सदा ही दुनिया से ऊपर रहता है। मानो इसने इस बात की प्रतिज्ञा-सी कर ली है कि जो बात स्वाभाविक और सीधी है उसे यह किसी तरह भी न समझेगी। अपनी बहन के सुख-दुख पर तो ध्यान देती नहीं, जिसे कभी आँख से भी नहीं देखा उसी के लिए इसकी सारी माया-ममता उमड़ आई है। कैसी विपत्ति में वे पड़े हैं?

प्रकट रूप से उन्होंने असहिष्णुभाव से कहा—नहीं, उस दशा में मैं वैसा नहीं कर सकती थी। तब तो चाहे कितना ही बड़ा दुःख पड़ता, वीणा को मस्तक झुका कर स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं था। परन्तु यहां तो कोई ऐसी परिस्थिति है नहीं, बातचीत भर लगी थी। ऐसे प्रस्ताव कितने लोगों के सम्बन्ध में किये जाते हैं और वे रद हो जाते हैं। ऐसी दशा में इसके सम्बन्ध में अधिक जोर डालने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। इसके अतिरिक्त मैंने स्वयं यह प्रस्ताव किया भी नहीं। अरुण ने ही वीणा से अपना इस तरह का अभिप्राय प्रकट किया था। उसका स्वभाव तो बहुत ही उदार और उच्च है। ऐसी परिस्थिति में आकर वह एक तरुण जीवन को इस निरानन्द दासता के जीवन में कैसे आकर्षित कर सकता है? यह विवाह न होने देने के लिए उसने स्वयं प्रस्ताव किया है।

"उसे तो यह बात कहनी ही पड़ेगी, क्योंकि उसे यह मालूम है कि इस घटना के बाद से वीणा मुझे पहले की सी दृष्टि से न देख सकेगी। इसलिए उसे ऐसा ही कहना उचित था। यही सोच कर उसने ऐसा कहा भी है। यह उसका बड़प्पन है। परन्तु क्या उसके इतना कह देने से ही उसके प्रति तुम लोगों के सारे कर्तव्यों की इतिश्री हो गई? इस समय तो वीणा को यही कहना चाहिए कि मैं तुम्हें किसी तरह भी नहीं त्याग सकती। उसके प्रति यदि वीणा को सचमुच प्रेम होगा तो इसके अतिरिक्त और वह कह ही क्या सकेगी, यह मेरी समझ में नहीं आता। इस समय तो वीणा ही अपने अगाध प्रेम के द्वारा उसे शान्त और सुखी बना सकती है और उसकी सारी निराशा और वेदना को दूर कर सकती है। यह तो और किसी का भी काम नहीं है।"

मिसेज राय ने बहुत ही असन्तुष्ट होकर कहा—तुम इस विषय पर केवल एक भावुकता की दृष्टि से विचार करती हो, सोच-

विचार कर नहीं देखती हो। जीवन बहुत ही सत्य और क्रियात्मक वस्तु है। भावों का आवेग दस-पाँच दिन रह सकता है। परन्तु जब उसका अन्त हो जायगा तब जीवन पर वह कैसा प्रभाव डालेगा? तुम लोगों का अभी लड़कपन है। संसार के सम्बन्ध में कुछ जानती नहीं हो, किताबों में लिखी हुई थोड़ी-सी बातें दोहराना भर जानती हो। यदि गम्भीरतापूर्वक सोच कर देखतीं तो क्या तुम कभी ऐसा प्रस्ताव कर सकती थीं? अरुण के साथ विवाह करने पर वीणा-को अब आजन्म धात्री एवं बन्दिनी होकर ही अपना जीवन व्यतीत करना पड़ेगा, क्योंकि वह तो अब बिलकुल असहाय है। सदा स्त्री पर निर्भर रहने के अतिरिक्त उसके पास और कोई उपाय ही नहीं है। अब जरा सोचो तो जीवन भर के लिए इतना क्लेश स्वीकार कर लेना क्या कोई आसान काम है? विशेषतः वीणा-जैसी लड़की के लिए, जिसने जीवन में न तो कभी ज़रा भी किसी प्रकार के दुख या क्लेश का अनुभव किया है और न जिसे किसी तरह का काम करने का अभ्यास है। लाड़-प्यार और आमोद-प्रमोद में ही सदा से उसका पालन-पोषण होता आ रहा है। क्या वह कभी ऐसा जीवन सहन कर सकेगी? कहीं उसे इस तरह रहना पड़ा, तब तो वह मर ही जायगी।

मिसेज़ राय कुर्सी पर से उठ कर कमरे के भीतर टहलने लगीं। लीला भी किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर स्थिर भाव से बैठी रही।

कमरे में दो एक बार घूम कर मिसेज़ राय ने कहा—जीवन भर के लिए ऐसा दुख अपने आप मस्तक झुका कर वह स्वीकार ही क्यों करने लगी? ऐसी सुन्दर लड़की, जो रूप-गुण में अतुलनीय है, समाज का एक सर्वश्रेष्ठ रत्न है, उज्ज्वल भविष्य जिसके लिए खुला हुआ है, वह इच्छानुसार किसी वर के साथ विवाह करके आजन्म सुखी रह सकती है। वर्तमान और भविष्य दोनों ही उसके अनुकूल हैं। उसे क्या पड़ी है कि वह ऐसा जीवन-व्यापी दुख

स्वीकार करने जाय ? तुम उसके पास जाओ और थोड़ी देर तक वहीं रहो। यदि आवश्यकता समझो तो मैंने जो जो बातें कही हैं वे सब समझा भी देना। तुम्हें भी अपनी सारी भावुकता भुला कर उसकी अवस्था पर विचार करना चाहिए और अरुण के इस पत्र का उत्तर भी वैसा ही देना चाहिए। इसमें सङ्कोच करने का हमारे लिए कोई कारण नहीं है।

लीला ने समझ लिया कि इस सम्बन्ध में अब मा से कोई बात कहना व्यर्थ है। वे किसी तरह भी अपने निश्चय से न हटेंगी। यदि अधिक वाद-विवाद करूँगी तो केवल मनोमालिन्य की ही सृष्टि होगी।

और कोई भी बात मुँह से न निकाल कर वह शुष्कहृदय से वीणा की खोज में चली गई।

( ४ )

मिस्टर राय की दोनों ही कन्यायें एक दूसरे से विपरीत रूप, गुण और प्रकृति लेकर पैदा हुई थीं। वीणा माता के ही समान बड़ी रूपवती थी और उसका स्वभाव भी वैसा ही ओछा और चञ्चल था। लीला के चेहरे में कोई वैसा आकर्षण नहीं था, साधारण रूप से वह सुन्दरी थी। वह पिता के समान उच्च एवं विचारशील, हृदय तथा ज्ञान की अधिकारिणी थी।

किशोरावस्था से ही वीणा समाज का एक विशेष प्रकार का उज्ज्वल रत्न थी। समाज के सारे शिष्टाचार खूब अच्छी तरह से उसे अभ्यस्त थे। वह जानती थी कि कहाँ और किसके साथ कितनी और कैसी बातचीत करनी चाहिए, और किससे कब कैसा बर्ताव करना चाहिए। उसकी अनुपम सुन्दरता, संयमशीलता तथा शालीन शिष्टाचार, कण्ठस्वर की अतुलित मधुरिमा तथा कृत्रिम हाव-भाव से मुग्ध होकर युवकों का दल अन्धभक्त होकर उसका

स्तव गान किया करता, और अनुचर के समान उसके पीछे पीछे लगा रहता। वह भी उन लोगों पर अपनी मोहिनी शक्ति का प्रभाव विस्तृत रूप से डाल कर उन्हें सदा पतंग के समान अपने चारों ओर खींचती रहती। वह किसी से प्रेम नहीं करती थी, इस विजय के गर्व से वह फूली नहीं समाती थी।

वीणा की उज्ज्वल और तेजोमय आभा से सभी की आँखें चकाचौंध हो जातीं। ऐसी दशा में बड़ी बहन की रूप-माधुरी के सामने लीला स्वभावतः बिलकुल प्रभाहीन तथा मलिन हो उठी थी। उसकी ओर आसानी से किसी की दृष्टि नहीं पड़ा करती थी। वह भी यह सब व्यर्थ के साथ-संग और निर्लज्जतापूर्ण चाटु-कारिता से भरसक बच कर ही चला करती। वीणा का बनावटी हाव-भाव तथा पुरुषों के मनोरञ्जन के लिए उसका सदा सचेष्ट रहना लीला के लिए बहुत ही विरक्तिकर था, अतएव उसका हृदय वीणा की ओर से विमुख हो गया था। वीणा-जैसी कन्या पाकर मिसेज़ राय तो गर्व के मारे अपने आप को भूल-सी गई थीं। उन्होंने लीला को भी ठोंक-पीट कर अपनी रुचि के अनुसार बना लेने के लिए बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु इस दिशा में उनका सारा प्रयत्न निष्फल ही रहा। जैसे ही जैसे दिन बीतते जाते, लीला की ज्ञानस्पृहा भी वैसे ही वैसे बढ़ती जाती। कालेज के कोर्स की सीमा तक में ही वह अपने को बाँध कर न रख पाती! संसार में जितनी भी ज्ञातव्य बातें हैं, उन सब को वह जानना चाहती थी। उसके पास जितना भी समय था, उसने वह सब भिन्न-भिन्न विषयों के पढ़ने और सीखने के ही लिए बांध दिया था। उसकी जैसी नवयुवती की इतनी अदम्य ज्ञान-स्पृहा तथा विद्यानुराग देखकर कालेज के ज्ञानवृद्ध अध्यापक अपने आप ही उसे यथेष्ट सहायता दिया करते।

आठ वर्ष की दीर्घकालीन साधना के फलस्वरूप सुशिक्षित

और परिमार्जित हृदय लेकर लीला जब लंदन से लौटी तब उसने देखा कि घर में मा और वीणा से उसकी कहीं जरा भी समानता नहीं है। मा के कथनानुसार वह किसी तरह भी नहीं चल सकती। जिन तत्त्वहीन बातों की चर्चा में वे लोग अपना दिन काटा करतीं और जिस तुच्छ आमोद-प्रमोद से वे अपना मनोविनोद किया करतीं, उनके सम्पर्क में लीला किसी तरह भी नहीं आ सकती थी। इधर उन सब के विरोध में कुछ कहने पर मा के रुष्ट होने का भी भय था। कभी कभी तो अनिच्छा होने पर भी मा के साथ उसका विवाद छिड़ जाता। लीला को क्षोभ हुआ, मन ही मन वेदना हुई, किन्तु प्रतीकार का कोई भी उपाय न दिखाई पड़ा।

मिसेज राय भी इतने दिनों के बाद लीला को पाकर सन्तुष्ट न हो सकीं। उसने मानो सदा के लिए मा की रुचि के विरुद्ध आचरण करने का प्रण-सा कर लिया था। उसके स्वतन्त्र विचार, सूक्ष्म विवेचना-शक्ति तथा संस्कारशून्य एवं उच्च हृदय का परिचय तो मिसेज राय को मिला नहीं, साथ ही उसका गुण ग्रहण करने की शक्ति भी उनमें नहीं थी। उन्होंने यही समझा कि यह बड़ी उद्दण्ड, स्वेच्छाचारिणी और हठीली है। इस कारण पद-पद पर और बात-बात में लीला के साथ उनका मतभेद आरम्भ हो गया। परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही दिनों में वह उनसे बहुत दूर हो गई।

मिस्टर राय को यह मालूम था कि मेरी इस तेजस्वी तथा गूढ़ प्रकृति की कन्या को कोई भी समझ न पावेगा। उन्होंने अपने हृदय के अगाध स्नेह और आदर से उस अनादृत बालिका को खींच कर छाती से लगा लिया। पिता के स्नेह का आश्रय पाकर लीला अपने क्षुब्ध हृदय की वेदना भुलाने का प्रयत्न करने लगी।

घर लौटने पर वीणा केवल एक ही समाचार से प्रसन्न हो सकी थी। वह था अरुण के साथ वीणा के विवाह का निश्चय।

समाचार-पत्रों में उसने इस वीर युवक के साहस और वीरता की प्रशंसा कितने ही बार पढ़ी थी। उसके साथ परिचय होने से पहले ही लीला उसे अपने एक घनिष्ट मित्र के रूप में चाहने लगी थी।

मन ही मन अरुण के सम्बन्ध में वह प्रायः सोचा करती थी। उसके हृदय में बार बार यह प्रश्न उदय होता कि क्या वीणा अरुण को पूर्णरूप से सुखी कर सकेगी ? वह जैसी चञ्चल और ओछी प्रकृति की है, वह अरुण-जैसे उदार एवं उन्नत हृदय के युवक की रुचि और इच्छा का क्या कभी अनुसरण कर सकेगी ? आज उसकी रूपमाधुरी पर मुग्ध होकर अरुण उससे प्रेम करने लगा है, परन्तु केवल रूप का मोह कब तक स्थायी रह सकेगा, यदि उसके साथ हृदय का योग न हो ?

इसी तरह दिन बीत रहे थे। लीला को घर लौटे तीन ही मास हुए थे कि एकाएक अरुण के दुर्भाग्य का यह समाचार इस परिवार के लोगों पर वज्र के समान आकर टूट पड़ा, सब लोग शोकाकुल हो उठे।

फ्रांस की समर-भूमि में लेफ़्टिनेंट घोषाल अपनी सेना लेकर बड़ी वीरता के साथ युद्ध कर रहे थे। उनके समीप ही एकाएक एक तोप फट गई, इससे वे मूर्च्छित हो गये। अस्पताल में जब चिकित्सा हो रही थी तब भी अरुण के आत्मबल में किसी तरह की कमी नहीं हुई। उस समय भी उन्हें विश्वास था कि मैं शीघ्र ही नीरोग हो जाऊँगा। परन्तु लगातार महीना भर चिकित्सा करने पर डाक्टर लोग जिस निर्णय पर पहुँचे उसके अनुसार यह निश्चय हो गया कि मस्तक के 'ओप्टिक नर्व' पर गहरी चोट आ गई है, इससे इस जीवन में लेफ़्टिनेंट की दृष्टि-शक्ति फिर न लौट सकेगी।

( ५ )

वीणा अपने कमरे में एक सोफ़ा पर अकेली लेटी हुई उदास नेत्रों से खिड़की के बाहर ताक रही थी। लगातार रोते रोते उसकी

आँखें फूल फूल कर लाल हो आई थीं। एक रेशमी रूमाल लेकर, जिस पर कि फूल-पत्ती के काम किये हुए थे, वह क्षण क्षण पर अपने आँसू पोंछती जाती थी।

स्वभाव से ही वीणा अपूर्व सुन्दरी थी। उसका-जैसा साफ़ और दगदगाता हुआ चेहरा तो शायद ही कभी देखने में आता हो। अपनी वेष-भूषा तथा ठाट-बाट बनाने की ओर वह सदा ही सचेष्ट रहती थी। अतएव बनाव-शृंगार के कारण अपनी द्विगुणित आभा से वह दर्शकों के मन और हृदय दोनों पर जादू डाल देती थी। सदा और सभी अवस्था में वीणा की मुखाकृति अनुपम और नयनाभिराम रहा करती थी। आज भी वह अपनी आँसुओं से भीगी हुई, मलिन एवं करुण मुखाकृति में सुदक्ष शिल्पी की बनाई हुई सुन्दर प्रतिमा-सी जान पड़ती थी।

वीणा बहुत ही कोमल और ओछी प्रकृति की थी। आवश्यकता से कहीं अधिक आदर और लाड़-चाव से उसका पालन होने के कारण उसकी प्रकृति का गठन नहीं हो सका। तितली के समान ही वह मनोहर थी, और वैसा ही उसका स्वभाव भी सुखान्वेषी और आमोदप्रिय था। संसार में किसी वस्तु के अभाव या दुःख-क्लेश की कल्पना तक वह नहीं सह सकती थी। जीवन के इस प्रथम आघात से पहले-पहल सचमुच उसका हृदय टुकड़े टुकड़े हो गया।

लीला धीरे धीरे दबे पाँव से आकर उसके पास खड़ी हो गई। कुछ क्षण तक वह मुग्ध और स्नेहमय दृष्टि से बहन की ओर ताकती रही और फिर धीरे से उसके पास बैठ गई। अन्त में वीणा के मस्तक पर हाथ रख कर लीला ने पुकारा—'दीदी'। उमड़े हुए आँसुओं के भार से लीला का गला रुँध गया था। वीणा ने जैसे ही मुँह फेर कर देखा, लीला के सजल नेत्रों से उसकी दृष्टि मिल गई।

"लीला, मेरा हृदय तो मानो टुकड़े टुकड़े हो गया है भाई!"

वीणा तकिया में मुँह छिपा कर फफक-फफक कर रोने लगी। लीला उसके मस्तक पर अपना हाथ सुहलाती रही उसके नेत्रों के जल से वीणा के मस्तक के बाल तर होने लगे।

टेबिल पर नेत्ररञ्जक फ्रेम के भीतर से अरुण का निश्चल फ़ोटो इन रोती हुई दोनों बहनों की ओर चुपचाप मुस्करा कर ताक रहा था।

शोक का वेग जब ज़रा कुछ शान्त हुआ तब लीला ने कहा— किसे मालूम था कि अरुण के भाग्य में ऐसी भी दुर्घटना बदी है! आजन्म दृष्टिहीन होकर रहना कितना भयङ्कर है, इस बात की कल्पना तक नहीं की जा सकती। ख़ैर, जितनी बुरी बातें हैं उनमें कुछ अच्छाई भी है। इस समय यही बात हमारे लिए सबसे बढ़-कर सान्त्वना है। तुम उन्हें एक-दम से नहीं खो सकी हो, यह क्या सबसे बढ़कर सन्तोष की बात नहीं है?

तकिया पर से मुँह उठा कर नेत्रों का जल पोंछते पोंछते वीणा ने कहा—अब इन सब बातों से मुझे कुछ भी सान्त्वना नहीं है।

"क्यों भाई? यदि सोच कर देखा जाय तो इस दुर्घटना में अब भी बहुत-सी अच्छाइयाँ हैं। युद्ध में अरुण एक-दम से मर भी तो सकते थे। उस दशा में उन्हें फिर से पाने की कोई आशा न रह जाती। अभी तो वे जीवित हैं। अब भी वे तुम्हें पहले के ही समान या उससे भी अधिक प्यार करते हैं। वे फिर तुम्हारे ही पास लौटे आ रहे हैं। इस अवसर पर यही सब बातें तो सान्त्वना के लिए सबसे बढ़कर हैं, दीदी!"

"तुम तो सबसे पहली ही बात नहीं समझ सकी हो लीला। इस दुर्घटना के बाद उनके साथ मेरा कोई सम्बन्ध ही नहीं रह सकेगा। उनकी वह दृष्टिहीन आँखें और मुँह मुझसे किसी तरह देखा ही न जायगा। यह बात जब मन में आती है तब मैं पागल-सी हो जाती हूँ। मेरे हृदय का अन्तस्तल रह रह कर न जाने

कैसा हो जाता है, यह तुम समझ न सकोगी। मन में यही बात आती है कि किसी ओर भाग जाऊँ जिससे कि चित्त को ज़रा-सी शान्ति मिल जाय।"

लीला बड़े स्नेह से वीणा के बिखरे हुए बालों की लटें सुलझा रही थी। उसने कहा—जीवन के पहले ही आघात से एक-दम से जी न तोड़ दो भाई। संसार-यात्रा में मनुष्य को न जाने कितनी ठोकरें खाकर और न जाने कितने आँधी-बवंडरों से होकर चलना पड़ता है। इतने ही ज़रा से क्लेश से विकल हो जाने में कैसे निर्वाह होगा? तुमने जीवन में कभी कोई क्लेश तो पाया नहीं, दुख सहने का बिलकुल अभ्यास भी नहीं है, इसी लिए पहले-पहल इतना अधिक क्लेश मालूम पड़ रहा है। धीरभाव से यदि सहती जाओगी तो धीरे-धीरे इसमें तुम्हें बिलकुल क्लेश ही न मालूम पड़ेगा। साथ ही तुम्हें इस बात का भी अनुभव होगा कि जिसे तुम प्यार करती हो वह इतनी आसानी से दूर भी नहीं किया जाता। इस समय तो तुम समझती हो कि उन्हें देखकर ही मैं डर जाऊँगी, किन्तु पीछे से तुम्हें मालूम होगा कि उन्हें सुख देने के अतिरिक्त संसार में तुम्हें और किसी बात की अभिलाषा ही नहीं है। इसके अतिरिक्त इस समय तो उन्हें सुखी करना तुम्हारा ही काम है दीदी। तुम्हारे प्रेम का आश्रय छोड़ कर उन्हें और कहाँ शान्ति मिलेगी? मुझे यह मालूम है कि संसार में कहीं भी मेरी आवश्यकता नहीं है। परन्तु मान लो कि यदि किसी को मेरी इतनी आवश्यकता होती तो क्या मैं कभी पीछे पैर हटा सकती थी?

टेबिल पर एक ख़ूबसूरत गुलदस्ते में फूल सजा कर रक्खे गये थे। वीणा ने उनमें से गुलाब का एक फूल उठा लिया और कहने लगी—ओह, मस्तक में इतनी पीड़ा है!

फूल को नाक के पास लगा कर लीला की बात के उत्तर

में वीणा ने कहा—तुम पैर पीछे नहीं हटा सकती थीं लीला यह मैं जानती हूँ। तुम सदा की ही ऐसी उजड्ड हो। चार आदमी जो काम करने में डरते हैं उसमें तुम बिना ही सोचे-समझे कूद पड़ती हो; यह तुम्हारा स्वभाव है। परन्तु तुम तो जानती हो कि मेरी प्रकृति बिलकुल इसके विपरीत है। मैं बहुत ज़रा-सी बात में घबरा जाती हूँ। दुःख-क्लेश मैं बिलकुल ही नहीं सहन कर सकती। अरुण के साथ विवाह करना तो दूर रहा, मै अब कभी उससे मुलाक़ात तक न कर सकूँगी। मा कहती थीं कि यह विवाह होने से मेरा सारा जीवन ही नष्ट हो जायगा।

"मा की बात भाड़ में जाय! इतनी बड़ी हो गई हो, अपनी बात ज़रा-सा अपने आप सोचना नही सीखा दीदी!"

क्रोध के आवेग में आकर लीला ने यह बात कह तो डाली, परन्तु तुरन्त ही उसने फिर अपने आप को सँभाल लिया और शान्तभाव से उसने कहा—यदि तुम सचमुच उन्हें चाहती हो तो दूसरे को यह सिखाने की ज़रूरत न पड़ेगी कि तुम्हें अब क्या करना उचित है या अनुचित है। इस प्रश्न का उत्तर तो स्वयं तुम्हारा हृदय ही दे देगा। इसी लिए मैं कहती हूँ कि अब व्यर्थ का रोना-धोना छोड़कर ज़रा ध्यान से सोचो कि ऐसी परिस्थिति में तुम क्या कर सकती हो। मेरे विचार से तो तुम्हारा यह सबसे पहला कर्तव्य है कि उन्हें लिख दो—"तुम्हें चाहे जो हो जाय या जैसे भी रहो, मेरे साथ तुम्हारा जो सम्बन्ध है वह अनिवार्य है। उसे कोई रोक नहीं सकता" तुम्हारी इस बात से उन्हें कितनी शान्ति मिलेगी इस बात का तुम अभी नहीं अनुभव कर रही हो।

"उन्हें यह बात मैं कभी नहीं लिख सकती। तुम पागल हुई हो लीला! मैं ऐसी बेवकूफ़ी करूँगी?" उत्तेजना की अधिकता से वीणा बिस्तरे पर उठ कर बैठ गई और उसने फिर कहना आरम्भ

किया—यह मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि उनके साथ मेरा विवाह अब नहीं हो सकेगा। ऐसी दशा में व्यर्थ की आशा देकर उन्हें पत्र लिखने में लाभ ही क्या होगा? यद्यपि इस घटना से मेरा वक्षःस्थल बिलकुल विदीर्ण हो गया है, तो भी उन्हें सच बात बतला देने का मुझमें यथेष्ट साहस है।

लीला टकटकी लगाये वीणा के मुँह की ओर ताक रही थी उसने कहा—यदि तुमने सोच-समझ कर दृढ़ रूप से इस बात का निश्चय कर लिया है तो फिर इसमें कुछ कहने-सुनने की बात ही क्या है? मुझे अब जाकर मा से कह देना चाहिए कि वे निश्चिन्त हो जायँ। उन्होंने ही व्यस्त होकर मुझे तुम्हारे पास भेजा था। सोचा था कि तुम प्रेम के फेर में पड़कर उन्हें कोई आशाजनक पत्र न लिख दो। उन्हे तो पहले से ही समझ लेना चाहिए था कि और चाहे कोई कुछ भी करे, किन्तु मेरी वीणा ऐसा काम कभी न करेगी।

अन्त में जरा-सा हँस कर लीला ने फिर कहा—तुम लोगों को तो मालूम ही है कि मैं बहुत रूखी और निर्मोह हूँ। खाती-पीती हूँ, घोड़ा दौड़ाती इधर-उधर घूमती रहती हूँ, बहुत किया तो जरा-सा पढ़ती-लिखती हूँ। परन्तु प्रेम-सम्बन्धी बातों पर न तो कभी किसी प्रकार का विचार करती और न उस विषय को अच्छी तरह से समझती ही हूँ। तुमने प्रेम का जो नमूना आज दिखलाया है भाई, वही यदि प्रेम है तो उस चीज को मैं दूर से ही नमस्कार करती हूँ। मेरा यह रूखा ही स्वभाव अच्छा है भैया! उस चीज को किसी दिन भी समझने की मुझे आवश्यकता नहीं है।

वीणा का मुँह लाल हो गया। उसने गम्भीरभाव से कहा—मा जो कहती हैं कि तुम्हें किसी तरह की माया-ममता नहीं है, तुम बिलकुल हृदयहीन हो, यह बात सच है। यदि ऐसा न होता तो ऐसे शोक के समय तुम इस तरह मेरी हँसी न उड़ातीं।

लीला ने हँस कर कहा—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ दीदी। व्यर्थ में नाराज़ न होओ। जिसे तुम शोक समझ रही हो वह शोक नहीं है, वह शोक का अभिनय भर है। यह तुम्हारे समाज का नियम और फ़ैशन है कि इस तरह की घटना होने पर नायिका का हृदय-द्रावक पतन, मूर्छा, शोक आदि होना उचित है। उस नियम के विपरीत तुम भी नहीं चल सकती हो। ऐसी दशा में जो जो करना आवश्यक है वह सब कर चुकी हो, दो-एक घंटे में बिलकुल चंगी हो जाओगी। अब कोई चिन्ता या भय की बात नहीं है। जिसके हृदय पर सचमुच आघात पहुँचता है, क्या वह कभी उस समय बैठ कर अपने हित-अहित पर बारीकी के साथ विचार कर सकता है? अस्तु, अब मैं जाती हूँ, तुम्हें सान्त्वना देने की कोई विशेष आवश्यकता तो दिखाई नहीं पड़ती! अच्छा, तो अरुण की चिट्ठी का जवाब क्या होगी?

"उसका जवाब लिख कर मैंने टेबिल पर रख लिया है। किन्तु लीला, तुम सदा ही मेरे साथ ऐसा हृदयहीन व्यवहार करती हो, जो मुझे बिलकुल असह्य हो जाता है।"

रूमाल उठाकर वीणा ने अपनी आँखे ढँक लीं।

उस ओर दृष्टि तक न डाल कर लीला ने कहा—इतनी ही देर में लिख डाला? कहाँ है, जरा देखूँ तो?

टेबिल पर से खुला हुआ पत्र उठाकर लीला पढ़ने लगी—

"प्रिय अरुण,

तुम्हारे दुर्भाग्य के समाचार ने मेरे हृदय को चूर-चूर कर दिया। कितनी यन्त्रणा में मैं आज का दिन बिता रही हूँ, यह लिख कर नहीं सूचित कर सकती। तुमने हमारे विवाह का प्रस्ताव रद्द कर देने की इच्छा प्रकट की है। बहुत कुछ सोचने-समझने पर मैं भी अब यही उचित समझ रही हूँ। कारण, अब तुम्हें जैसी स्त्री की आवश्यकता है, उससे मैं बिलकुल विपरीत हूँ। मैं

ज़रा-सी ही बात में बिलकुल व्याकुल हो जाती हूँ, धैर्य और सहिष्णुता मुझमें बिलकुल नहीं है। तुम्हें आजन्म सेवा और यत्न की ही आवश्यकता है, परन्तु उसके लिए मैं बिलकुल असमर्थ हूँ। अतएव तुम्हारी स्त्री होने के उपयुक्त मैं नहीं हूँ। मा की भी यही सम्मति है कि इस विवाह के न होने में ही लाभ है। तुमसे मुलाक़ात होने पर हम दोनों को ही क्लेश होगा, अतएव मैं समझती हूँ कि यह क्लेश स्वीकार करना भी हम लोगों के लिए निरर्थक है। मैं तुम्हें जीवन में कभी नहीं भूलूँगी। ईश्वर से प्रार्थना है कि तुम्हारा शेष जीवन जहाँ तक हो सके, सुख से बीते। अब मैं तुमसे विदा होती हूँ।

वीणा"

पत्र पढ़ कर लीला कुछ देर तक भौचक्का-सी खड़ी रही—यह क्या? कैसा निष्ठुर उत्तर है? पत्र में कहीं भी स्नेह, प्रेम या समवेदना का लेश तक नहीं है। मनुष्य जिससे प्रेम करता है, क्या दुरवस्था के समय उसे एक ही शब्द में झाड़ दे सकता है?

वीणा ज़रा देर तक लीला की ओर ताकती रही, बाद को उसने कहा—लीला, इसे तू डाक में डाल देगी? अरुण ने लिखा है कि कुछ दिन मैं किरण के पास रहूँगा। अतएव यह पत्र बसन्तपुर के पते से ही भेजना ठीक होगा।

और कोई बात कहने की इच्छा लीला को नहीं थी। पत्र हाथ में लेकर वह कमरे से निकल गई।

( ६ )

दिन ढलते समय क्लब के टेनिसकोर्ट में वीणा अपने मित्रों के साथ टेनिस खेल रही थी। अन्त में लीला की ही बात ठीक निकली। सारा दिन अकेले कमरे में बन्द रहने और ढेर के ढेर आँसू बहाने के बाद उसके हृदय का भार हलका हो गया था।

वह तितली के समान ही मनोहर थी और उसी के समान चञ्चल और ओछी प्रकृति की थी। उसमें किसी तरह की गम्भीरता नहीं थी। जैसे वह ज़रा-सा ही आघात पड़ने पर व्याकुल हो उठती थी, वैसे ही ज़रा देर में ही उसे सब भूल भी जाता था। कोई भी बात उसके अन्तःकरण में अपना स्थायी प्रभाव नहीं डाल पाती थी।

वीणा के साथ लीला भी क्लब में आई थी, किन्तु खेल में उसने कोई भाग नहीं लिया, बरामदे में खड़ी होकर सब का खेल देख रही थी। प्रतिदिन की भाँति आज न तो उसका चित्त ही प्रसन्न था और न उसमें वह स्फूर्ति ही थी। अपने नियमित पढ़ने-लिखने या और काम-काज मे सवेरे से वह एक बार भी चित्त नहीं लगा पाई। अरुण की शोचनीय अवस्था लीला के चित्त से किसी तरह उतरती ही न थी। उसके सम्बन्ध में अपनी यह व्याकुलता देख कर वह स्वयं मन ही मन विस्मित हो रही थी। अरुण के दुर्भाग्य का हाल सभी लोगों ने सुना था और सुनते ही ज़रा सा 'हाय हू' करके या चार बूँद आँसू टपका कर अपने कर्तव्य से छुट्टी ले ली थी। इतने में ही उन सबके हृदय का भार हलका हो गया था। वे लोग अपना प्रतिदिन का काम-काज भी जम कर करने लगे थे। फिर लीला ऐसा क्यों न कर सकी? जिसे कभी आँख से देखा नहीं था, जिससे कभी की कोई जान-पहचान नहीं थी, उसकी विपत्ति का हाल क्षण-क्षण में याद आ जाने के कारण लीला के नेत्रों में आज केवल आँसू ही आँसू उमड़ रहे थे। उसे कुछ समझ ही नहीं पड़ता था कि यह बात वह किससे कहे या क्या करे।

कोर्ट के उस किनारे से टेनिस का बैट हाथ में लिये दौड़ती हुई निर्मला आई और कहने लगी—लीला, खेलने नहीं चलेगी, खड़ी क्यों है?

लीला ने उत्तर दिया कि आज मैं खेलूँगी नहीं भाई ! तुम लोग जाकर खेलो। आज मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा है ।

निर्मला बहुत समीप आ गई। लीला के मुँह के पास मुँह करके कुछ क्षण तक तो वह ध्यान से देखती रही और बाद को कौतुक के साथ कहने लगी---तुझे आज क्या हो गया है लीला ? तेरी तबीयत खराब होते या चेहरा मलीन होते तो और कभी देखा नहीं हमने। ये सब बातें तो एकदम से हम लोगों के ही पल्ले पड़ी हैं। परन्तु आज तो कुछ उल्टी ही बात देखने में आती है। नहीं भाई, चलो, एक 'पार्टनर' के बिना मेरा खेल ही बिगड़ा जा रहा है।

निर्मला लीला का हाथ पकड़ कर खींचने लगी। परन्तु उसने हाथ छुड़ा कर कहा---नहीं भाई निर्मला, आज मुझसे खेला न जायगा। सचमुच मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। देखो, उधर प्रभा खड़ी है, उसे बुला कर तुम लोग खेलो।

"उसे कुछ खेलना नहीं आता। तुम न चलोगी तो उसी को लेकर खेल लूँगी। परन्तु यह तो बताओ कि तुम्हें आज हुआ क्या है ? यहाँ तुम मन मारे चुपचाप खड़ी रहोगी तो हम खेलने ही कैसे जायँगी ?"

बाहर मोटर के हार्न के बज उठते ही लीला सतर्क-भाव से उस ओर ताक रही थी। प्रतीक्षा करने पर भी जब उसे कोई न दिखाई पड़ा तब उसने कहा---होगा क्या ? तबीअत ज़रा अच्छी नहीं है। परन्तु किरण आज अभी तक क्यों नहीं आये ? वे तो कभी इतनी देरी नहीं करते थे !

लीला की ओर ताक कर निर्मला खिलखिला कर हँस पड़ी और कहने लगी---तुम भी खूब हो। इसलिए मुँह पर संसार भर का भार लटकाये खड़ी हो ? ख़ैर, इतनी देर के बाद रहस्य खुला है। इतनी परेशानी ! इतनी तन्मयता है किरण के लिए !

अपना हृष्ट-पुष्ट और बेला के फूल के समान सुन्दर मुँह लीला के मुँह के पास लाकर निर्मला झूम झूम कर प्रेम और तन्मयता-सम्बन्धी एक गीत गाने लगी। इससे लीला क्रुद्ध हो उठी और उसे धक्का देकर कहा—दूर हटो यहाँ से। पचास बार कह दिया कि किरण मेरा मित्र है। उसके सम्बन्ध में तुम लोग किसी तरह का हँसी-ठट्ठा न किया करो।

निर्मला कहने लगी—बाप रे, इस लड़की का मिजाज तो एक-दम फ़ौजी है। मरती रहो, यहीं अकेली खड़े खड़े। किरण के आने पर इसका बदला लिये बिना यदि और काम किया तो मेरा नाम नहीं।

निर्मला जब चली गई तब लीला जरा-सा इधर-उधर टहल कर 'हाल' में गई। उसके पिता और मिस्टर घोष ब्रिज खेलने में जुटे थे। वह खड़ी खड़ी खेल देखने लगी। फिर मिस्टर घोष के चौड़े और मजबूत कन्धे पर हाथ रख कर लीला ने मचलते हुए कहा—चाचाजी, आपने एक नया मकान और बगीचा खरीदा है? क्या वहाँ कभी हम लोगों को ले न जायँगे? बताइए, कब चलना होगा।

मिस्टर घोष ध्यान-पूर्वक तास का हिसाब लगा रहे थे। एकाएक आक्रमण होने पर मुँह उठा कर उन्होंने कहा—जिस दिन तुम चाहो उसी दिन जा सकती हो। तुझे भी क्या निमन्त्रित करके ले जाना होगा पगली? निर्मला से सलाह करके अपना सब ठीक कर लो। कल या परसों, जब चाहो तभी जा सकती हो।

उन लोगों ने खेल की ओर फिर अपना ध्यान आकर्षित किया। लीला खिन्नभाव से टहलती-टहलती मा के पास आकर खड़ी हो गई।

बिजली के उज्ज्वल प्रकाश से सारा क्लब-घर धवलित हो उठा था। कमरे कमरे में बिलियार्ड और तास का खेल हो रहा था।

बरामदे में तरुणियों का दल अपने भक्त उपासकों से घिरा हुआ बातचीत करने में मग्न था। बीच बीच में उनकी मधुर हँसी की ध्वनि और बात-चीत की गुनगुनाहट अस्पष्ट भाव से सुनाई पड़ रही थी। प्रवीण और प्रौढ़ कुलकमलाओं का दल एकत्र होकर आपस की बात-चीत से दिल बहला रहा था।

मिसेज़ दत्त एक प्रकार की पटना शहर की गज़ट थीं। शहर भर के घर घर की ख़बर तो मानो उनकी उँगलियों के पोरों पर लिखी रहती। किसके घर में क्या और कैसा भोजन बनता है, किस घर के लड़के कितनी रात को घूम कर लौटते हैं, किस घर की स्त्रियाँ लज्जा और शील की मर्यादा के बाहर जा रही हैं, किस घर में स्वामी-स्त्री में सद्भाव नहीं है, ये सब बातें उन्हें सदा कण्ठस्थ रहतीं। जिसे वे एक बार देख लेतीं—उसका स्वभाव, चाल-चलन और ग्रह-नक्षत्र सब विस्तारपूर्वक बतला देतीं। उनकी बात के विरोध में कोई भी प्रमाण उपस्थित किया जाता किन्तु उनके विचार में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता था। एक ज्ञानी के समान वे हँस कर कहतीं—"वाह, हम लोग सब जानते हैं। हमसे चालाकी!" इसके बाद फिर किसी की न चलती।

लीला जब वहाँ पहुँची तब यही प्रथितयशा मिसेज़ दत्त उसकी मा को सान्त्वना देकर कह रही थीं—तुमने बहुत अच्छा किया दीदी। ऐसी परिस्थिति में विवाह का प्रस्ताव रद्द कर देने के अतिरिक्त और उपाय ही क्या था? लड़की को हाथ-पैर बाँध कर पानी में तो फेंक नहीं सकती हो। फिर लड़की-जैसी लड़की है। ऐसी लड़की पटना की बात तो जाने दीजिए, सारे बङ्गाल में भी खोजने से नहीं मिलेगी, यह बात मैं डंके की चोट पर कह सकती हूँ। तुम्हें संकट किस बात का है जो ऐसी सोने की प्रतिमा को अन्धे के हाथ में सौंप दो?

इस सहानुभूति से मिसेज़ राय एक-दम से गल गईं। पास

ही एक सोफ़ा पर बैठ कर वीणा अपने मित्रों से बात-चीत कर रही थी। एक बार स्नेहमय दृष्टि से उसकी ओर ताक कर मिसेज राय ने कहा—यही बात तो पीछे से तुम लोग भी कहतीं भाई। इसमें मुझसे किसी तरह का अन्याय तो नहीं हुआ? विशेषतः ऐसी दशा में जब कि यह प्रस्ताव स्वयं उसी ने किया था। लड़की सवेरे से कमरे से बाहर नहीं निकली, बेचारी रो रोकर मर गई। मुझे तो इसी बात की बड़ी चिन्ता थी कि यह बोलेगी कैसे। साँझ होते होते जब कपड़े बदल कर वह नीचे आई तब मेरे जी में जी आया। खैर, अब इसकी तबीअत कुछ सँभल गई, इसी लिए यहाँ ले आई हूँ कि चार आदमियों से मिलने-जुलने से मन जरा जल्दी हलका हो जायगा।

मिसेज दत्त ने कहा—अच्छा किया, जरा-सा खेले-कूदे, चार लड़कियों से मिले-जुले, सब भूल जायगा। ऐसी लड़की के विवाह की क्या चिन्ता है? इसे तो कितने लोग सिर पर उठा कर ले जायँगे। यहीं दो-चार दिन में कलकत्ते से मेरी बहन का एक लड़का आ रहा है। सौ लड़कों में एक लड़का है। कैसा सुन्दर चेहरा है! अरुण कहाँ रहता है उसके सामने। बंगाल में बड़ी भारी जमींदारी है। राजा की उपाधि है उन लोगों की। आने दो, तब देखना।

इसी बीच में किसी स्त्री ने कहा—आज-कल सरला नहीं दिखाई पड़ती। उसने तो एक तरह से इधर का आना ही बन्द कर दिया। है यहीं या कलकत्ते चली गई?

मिसेज राय ने कहा—नहीं, अभी यहीं है। उस दिन उसने एक चिट्ठी लिखी थी कि तबीअत कुछ खराब है, इसी से नहीं आ पाती हूँ।

मिसेज दत्त ने जरा-सा हँस कर कहा—वह सब व्यर्थ की बात है। घर के पास मैं रहती हूँ। मुझसे क्या कोई बात छिपी रह

सकती है? जो जो मामले चल रहे हैं आज-कल। बात अधूरी छोड़ कर वे चुप हो गईं।

मिसेज़ दत्त के चुप होते ही "क्या हुआ? कैसा मामला है" आदि प्रश्न चारों ओर से समान स्वर में सुनाई पड़ने लगे। मामला चाहे कुछ भी रहा हो, इतनी देर के बाद बात-चीत के लिए एक रोचक विषय का पता अवश्य चल गया।

अब मिसेज दत्त जम कर बैठ गईं और एक लम्बी-चौड़ी भूमिका बाँधनी शुरू कर दी। उन्होंने कहा—मामला क्या है? स्वामी-स्त्री में बहुत अनबन हो गई है। लड़कियाँ थोड़ी अवस्था में अपने हृदय को अच्छी तरह से पहचान तो पाती नहीं, केवल ऊपरी चटक-मटक देखकर भूल जाती हैं। चाहे कुछ भी कहो दीदी, इन सब परदेशियों के साथ विवाह करने के तो मैं बिलकुल विपक्ष में हूँ। ऐसे विवाहों से कभी अच्छा परिणाम होते मैंने नहीं देखा। सरला को ही देखो, पहले तो सोचा-समझा नहीं, जानती थी कि मैं बड़ा अच्छा कर रही हूँ। अब देखती हो न कि कैसी-कैसी बीत रही है? बात समाप्त करके वे एक बार विजय के गर्व से सब की ओर ताकने लगीं।

"परन्तु सरला तो बड़ी अच्छी लड़की है। उसके साथ अनबन होने का क्या कारण है?"

"कारण क्या है? मरहठे तो एक-दम रूखे और गँवार होते हैं। वे क्या कभी हम लोगों से मिल-जुल कर चल सकते हैं? चाहे कितना ही पढ़-लिख जायँ जाति का धर्म कहाँ जा सकता है? ये पंजाबी, मंदराजी, मरहठे सब एक तरह के हैं। बङ्गाली-जाति में जो कोमलता और सज्जनता है वह किसी और जाति में तो मैंने देखी नहीं।"

मिसेज राय ने कहा—सरला को यदि इतना कष्ट मिल रहा है तो उन दोनों में सम्बन्ध-विच्छेद हो जाना ही अच्छा है।

यदि प्रेम ही नहीं है तो व्यर्थ में पारिवारिक अभिनय करके अपने जीवन मे और भी अधिक दुःखों का आवाहन करने की क्या आवश्यकता है?

"लड़का जो है। लड़के को वह नहीं छोड़ना चाहती। मैंने तो कई बार इस सम्बन्ध में उससे बात-चीत की थी। चर्चा छिड़ते ही बेचारी रो पड़ती है, कहती है कि बच्चे का मुँह देखकर मै सब कुछ सहने को तैयार हूँ।"

वहाँ जितनी महिलायें थीं, उन सबके हृदय में दया का स्रोत उमड़ आया और सब सरला की दुरवस्था पर सहानुभूति प्रकट करने लगीं। इधर मिसेज दत्त इस सोच-विचार में पड़ी थीं कि अब ऐसा कौन-सा प्रसंग छेड़ा जाय, जिससे कि सभा जमी रह सके।

लीला को ये सब बाते अच्छी नहीं लग रही थीं। विरक्त होकर वह 'हाल' से बाहर निकल गई।

उस दिन किरण जरा-सा विलम्ब से आया था, अतएव लीला ने उससे कहा—जरा भी देर और हो जाती तो आज तुम्हारे साथ हमारा बड़ा करारा झगड़ा हो जाता।

"अपराध ?" कहकर किरण ने लीला का हाथ पकड़ लिया। खुले हुए बरामदे से चन्द्रमा का मुक्त प्रकाश उन दोनों के मुँह और आँखों पर मानो चाँदी की धारा बरसा रहा था।

लीला के कुछ कहने से पहले ही निर्मला आकर उन दोनों के पास खड़ी हो गई। उसने कहा—कहिए किरण बाबू, शायद अभी चले ही आ रहे है आप ? आज बहुत विलम्ब कर दिया। लीला साँझ से ही इतनी विकल थी।

बात समाप्त करके निर्मला व्यंग्यमय कटाक्ष से लीला की ओर ताक कर हँसने लगी। उसकी ये व्यंग्यमय बातें किरण की समझ में न आई। उसने सरल भाव से कहा—क्या इसी लिए विकल थीं ? बेकली की कौन-सी बात थी लीला ? क्या कोई आवश्यक कार्य्य था ?

निर्मला ने निरीह भाव से कहा—आप भी न जाने कैसी प्रकृति के आदमी हैं! आवश्यकता के बिना क्या कोई किसी की खोज ही नहीं कर सकता? खैर, अब आप लोग बैठिए, मैं तो घर जा रही हूँ। रात हो गई है।

किरण ने कहा—अभी क्या रात हुई है? तुम भी बैठो, जरा बातचीत करें।

"नहीं, आज मुझे कुछ काम है। एक गीत का अभ्यास करना है। अच्छा हुआ याद आ गई। कहिए किरण बाबू, आप को वह गीत याद है जिसके पहले चरण का भाव है "मिलन हुआ तो, लेकिन तब हुआ जब चन्द्रमा भी अस्त हो गया और वसन्त भी निकल गया।" जरा सुनाइए तो।

ज़रा-सा सहम कर माथा खुजलाते-खुजलाते किरण ने कहा—यही क्या; मैं तो कोई भी गीत नहीं जानता, यह तो तुम्हें मालूम ही है।

बात समाप्त करते ही निर्मला रूमाल से मुँह दाब कर हँसती हुई वहाँ से चल पड़ी, किरण के उत्तर की प्रतीक्षा उसने नहीं की।

किरण यह कुछ न समझ सका। उसने हँसकर कहा—निर्मला भी कैसी पगली जान पड़ती है! परन्तु लीला, क्या तुम सचमुच मुझे खोजती रही हो? क्या कुछ काम था?

"काम ही नहीं था? बहुत आवश्यक काम था। दिन नहीं ढला था, तभी से तुम्हें खोजते-खोजते हैरान हूँ, इधर तुम्हारे आने का वक्त ही नहीं हुआ अभी तक! किस काम में लगे थे इतनी देर तक?"

पछतावे के साथ किरण ने कहा—तो शायद इसी लिए तुम रुष्ट हो गई हो। सचमुच लीला, मैं एक काम में फँस गया था, उसी को समाप्त करने में विलम्ब हो गया। मुझे क्या पता कि तुम मुझे खोज रही हो? अस्तु, कौन-सा ऐसा काम था, जिसके लिए तुम मुझे खोजती रही हो?

"एक बहुत जरूरी बात करनी थी।"

किरण ने हँस कर कहा—खैर, वह बहुत जरूरी बात तो पीछे सुनी जायगी। अभी तुम्हें मुझे एक बहुत बड़ा उलाहना देना है! तुम्हें गाना बहुत अच्छा आता है, परन्तु इतने दिन में तुमने कभी मुझसे इस सम्बन्ध में चर्चा तक नहीं की। मैं तो समझता था कि हमारी-तुम्हारी मित्रता में कोई बात छिपी न रहेगी।

लीला ने कहा—तुमसे किसने कहा था कि मुझे गाना आता है?

"कहेगा कौन? मैंने स्वयं सुना है। आज मैदान में तुम गा रही थीं। अब जब तक गाना न सुना दोगी, तुम्हारी और कोई बात न सुनूँगा। इतने दिनों तक मुझसे चर्चा तक नहीं की?"

लीला ने हँस कर उत्तर दिया—इसमें क्या मेरा अपराध है? लंदन में गाना-बजाना मैंने खूब अच्छी तरह से सीखा था। यहाँ आकर जब देखा तब सब लोग वीणा की ही खुशामद में रात-दिन व्यस्त रहते हैं। मेरी बात पूछने या मेरा गाना सुनने का किसी को अवसर ही नहीं है। किसी ने मेरे सम्बन्ध में जानने की कोई चेष्टा ही नहीं की और मैंने भी किसी के सामने अपने को प्रकट नहीं किया।

"अच्छा किया। किन्तु आज तो अब नहीं छूटने पाती हो। दो-एक गाने सुनाने ही पड़ेंगे।"

"किन्तु किरण! वे लोग बहुत ही हँसेंगे।"

"उनके हँसने से हमें क्या हानि-लाभ है?"

किरण ने जबरदस्ती हाथ पकड़ कर लीला को पियानो के पास बैठा दिया।

( ७ )

नवयुवतियों में कानाफूसी शुरू हो गई। वे लोग चुपके-चुपके लीला की खिल्लियाँ उड़ाने लगीं। कोई कहती—मैं तो यही जानती

थी कि लीला एक घुड़सवार है, परन्तु वह गायिका कब से बन बैठी ? कोई कहती—देखो न, किरण कैसे प्यार से खींच कर उसे पियानो के पास बैठाल रहा है ? यह बेहयापन देखकर तो शरीर जल उठता है। कोई कहती—कैसी निर्लज्जता से ये लोग घूमते-फिरते हैं, इन्हें किसी तरह की हया-ग्लानि तो है नहीं ? और कोई कहती—अरे तुम लोग चुप तो रहो, जरा लीला के गाने का नमूना ही देखा जाय ?

परन्तु इन सब बातों की ओर लीला का ध्यान नहीं था। वह तो चित्त एकाग्र करके एक स्वर बजा रही थी। उसकी उँग-लियों का अभ्यास बहुत दिनों से छूट गया था, अतएव उन्हें बहुत धीरे-धीरे चला कर पहले वह सारे स्वरों पर अधिकार कर लेने का प्रयत्न कर रही थी।

चारों ओर दबी आवाज से जो हँसी उड़ रही थी, उससे उत्ते-जित होकर मिसेज राय उठ कर आईं और कहने लगीं—लीला एकदम गँवार है। वह तो किसी तरह का बात-व्यवहार जानती ही नहीं। उसके कारण अभी ही एक हास्यजनक घटना हुई जा रही है।

"लीला, उठ आओ। तुम्हारा तो इन सब पर अभी इतना हाथ बैठा नहीं। पहले घर पर ख़ूब अभ्यास कर लो, तब तो चार आदमियों के बीच में बजाने लायक़ हो सकोगी ?

मा की बातों की ओर लीला का कान नहीं था। इतने समय में उसने सारे स्वरों पर अधिकार कर लिया था। पियानो के स्वर में स्वर मिला कर बड़ी ऊँची आवाज से वह गाने लगी। जो गीत वह गा रही थी, वह नोबुल जानसन का विख्यात गीत "इफ़ दाउ आर्ट ब्लाइंड" था।

कमरे की कानाफूसी और हँसी-ठट्ठा एकाएक रुक गया। लीला के जोरदार गले के मधुर स्वर से सारा कमरा गूँज उठा।

मिसेज राय चकित और विस्मित होकर अपने पास की कुर्सी पर बैठ गईं। गीत का भाव यह था—

"हे मित्र, यदि तुम दृष्टिहीन होते तो मैं भी अपनी दृष्टि नष्ट कर डालता, जिससे भविष्य में तुम्हारा वह अन्धापन मुझे तुम्हारे पास से दूर न रख सकता।

"हे मित्र, यदि तुम मूक होते, तो मैं भी अपना स्वर रुद्ध कर डालता, जिससे मेरी वह चिरनीरवता मुझे तुम्हारे समीप खींच लाने में समर्थ होती।"

इस आत्मत्यागी प्रेम का करुण स्वर रो-रो कर सारे कमरे में लोटने लगा। गीत सुनने के लिए दल के दल स्त्री-पुरुष आकर जम गये, कमरे में तिल भर का भी स्थान न रह गया। दूसरे कमरों में बैठ कर जो लोग 'ब्रिज' और 'बिलियर्ड' खेलने में लीन थे, वे भी मन्त्रमुग्ध-से होकर दौड़ आये और भीड़ ठेल कर एक बार गायिका को देख लेने का व्यर्थ प्रयत्न करने लगे।

भाव के आवेग में आकर लीला उस समय अपने आप को भूल गई थी, उसके दोनों नेत्र बन्द थे, उच्छ्वास के भार से आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। गीत में वह अपने समस्त हृदय को मिश्रित करके गा रही थी—

"यदि तुम दीन-हीन होते हे मित्र, तो मैं अपना सारा सम्मान और अभिमान चूर्ण कर डालता, जिससे नम्र और सम्मान-शून्य होकर तुम्हारे समीप निवास कर पाता।

"हे मित्र, यदि तुम वृद्ध होते, तो मैं अपना यौवन नष्ट कर डालता, जिसमें तुम्हारी प्रौढ़ता मुझे तुमसे दूर न कर सकती।

"हे मित्र, यदि तुम्हारी मृत्यु हो जाती तो मैं भी अपना जीवन त्याग देता, वह केवल इस आशा से कि मरने के बाद तुम्हारा संग पा सकूँगा।"

दो तीन आवृत्ति के बाद गीत की अन्तिम कड़ी जब क्रमशः बहुत मृदु होकर अस्फुट क्रन्दन-ध्वनि के समान मिल गई, तब पहले कुछ समय के लिए सभी लोग निस्तब्ध रह गये। बाद को चारों ओर से प्रशंसा की बाढ़-सी आ गई, और वहाँ एक विचित्र ढंग का कोलाहल मच गया।

कमरे के कोने में वीणा अपने एक सिविलियन मित्र से बात-चीत कर रही थी। जिस समय सब लोग मिल कर मुक्त कण्ठ से लीला की प्रशंसा कर रहे थे, उसी समय वह रोते रोते वहीं पर मूर्च्छित हो उठी।

तब तो एक दूसरा ही और बड़े जोर का कोलाहल मच खड़ा हुआ। मिसेज़ दत्त की सहायता से उठा कर मिसेज़ राय ने वीणा को एक सोफ़े पर लेटाया। क्षण भर पहले जिन लोगों ने लीला की प्रशंसा की झड़ी लगा दी थी, वे ही अब वीणा के प्रति अधिक सहानुभूति होने के कारण एक-स्वर से उसकी निन्दा करने लगे।

"लीला कितनी निष्ठुर है। उसके तो मानो हृदय है ही नहीं। यह जानते हुए भी कि बहन की मानसिक अवस्था बहुत शोचनीय है, उसे इस समय ऐसा गीत गाना क्या उचित था?"

"यह तो घाव पर नमक छिड़कना था।"

"जानती तो हो कि वह लड़की सदा की गँवार है। उसे क्या किसी के प्रति माया-ममता है? उसे तो संग्राम-भूमि में जाना चाहिए था।"

"ठीक कहती हो दीदी, यह लड़की तो नहीं है, मानो तुर्की सवार है, रात-दिन मैदानों में घोड़ा दौड़ाती फिरती है।"

इस सब निन्दा-स्तुति पर लीला ने कर्णपात तक न किया, वह दौड़ कर छत पर भाग गई। उच्छ्वासों के आवेग से उस समय उसका अन्तस्तल फूल उठा था, वह दोनों हाथों से मुँह ढक कर रोने लगी।

कुछ देर के बाद जब नीचे का कोलाहल जरा कुछ शान्त हुआ, तब किरण उसके पास आकर बैठ गया और कहने लगा—लीला ?

लीला ने मुँह उठाकर उसकी ओर ताका। उस समय सन्ध्या के अन्धकार से चारों दिशायें आच्छादित थीं, मानो चारों ओर की अट्टालिकायें एक महीन और काले पर्दे से ढकी थीं। आम की घनी पत्तियों के बीच-बीच से खिड़कियां से निकली हुई प्रकाश की रेखायें इधर-उधर से दिखाई पड़ रही थीं, अन्धकारमय तथा मलिन आकाश के नीचे ताड़ के वृक्षों की पंक्ति चित्र से अङ्कित फलक के समान मस्तक ऊँचा करके खड़ी थी।

"आज कैसा सुन्दर गीत गाया था, लीला। तुम्हारा वह स्वर इस समय भी मेरे कानों में गूँज रहा है।"

"रहने भी दो खिल्लियाँ उड़ाने को। इसी लिए तो मैं किसी के सामने गाती नहीं हूँ।"

"यह क्या खिल्ली उड़ाने की बात है? खैर, इस सम्बन्ध में हमारा-तुम्हारा समझौता बाद को होता रहेगा। मालूम होता है कि अरुण का समाचार तुम लोगों को भी मिल गया है। साँझ से मैं यही सोच रहा था कि अपनी दुर्दशा की सूचना उसने तुम लोगों को दी है या नहीं, परन्तु शिष्टता के विरुद्ध होने के कारण पूछा नहीं।"

"यदि तुम्हें प्रसन्नता हो तो एक बात की सूचना मैं तुमको और दे दूँ। अरुण की चिट्ठी पाते ही वीणा ने उसके साथ अपना सारा सम्बन्ध तोड़ दिया। मैंने उसे कितना समझाया, परन्तु कुछ फल न हुआ।"

"यदि तुम वीणा होतीं तो क्या अन्धा हो जाने पर भी अरुण के साथ विवाह करतीं?" ताराओं के धुँधले प्रकाश में किरण फिर उत्सुक दृष्टि से लीला का मुँह ताकने लगा।

"क्या इसमें भी कुछ सन्देह है ? उसकी ऐसी असहाय अवस्था में जब कि उसके जीवन में और भी अधिक प्रेम तथा सेवा-यत्न की आवश्यकता है, मैं उसे त्याग सकती थी ? यदि ऐसा कर दिया जाय, तो वह जीवित ही किसके सहारे पर रह सकेगा ?"

कुछ देर तक किरण चुपचाप सोचता रहा। बाद को उसने पूछा कि वीणा की यह बात बतलाने से पहले मेरी प्रसन्नता या अप्रसन्नता का उल्लेख करने का तुम्हारा क्या अभिप्राय था ?

लीला ने हँस कर उत्तर दिया—यह बात मैंने इसलिए कही है कि अरुण के हट जाने पर वीणा के सम्बन्ध में तुम्हें भी एक सुअवसर मिल जायगा।

किरण भी हँसने लगा। उसकी हँसी में उपेक्षा थी, तिरस्कार था। उसने कहा—मैं कम से कम इसके लिए अधिक व्यस्त नहीं हूँ, यह बात तुम्हें भी मालूम है। परन्तु तुम्हारे कहने का शायद यह तात्पर्य है कि जिसे तुम चाहती हो, उसके साथ विवाह करोगी ही, आगे चल कर उसकी जो भी दशा हो।

"मैं तो कल्पना तक नहीं कर सकती कि इसके विपरीत भी कोई कर सकता है।"

"परन्तु यह बड़े ऊँचे दर्जे का त्याग है लीला! जीवन भर के लिए इतना बड़ा त्याग करना क्या कोई साधारण बात है ?"

"मेरी तो धारणा है कि यदि वास्तविक प्रेम हो तो ऐसा त्याग करने में जरा भी क्लेश नहीं हो सकता। मुझे तो अब भी आशा है कि वीणा किसी दिन अपनी भूल समझेगी और अरुण को फिर से स्वीकार करेगी। इसी लिए मैंने आज वह गीत गाया था!

"तुम्हारी बुद्धि बिलकुल बच्चों की-सी है लीला! तुम क्या समझती हो कि गीतों में जो जो बातें गाई जाती हैं, वे मनुष्य के व्यावहारिक जीवन में भी सम्भव हैं ?"

लीला अपनी विश्वासमय तथा प्रशान्त दृष्टि किरण के मुँह पर डाल कर कुछ क्षण तक उसकी ओर गम्भीर भाव से चुपचाप ताकती रही। बाद को उसने कहा—क्यों सम्भव नहीं है? तुम्हें विश्वास नहीं होता?"

"कह नहीं सकता। परन्तु यदि ये सारी बातें सच हो सकें तो जीवन सचमुच बड़ा सुखमय हो जाय।"

किरण अन्यमनस्क-भाव से गीत की चौथी कड़ी गुनगुना कर गाने लगा। "हे मित्र, यदि तुम वृद्ध होते तो मैं अपना यौवन त्याग देता, जिससे तुम्हारी अवस्था की अधिकता मुझे तुमसे दूर न कर पाती।"

कई क्षणों के बाद किरण ने पुकारा—लीला, ज़रा मेरी ओर तो देखो।

लीला ने अपनी काली-काली आँखों की सरल दृष्टि उठा कर किरण के मुँह पर जमा दी।

"तुम्हारे विचार से मेरी अवस्था कितनी होगी लीला?"

लीला ने ज़रा-सा सोच कर कहा—तीस-पैंतीस वर्ष की।

किरण ने हँस कर कहा—कैसा अच्छा अनुमान है! मेरी अवस्था बत्तीस वर्ष की है। तुमसे मैं बहुत बड़ा हूँ न लीला?

"तो इससे क्या हुआ?"

"कुछ हुआ नहीं। यों ही सोच रहा था कि एक बीस वर्ष की लड़की को मैं जानता हूँ। मेरी इतनी अवस्था होने पर भी वह मुझे अपने सङ्गी के रूप में वरण कर सकेगी या नहीं?"

लीला खिलखिला कर हँस पड़ी। उसने कहा—शायद मेरे ही सम्बन्ध में यह बात सोच रहे हो? तुम्हें क्या यह नहीं मालूम है कि मेरे केवल तुम्हीं एक मित्र हो?

किरण कुछ समय तक मुग्ध दृष्टि से लीला के प्रफुल्लित एवं सरल मुख की ओर ताकता रहा। वह ताड़ गया कि जिस दृष्टि-

कोण से मैंने यह बात कही है, लीला उसे समझ नहीं सकी। परन्तु इस विषय में विशेष आग्रह न करके उसने सरल भाव से ही कहा---यह मैं जानता हूँ। इसी रूप में तुम मुझे सदा के लिए ग्रहण कर लो, यही मेरी हार्दिक प्रार्थना है।

कुछ देर के बाद लीला ने कहा---किरण, ज़रा अरुण से मिलने की मेरी इच्छा है। इसी लिए मैं साँझ से तुम्हें खोज रही थी। उनसे बातचीत करने की इच्छा तो मेरी बहुत दिनों से थी, किन्तु जब से इस दुर्घटना का हाल सुना है, तब से उन्हें देखने की इच्छा और भी बढ़ गई है। क्या मैं तुम्हारे घर पर जाकर उनसे मिल सकूँगी ?

किरण ने ज़रा-सा सोच कर कहा---मिल क्यों न सकोगी। परन्तु मेरे विचार से तुम्हारा वहाँ न जाना ही अच्छा है। मिसेज़ राय सुनेंगी तो क्या कहेंगी ? तुम्हें तो मालूम है कि मेरे घर में कोई स्त्री नहीं है।

"इसमें मेरी कोई हानि नहीं है, क्योंकि मैं इन बातों पर ध्यान ही नहीं देती। परन्तु बात जब मा के कानों तक पहुँचेगी तब कुछ गड़बड़ होगा अवश्य, किन्तु इसका उपाय ही क्या है ? उनकी तो बात-बात में चिढ़ने की आदत-सी पड़ गई है। उनकी चिन्ता करने से मेरा काम ही नहीं चल सकता।"

किरण ने कहा---इसके अतिरिक्त मेरे नौकर-चाकर भी इस सम्बन्ध में तर्क-वितर्क कर सकते हैं। धीरे धीरे करके बात यदि फैल गई तो इसमें अपकीर्ति होने का भय है। जानती तो हो कि लोग तरह-तरह की सच-झूठ फैला कर कैसी बे-सिर-पैर की खबरें उड़ाते रहते हैं।

कुछ रोष का भाव प्रकट करके लीला ने कहा---खूब जानती हूँ। परन्तु क्या तुम्हारा तात्पर्य यह है कि इसी लिए मुझे नौकरों

से दब कर चलना चाहिए ? शायद तुम भी मुहल्ले की बूढ़ी औरतों की तरह की बातें करना सीख गये हो ! यह सब बातें मैं नहीं सुनना चाहती, मुझे इतना भर बतला दो कि तुम्हारे घर मैं जा सकती हूँ या नहीं ?

लीला को रुष्ट होती देख कर किरण ने हँस कर कहा—कैसा पागलपन करती हो लीला ? मेरे घर जाने के लिए तुम्हें पूछने की क्या आवश्यकता है ? तुम शौक़ से जा सकती हो ? मैं तो केवल इसी लिए कह रहा था कि ऐसा करने में ज़रा तुम्हारी अपकीर्ति होने की सम्भावना है, अतएव सोच-समझ कर काम करो। तुम्हें तो मालूम है कि तुम्हारे विरुद्ध कोई बात सुनने में मुझे कितना क्लेश होता है ?

"इसके लिए तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। किसी के कहने-सुनने की ओर मैं ज़रा भी ध्यान नहीं देती। वहाँ जाने की मेरी इच्छा है तो जाऊँगी ही, कोई भी बाधा मुझे रोक न सकेगी। परन्तु अभी तुम अरुण से मेरे सम्बन्ध में कोई बात न कहना। मैं अपनी पहली मुलाकात अकेले में ही करना चाहती हूँ। जिस समय तुम घर पर न रहोगे, मैं उसी समय आऊँगी।

"अच्छी बात है, तब तुम सवेरे ही आना। मैं चाय पीकर निकल जाता हूँ, और बारह बजे से पहले कभी नहीं लौटता। उस समय आने पर वे तुम्हें अकेले ही मिलेंगे। अब तो सन्तुष्ट हो न, या और भी किसी बात के लिए मचलना है ?"

किरण हँस कर लीला की ओर ताकने लगा। लीला भी हँस पड़ी। उसने कहा—"नहीं, इस समय तो और कोई बात नहीं याद आ रही है। तुम्हारे बिना तो आध घंटा भी मेरा नहीं चलता ! इसी ज़रा-सी बात के लिए तो मैं सारा दिन व्यग्र थी। बार-बार मन में यही आता कि क्या करूँ, जिससे अरुण से मुलाकात हो

जाय? इसी के लिए साँझ से ही तुम्हें भी ढूँढ़-ढूँढ़ कर छटपटा रही थी। तुम्हारे आते ही दो बातों में सब ठीक हो गया। अच्छा किरण, उनके सम्बन्ध की सारी बातें जानने के लिए मुझे बड़ी उत्सुकता है। जब से वे तुम्हारे यहाँ आये हैं, तब से कैसे रहते हैं, क्या करते हैं और क्या कहते हैं?

किरण ने जब देखा कि लीला इतनी उत्सुकता से सारी बातें पूछ रही है, तब वह गम्भीर हो गया। उसने कहा—अभी तक अरुण के सम्बन्ध की कोई खास बात बतलाने को नहीं है लीला! कल से लेकर आज साँझ तक उसने केवल दो चार बातें की हैं, वह भी बहुत साधारण ढङ्ग की। जिन लोगों ने उसे पहले देखा है, केवल वे ही समझ सकते हैं, कि अरुण का यह भाव उसके स्वभाव से कितना विपरीत है। उसका सारा अन्तस्तल भग्न होकर मानो चूर-चूर हो गया है। इससे तो यही अच्छा था कि युद्धक्षेत्र में उसकी मृत्यु हो गई होती। जब उसके दिल में यह बात आती होगी कि अब सारा जीवन मुझे मुर्दे की तरह बिताना पड़ेगा, तब उसका हृदय कितना दुखी होता होगा, इसे ज़रा सोचो तो सही। जीवन की सारी आशाओं तथा सबसे अधिक प्रिय वस्तु से वञ्चित होकर जीवित रहना कितना क्लेशकर है, इसे तो केवल वही जान सकते हैं, जिन पर पड़ी हो।

लीला कुछ क्षणों तक चुप रही। बाद को वह कहने लगी—अपने हृदय में मैंने इस बात का खूब अच्छी तरह अनुभव कर लिया है किरण! इसी लिए तो मैं इस बात को हृदय से निकाल कर औरों की तरह दूर नहीं कर पाती हूँ। केवल यही बात मन में आती है कि अरुण के लिए मैं क्या कर सकती हूँ? तुम तो काम-काज में लगे रहते हो, सदा उनके पास रह नहीं सकते, मैं ही बीच-बीच में जाकर बातचीत से उनका जी बहलाया करूँगी,

इसी लिए उनसे जान-पहचान करने की इच्छा है। इसके अतिरिक्त मैं और कर ही क्या सकती हूँ? अस्तु, अब रात हो गई है, आओ नीचे चलें।

( ८ )

पटना शहर से बड़ी दूरी पर एक छोटा-सा दोमंजिला मकान था। असित उसके बरामदे में खड़ा होकर पूर्व के आकाश में उदय-काल के सूर्य की शोभा देख रहा था। दोनों बगल आम के बड़े बड़े बगीचे दूर तक फैले हुए थे, बीच में कच्ची सड़क थी। बहुत दूर तक बस्ती का चिह्न तक न था, कहीं-कहीं दो एक टूटे-फूटे मकान जीर्ण-शीर्ण दशा में किसी तरह खड़े रह कर वहाँ की सुदूर भूत की किसी बस्ती का साक्ष्य दे रहे थे। उषा की लालिमा से अनुरञ्जित होकर अरुण प्रकाश की रेखायें धीरे-धीरे धुँधले अन्धकार से ढँके हुए वनों के मस्तक पर फैल रही थीं। चिड़ियाँ अपनी-अपनी निद्रा त्याग कर कलरव करने लगीं, उनकी मधुर ध्वनि से चारों दिशायें व्याप्त हो गईं।

असित की अवस्था २६-२७ वर्ष की थी, उसका लम्बा शरीर गठीला था, मुखमण्डल पर गम्भीरता थी, दृष्टि आकर्षक तथा मनोमुग्धकर थी। उसे देखते ही दर्शक के हृदय में एकाएक श्रद्धा तथा सम्मान का भाव उदित हो आता था।

असित पहले तो बड़ी देर तक बरामदे में खड़ा रहा और बाद को कमरे में लौट आया। चाय बनाने के लिए स्टोव पर उसने जल रख दिया और एक पुस्तक लेकर उसे पढ़ने का प्रयत्न करने लगा। इतने में ही चुपके-से एक युवक आकर उसके पास खड़ा हो गया।

उसे देखते ही असित का मुखमण्डल प्रफुल्लित हो उठा। बड़ी

उतावली के साथ पुस्तक फेंक कर व्यग्रभाव से उसने कहा—परेश ! तुम्हें इतनी देर लग गई ? कल से मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में इस जङ्गल में पड़ा हूँ। अच्छा, तो अब क्या हाल है ? उधर का सब काम ठीक हो गया ?

परेश चटपट चटाई पर बैठ गया। उसका मुँह सूखा हुआ और शरीर पसीने से तर था। बहुत ही क्लान्त भाव से वह हाँफ रहा था।

असित के प्रश्न पर जरा भी ध्यान न देकर उसने कहा—पहले झट एक 'कप' चाय तो दे दो भाई ! बाद को और बात-चीत होती रहेगी। ओह ! सारी रात जङ्गल-जङ्गल और झाड़ी-झाड़ी भटकता-भटकता आ रहा हूँ। एक-दम जान निकल गई।

और कुछ न कह कर असित ने चाय की 'केटली' में चाय भिगो दी। बाद को स्टोव पर दूध चढ़ा कर ताख पर से बिस्कुट का एक डिब्बा निकाला और परेश के सामने रख दिया।

"वाह, यह तो राजभोग है ! इस जङ्गल में यह कहाँ मिल गया ?"

परेश डिब्बे की ओर लोभमय दृष्टि से ताकने लगा।

"कल आते समय शहर से लेता आया था। और कुछ मिले या न मिले, कमसे कम चाय का तो ठीक-ठीक प्रबन्ध रखना ही पड़ेगा।

एक प्याला चाय बना कर असित ने परेश के सामने रख दिया। बाद को अपने प्याले में चाय उड़ेल कर उसने कहा—भाई अब तो कुछ हालचाल बतलाओ ? कल क्यों नहीं आये ? रात भर कहाँ रहे ?

एक घूँट चाय पीकर परम सन्तोष के साथ परेश ने आँखें मूँद लीं। उसने कहा—अच्छा, धीरे-धीरे सारा रहस्य बतलाता हूँ।

पहले शान्ति से मुझे चाय तो पी लेने दो भाई! सारी रात के परिश्रम और थकावट के बाद यह चीज़ कैसी अमृत-सी मालूम पड़ती है, इस बात का भला तुम जैसा गँवार क्या अनुभव कर सकता है! सचमुच मेरे जी में तो आता है कि चाय के ऊपर एक कविता लिख डालूँ।

असित ने ज़रा-सा हँस दिया। उसने कहा—बड़ा अच्छा विचार है। परन्तु उसे शीघ्र ही कार्यरूप में भी परिणित कर दो, नहीं तो सारा भाव ठंडा हो जायगा। परन्तु इस तरह सारी रात वन-वन भटक कर आने की तुम्हें क्या आवश्यकता थी? किसी ने किसी तरह का सन्देह तो नहीं किया था?

"सन्देह किया था? आदमी पीछे लगा था! कल चौथे पहर में जैसे ही स्टेशन से बाहर हुआ तभी से मालूम हो गया कि एक आदमी मेरे पीछे लगा है। इस बात को भली भाँति जानने के लिए मैं तेज़ चल कर कुछ आगे निकल गया। थोड़ी देर के बाद जब घूम कर देखा तब सड़क की दूसरी पटरी पर से वह भी मेरे साथ ही साथ चला आ रहा था। यह देखते ही एक गली में जाकर मैं एक दूकान के भीतर चला गया। बैठे-बैठे प्रायः एक घंटा मैंने उस दूकान में ही काट दिया। बाद को प्रायः साँझ होने पर वहाँ से उठ कर जैसे ही गली में पैर रक्खा, वैसे ही फिर उस आदमी पर दृष्टि पड़ी। लालटेन के खम्भे के पास खड़े-खड़े बड़े ध्यान से वह सड़क की ओर ताक रहा था। उसे चकमा देने का उपाय सोचते-सोचते मैं कुछ दूर आगे निकल आया। रास्ते में एक जगह शोरगुल हो रहा था। स्त्री का-सा वेश बनाये एक लड़का मीठी और मन्द आवाज़ से गा-गाकर नाच रहा था और उसके साथ ही साथ दो आदमी मस्तक हिला-हिला कर तबला और सारङ्गी बजा रहे थे। लोग भी तरह तरह की भावभङ्गी प्रदर्शित करते जाते थे। सड़क पर से होकर चलनेवाले लोग बड़े कौतूहल के

साथ यह अद्भुत लीला देख रहे थे। उसी भीड़ में मैं भी मिल गया। अवसर देख कर वहाँ से रफ़ूचक्कर हो गया और अँधेरे में कावा काट-काट कर घूमने लगा। रात को एक किसान के चबूतरे पर आसन जमा दिया और दो-तीन घण्टा वहीं काट दिया। रात में ही वहाँ से भी कूच कर दिया और खेतों तथा बग़ीचों में भटकता-भटकता चला आ रहा हूँ। सीधी सड़क नहीं पकड़ी। सोचा कि कहीं और न कोई मेरी ताक में बैठा हो। सड़क पर जाने का मेरा काम ही क्या था?

असित ने कहा—यह अच्छा किया। यहाँ दस-पाँच दिन जब तक रहना है तब तक इस अड्डे का पता किसी को न चले तभी अच्छा है। हाँ, तो उधर का क्या हुआ?

चाय का प्याला बढ़ा कर परेश ने कहा—वह सब जहन्नुम में गया। ज़रा एक प्याला और दो। एक प्याले से तो कुछ मालूम ही नहीं पड़ा भैया!

दो बिस्कुट मुँह में डाल कर फिर परेश ने कहना शुरू किया—वहाँ की कहानी बड़ी लम्बी है। इसी लिए तो उन लोगों न बड़ी जल्दी वहाँ से खदेड़ दिया। परन्तु उस सम्बन्ध में आज तक जो कुछ उद्योग किया गया है वह सब मिट्टी में मिल गया। यही दुःख की बात है!

चाय उड़ेल कर असित चुप बैठा रह गया। उसका मनोभाव देख कर परेश भी चाय पीने लगा, कुछ बोला नहीं। अन्त में असित ने कहा—ख़ैर, दो-एक दिन के साधारण प्रयत्न से कोई बड़ा काम होता भी नहीं। बार-बार असफल हो-होकर ही हम अपना कार्य सिद्ध कर सकेंगे। इसमें हताश होने की कोई बात नहीं है। अच्छा, अब बताओ तो सही कि उन लोगों ने तुम्हें किस काम से भेजा है?

वे दोनों बहुत धीरे-धीरे बात-चीत करने लगे। अन्त में उस

बात-चीत में वे इतना मग्न हो गये कि किसी को और किसी बात का ध्यान ही न रह गया। दिन चढ़ने लगा। खाने से जो चीजें बची थीं वे सब उनके सामने पड़ी थीं, चाय ठंडी होकर बिलकुल पानी हो गई, इधर उन दोनों को इन बातों का पता तक न था।

एकाएक बड़े जोर का एक धड़ाका हुआ और साथ ही स्त्री के गले की एक चीख भी सुनाई पड़ी। असित और परेश चौंक कर बरामदे की ओर दौड़ पड़े। उन दोनों ने जाकर देखा तो एक बड़ी-सी मोटर का टायर फट गया था और एक पेड़ से टकरा कर मोटर उलट गया था। भीतर जो लोग बैठे थे उन्हें निकालने के लिए एक युवक प्रयत्न कर रहा था।

परेश ने एक बार असित की ओर ताक कर देखा। असित ने कहा—चलो, इन लोगों को उठाकर यहीं ले आवें।

क्षण ही भर में दौड़ कर वे दोनों पहुँच गये। युवक की सहायता से उन लोगों ने गाड़ी के भीतर से एक वृद्ध तथा एक महिला को निकाल कर सड़क पर खड़ी किया।

महिला का हाथ कट गया था। उसमें से रक्त बह रहा था। उसकी ओर दृष्टि जाते ही व्याकुल हो कर वृद्ध ने कहा—ओह, निर्मला के हाथ में बड़ी चोट लग गई है किरण! देखो न कितना ख़ून बह रहा है! अब क्या किया जाय?

किरण उस समय बैठने के लिए थोड़ी-सी जगह की ताक में इधर-उधर देख रहा था। असित को देखकर उसने कहा—महोदय, यहाँ आस-पास क्या बैठने के लायक़ कोई जगह है?

अपना टूटा हुआ मकान दिखा कर असित ने कहा—सामने जो मकान दिखाई पड़ रहा है उसे छोड़ कर यहाँ आस-पास और कोई स्थान नहीं है। वह भी ठीक मकान-जैसा तो है नहीं, किन्तु—।

"बहुत ठीक है! बहुत ठीक है! इन लोगों को बैठालने भर के लिए थोड़ी-सी जगह चाहिए। इतने से हमारा बड़ा उपकार होगा।"

किरण निर्मला का हाथ पकड़ कर चलने लगा। असित इन सबको लेकर ऊपर आया। मिस्टर घोष की तरफ़ ताक कर परेश ने कहा—आपके कहीं लगा तो नहीं ?

"मुझे ? जी नहीं। मुझे तो ऐसा कहीं नहीं लगा, लेकिन निर्मला को बड़ी चोट आ गई। ओह, बेचारी को कितना क्लेश है ! यहाँ आस-पास कोई डाक्टर मिल सकता है ?

निर्मला के उतरे हुए और यन्त्रणा से कातर मुँह पर दृष्टि डाल कर असित ने कहा—यहाँ चार-पाँच कोस के भीतर डाक्टर या दवा से मुलाकात होना सम्भव नहीं। यदि आप कहें तो मैं ही इनके हाथ का खून धोकर 'बैंडेज' कर दूँ, इससे इन्हें थोड़ा-बहुत आराम मिल सकता है।

किरण ने उत्तर दिया—अच्छा, तब तक यही कर दीजिए। मैं जरा बढ़ कर देखता हूँ। कोई गाड़ी या टैक्सी मिल जाय तो ले आऊँ। शहर पहुँचे बिना तो कोई प्रबन्ध हो नहीं सकता।

"यही सही, किसी न किसी तरह से घर पहुँचना चाहिए।"

मिस्टर घोष बहुत व्याकुल हो उठे।

किरण उठ ही रहा था कि असित ने उसे रोक कर कहा—आप क्यों कष्ट कर रहे हैं ? गाड़ी का प्रबन्ध मैं किये देता हूँ, आप तब तक विश्राम करें। आप एक ऐसे स्थान पर आ गये हैं, जहाँ आप की सहायता के लिए और तो कुछ किया ही नहीं जा सकता। परेश ! जरा देखो तो कोई टैक्सी या गाड़ी जो कुछ मिल जाय, जल्दी से ले आओ इन लोगों के लिए।

परेश चुपचाप नीचे चला गया। अलगनी पर से एक साफ़ चादर लेकर असित ने उसमें से एक पट्टी फाड़ी और फिर साफ़ जल से निर्मला के घाव का खून धोकर इतनी सफ़ाई से बैंडेज कर दिया कि उसे जरा भी क्लेश नहीं मालूम पड़ा।

यन्त्रणा के मारे निर्मला का जो मुँह पीला पड़ गया था, इस

अपरिचित युवक के करस्पर्श से उस पर लालिमा दौड़ गई। हाथ में पट्टी बँध जाने पर उसकी पीड़ा बहुत कुछ शान्त हो गई। अपनी स्नेहमय तथा कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि असित के मुँह पर डाल कर उसने कहा—इस समय तो मेरा हाथ बहुत कुछ अच्छा मालूम पड़ रहा है। अभी तक वह बहुत दर्द कर रहा था!

असित ने मुँह से कुछ कहा तो नहीं, किन्तु निर्मला की इन बातों से उसका मुखमण्डल प्रफुल्लित हो उठा। उसके कोई उत्तर न देने के पहले ही किरण ने बड़े कौतूहल से पूछा—महोदयजी क्या मेडिकल कालेज के स्टूडेंट हैं या रामकृष्ण-सेवाश्रम के कोई सेवक?

अपने सम्बन्ध में एकाएक इस तरह का कौतूहलजनक प्रश्न सुन कर असित हँस पड़ा। उसने कहा—क्यों? मेरे सम्बन्ध में आपने एकाएक यह धारणा कैसे कर ली?

"आपने ऐसा सुन्दर बैंडेज किया है, जिसे देख कर मुझे तो यही जान पड़ता है कि कोई अनाड़ी आदमी ऐसी सफ़ाई से यह काम नहीं कर सकता। यह तो किसी अभ्यस्त हाथ की ही करामात है। इसी लिए मैं ऐसा अनुमान कर सकता हूँ।

किरण की बात समाप्त भी न हो पाई थी कि असित ने उसकी बात बीच में ही काट दी। उसने कहा—आपकी इस तीक्ष्ण पर्यवेक्षण-शक्ति की मैं प्रशंसा अवश्य करता हूँ। किन्तु मेरे सम्बन्ध में आपने जो कुछ अनुमान किया है वह सर्वथा निर्मूल है। न तो मैं मेडिकल कालेज का स्टूडेंट हूँ और न रामकृष्ण-सेवाश्रम का सेवक ही हूँ। किन्तु इस तरह के कुछ काम मुझे सीखने पड़े हैं, क्योंकि कभी-कभी ऐसे कामों की बड़ी जरूरत पड़ जाती है।

किरण अभी तक निश्चिन्त भाव से चारों ओर दृष्टि डाल-डाल कर कमरे की सजावट देख रहा था। एक तरफ़ अलगनी पर दो धोतियाँ थीं, एक कोने में स्टोव था और उसके आस-पास चाय

का सामान बिखरा हुआ था। सवेरे जो चाय और बिस्कुट बच गया था वह उस समय भी वहीं पड़ा था। एक ताख पर अलमूनियम की एक छोटी-सी बटलोई, एक थाली और कुछ पुस्तकें रक्खी हुई थीं। कमरे में केवल एक ही शय्या थी और एक चटाई थी। उसी पर मिस्टर घोष और निर्मला बैठे थे।

असित के चुप होते ही किरण ने कहा—तब भी वही बात हुई। आप मेरे अनुमान को बिलकुल ग़लत नहीं कह सकते। मैंने कहा था कि सीखे बिना ऐसी सफ़ाई नहीं आ सकती। और जिस तरह के लोग ऐसा काम सीखते हैं, अनुमान करते समय उन्हीं की ओर मेरा ध्यान गया था। आप उस श्रेणी में चाहे भले न हों, किन्तु आपको सीखना तो पड़ा ही था।

अत्यधिक करुणा से असित की आँखें डबडबा आई थीं। किरण की बातों के उत्तर में 'यह आप अवश्य कह सकते हैं' कह कर उसने चटाई पर लेटी हुई निर्मला के क्लान्त एवं करुण मुख की ओर दृष्टि फेरी।

निर्मला का क्लान्त शरीर चटाई पर शिथिल भाव से पड़ा था। उसकी आँखें मुँदी थीं और भौंरे के समान काली-काली लटें सुडौल, सुन्दर और पुष्ट गालों पर लोट रही थीं। मिस्टर घोष उद्विग्न-भाव से गाड़ी की प्रतीक्षा में कन्या के मस्तक के पास चुप बैठे थे।

किरण ने कहा—आपसे एक बात और पूछने को जी चाहता है। हम लोग तो ईश्वरीय प्रेरणा से यह दुर्घटना हो जाने के कारण यहाँ आ गये हैं, परन्तु आप दो आदमी यहाँ कहाँ से आ पड़े? यह तो बस्ती-सी मालूम नहीं पड़ती। यहाँ दो-चार कोस के बीच में कहीं आदमी का चिह्न नहीं दिखाई पड़ता।

असित ने उत्तर दिया—निस्सन्देह यहाँ कोई बस्ती नहीं है, परन्तु हम लोग यहाँ कभी-कभी आया करते हैं। हमारा यह एक छोटा-सा अड्डा है।

"यहाँ रहते हैं? क्या यह सच बात है?"

इस बार किरण ने विस्मितभाव से असित की ओर देखा। असित को ऐसा जान पड़ा, मानो वह मन ही मन कुछ सोच रहा है। अतएव उसने हँस कर कहा—क्या इस बार भी मेरे सम्बन्ध में कुछ अनुमान कर रहे हैं?

यह बात सुनते ही किरण गम्भीर हो गया। उसने कहा—यहाँ मैं अपने अनुमान का ठीक-ठीक प्रयोग नहीं कर पा रहा हूँ। क्योंकि यह स्थान कोई ऐसा रमणीक नहीं है, जिसके कारण मनुष्य स्वतः आकर यहाँ रह सके। परन्तु यदि कोई योग-साधना करना चाहे तो—

असित ने बीच में ही बात काट कर परिहास के साथ कहा—आपने ठीक समझा है इस बार। जानते तो हैं कि एकान्त के बिना योग की साधना नहीं होती।

किरण ने उठ कर बहुत ही संदिग्धभाव से कहा—तो क्या ये सब पुस्तकें योग की हैं? एक पुस्तक खोल कर वह देखने लगा। उसके मुँह की गम्भीरता बढ़ गई। दो ही एक पृष्ठ पढ़ कर उसने वह पुस्तक रख दी और अन्य पुस्तकें देखने लगा। अन्त में उसने एक बार बड़े ध्यान से असित के मुँह की ओर देखा और फिर मन ही मन न जाने क्या सोचने लगा। असित ने भी उसकी निस्तब्धता भङ्ग करने की आवश्यकता नहीं समझी।

कुछ क्षणों के बाद किरण ने मिस्टर घोष से कहा—आप लोग बैठिए। तब तक मैं जरा अपनी गाड़ी की हालत देख आऊँ। उसे ले जाने का भी प्रबन्ध करना है न।

अभी तक मिस्टर घोष के मुँह से कोई बात नहीं निकली थी। किरण के चले जाने पर उन्होंने असित से पूछा—आप क्या सचमुच इस जंगल में रहते हैं? मैं और भी कई बार इस रास्ते से आया-गया हूँ, परन्तु इस टूटे हुए मकान की ओर कभी ध्यान नहीं दिया।

मुझे जहाँ तक याद पड़ता है, यहाँ कभी किसी आदमी से मुलाकात भी नहीं हुई।

असित ने कहा—हम लोग यहाँ सदा तो रहते नहीं। कभी-कभी आते हैं और दो-एक दिन रह कर फिर चले जाते हैं। रहते भी हैं तो भीतर ही बैठ कर लिखते-पढ़ते हैं, बाहर निकलने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी से हम लोगों से किसी की मुलाकात होने की सम्भावना नहीं रहती।

निर्मला अभी तक ये सब बातें सुनती रही और विस्मित भाव से कमरे की विचित्र ढंग की सजावट भी देखती रही। अन्त में उसने कहा—ऐसी एकान्त जगह पर अकेले रहने में आप लोगों को कोई कष्ट नहीं होता? यहाँ कैसे रहते हैं? खाने-पीने का क्या प्रबन्ध करते हैं?

असित हँस पड़ा। निर्मला के मुँह की ओर ताक कर उसने कहा—कष्ट आप किसे कहती हैं? जीवन की सारी विशिष्ट आवश्यकताओं को त्याग-त्याग कर चलने का हम लोगों ने अभ्यास कर लिया है, इसी लिए कोई भी कष्ट अब हमें कष्ट-सा नहीं मालूम पड़ता। आवश्यकता तथा दुख-क्लेश हम बहुत कुछ अपने आप तैयार कर लेते हैं और उन्हीं की बदौलत हमें दुख मिलता है। हमारी वास्तविक आवश्यकतायें तो बहुत थोड़ी हैं।

यह बात सुन कर मिस्टर घोष एकाएक बहुत प्रसन्न हो उठे। उन्होंने कहा—यह तो एक पूरे ज्ञानी की-सी बात है। ये ठीक कह रहे हैं निर्मला। हमें चारों ओर से जो दुःख-क्लेश और आवश्यकतायें घेरे रहती हैं, उन सबको हमने अपने आप तैयार कर लिया है। प्राचीन काल में ज्ञानी लोग जो सीधा-सादा जीवन व्यतीत किया करते थे, उस तरह रहने पर मनुष्य की आवश्यकतायें कितनी कम हो जाती हैं, आजकल के लोग इस बात की कल्पना तक नहीं कर सकते।

निर्मला स्वयं भी इस सम्बन्ध में किसी तरह की कल्पना नहीं कर सकी। उसके हृदय-पटल पर दगदगाती हुई बिजली की बत्तियों से प्रकाशमान तथा बहुमूल्य सामग्रियों से सुसज्जित सुखमय भवन का चित्र उदित हो आया। बन्धु-बान्धवों का प्रेममय तथा सुखकर सम्भाषण, सेवा-परायण एवं सुदक्ष दास-दासियों से परिपूर्ण, निश्चिन्त तथा सुखमय घर छोड़ कर इस भयङ्कर वन में, जहाँ मनुष्य का नाम तक नहीं है, एक खण्डहर में जमीन पर पड़े रहने में क्या सुख है, यह उसकी समझ में किसी तरह भी न आया।

निर्मला को चुप देख कर असित ने फिर कहा—खाने-पीने के सम्बन्ध में जो आप पूछ रही हैं, उसके सम्बन्ध में कौन-सी कठिनाई है? इसी बटलोई में दो-तीन मुट्ठी चावल डाल देते हैं और इसी में थोड़े-से आलू भी कतर कर डाल देते है। बस, हमारा भोजन तैयार हो जाता है। चावल-दाल मिला कर रींध लेने से भी काम चल जाता है। स्टोव पर बटलोई रख कर हम चुपचाप पढ़ने रहते हैं, आधे घण्टे में भोजन तेयार हो जाता है। सोने के लिए यह चटाई ही काफ़ी है। तब कष्ट ही किस बात का रह गया?

असिन ने यह बात प्रसन्नभाव से कही थी, तो भी निर्मला के अन्तस्तल को शान्ति न मिली। उसके भीतर जो सेवा-परायण नारी-प्रकृति विराजमान थी, वह असित की इस अवस्था को सुखकर नहीं मान सकी। परन्तु इतने जरा-सी देर के परिचय में अधिक कहा ही क्या जा सकता है, अतएव स्वभावतः वह चुप हो गई।

निर्मला की मुखमुद्रा देखकर असित उसके मन का भाव ताड़ गया। इस नीरव सहानुभूति से उसका स्वभाव से ही सब विषयों के प्रति उदासीन और कठोर हृदय न जाने किस मधुर आनन्द और तृप्ति से परिपूर्ण हो गया, इस बात का वह स्वयं भी अनुभव न कर सका। बहुत कुछ आत्मविस्मृतभाव से उसने कहा—किन्तु आज

आपको बड़ा क्लेश हुआ, क्योंकि आपका तो इस तरह रहने का कभी का अभ्यास है नहीं, तिस पर चोट भी लग गई है। इस अवस्था में आपको ज़रा-सा आराम न मिला।

असित की बात सुनते ही निर्मला बहुत ही लज्जित और कुण्ठित हो उठी। उसने कहा—नहीं, नहीं, आप मेरे लिए चिन्ता न कीजिए, मुझे कोई ऐसा क्लेश नहीं हुआ।

मिस्टर घोष ने कहा—इस दुर्दशा में पड़ने पर आपसे परिचय हो गया। सङ्कट के समय आपकी सहायता पाकर जैसे मैं उपकृत हुआ हूँ, वैसे ही आपके साथ परिचय हो जाने से मुझे आन्तरिक प्रसन्नता भी हुई है। आशा है, हमारी आपकी मित्रता का यहीं अन्त न हो जायगा। कभी-कभी यदि आपका दर्शन मिलता रहा तो हम सबको बहुत सुख मिलेगा।

असित ने इस बात का कोई उत्तर न दिया। वह चुप बैठा रहा। उसकी ओर ध्यान तक न देकर मिस्टर घोष कहने लगे—यहाँ से थोड़ी दूर पर मैंने एक बगीचा और मकान खरीदा है। निर्मला के मित्रों तथा सखियों ने मिलकर एक दिन वहाँ पिकनिक करने का निश्चय किया है। मकान अभी तक अच्छी तरह सजाया नहीं जा सका है, इसी लिए आज हम लोग सवेरे-सवेरे जा रहे थे। सोचा था कि हम लोग मिल कर उसे आज क़रीब-क़रीब ठीक कर लेंगे, परन्तु अब तो कुछ दिनों के लिए यह सब स्थगित हो गया। पहले निर्मला अच्छी हो जाय तो फिर और बातों का प्रबन्ध किया जायगा। अच्छा, आप लोग जब यहाँ नहीं रहते तब कहाँ मिल सकते हैं?

असित इस बात का उत्तर देने को था ही, इतने में किरण ने कहा कि परेश बाबू गाड़ी लेकर आ गये हैं। निर्मला, कैसी है तुम्हारी तबीअत? अपने आप नीचे उतर सकोगी?

मिस्टर घोष उठ कर खड़े हो गये। उनके हाथ के सहारे

पर निर्मला भी धीरे-धीरे उठी। उसने कहा—उतर चलूँगी किसी तरह।

निर्मला को लेकर मिस्टर घोष सीढ़ी की ओर बढ़े। असित की ओर ताक कर किरण ने कहा—आज एकाएक आपके यहाँ आकर हम लोगों ने इतनी देर तक आपकी एकान्तमय शान्ति भङ्ग की है। किन्तु आप लोगों के कारण हम लोगों को बड़ी सहायता मिल गई, अन्यथा बड़ी दुर्दशा भोगनी पड़ती। अस्तु, अब तो कभी-कभी दर्शन होते रहेंगे न?

जरा-सा सोच कर असित ने उत्तर दिया—यही बात तो ठीक-ठीक बतलाना कठिन है। काम-काज के झंझट के मारे हमें कब कहाँ रहना पड़ता है, इस बात को प्रायः हम स्वयं नहीं जान पाते। इसी लिए वादा करने का साहस नहीं होता।

किरण ने कहा—पिंड छोड़नेवाला मैं नहीं हूँ। यदि शहर में मेरे घर पर आकर आप दर्शन दे सकें तो बड़े ही सुख की बात होगी, अन्यथा मैं ही यहाँ आकर आज की तरह जबरदस्ती घुस आने में आनाकानी न करूँगा।

असित ने हँस कर कहा—परन्तु इससे तो कोई लाभ न होगा। सम्भव है, यहाँ हम न भी आवें।

दोनों ही बातचीत करते-करते नीचे उतर गये। निर्मला को गाड़ी में बैठा कर मिस्टर घोष खड़े-खड़े उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। परेश जरा दूर खड़ा था। किरण उससे विदा लेने गया। निर्मला ने असित को अभिवादन करते हुए कहा—तो सुविधा के अनुसार किसी दिन हमारे यहाँ कृपा करेंगे न?

असित मुस्कराते हुए हाथ जोड़ कर उसे नमस्कार कर ही रहा था कि मिस्टर घोष बोल उठे—कृपा क्यों नहीं करेंगे? अवश्य करेंगे। ऐसे तो घर पर आवेंगे ही, किन्तु जिस दिन तुम्हारी 'पिकनिक' होगी, उस दिन भी तुम्हारे ये नये मित्र छूटने न पावेंगे।

समझी न निर्मला ! ऐसा कह कर मिस्टर घोष अपनी ही बात पर खूब हँस कर असित से कहने लगे—शहर में जिससे कहियेगा वही आपको मेरा घर दिखा देगा। मेरा निवास-स्थान तो यहाँ से बहुत दूर राजशाही-ज़िले में है, परन्तु यहाँ बहुत दिनों से रहता हूँ, इसलिए मुझे सब लोग जान गये हैं। मेरा नाम गिरीन्द्रनारायण घोष है। आपका नाम ?

एकाएक असित दो क़दम पीछे हट गया। उत्तेजना के मारे उसका मुँह लाल हो गया, और दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बँध गईं। क्रोध और प्रतिहिंसा के कारण उसका बिगड़ा हुआ मुँह देख कर मिस्टर घोष टकटकी लगा कर ताकते रह गये। असित ने गरज कर कहा—आप ही राजशाही के मण्डलगढ़ के जमींदार गिरीन्द्र घोष हैं ? मैं वहाँ के रामगोविन्द दत्त का पुत्र हूँ, मेरा नाम है असितकुमार दत्त।

मन्त्रमुग्ध सर्प की भाँति मिस्टर घोष का ऊँचा मस्तक उनके सीने पर झुक पड़ा। उन्होंने अस्पष्ट स्वर से कहा—तुम असित हो ! ओह, इतने दिन के बाद !

( ६ )

अरुण की डायरी से—

"जब जोरों का तूफान आता है तब उसके झकोरों में सारी विश्वप्रकृति उन्मत्त एवं अस्त-व्यस्त हो जाती है, किन्तु उसके बाद ही धीरे-धीरे शान्त होकर फिर स्थिर हो जाती है। ठीक वैसे ही उस दिन के अन्तःकरण के प्रबल विप्लव के बाद आज मेरा यह उन्मत्त और विद्रोही हृदय अवसाद की अधिकता से खिन्न होकर जड़ से कटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर लोट पड़ना चाहता है। संसार में मनुष्य की आशा-आकांक्षा का जब तक एक कण भी शेष रहता है तब तक उसका सभी कुछ रहता है। सर्वस्व नष्ट

हो जाने पर भी आशा की वह क्षीण रेखा ही उसे बचा-रखती है। परन्तु जिसकी वह रेखा भी मिट गई, वह भला किस सुख या आशा के सहारे इस संसार में जीवित रह सकेगा? आज मेरी ठीक यही दशा है। संसार में आज मेरी किसी को भी आवश्यकता नहीं है, इस भूमण्डल के बाजार में मेरा इस जन्म का लेना-देना समाप्त हो गया। आज न तो मेरे जीवन में कोई आशा है और न मृत्यु में ही किसी तरह का सुख है, परन्तु आश्चर्य तो इस बात का है कि अब भी मैं बना हूँ। मेरे जीवन की कोई आवश्यकता नहीं थी, फिर भी जीवित हूँ। केवल यही नहीं, बल्कि बैठे-बैठे सुख और दुख का विश्लेषण कर रहा हूँ।

"अपने जीवन के सम्बन्ध में जब विचार करने लगता हूँ तब रह-रह कर केवल उस भयङ्कर दिन की ही याद आती है। उस दिन का वह युद्ध जीवन भर भूलने का नहीं। क्षण-क्षण पर हमारी विजय की आशा समीप होती आ रही है और संसार में चिरकाल से पददलित और अधम बंगालियों की रणकुशलता और वीर्य-पराक्रम से जर्मनी के दुर्दान्त सिपाही अधीर और चञ्चल हुए जा रहे हैं। वे जितना ही पीछे की ओर पैर बढ़ाते हैं, उतना ही हमारा उत्साह, शक्ति और साहस अदम्य होता जाता है! उस दिन मुझे किसी बात की चिन्ता या ज्ञान नहीं था, मन में यही आता कि अपना रक्त और जीवन देकर समरभूमि में बंगालियों की भीरुता का चिरकाल का कलङ्क धो दूँगा। बढ़ते चलो, बढ़ते चलो, किसी ओर दृष्टि डालने की आवश्यकता नहीं, कुछ सोचने-विचारने की भी जरूरत नहीं, सिर्फ़ आगे बढ़ो। उस दिन मुझे कैसे उन्माद चढ़ आया था? प्राण देने का भी वह कैसा तीव्र और विपुल आनन्द था!

"उसी विचित्र उत्तेजना में मैं फ़रासीसियों की सेना के साथ अपनी टुकड़ी लेकर कितनी दूर बढ़ गया, यह मैं स्वयं भी नहीं

जानता ! एकाएक पीछे से एक तीव्र एवं मधुर शब्द सुनाई पड़ा—लेफ़्टिनेंट, लेफ़्टिनेंट घोपाल !

"उस समय पीछे फिर कर देखने का अवसर नहीं था। किन्तु मुझे अधिक दूर जाना भी नहीं पड़ा। वज्र के समान धड़-धड़ाता हुआ भयङ्कर शब्द करके सामने ही तोप का एक गोला फूट पड़ा और वह चारों ओर बिखर गया। हमारे आस-पास के हता-हतों की चिंघाड़ से एकाएक आकाश-मण्डल गूँज उठा। मस्तक पर बड़े ज़ोर का एक आघात पाकर मैं वहीं मूर्छित होकर गिर पड़ा।

"जब मझे चेतना आई तब देखा कि मेरे मस्तक से लेकर आँखों तक पट्टी बँधी है, परन्तु उसका कुछ कारण समझ में न आया। उठने का प्रयत्न किया अवश्य, किन्तु उठ न सका। सारे शरीर में बड़ी यन्त्रणा थी। मैं अपना कर्तव्य निश्चित करने की चिन्ता में पड़ा ही था कि इतने में मेरे पास से ही किसी ने कहा—कहो, अब तुम होश में आगये ? परन्तु अभी हिलने-डुलने का प्रयत्न न करो, शान्त होकर चुपचाप पड़े रहो।

"यह स्वर मेरा परिचित था। मैंने कहा—कौन ? तुम लिज़ी हो ?

"हाँ, मैं ही हूँ। परन्तु तुम अधिक बात-चीत मत करो। बोलने को डाक्टर साहब मना कर गये हैं।"

"मुझे क्या हुआ है ? क्या तुम लोग मुझे अस्पताल में ले आये हो ?"

"तुम्हें बड़ी गहरी चोट आ गई है। तुम्हारे मस्तक और नेत्रों के स्नायु-मण्डल पर गोले का 'शक' लगा है। डाक्टर की आज्ञा है कि अभी कुछ दिन तक तुम बहुत सावधान होकर चुपचाप पड़े रहो। मैं तुम्हारे पास ही पास रहूँगी, परन्तु अब तुम बातचीत मत करो, सो जाओ।

ओह, तो मैं घायल हो गया हूँ ! मन कितना व्याकुल हो उठा। अभी कितने दिन तक यहाँ जड़ पदार्थ की तरह पड़ा रहना पड़ेगा ! एक लम्बी सांस लेकर मैंने कहा—तो अब कुछ दिन तक तुम्हारी निगरानी में मुझे इसी अस्पताल में रहना पड़ेगा न ?

'फिर बोलने लगे ? तुम तो बड़े ही उद्दण्ड रोगी हो। अभी तक क्या बकते रहे थे ?

'एलिजाबेथ ने शासन के व्याज से यह बात कह कर अपने फूल के-से नर्म हाथ से मेरा मुँह दाब लिया।

उसका हाथ मुँह पर से हटा कर मैंने उसे अपनी छाती पर दबाकर रख लिया। मैंने कहा—एक बात और है लिजी, वह बात समाप्त होते ही मैं चुपचाप सो जाऊँगा, यह तुमसे सच-सच कह रहा हूँ। मैं केवल यही जानना चाहता हूँ कि उस दिन के युद्ध का फल क्या हुआ ?

'ओह उस दिन तुम लोगों की ही विजय हुई थी। वह जगह छोड़कर जर्मन लोग भाग गये हैं। अब वह हम लोगों के हाथ में आ गई है। परन्तु उस दिन बहुत से लोगों को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े थे। घायलों की संख्या भी बहुत बड़ी है।

आनन्द के मारे हृदय खिल उठा। मैंने कहा—तो उस दिन का परिश्रम सार्थक हो गया ? धन्यवाद। यह समाचार जान कर मेरा हृदय बहुत कुछ हलका हो गया। उसके बाद जरा देर तक चुप रहने के बाद मैं फिर कहने लगा — देखो लिजी, यही एक बात मुझे रह-रह कर याद आती है कि उस दिन घायल होने से क्षण भर पहले ही पीछे से न जाने किसने मुझे पुकार कर कहा था घोषाल। लेफ्टिनेंट घोषाल, सावधान ! मुझे अच्छी तरह याद आता है कि वह स्वर तुम्हारा ही था।

एलिजाबेथ विस्मित हो गई। उसने कहा—यह कैसे सम्भव था ? मैं भला वहाँ कैसे जा सकती थी ? थोड़ी देर तक जरा सा सोचकर उसने कहा—

परन्तु यह तो बड़े आश्चर्य की बात मालूम पड़ती है। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि तुम्हारी विपत्ति समीप देखकर कोई देवदूत तुम्हें सावधान कर रहा था।

"मैंने कहा—सम्भव है कि वही बात ठीक हो। परन्तु मुझे यह भली भाँति याद आता है कि वह स्वर तुम्हारा ही था। इसके अतिरिक्त यहाँ इतनी दूर परदेश में तुम्हें छोड़कर और दूसरा है ही कौन जो सदा उद्विग्नभाव से मेरी चिन्ता करता रहे?

"एलिजाबेथ ने कहा—ओह, उस दिन पहले तो मुझे इतना डर लगा था! मुझे आशङ्का थी कि अब मैं तुम्हें सदा के लिए खो चुकी हूँ। परन्तु डाक्टर ने जब परीक्षा करके कहा कि तुम्हें केवल चोट भर लगी है तब मेरे जी में जी आया।

"यह बात समाप्त करते ही लिज़ी ने अपने दाहने हाथ में मेरा हाथ जोर से पकड़ लिया। उसके हृदय के इस निःस्वार्थ प्रेम से मुग्ध होकर मैंने कहा—लिज़ी, मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में जो पवित्र स्नेह है उसकी कहीं तुलना नहीं है।

"लिज़ी के हाथ के सुकोमल आवेष्टन में उसके अन्तःकरण के गाढ़ स्नेह का अनुभव करते-करते उस दिन मैं सो गया। देश में रहकर मैं जिस छोटी-सी मण्डली में निवास करता था उसकी सीमा को पार करके उदार और उन्मुक्त संसार में आकर मैं जिस दिन खड़ा हुआ, उस दिन ऐसा जान पड़ा मानो एकाएक आँख पर से एक पर्दा हट गया।

'नवीन जीवन, नवीन दृष्टि और अनन्त हृदय! चारों ओर जिस वस्तु पर दृष्टि जाती, वही मानो अतीत के कङ्काल पर नया-नया रूप धारण करके नेत्रों के समक्ष उपस्थित होती। पहले के हमारे परिसीमित ज्ञान, संस्कार तथा जड़ता के अन्धविश्वास से इन बातों का जरा भी सामञ्जस्य न हो पाता। वहाँ मुझे ऐसा जान पड़ता कि चारों ओर स्वतन्त्र और उन्मुक्त जीवन का स्रोत

उद्दाम गति से प्रवाहित हो रहा है और कर्म, ज्ञान और शक्ति के अनन्त प्रवाह में सभी चञ्चल और व्यस्त हैं। सभी लोग अपने-अपने काम पर तीव्र गति से दौड़ रहे हैं।

"इस कर्म-प्रधान जीवजगत् के समीप जब मैं अपने सनातन भारतवर्ष की कल्पना करता तब वह मुझे बहुत पुराने अफ़ीमची के समान नशे में चूर होकर झूमता हुआ-सा जान पड़ता और कभी-कभी मस्तक उठाकर 'ब्रह्म ही सत्य है', 'जगत मिथ्या है', 'का तव कान्ता' आदि बक जाता और फिर नशे के आवेग में झूमने लगता।

"इस नवीन संसार की सभी वस्तुएँ मेरे लिए अपूर्व और सुन्दर थीं, किन्तु जिस वस्तु ने मेरी दृष्टि के समक्ष सबसे अधिक महिमा और गौरव से उद्भासित होकर मुझे मुग्ध किया था वह है उस देश की नारी।

"नारी-जाति कितनी महिमामय हो सकती है, शिक्षा, ज्ञान, प्रेम तथा शक्ति में वह कितनी महत्ता प्राप्त कर सकती है, और कर्मक्षेत्र में पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिला कर ठीक उन्हीं के समान साहस और शक्ति प्रदर्शित कर सकती है, यह बात मैं यहाँ आकर अपने अन्तस्तल में अनुभव कर सका हूँ। इसके साथ ही साथ अपने देश की स्त्रियों की दीनता का अनुभव करके लज्जा और धिक्कार के मारे मैं गड़ गया हूं। क्या पोथी-पत्रा में, क्या काव्य में और क्या शास्त्रों में इनकी महत्ता का अन्त नहीं है, किन्तु आज वास्तविक जीवन से ये कितनी दूर हैं!

यहाँ जिन-जिन स्त्रियों से मेरा परिचय हुआ है, उन सभों ने प्रतिष्ठित और उच्च कुल में जन्म ग्रहण किया है। उनमें से अँगरेज़, फ़रासीस, अमेरिकन, तथा रूसी आदि सभी प्रकार की स्त्रियाँ हैं। जब मैं देश में था तब सुना करता था कि उस देश की स्त्रियाँ बहुत ही आलसी और आमोद-प्रिय होती हैं, फूल की चोट लगने पर भी उन्हें मूर्च्छा आ

जाती है। केवल तितली के समान आमोद-आह्लाद और विलास-व्यसन के पीछे वे ैरान रहती हैं, ऐसी दशा में इन तितलियों का दल भला वास्तविक जीवन के दुःखों और क्लेशों से ठोकर क्यों लेने लगा ? परन्तु यहाँ आने पर मेरी इतने दिन की धारणा बिलकुल ही बदल गई।

"जिस दिन संसार के कर्मक्षेत्र में आह्वान हुआ उस दिन इन वीर महिलाओं ने अपना सुख तथा शान्ति का आगार-स्वरूप तथा निश्चिन्त एवं सुखसामग्रियों से परिपूर्ण घर त्याग दिया और पुरुषों के ही समान हँसती-हँसती युद्ध-क्षेत्र में आ डटीं। यहाँ के जीवन की तरह-तरह की असुविधायें, आवश्यकतायें तथा क्लेश कर्तव्य के आह्वान से उन्हें किसी तरह से दूर नहीं रख सके। वे जानती हैं कि नारी-जाति का कर्मक्षेत्र केवल अन्तःपुर ही नहीं है, बल्कि संसार के अन्यान्य कार्यों में पुरुषों के ही समान उनकी भी आवश्यकता है।

"समरभूमि की भयङ्करता, चारों ओर के मृत्यु की यन्त्रणा से परिपूर्ण हाहाकार, निरन्तर बारूद और धुएँ से आच्छादित तथा दुर्गन्धिमय स्थान पर प्राणों के भय आदि पर ध्यान न देकर ये बड़ी सावधानी से घायलों को उठाकर ले आती हैं और इन बेचारों की ये कितनी सेवा करती हैं, इनके प्रति कितनी ममता दिखलाती हैं, यह आँखों से देखे बिना केवल बातों से नहीं अनुभव किया जा सकता। इनके काम-काज और इनकी प्रकृति का मैं जितना ही अवलोकन करता हूँ, मेरे हृदय में इनके प्रति उतनी ही श्रद्धा बढ़ती जाती है।

"मेरे साथ में एक लड़का काम करता है। लोग उसे सेन कहते हैं। कुछ दिन हुए, उसके पैर में गोली धँस गई थी। आपरेशन करके वह गोली निकाली गई थी, इसलिए सेन को कुछ दिन अस्पताल में रहना पड़ा था। मैं उसे वहाँ देखने जाया करता था,

उन्हीं दिनों में लिज़ी से मेरा परिचय हुआ, अन्त में वह परिचय घनिष्ठ मित्रता के रूप में परिणत हो गया।

"सेन जिस दिन अस्पताल में गया था उससे दो-तीन दिन बाद तक मैं कई काम-काजों में व्यस्त था, अतएव उससे मिलने जाने का समय मुझे नहीं मिला। बाद को पहले-पहल जब मैं उसके पास गया तब वह कुछ अच्छा था, एक चौकी रखकर लिज़ी उसके सिरहाने बैठी बात-चीत कर रही थी।

"सेन ने उससे मेरा परिचय कराया। पहले तो वह अपने नीलवर्ण के विशाल नेत्रों की विस्मित दृष्टि कुछ समय तक मेरे मुँह पर डाले रही, बाद को एक मधुर हँसी हँस कर अपना हाथ बढ़ा दिया। उसने कहा—मिस्टर सेन से मेरी बड़ी मित्रता हो गई है, उनके सभी मित्र मेरे मित्र हैं, चाहे वे कैसी भी प्रकृति और स्थिति के क्यों न हों।

"मैंने उससे हाथ मिला लिया। तीनों आदमियों में बड़ी देर तक बात-चीत होती रही। अन्त में लिज़ी जब उठ कर अन्यान्य रोगियों को देखने चली गई तब मैंने सेन से पूछा कि यहाँ तुम्हें किसी बात का क्लेश तो नहीं है? आवश्यकतानुसार सेवा-यत्न करती हैं ये या और अस्पतालों की तरह यों ही बेगार टाल कर रह जाती हैं।

"सेन मुस्कराने लगा। उसने कहा कि अपने देश के अस्पतालों को देख-देख कर मेरी भी ऐसी ही धारणा हो गई थी, परन्तु यहाँ वह बात नहीं है। मुझे किसी बात का क्लेश या अभाव नहीं होने पाता। सेवा का तो कुछ कहना ही नहीं है। यहाँ की नर्सें मेरी जैसी सेवा करती हैं, शायद मेरी मा-बहनें भी वैसी सेवा न कर सकतीं। विशेषतः यह लड़की, जो अभी यहाँ से उठ कर गई है, इतनी दयालु है कि इसकी प्रशंसा करना मेरी शक्ति से परे है। जब से मैं यहाँ आया हूँ, मेरी बड़ी सेवा कर रही है!

"मैंने हँस कर कहा कि तूने तो उस नर्स की प्रशंसा का पुल बाँध दिया। देखना, यहाँ युद्ध करने आया है, कहीं और कोई झगड़ा न खड़ा कर देना।

"सेन गम्भीर हो गया। उसने कहा—नहीं भाई अरुण, इन लोगों के सम्बन्ध में ऐसी बात न करनी चाहिए। वास्तव में कितना उच्च है इनका हृदय। ये ऐसे भी आदमियों के प्रति हृदय खोल कर स्नेह करती हैं जो न इनके देश के हैं, न इनकी भाषा बोलते हैं, और न इनसे उनका कोई सम्बन्ध है। यन्त्रणा के मारे जब मैं छटपटाने लगता हूँ तब उसके मुखमण्डल पर तीव्र वेदना का एक ऐसा चिह्न व्यक्त होता है कि देख कर मैं अवाक् रह जाता हूँ। किसी बात का खूब गम्भीरता से अनुभव किये बिना मनुष्य की आकृति में ऐसा परिवर्तन हो ही नहीं सकता। हमारे अभागे देश की स्त्रियों का देवीत्व तथा उनकी स्नेह-ममता सब पुस्तकों में ही पाई जाती है, संसार को उसकी गन्ध तक नहीं मिलती। यही कारण है कि इन लोगों के प्रेम की बात मेरे मन में नहीं आती। उससे ये कहीं उच्च हैं। मैं केवल इनके प्रति श्रद्धा कर सकता हूँ, भक्ति कर सकता हूँ।

"उस दिन से जब कभी अवसर मिलता, मैं सेन को देखने जाता। धीरे-धीरे लिज़ी से मेरी घनिष्ठता हो गई। अन्त में सेन आरोग्य हो कर काम पर चला आया, किन्तु समय मिलने पर लिज़ी मुझसे मिलने आया करती, हम दोनों शाम का वक्त प्रायः साथ ही साथ व्यतीत किया करते थे। उसके सम्पर्क से मेरा थोड़ा-सा भी अवकाश का समय बहुत ही रमणीय हो जाता।

"धीरे-धीरे मेरे मन में एक प्रकार के सन्देह की छाया जाग्रत् होने लगी। कुछ दिन से मुझे ऐसा जान पड़ता कि लिज़ी मेरे सम्बन्ध में मानो साधारण मित्रता की मात्रा का अतिक्रमण करती जा रही है। वीणा की चिन्ता से मेरा हृदय परिपूर्ण है, उसका

रूप सदा मेरे अन्तःकरण में और बाहर नाचता रहता है, मेरे हृदय में और किसी के लिए तिल भर भी स्थान नहीं है। लिजी के लिए मैं चिन्तित हो पड़ा।

"लिजी-जैसी स्त्री का प्रेम प्राप्त करना कितने सौभाग्य का विषय है, यह मैं जानता हूँ। वीणा की तुलना में वह बहुत अंशों में उच्च भी हो सकती है, परन्तु इससे क्या? योग्य और अयोग्य का विचार करके तो मनुष्य प्रेम कर ही नहीं सकता। जिसे जो पसन्द आता है उसी से वह प्रेम करता है। मेरा हृदय वीणा के प्रेम में मुग्ध है, लिजी के लिए उसमें कहीं भी स्थान नहीं है। इसी लिए कभी-कभी मेरे मन में यह बात आती है कि मेरा अनुमान यदि सत्य हुआ तो बेचारी लिजी को व्यर्थ में ही क्लेश करना पड़ेगा।

"एक दिन हम दोनों एक झील के तट पर बैठे थे। उस तट के समीप ही एक बार युद्ध हो चुका था। यह स्थान अब फ़रासीसियों के हाथ में आ गया था। आस-पास ध्वंस के निर्दय चिह्न उस समय भी भली भाँति लक्षित हो रहे थे। चारों ओर के घर आदि गिर कर धराशायी हो गये थे, कहीं-कहीं उनके चूर-चार इकट्ठे होकर स्तूप के समान जमा थे। सुन्दर चौड़ा मैदान भाँय भाँय कर रहा था, मनुष्य की बस्ती का कहीं चिह्न तक नहीं था। एक वह समय था, जब वह स्थान मनुष्यों की बस्ती से सदा कल्लोल-मय रहता और वही अब श्मशान की भाँति सूना पड़ा था। जहाँ तक दृष्टि जाती, सब निर्जन था, निस्तब्ध था। झील के स्थिर जल पर तट पर के अर्द्धभग्न गिरजे की छाया पड़ रही थी, मन्द वायु में जल के वक्षस्थल पर तरह-तरह की रेखायें उदित होकर जाल-सी बुन रही थीं।

"लिजी एक दृष्टि से मेरे मुँह की ओर ताक रही थी। रुकते-रुकते उसने कहा—देखने में तुम हिन्दुस्तानी से नहीं मालूम पड़ते हो!

"कौतुक से हँसकर मैंने कहा—क्यों, ऐसी कौन-सी बात है? एकाएक यह बात तुम्हारे मन में कैसे आई?

"समुद्र के नीले और सुन्दर जल के समान अपने स्वच्छ नेत्रों की दृष्टि मेरे मुँह पर स्थिर रखकर उसने कहा—एकाएक नहीं, बल्कि यह बात तो प्रायः मेरे मन में आती है। शायद तुम्हें याद होगा, जिस दिन पहले-पहल मैंने तुम्हें देखा था, सेन ने तुम्हें अपना देशवासी और मित्र कहकर परिचय दिया था, तब मैं अवाक् होकर देखने लगी थी! सच कहती हूँ, देखने में तुम उन लोगों से बहुत ही सुन्दर हो, बेहद सुन्दर हो!

"उस समय उसके मुखमण्डल पर ज्योति के समान प्रकाश की एक मनोहर रेखा विकसित हो उठी थी। एकाएक मेरी समझ में ही न आया कि मैं इससे क्या कहूँ? दिमाग़ में चक्कर-सा आ गया।

वह मेरे सामने बैठी थी। वेशभूषा में किसी तरह का आडम्बर था नहीं। स्वच्छ किन्तु सादी पोशाक थी। सुनहरे बालों के गुच्छे के गुच्छे हिम के समान शुभ्र और खुले हुए कन्धों पर से पीठ पर झूल रहे थे। पश्चिम के आकाश से लाल रङ्ग की एक किरण-रेखा उसके मुँह पर पड़ रही थी। कैसी अपूर्व सुन्दरी मालूम पड़ रही थी वह! मुग्ध नेत्रों से उसे देखते-देखते मैंने कहा—यह बात तो बल्कि तुम्हारे ही सम्बन्ध में कही जा सकती है! तुम्हारी-जैसी सुन्दरी मैंने कहीं देखी ही नहीं।

"मेरे यह बात कहते ही उसके सारे मुखमण्डल पर घोर लालिमा छा गई। इस तरह अपने आपको भूल कर मैंने और कभी उसकी सुन्दरता की प्रशंसा नहीं की थी। अपने को वह और न सँभाल सकी—अन्तःकरण के अगाध प्रेम और स्नेह से परिपूर्ण नेत्रों की दृष्टि हटाकर कहने लगी—यह क्या सच कहते हो घोषाल? क्या तुम सचमुच मुझे इतनी सुन्दरी समझते हो? यह बात समाप्त करके ही उसने बड़े आवेग से मेरे दोनों हाथों को जोर से

पकड़ लिया। उसकी यह दशा देखकर पहले तो सहम कर मैं सन्नाटे में आ गया। परन्तु यह बात जैसे ही मन में आई कि ऐसा करके मैं बड़ा अन्याय कर रहा हूँ, अपने को तुरन्त ही संभाल लिया और खूब स्वाभाविक रूप से ही कहा—सच ही कहता हूँ लिजी, तुम-जैसी सुन्दरी सचमुच मैंने कहीं नहीं देखी। हाँ, एक स्त्री अवश्य है जो तुम्हारी तुलना में ठहर सकती है। वह है मेरी वाक्-दत्ता पत्नी। उसकी चर्चा मैंने तुमसे नहीं की। मेरा अनुमान है, वह भी ठीक ऐसी ही सुन्दरी है।

"एकाएक लिज़ी का मुख मुर्दे का-सा सफेद हो गया। जोर से चौंक कर उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और कहने लगी—तुम्हारी वाक्दत्ता पत्नी? तो क्या तुम 'एंगेज्ड' हो? यह बात तो आज तक तुमने मुझसे कही नहीं!

"अपराधी के समान मैं चुपचाप बैठा रह गया। वह भी मुँह फेर कर दूर गिरजे की ओर शून्य दृष्टि से ताकती हुई बड़ी देर तक मग्न बैठी रही। मैंने उसे कितना आघात पहुँचाया है, और वह चुपचाप मन ही मन किस मर्मान्तिक यातना का अनुभव कर रही है, यह सभी मैं अपने हृदय में समझ रहा था, उससे कुछ कहने का साहस मुझे नहीं हो रहा था।

"दिन का रहा-सहा प्रकाश भी क्रमशः विलीन हो गया, और सन्ध्या के अन्धकार में चारों दिशायें आच्छन्न हो गईं। आकाश पर दो एक तारे उदित होकर स्मित दृष्टि से झील के तट पर बैठे हुए इन दोनों निस्तब्ध प्राणियों की ओर देखते रहे। हम दोनों वैसे ही बैठे रह गये।

"बड़ी देर के बाद एक लम्बी साँस लेकर एलिजबेथ ने मेरी ओर मुँह फेरा। उसे ताक कर मैंने देखा तो उस समय वह मुँह पहले की ही तरह स्थिर और गम्भीर था। क्षण भर पहले प्रेम और अनुराग के प्रबल उच्छ्वास से जो मुख पुलकित होकर लाल हो

उठा था, अब उस पर और किसी तरह का चिह्न नहीं रह गया था।

"अपना कण्ठ स्थिर करके उसने कहा—तुम्हारे साथ जब मे जान-पहचान हुई है तभी से मैं तुमको बहुत ही अधिक प्यार करती आ रही हूँ, यह बात तो अब अस्वीकार ही नहीं की जा सकती। परन्तु इसके बाद अब और किसी तरह की बात नही उठ सकती। जाने दो, इसका मुझे दुःख नही है। मनुष्य के जीवन में कई दिशाये है। एक दिशा बन्द हो जाने पर भी वह और-और दिशाओं में सार्थकता प्राप्त कर सकता है। क्या सचमुच तुम्हारी स्त्री सभी दिशाओं में तुम्हारे लिए उपयुक्त होगी? इसको कुछ और न समझना। एक मित्र की हैसियत से मैं यह पूछ रही हूँ। हम लोग यहा से सुना करती है कि तुम्हारे देश की स्त्रियाँ अभी बहुत पिछड़ी हैं।

"मैंने कहा—वे वहाँ के हाईकोर्ट के एक जज की कन्या है। सात-आठ वर्ष में इस युग की सभी बातें सीख कर अभी लंदन से गई है।

"लिजी ने कहा—यह सुन कर मुझे बड़ा सुख मिला। ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि तुम्हारा विवाहित जीवन सुखमय हो। जब तुम यहाँ से लौटकर देश जाना तो उनसे मेरा उल्लेख करके मेरी शुभकामना सूचित करना। बाद को मेरी तरफ़ हाथ बढ़ा कर उसने कहा—अब हम लोग पहले की ही तरह फिर एक दूसरे के मित्र हैं। ठीक है न?

"आग्रहपूर्वक फैलाये हुए हाथ को पकड़ कर मैंने कहा—भगवान् जानते हैं, इससे बढ़ कर और कोई भी बात मेरे लिए सुखमय नहीं हो सकती।

"उस दिन से मेरी और लिजी की भेंट-मुलाक़ात पहले की अपेक्षा कम हो चली थी। फिर भी बीच-बीच में साँझ को हम दोनों

इकट्ठे हुआ करते थे। इस घटना के थोड़े दिन बाद ही चोट खाकर मैं अस्पताल में आया।

"मेरी चिकित्सा खूब अच्छी तरह से हो रही थी। अच्छी चिकित्सा और लिज़ी की सेवा की बदौलत मैं शीघ्र ही आरोग्य हो उठा। मेरी निर्बलता और शरीर की क्लान्ति आदि सभी कुछ जाती रही, उस समय तक मेरी आँखों की पट्टी भर नहीं खुली थी।

"लिज़ी प्राण देकर मेरी सेवा कर रही थी। उसे जितना अवसर मिलता, वह विश्राम न करके अपना सारा समय मेरे ही पास बिताती। बातचीत करके, सेवा करके, पुस्तकें सुना-सुना कर वह सदा ही मुझे प्रसन्न रखने की चेष्टा करती, परन्तु फिर भी मुझे ऐसा जान पड़ता, मानो किसी गुप्त वेदना से यह सदा दुखी रहती है, बात करते-करते न जाने कैसी म्रियमाण-सी हो उठती है। जब मैं कोई बात पूछता तब मानो आँसू रोकने के लिए वह उठ जाती। उसके इस भाव-परिवर्तन का कारण मैं किसी तरह भी न समझ पाता।

"इसी तरह तीन सप्ताह व्यतीत हो गये। स्वस्थ और सबल शरीर लेकर इस तरह पड़े-पड़े मैं क्रमशः अधीर हो उठा था। इसके लिए मैं रोज़ ही डाक्टर को हैरान किया करता। मन में आता—कितने दिनों से वीणा को चिट्ठी नहीं लिखी, इतना विलम्ब होने के कारण कदाचित् वह उद्वेग और आशङ्का के कारण व्याकुल हो उठी होगी। रोग-शय्या पर पड़े-पड़े विशेष रूप से केवल उसी की बात मुझे याद आया करती। साँझ के समय मैं मन ही मन सुदूर पटना शहर के एक भाग में मिस्टर राय के रमणीय वास-भवन को अपनी कल्पना में प्रायः देखा करता। मुझे ऐसा जान पड़ता, मानो वहाँ के टेनिस के मैदान में वीणा, किरण, निर्मला, चौधरी, सभी मिल कर खेल रहे हैं। वीणा का मुख विषाद से कुछ मलिन है। कितने दिनों से उसे मेरा कोई समाचार नहीं

मिला। जीवन-मृत्यु के इस भयङ्कर सन्धिक्षेत्र में जो अपने प्रणय-पात्र को छोड़ कर एक पत्र की आशा से उत्कण्ठित भाव से मार्ग की ओर ताकता रहता है, उसके लिए ऐसा विलम्ब कितने उद्वेग और आशङ्का का कारण हो उठता है, इसे अनुभव करके मैं बहुत ही अधीर और चञ्चल हो उठता, मेरा मन उड़ कर उस सुदूर समुद्र के पार वीणा के पास भाग आने के लिए पागल हो उठता, फ़्रांस में लिज़ी के द्वारा की गई सैकड़ों प्रकार की सेवायें, उसका निःस्वार्थ और हार्दिक प्रेम, मुझे किसी तरह भी नहीं रोक सकता था। अधीर भाव से मैं केवल यही सोचा करता कि ये लोग मुझे कितने दिन में मुक्ति देंगे ?

अस्तु, संसार में सभी वस्तुओं का अन्त है। मुझे भी मुक्ति की आज्ञा एक दिन मिल गई। परन्तु वह एकाएक आकस्मिक वज्रपात-सी हुई।

"उस दिन नियमानुसार परीक्षा आदि करने के बाद डाक्टर ने कहा—मिस्टर घोषाल, आज तुम से एक बात कहनी है। तुम यहाँ से जाने के लिए बहुत ही व्यस्त हो रहे हो। मैं समझता हूँ कि तुम्हें अब यहाँ रोक रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। कल तुम यहाँ से छुट्टी पा जाओगे।

"छुट्टी की आशा से आनन्द के मारे मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा। इतने दिनों के बाद मेरा जीवन फिर पहले का-सा ही मुक्त और आनन्दमय हो जायगा ! मैंने कहा—धन्यवाद ! आपको शतशः धन्यवाद ! छुट्टी के लिए इतने दिनों से मैं कितना व्याकुल हो रहा हूँ, यह आप नहीं अनुभव कर सकेंगे। खैर, तो क्या अब इतने दिनों के बाद मेरी आँख ठीक हो गई है ? आज क्या आप मेरी पट्टी खोल देंगे ?

"ज़रा देर तक चुप रह कर डाक्टर ने कहा—पट्टी बाँध रखने की आवश्यकता अब नहीं है। तुम्हारी नर्स को मैं कहे जा रहा हूँ,

वह तुम्हारी पट्टी खोल देगी। रही बात आँखों की, उनके सम्बन्ध में थोड़ा-सा गड़बड़ है। परन्तु लेफ़्टिनेंट, यह बात तुमसे साफ़-साफ़ कह देने में ही अच्छा है। तुम एक वीर सैनिक हो, मुझे आशा है कि सैनिक की ही भाँति इस आघात को सहन कर लोगे।

"मैं चौंक उठा। इतनी भूमिका किस बात के लिए बाँध रहे हैं? मुझे हुआ क्या है? आतङ्क से मेरा गला रुँध गया। मैंने कहा—डाक्टर, यह सब तुम क्या कह रहे हो? तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं। साफ़-साफ़ बता दो, मुझे क्या हुआ है?

डाक्टर ने कहा—बात यह है कि तुम्हारे मस्तक पर गोले का जो धक्का लगा था, तुम्हें याद है न? उसी से तुम्हारी दृष्टि-वाहक स्नायु पर, जिसके कारण हम लोग सारी चीज़ें देख पाते हैं, बड़ी गहरी चोट लग गई है। उसकी चिकित्सा में हम लोगों ने अपनी शक्ति भर कुछ उठा नहीं रक्खा, परन्तु कोई फल नहीं हुआ। नेत्रों की चिकित्सा का यहाँ कोई विशेष प्रबन्ध भी नहीं है। इसी लिए हम लोगों ने यह निश्चय किया है कि कल तुम बम्बई चले जाओ। वहाँ हर तरह का प्रबन्ध है। तुम्हारी चिकित्सा के लिए जो कुछ आवश्यक होगा, वहाँ का बड़ा मेडिकल बोर्ड सब करेगा। यहाँ से हम लोगों ने सारा प्रबन्ध कर दिया है। यहाँ व्यर्थ में विलम्ब करने की आवश्यकता नहीं है, यहाँ से कल ही रवाना हो जाओ। तुम्हारे साथ जाने के लिए आदमी भी ठीक कर दिया है। मैं बहुत दुखी हो रहा हूँ घोपाल, कि तुम्हारे लिए मैं कुछ कर नहीं सका, यद्यपि शक्ति भर कुछ उठा नहीं रक्खा गया। अच्छा, तो अब आज्ञा दीजिए।

"जूते के शब्द से मैंने समझ लिया कि डाक्टर चला गया। वह सब क्या कह गया इसका ठीक-ठीक मर्म मैं समझ नहीं सका। भीम स्वर से पुकारा—लिज़ी!

"वह पास ही थी। मैंने कहा—डाक्टर क्या कह गया है? क्या अब मैं देख न पाऊँगा? मेरी दृष्टि एक-दम नष्ट हो गई?

"लिज़ी शायद चुपके-चुपके रो रही थी। रुँधे हुए कण्ठ से उसने कहा—वे लोग इसी बात का सन्देह कर रहे हैं।

"मैं चुप रह गया। मुझे, ऐसा जान पड़ने लगा कि मानो एक विराट् और सूचीभेद्य अन्धकार धीरे-धीरे मेरी दृष्टि पर उतरा आ रहा है। आज एक महीना हो रहा है, मैं घायल होकर आँख में पट्टी बाँधे अस्पताल में पड़ा हूँ। एक दिन भी मेरे हृदय में किसी प्रकार की चिन्ता या आशङ्का का उदय नहीं हुआ। मन में काफ़ी भरोसा था कि फिर भली भाँति स्वस्थ होकर काम में योग दे सकूँगा। परन्तु आज ये लोग यह क्या कह रहे हैं? क्या मैं अन्धा हूँ? मेरे नेत्रों की दृष्टि-शक्ति नष्ट हो गई है? क्या यह भी कभी सम्भव है? क्या इसी तरह मेरा इतना अभिलाषामय, आशा तथा उत्साह से परिपूर्ण जीवन बात की बात में नष्ट हो जायगा? यह असम्भव है!

"उद्वेग और निराशा से पागल के समान चिल्ला कर मैंने कहा—लिज़ी, ए लिज़ी, मेरी आँखों की पट्टी खोल दो। मैं स्वयं एक बार देखना चाहता हूँ, क्या मैं सचमुच बिलकुल अन्धा हो गया हूँ?

"एलिज़ाबेथ मेरी ओर बढ़कर धीरे-धीरे पट्टी खोलने लगी। सारी पट्टी खोलने में जितना समय लगा, उतने ही में मैं अधीर हो उठा था। सबसे बादवाली गाँठ खुलते ही मैंने ज़ोर से उसका हाथ हटा दिया और जीजान से कोशिश करके आँख खोलकर देखने लगा। कुल अन्धकार था, घोर अन्धकार था! फिर भी विश्वास न हुआ। मैंने सोचा कि बहुत दिनों से आँखें बँधी थीं, इसलिए पलकें अच्छी तरह से खुली नहीं। दोनों हाथों से पलकों को ज़ोर से खोल कर व्याकुल-भाव से देखा—अन्धकार! आगे-पीछे, दाहने-बायें कुल अन्धकार था।

"तो सब सच है ! सचमुच मैं अन्धा हूँ। शरीर ढीला पड़ गया। और कुछ सोच न सका। मेरी दृष्टि पर पृथिवी का प्रकाश अस्त हो गया। तो आज से जीवन की सारी आशा, सारे सुख, सारे आनन्द, सभी का अन्त हो गया ! आज मेरे जीवन का ही अवसान हो गया।

"भयभीत और कम्पित-कण्ठ से पुकारा—लिज़ी, तुम कहाँ हो ! मेरे पास आओ।

"मेरे उस असहाय और भयभीत मुख का भाव देख कर वह स्नेहमयी माता के समान दौड़ कर आई। मेरा मस्तक गोद में रखकर उसने कहा—भय किस बात का है ? मैं तो सदा ही तुम्हारे पास रहती हूं। अन्त में अपने नेत्रों का जल पोंछ कर उसने कहा—जिस दिन पहले-पहल तुम्हारी परीक्षा करके उन लोगों ने यह बात कही थी, उस दिन से कितनी मार्मिक वेदना का अनुभव मैं कर रही हूं, यह कैसे बतलाऊँ ! फिर भी इतने दिन मेरे पास थे, इसी से मुझे सान्त्वना थी। आज वह भी जाती रही। मेरे पास से छीन कर तुम्हें इस असहाय अवस्था में वे लोग कितनी दूर भेजे दे रहे हैं।

"अपने रेजीमेंट की आज्ञा का उल्लङ्घन मैं कर नहीं सकता था, इससे स्वभावतः विदाई का आयोजन आरम्भ हो गया। एक दिन यहाँ से छुटकारा पाने के लिए मैं व्यस्त हो उठा था, परन्तु आज जब सचमुच वह समय आ गया, तब वैसे आग्रह से मैं उसका स्वागत नहीं कर सका। अब मेरी समझ में आया कि एलिज़ाबेथ ने कितनी ओर से, कितने प्रकार के और कितने मधुमय बन्धन में मुझे जकड़ रक्खा है।

विदाई से कुछ देर पहले हम दोनों चुपचाप बैठे थे। जिस दिन हम लोगों में जान-पहचान हुई थी उस दिन के बाद से एक एक करके सारी घटनायें मेरे मन में आने लगी। कितने दिन

की कितनी मधुर सन्ध्यायें, कितना संलाप, कितना आमोद-आह्लाद, मानो चित्र के समान नेत्रों के समक्ष उदित होने लगे। आज उन सभी का अन्त हो रहा था! गम्भीर विषाद के भार से हम दोनों ही का हृदय म्रियमाण-सा हुआ जा रहा था, किसी के मुँह से कोई बात नहीं निकल रही थी। बड़ी देर की निस्तब्धता के बाद एलिज़ाबेथ ने कहा—देखो, मनुष्य आशा पर ही जीवित रहता है। तो हमी लोग अपनी अन्तिम आशा का परित्याग क्यों कर दें? यदि बम्बई के मेडिकल बोर्ड की व्यवस्था के अनुसार चिकित्सा होने पर तुम आरोग्य हो जाओ तो क्या कभी इधर आओगे नहीं?

"उसकी स्नेह-कातर तथा सेवा-परायण नारी प्रकृति मुझे छोड़ने में कितना व्याकुल हो उठी थी, इसे मैंने उसकी बातों से समझ लिया। उसे झूठी आशा देने की इच्छा मुझे न हुई, क्योंकि मेरा दिल बिलकुल टूट गया था। फिर आरोग्य हो सकूँगा, यह आशा उस समय मैं नहीं कर सकता था। व्यथित हृदय से मैंने कहा—बम्बई में मेरी चिकित्सा का अच्छा या बुरा जो भी फल होगा उसकी सूचना यहाँ के रेजीमेंट में आयेगी। वहाँ पूछ-ताछ करने से ही तुम्हें सारा समाचार मिल जायगा। यदि अच्छा हो गया तो आऊँगा ही, यह तुम निश्चय जानना। और यदि न अच्छा हुआ तो फिर हमारी-तुम्हारी मुलाक़ात न होगी। शायद चिट्ठी-पत्री लिखकर भी खोज-खबर लेना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। परन्तु लिज़ी, अपने जीवन में तुम्हें मैं किसी दिन भूल न सकूँगा। इन तीन महीनों में तुमने अकेले ही कितने-कितने रूप में मेरे जीवन को पूर्ण कर रक्खा था, इस बात को आज मैं भली भाँति समझ रहा हूँ। मेरे जीवन की सारी आवश्यकताओं को तुमने पूर्ण कर रक्खा था। सुख के समय मैंने एक घनिष्ट मित्र के समान तुम्हे अपने समीप पाया था, दुख के समय माता के स्नेह से गोद में लेकर इस अभागे और असहाय अन्धे की सेवा करने में तुमने ज़रा भी क्लान्ति

का अनभल नहीं किया। अधिक क्या कहूं मेरे अन्तःकरण में तुम्हारी स्मृति जीवन-प्रदान करनेवाली देवी के समान सदा जाग्रत् रहेगी।

"मेरा हाथ पकड़ कर लिज़ी ने कहा—ऐसी बात तुम मुंह से न निकालो। इससे मुझे बड़ा कष्ट होता है। तुम अपने बन्धु-बान्धवों और आत्मीय स्वजनों के पास लौटे जा रहे हो, उनके सङ्ग और स्नेह से तुम यथासम्भव शान्ति पा सकोगे। उसके अतिरिक्त तुम्हारी स्त्री है, तुम्हारी सेवा करने का अधिकार उन्हीं का है। मुझे कुछ कहने का अधिकार नहीं है, और कहना भी नहीं चाहिए। परन्तु इस विदाई के अवसर पर कह रही हूं कि तुम्हारे पास रह कर जीवन-पर्यन्त तुम्हारी सेवा करने के अतिरिक्त मुझे और किसी बात की अभिलाषा नहीं है।

"आंसुओं की अविरल धारा बरसाती-बरसाती मुझे जहाज पर चढ़ा कर एलिज़ाबेथ ने विदा ली। उसके चले जाने पर मैं अपने आप को जितना असहाय समझने लगा, जीवन में उतना और कभी नहीं समझा। तीन मास पहले एक दिन देश से असंख्य आशा और उत्साह से हृदय को ओतप्रोत करके छाती फुलाये हुए फ्रांस के समुद्र-तट पर पैर रक्खा था मैंने। उस दिन कितना अजेय साहस था हृदय में मेरे! नया नया अधिकार मिला था उस समय मुझे, इससे रात-दिन यही चिन्ता में लगा रहता कि किस तरह मैं संसार को बङ्गाली-जाति का पराक्रम दिखा कर सबको मुग्ध एवं चकित कर दूं? आज भी मेरे हृदय में उस दिन का वही उत्साह, वही साहस और वही अजेय शक्ति पूर्णरूप से वर्तमान है। परन्तु मनुष्य के भाग्य का भी कैसा परिवर्तन होता है! आज मैं उसी समुद्र-तट से जीर्ण और भग्न हृदय लेकर तथा दृष्टिहीन होकर अपने ही दीन-हीन तथा असहाय रूप में देश को लौटा जा रहा हूं। आज संसार में मेरे आशा और आकाङ्क्षा करने के लिए कोई भी वस्तु नहीं है।

"मुझे अपना यह अन्धापन वास्तव में अपने ऊपर विधाता का बड़ा भारी अन्याय और अत्याचार-सा मालूम पड़ने लगा! जहाज के इतने लम्बे रास्ते में शून्य-हृदय से मैं यही एक बात एकाग्र-भाव से सोचता जाता था कि युद्ध में कितने ही अन्य व्यक्तियों के समान मेरे भी प्राण तो जा सकते थे? यदि ऐसा हुआ होता तो आज शिकायत की कोई बात न रहती। परन्तु ऐसा तो हुआ नहीं! कितने ही लोगों के हाथ-पैर उड़ गये हैं। उन्हें कष्ट तो अधिक मिला है अवश्य, किन्तु विज्ञान की बदौलत आदमी ने जोड़-जाड़ कर फिर भी उन्हें किसी तरह खड़ा कर दिया है। मेरे लिए ऐसा भी कोई उपाय नहीं निकल सका। मैं अन्धा हूँ। शरीर सबल और स्वस्थ है, स्वास्थ्य में किसी तरह का विकार नहीं है, यौवन की समस्त शक्तियों से परिपूर्ण होकर भी मैं असमर्थ हूँ, असहाय हूँ। अन्यान्य समस्त अङ्गों-प्रत्यङ्गों के पूर्णरूप से कार्यक्षम होने पर भी मैं अन्धा हूँ। यही कारण है कि मेरी अन्य समस्त शक्तियाँ रह कर भी नहीं हैं। सब कुछ रहते हुए भी मेरी दोनों आँखें चली गईं, जिनके प्रतीकार का अब कोई उपाय भी न रह गया! आश्चर्य है!

"रह-रह कर रुके हुए रोष और उद्वेग से मेरी छाती फूल उठती। यह अभियोग किसके विरुद्ध था, इसके लिए दण्ड ही मैं किसे देना चाहता था, यह मालूम नहीं। फिर भी अन्तःकरण में एक अशान्त विद्रोह जाग्रत् हो उठता और वह मुझे चञ्चल कर देता। उसके बाद ही कभी-कभी एक भयङ्कर निराशा और खिन्नता से समस्त हृदय भग्न हो जाता। मैं अन्धा हूँ! संसार के सारे सुखों और आशाओं से वञ्चित हूँ! मेरे जीवन की किसी भी दिशा से और किसी सुख की आशा नहीं है! तो क्यों इस दुर्बल जीवन का भार ढो-ढोकर मरूँ? एक ही गोली से तो जीवन के इन सारे दुःखों से छुटकारा पा सकता हूँ! क्षोभ और निराशा से जब सचमुच आत्महत्या की इच्छा बहुत ही प्रबल हो उठती

तब मेरे इस दग्ध हृदय-पटल पर धीरे-धीरे एक मधुर मुख जाग्रत् होकर मेरी सारी ज्वाला को शान्त कर देता। वह मुख मेरी वीणा का था। विदाई के दिन का वही उसका कातर और आँसुओं से भीगा हुआ सुन्दर मुख था! मेरा हृदय कहता कि वहाँ वह तुम्हारी आशा से रास्ता देख रही है और यहाँ तुम ऐसा करने जा रहे हो? एक विश्वस्त और प्रेमपूर्ण हृदय के साथ ऐसा व्यवहार करने में तुम्हें लज्जा नहीं आती? उस मुख का ही स्मरण करके मुझे अपना सारा दुख और सारी ग्लानि भूल जाने का सहारा मिलता। सोचा करता कि सब कुछ नष्ट हो गया, परन्तु अब भी मेरी वीणा बनी है। यदि वह मेरे पास रहेगी तो जीवन भर मैं यह दुख प्रसन्नता के साथ सहन कर सकूँगा।

"आशा बड़ी मायाविनी है। कभी-कभी वह अपने जादू के खेल में एक मनोहर चित्र रचकर मेरे हृदय पर रख देती। तब मैं सोचता, शायद बम्बई के अस्पताल की चिकित्सा से मेरी आँखें अच्छी हो ही जायँ? डाक्टर तो कहता ही था कि यहाँ नेत्रों की चिकित्सा की कोई पृथक् व्यवस्था नहीं है। अच्छी तरह से चिकित्सा होने पर मेरे नेत्रों का अच्छा हो जाना भी असम्भव नहीं है।

"मनुष्य आसानी से ज़रा-सी भी आशा नहीं त्यागना चाहता। इस क्षीण आशा के सूत्र-मात्र का ही अवलम्बन करके मैं भी ज़रा-सी शान्ति पाने की चेष्टा किया करता था।

"पहले-पहल एलिजाबेथ का न होना मुझे बहुत खल रहा था। इस आत्मीय-स्वजनों से हीन प्रदेश में कठोर सैनिक जीवन में, स्नेह की प्रतिमा के समान उसकी अनुपम सेवा और अनुराग ने मुझे घेर रक्खा था! बिना माँगे मैं केवल उसी से अपरिमित अनुराग पाता चला आया हूँ, बदले में उसे कुछ दे नहीं सका। परन्तु उससे बिलग होने के बाद मैं ही क्षण-क्षण पर उसके न होने की तीव्र वेदना मुझे जर्जरित कर रही थी।

जहाज़ में जो और स्त्री-पुरुष यात्रा कर रहे थे वे सभी अपने मित्रों से बातचीत करने, खेलने-कूदने और आमोद-प्रमोद में व्यस्त थे। केवल मैं ही अकेला उनके आनन्द-कलरव के बीच में निस्तब्ध-भाव से बैठा रहता। अन्धे का यहाँ आनन्द-हीन तथा विचित्रता-रहित जीवन था! उसकी ओर किसी का ध्यान ही न आकर्षित होता। मेरा साथी साँझ को एक चौकी रखकर मुझे डेक पर बैठा जाता। मैं अकेले में बैठे-बैठे कल्पनारूपी नेत्रों से देखता—आकाश निर्मेघ है, स्थान-स्थान पर तारे उदित होकर उसकी शोभा बढ़ा रहे हैं, ज्योत्स्ना की रजत-धारा से चारों दिशायें परिप्लावित हो रही हैं। उन्हीं के बीच में सुनील और अनन्त विस्तारवाले सागर की जलराशि को मथता हुआ मेरा जहाज़ वेग से चल रहा है।

"समुद्र की तरङ्गें निरन्तर गरज-गरज कर अपनी ध्वनि से कानों पर आघात कर रही थीं। बीच-बीच में लोगों की बात-चीत के भी टूटे-फूटे दो-चार शब्द सुनाई पड़ जाते या हँसी का ही ज़रा-सा टुकड़ा कानों के समीप चमक उठता। कभी प्रेमी या प्रेमिका का मृदु किन्तु उच्छ्वासपूर्ण संलाप सुनने में आता और कभी दूर से सुने हुए किसी सङ्गीत की अन्तिम तान।

"धीरे-धीरे मेरे अतीत जीवन के कितने ही उज्ज्वल दिनों की मधुर-स्मृतियाँ जाग्रत् हो आतीं। मैंने भी तो इसी तरह जीवन के अमृत-कलश को परिपूर्ण किया था और कितने दिन इस संसार के सारे आनन्द, रस और सौन्दर्य का पान करके अपनी पिपासा को शान्त किया है। वही मैं आज भी बना हूँ, अतृप्त हृदय की तृष्णा भी ज्यों की त्यों मौजूद है, किन्तु अब वह दिन कहाँ है? किस पाप से, किस दुष्कर्म के फल से, मेरे जीवन के सारे सुखों की आशा क्षण भर में जहाँ की तहाँ हो गई?

"निराशा और अभिमान के मारे कितने ही बार मेरी आँखें आँसुओं से भीग जातीं! बाद को ही मन में आता—अब मेरे पास

स्नेहमयी एलिज़ाबेथ नहीं है, जो मुझे ज़रा भी उदास देख कर ही दौड़ पड़ेगी और अपने अन्तःकरण की सारी मधुरिमा मुझ पर डालकर मेरे अन्तःकरण की वेदना दूर करने का प्रयत्न करेगी। आज वह मुझसे बहुत दूर है। वेदना के मारे रोते-रोते जब थका-सा हो जाता तब अपने आप ही शान्त भी हो जाता।

"आशा और निराशा के बीच में इस तरह से झूलते-झूलते अन्त में एक दिन जहाज आकर बम्बई के समुद्रतट पर लगा।

"बम्बई के अस्पताल में जाकर मैंने फिर आश्रय लिया। नियमित रूप से मेरी परीक्षा और चिकित्सा होने लगी। जब मैं युद्धक्षेत्र में घायल होकर वहाँ के अस्पताल में था तब मुझे कोई आशंका नहीं थी, मेरी दृष्टि की शक्ति नष्ट हो सकती है, इस बात की सम्भावना तक कभी मेरे हृदय में नहीं उत्पन्न हुई थी। इसी लिए चित्त बहुत ही शान्त और स्वस्थ रहता था। परन्तु यहाँ दिन-दिन मेरे हृदय का उद्वेग असह्य होता जा रहा था। ये लोग कब क्या कहेंगे, इसी उत्कण्ठा से मेरा चित्त सदा ही उद्विग्न रहता। मानो उसी एक बात पर मेरा जीवन-मरण सब कुछ निर्भर था।

"बम्बई आने के बाद से ही मेरी चञ्चलता बढ़ जाने का एक और भी कारण था। वह कारण थी वीणा। जितने दिन तक मैं उससे बहुत दूर था, जब तक इच्छा करने पर भी दौड़ कर उसके पास पहुँच जाने का उपाय नहीं था; उतने दिन तक चित्त भी सबल था। परन्तु अब इतना समीप आकर उससे दूर रहना मेरे लिए बिलकुल ही असह्य-सा हुआ जा रहा था। बम्बई से पटना तक का ही तो अन्तर था। कभी-कभी तो मन में आता कि इन सारे बाधा-विघ्नों को दूर करके, इन लोगों की चिकित्सा का यह बन्धन तोड़ कर, फेंक दूँ और उसके पास दौड़ जाऊँ। जिसकी स्मृति अन्तस्तल में इतने तीव्रभाव से सदा जाग्रत् रहती है उसे बाह्य जगत् में प्राप्त करना क्या इतना कठिन है?

"बम्बई के मेडिकल बोर्ड ने एक मास तक मेरे नेत्रों की चिकित्सा और तरह-तरह की परीक्षा करके देखा। अन्त में एक दिन सब लोगों ने मिलकर अपना निर्णय दिया कि चिकित्सा-शास्त्र के नियमों के अनुसार उन लोगों का विश्वास है कि मेरी दृष्टि-शक्ति फिर न लौट सकेगी। दृष्टिवह स्नायु बिलकुल बेकार होगई है। उसमें कर्तृत्व-शक्ति का फिर से प्रादुर्भाव करना उनकी शक्ति से परे है। इस प्रकार एक ही बात में मेरे भाग्य का निर्णय हो गया।

"साँझ का समय था। एकान्त कमरे में मै चुपचाप बैठा था। हृदय में जोरों का तूफ़ान जारी था। चारों ओर के सारे बन्धनों से छुटकारा पाकर मानों मैं एक आश्रयहीन महाशून्य के मध्य में आ पड़ा हूँ, मानों मैं समझ गया हूँ कि यहीं मेरे जीवन की समाप्ति है। परन्तु क्यों? किसलिए? संसार में और सब लोग तो ठीक पहले की ही तरह सुख से, आनन्दपूर्वक अपनी-अपनी जीवन-नौका खेते चले जा रहे हैं, तो क्या मैं ही अकेला इस भँवर में पड़ कर रसातल में धँस जाऊँगा? मेरे किस अपराध का यह दण्ड है? इस अत्याचार का, इस अन्याय का क्या कोई प्रतीकार नहीं है? मनुष्य की क्या कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो इस अदृश्य शक्ति को रोक दे और उसके विरुद्ध पैर जमा कर युद्ध कर सके? उस समय मेरे हृदय में किस भाव का उदय हो रहा था और मै क्या सोच रहा था, यह ठीक-ठीक मैं स्वयं नहीं जानता। एक उत्कट प्रतिहिंसा या बदला लेने की तीव्र वासना से मेरा समस्त हृदय विद्रोही होकर गरज-गरज कर रह जाता था। किस कारण से मेरा यह सारा जीवन इस तरह व्यर्थ हो गया?

"बाहर जब तूफ़ान आता है तब वह अपने प्रबल पराक्रम से प्रकृति को अस्त-व्यस्त करके ध्वंस के चिह्न छोड़ जाता है। उसके भीषण पराक्रम का प्रतिरोध करने के लिए उस समय उसके सामने संसार की कोई भी शक्ति नहीं खड़ी हो सकती। परन्तु मनुष्य के

अन्तःकरण में जो दुर्जय विप्लव हुआ करता है, बाहर उसका किसी तरह का लक्षण नहीं दिखाई पड़ता। एक प्रबल वासना के कारण उस समय मेरे मन में यही आता—प्रलय की एक ताण्डव संहारलीला में यह संसार टूट-टूट कर चकनाचूर हो जाय, भयङ्कर तूफ़ान में पड़कर पृथिवी ध्वंस हो जाय, सूर्य, चन्द्रमा और तारे सब अस्त हो जायँ, ग्रह-उपग्रह के भयङ्कर संघात और उल्कापात में सारी सृष्टि रसातल को चली जाय! किन्तु हाय, मनुष्य किसी एक अदृश्य शक्ति के हाथ का खिलौना भर है। उसके जीवन के सारे सुख-दुख और शुभाशुभ उस शक्ति के ही इशारे से नियन्त्रित हुआ करते हैं। उसकी अपनी कहीं कोई भी शक्ति नहीं है। उसके हृदय को फाड़ कर निकले हुए अभिशाप से बाह्य जगत् को कोई भी हानि नहीं होती, अपने निरर्थक आक्रोश से वह स्वयं जल-जल कर मरता भर है!

"उस दिन चिराग़ जले के बाद से सारी रात मेज़ के पास कुर्सी पर बैठे ही बैठे कट गई। पिछली रात में ठंडी हवा लगने से जब तपा हुआ दिमाग़ और अवसन्न शरीर फिर कुछ अपने स्वाभाविक रूप में आये तब मेज़ पर मस्तक रख कर अर्द्ध-मूर्च्छित के समान उँङ्क गया।

"मनुष्य के मस्तक पर जब तक किसी शीघ्र ही आनेवाली विपत्ति की छाया पड़ती रहती है तब तक उसके लिए कितनी उत्कंठा और कितनी आशङ्का हृदय में उत्पन्न हो कर उसे उद्विग्न और कातर कर रखती है। परन्तु वही विपत्ति जब दूर न रह कर एक-दम मस्तक पर आ टूटती है तब देखने में आता है कि कष्ट तो है किन्तु उसके साथ ही साथ अनायास ही जो ज़रा-सी शान्ति मिल गई है, उसका भी मूल्य कम नहीं है।

"दूसरे दिन जब नींद खुली तब मेरे हृदय की भी ठीक वही अवस्था थी। आशा और निराशा तथा आनन्द और उद्वेग

के जो घात-प्रतिघात मेरे समस्त हृदय में व्याप्त होकर दो मास से मेरे जीवन को अशान्तिमय बना रहे थे, आज उन सबका अन्त हो गया। आज निश्चित रूप से मेरे भाग्य का निर्णय हो गया। अतएव भविष्य के सम्बन्ध में किसी तरह का सोच-विचार करने की आवश्यकता न रह गई। उस समय सुख की आशा और दुःख की आशङ्का दोनों ही मेरे चित्त से लुप्त हो गई थीं, और मेरा चित्त वैराग्य के निर्विकार और शान्त भाव से भरा हुआ था।

"मेरे उस सर्वथा निराश और उदासीन चित्त में सबसे पहले वीणा की बात आई। आज दो मास से निरन्तर जिसका नाम जपता आ रहा था और जिसके रूप का ध्यान करके हृदय में अधीर आकांक्षा लिये हुए रात-दिन काटे हैं, उसकी याद आने पर आज मुझे कोई भी आनन्द न आया। बल्कि मन में यह बात आने लगी कि अपने इस अभागे और अभिशप्त जीवन के साथ उसके तरुण और सुकुमार जीवन को युक्त करके जीवन के सारे आनन्दों से उसे वञ्चित कर रखने का मुझे क्या अधिकार है? ऐसी अद्भुत और असङ्गत वासना इतने दिन किस तरह मेरे दिमाग में घुसी रही, यह बात आज तक मेरी समझ में न आई।

"उसे छुटकारा देना होगा। सम्भव है उसे थोड़े दिनों तक कष्ट हो, किन्तु पीछे से इन सब बातों को भूल कर जीवन के सुखों का वह फिर उपभोग कर सकेगी। हम लोगों का तीन ही महीनों का तो परिचय है! इतने ही दिन के परिचय के कारण इस जीवित अवस्था में भी सारे सुखों तथा शान्ति से वञ्चित होकर मुर्दा-जैसे अन्धे के पास जीवन भर व्यतीत करना वीणा के लिए कभी सम्भव न होगा। सदा से सुख में ही उसका पालन हुआ है। उसे तो किसी तरह का क्लेश सहने का कभी का अभ्यास है नहीं! उसके ऊपर ऐसा अत्याचार! यह तो मुझसे कभी न किया जायगा।

"उसी समय बैठे-बैठे वीणा को एक चिट्ठी लिखी। उसमें

अपना सारा हाल स्पष्टरूप से और विस्तार के साथ लिख कर उसे सूचित किया कि हम दोनों में जो सम्बन्ध स्थिर हुआ था, मेरी यह दशा हो जाने पर अब उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं नहीं चाहता कि बैठे-बिठाये तुम्हारे जीवन को भी नष्ट कर दूँ। यही कारण है कि अपने साथ तुम्हारे विवाह का प्रस्ताव भंग कर देने के लिए मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। मुझे आशा है कि प्रत्येक दिशा में विचार करके तुम भी मेरे इस प्रस्ताव का समर्थन करोगी।

"पूर्ण रूप से अकुण्ठित और वेदनामुक्त हृदय से वीणा के ऊपर से अपने सारे अधिकार हटाकर मैंने यह त्यागपत्र लिख डाला। आज फिर उसके लिए मेरे हृदय के किसी कोने में भी कहीं ज़रा-सी व्यथा न हुई।

"अब फिर अपने सम्बन्ध में सोच-विचार करने का अवसर आया। अस्पताल में मेरे रहने की तो आवश्यकता रह नहीं गई थी, अतएव वहाँ से मुझे विदा लेनी ही थी। परन्तु प्रश्न यह था कि मैं जाऊँ कहाँ, मेरा घर कहाँ है?

"घर की बात मन में आते ही मेरा स्थिर और शान्त हृदय फिर चञ्चल हो उठा, मानो प्राण कण्ठ पर आकर अटक रहे थे! संसार में मेरे घर, जगह-ज़मीन और धन-दौलत सभी कुछ बहुत थोड़ी मात्रा में है, परन्तु इन सब में कहीं भी मुझे ज़रा-सा आश्रय मिल सकता है, यह मैं न समझ सका।

"आत्मीय-स्वजनों में विधवा मा और दो बहनें हैं। वे दोनों विवाहिता हैं और अपने-अपने घर में पति और पुत्र के साथ जीवन व्यतीत कर रही हैं। उनके यहाँ जाकर उनकी चिन्ता-रहित जीवन-यात्रा में इतना भारी बोझा रखने की इच्छा न हुई।

"और मा? वे हमारे गाँववाले मकान पर रहती हैं। किन्तु उनसे मेरा सम्बन्ध बहुत थोड़ा है। ज़रा-सा बड़ा होते ही मैं

उनके पास से अलग हो गया था। छुट्टियों में कभी-कभी दो-एक रोज के लिए उनके पास जाता था, परन्तु इस तरह उनसे ज्यादा हिल-मिल नहीं सका। वे अपने नित्य-नियम, पूजा-पाठ और चूल्हे-चौके के ही फेर में पड़ी रहती थीं। उन्हें रात-दिन यही चिन्ता रहती कि यह शहर में रहते-रहते भ्रष्टाचारी हो गया है, और इससे ज़रा भी असावधान रहूँ तो कहीं हाथ लगा कर यह मेरी सारी चीजें अपवित्र न कर दे। उनका यह भाव देखकर मैंने भी क्रमशः मन ही मन बच कर उन्हें यथासम्भव शान्तभाव से रहने का अवसर दिया था अवश्य, किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि हम दोनों के स्नेह का बन्धन शिथिल हो गया। दोनों ही एक दूसरे से बहुत दूर निकल गये, इस विषय में कोई सन्देह नहीं है। यही कारण है कि आज सब कुछ चले जाने पर भी मा के पास जरा-सा आश्रय प्राप्त करने की कल्पना करके हृदय को शान्ति न मिली। बहुत सोच-विचार करने पर अन्त में एक व्यक्ति का मुझे स्मरण हुआ। वह है मेरा छुटपन का अभिन्नहृदय मित्र किरण।

"छुटपन से लेकर कालेज की अन्तिम पढ़ाई तक हम दोनों ने बराबर एक साथ पढ़ा है और साथ ही साथ रहे हैं। हम दोनों में वही अटूट प्रेम अब भी बना है। मैं सदा से ही बहुत चञ्चल, आमोदप्रिय और साहसिक प्रकृति का हूँ। किरण छुटपन से ही शान्त, गम्भीर और मितभाषी है। मुँह से वह ज्यादा बकता नहीं, किन्तु उसके हृदय का बल असीम है। वह बहुत ही सत्यनिष्ठ और कर्त्तव्य-परायण है। अवस्था में मेरे समान होने पर भी व्यवहार में सदा ही प्रायः मेरा संरक्षक-सा रहा है। मेरे प्रति उसका स्नेह भी असीम था। छोटे भाई के ही समान वह मुझे प्यार किया करता था। विद्यार्थी अवस्था में सारी बातों के लिए उसके ऊपर निर्भर रह कर मैं निश्चिन्त भाव से मौज उड़ाया करता था। आज फिर मेरा दुःखी और खिन्न चित्त उसके सबल हृदय के स्नेह का आश्रय लेकर

कुछ दिन जरा शान्ति के साथ काटने के लिए व्याकुल हो उठा। उसी समय उसे चिट्ठी लिखी। उसके बाद ही यात्रा की तैयारी होने लगी। शरीर और मन असमर्थ हो रहा था। इस दुर्दैव से सताये हुए अभावों की यात्रा कितने दिन में न जाने कहाँ समाप्त होगी?

"किरण ने मुझे ठीक पहले की ही तरह बड़े गम्भीर स्नेह से ग्रहण किया। पहले-पहल भेंट होते ही उसने मुझे खींच कर छाती से लगा लिया और बड़ी देर तक चुपचाप यों ही लिपटाये रहा। अन्त में गम्भीर स्वर से उसने कहा—तुम्हारी जो हानि हुई है, मित्र के जीवन-व्यापी स्नेह से भी यदि उसकी कुछ पूर्ति हो सके तो उसमें त्रुटि न होने पावेगी। आज से हम दोनों अब बराबर एक साथ ही रहेंगे। तुम्हें और कहीं न जाने दूँगा।

"बहुत दिन के बाद मेरी अवसन्न और दुःखी अन्तरात्मा इस स्नेह के स्पर्श से मानो कुछ ठंडी हुई।

"फिर वही पटना। पाँच महीना पहले किरण के पास जब घूमने आया था, तब यहीं वीणा को पहले-पहल देखा था। आज फिर, जब कि मेरा सब कुछ समाप्त हो रहा है, दैवयोग से फिर यहीं आ पहुंचा हूँ। यह बात मन से किसी तरह उतरना ही नहीं चाहती। सभी आशा तो छोड़ चुका हूँ। फिर मन में ऐसी बात क्यों आती है?

"यहाँ आने पर दो दिन बीत चुके थे। तीसरे दिन चाय पीकर किरण कहीं घूमने चला गया था। मैं अकेला मेज़ के पास बैठा अपनी चिन्ता में मग्न था। इतने में किसी के पैरों की बहुत धीमी आहट मेरे कानों पर पड़ी। पुकार कर पूछा, कौन, चपरासी? उत्तर न मिला। तब कौन है, किरण क्या अभी ही लौट आया? बोला—किरण? फिर उत्तर न मिला। हृदय चञ्चल हो उठा। कोई आदमी पास आकर खड़ा हो गया था, उसके धीमे निःश्वासों के शब्द मेरे कानों में पड़ रहे थे। किन्तु वह बोलता क्यों नहीं?

इस बार मैंने व्याकुल भाव से कहा—कौन है यहाँ, किरण है क्या? बोलते क्यों नहीं? इस बार बहुत ही मृदु और कम्पित-स्वर से उत्तर आया—किरण अभी नहीं लौटे। केवल मैं ही आपको देखने आई हूँ।

"ऐं, यह क्या? अपना वही बहुत ही प्रिय मधुर स्वर सुनकर पागल के समान मैं कुर्सी पर से उछल पड़ा—वीणा, तुम हो, मुझे देखने आई हो? यह बात कह कर आवाज़ के इशारे से उसका हाथ पकड़ लिया और उसे अपने पास खींच ले आया। अन्त में एकाएक मेरी इतने दिनों की सञ्चित वेदना और अभिमान आँसुओं के रूप में अविरल भाव से उसके मस्तक पर झरने लगा।"

( १० )

उस दिन की मोटर-दुर्घटना के कुछ दिन बाद मिस्टर घोष के अन्तःपुर में रसोईघर के बरामदे में बैठी मालिकिन क्षेमङ्करी तरकारी काट रही थीं। उनके पास ही बैठी हुई पुरानी नौकरानी वामा बगीचे से तुरन्त का लाया हुआ कोंहड़े का ढेर का ढेर साग समेट रही थी।

अपनी एक-मात्र कन्या निर्मला को लेकर मिस्टर घोष प्रायः उन्नीस-बीस वर्ष से पटना में निवास कर रहे थे। जब वे यहाँ आये थे तब निर्मला बहुत छोटी थी। यहाँ आने के बाद से फिर देश से उनका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रह गया था। कभी-कभी विशेष आवश्यकता पड़ने पर दो-चार वर्ष में एक-आध बार राजशाही जाया करते थे। पटना में मिस्टर घोष सर्वप्रिय हो गये थे। उनके उदार और हँसमुख स्वभाव तथा असाधारण दानशीलता के कारण वे सभी के प्रेम और श्रद्धा के पात्र बन बैठे थे। दूसरों के उपकार के लिए जैसे वे सदा उत्सुक रहते, वैसे ही दान देने के लिए भी मुट्ठी खोले बैठे रहते। किन्तु अपने जीवन तथा परिवार के सम्बन्ध

में उसमें कोई विशेष आडम्बर नहीं था। निर्मला के कुछ बड़ी होते ही मिस्टर घोष उसे कलकत्ते में बोर्डिङ्ग-हाउस में भर्ती करा आये। पटना के घर में उनका अब और कोई अपना न रह गया। इस देश के ही नौकरों पर निर्भर रह कर वे अपना समय व्यतीत किया करते थे। बड़ी छुट्टियों में निर्मला जब बोर्डिङ्ग से आया करती केवल तभी उनका आनन्द-हीन और एकान्त भवन आनन्द-कलरव से मुखरित हो उठता। बी० ए० पास करने के बाद निर्मला जब शिक्षा समाप्त करके पटना लौट आई तब उसके साथ रहने के लिए मिस्टर घोष घर से अपनी बहन क्षेमङ्करी और वामा नौकरानी को पटना ले आये।

नवीन देश में आकर बुआजी अपने को चारों ओर की अपरिचित वस्तुओं और वायुमण्डल के अनुकूल न बना सकीं, इसी लिए उनका चित्त प्रायः उद्विग्न रहा करता था। बङ्गाल देश की सदा की परिचित और नित्य के उपयोग में आनेवाली आधी भी चीज़ें इस देश में नहीं मिलतीं। वे सोचने लगीं—यहाँ के आदमियों की जैसी विचित्र पोशाक है, वैसे ही वे गन्दे भी होते हैं। बात तो ऐसी करते हैं, जिसका सिर-पैर कुछ समझ में ही नहीं आता। यहाँ की सारी बातें अद्भुत हैं! ऐसे अजीब देश के प्रति भैया के अनुराग का क्या कारण हो सकता है, बार-बार गवेषणा करने पर भी बुआजी इसका अनुसन्धान न कर सकीं। वामा नौकरानी भी इस विषय में उनके मन का समर्थन किया करती।

एक लम्बी-सी इमली का छिलका निकालती-निकालती शाक के ढेर की ओर ताक कर बुआजी ने कहा—फूल तोड़-तोड़ कर अलग रखती जाओ, ज़रा-सा बेसन लगा कर उन लोगों के लिए काढ़ दूँगी—और ख़ूब नरम-नरम देख कर फुनगी की तरफ़ का थोड़ा-सा साग लेकर और सब फेंक दो। माली को थोड़ी-सी फुनगियाँ काट देने के लिए कहा था, वह जड़-पेड़ सब उखाड़ कर उठा

बटोरे लगा। बात तक भी उसकी समझ में आती नहीं। एक तो इस देश की साग-तरकारी में मीठापन भी नहीं होता, सब नोनखर नोनखर-सा मालूम पड़ता है। कौन बड़ा स्वादिष्ट है कि अधिक खाया जा सके।

बामा ने कहा—मीठापन कैसे होगा? क्या हमारे देश की मिट्टी की चीज है? यहा की मिट्टी तो खारी है, इसमे तरी का नाम तक तो है नहीं। लोग कहते ही है कि गंवारों का देश है। जैसे यहा के आदमी है, वैसी ही चीज-वस्तु भी है। हमे तो भैया यहाँ जरा भी नही अच्छा लगता। इसी लिए मैंने उस दिन बिटिया रानी से पूछा था—कहो बिटिया रानी, देश कब चलोगी इतना बड़ा राज-पाट छोड़ कर यहा किस सुख के लिए पड़ी हो? परन्तु वे सुन कर हंसने लगीं, और कहा कि शायद तेरा मन यहा नहीं लगता।

एक लम्बी सांस लेकर बुआजी ने कहा—बात तो सच ही है कि मन नहीं लगता। परन्तु उपाय ही क्या है? बिना मा की लड़की को छोड़कर जाऊंगी कहा। जब तक यह रहेगी तब तक तो हम लोगों को यहाँ रहना ही पड़ेगा। जब जरा-सी थी तभी से तो बाप परदेश में छोड़ आया, दूसरों के ही पास रह कर इतनी बड़ी हुई, जरा भी लाड-प्यार उसे नहीं मिला। इतने दिन के बाद जब लौट कर आई है तब क्या इसे छोड़ कर मैं किसी और जगह रह सकती हूं?

बामा ने कहा—यह तो ठीक ही है बुआजी। तुम्हारे परिवार में यही तो एक लड़की है। सरकार भी कैसी बेढङ्गी सनक के आदमी है। बिटिया रानी दर्जा पास करने लगी तो लड़को की तरह इतने दिन दर्जे ही पास करती रही। समय से विवाह हो गया होता तो अब तक दो-चार लड़के-लड़कियां पैदा होकर घर भर देतीं। इन सब बातों का तो कुछ ध्यान है नहीं, पढ़ने ही पढ़ने

की धुन रह गई है। ख़ैर, अब तो पढ़ाई भी ख़तम हो गई है, सरकार से कह कर इस साल तो कहीं विवाह करवा दीजिए। आपके यहाँ इतनी अवस्था बीती है, अब शरीर का कुछ ठिकाना नहीं है कि कितने दिन रहेगा। मेरी बड़ी इच्छा है कि बिटिया रानी का विवाह देख कर मरूँ। आप लोग बड़े आदमी हैं, जो करें वही अच्छा है! हम लोगों के यहाँ तो यदि इतनी बड़ी लड़की अविवाहिता रह जाय तो टाट पर पैर भी न रखने को मिले।

इन बातों से जरा-सी चुटीली होकर बुआजी कहने लगीं—पहले के समय में हम लोगों के यहाँ भी क्या कभी ऐसा होने पाता था! यह तो नई रीति है। मेरा ही विवाह सात वर्ष की अवस्था में हो गया था। मैं जानती तक नहीं कि विवाह कब हुआ है। ओह, निर्मला, उठ गई हो? तुम्हारे हाथ की पीड़ा आज कैसी है?

निर्मला पास आकर खड़ी हो गई थी। इन कुछ दिनों में उसके हाथ की पीड़ा बहुत कम हो गई थी। परन्तु पट्टी अभी तक बँधी थी। बुआ की बातों के उत्तर में उसने कहा—अच्छी हूँ बुआजी। शायद दो ही एक दिन में पट्टी भी खुल जायगी, क्योंकि पीड़ा बहुत कम हो गई है।

स्नेहमय नेत्रों से उसकी ओर ताकती हुई बुआ जी ने कहा—बहुत अच्छा बिटिया, तुम्हारा हाथ अच्छा हो जाता तब जान में जान आती! उस दिन जो करतूत करके घर लौटी हो, मेरे तो डर से प्राण निकल गये थे। जैसे-जैसे आज-कल नई-नई सभ्यता फैलती जा रही है उसके साथ ही साथ तरह-तरह की विपत्तियाँ भी बढ़ती जा रही हैं। क्या यों ही मैं इन मोटरों से चिढ़ती हूँ? ये गाड़ियाँ तो एक-दम मनुष्य के प्राण लेने के लिए हैं।

निर्मला ने हँसकर कहा—बुआजी, क्या आपके समय में संयोग-वश गिरने-पड़ने से कभी किसी के हाथ या पैर नहीं टूटते थे?

बुआजी ने उत्तर दिया—टूटते क्यों नहीं थे बेटी? समय-कुसमय में कभी कोई दैवी दुर्घटना हो सकती है, परन्तु इस अभागी गाड़ी के पीछे तो रोज़ ही दस-पाँच प्राणियों की हत्या होती रहती है। पहले भी कभी ऐसा होता था? भाड़ में जाने दो इन बातों को। भैया आज अभी तक न जाने क्यों नहीं उठे? इतनी देर तक तो वे और कभी नहीं सोते थे?

मिस्टर घोष के कमरे के बन्द दरवाज़े की ओर ताक कर निर्मला ने कहा—अभी तक तो शायद उठे नहीं। इधर कई दिनों से उनको उठने में देरी होती है। मालूम होता है कि रात को उन्हें नींद अच्छी तरह से नहीं आती। उसी दिन से शायद बाबूजी की भी तबीयत अच्छी नहीं रहती बुआजी। पूछने पर कुछ बताते नहीं, परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि उनके शरीर में भी पीड़ा रहती है।

बुआजी ने कहा—हाँ, पीड़ा भला क्यों न होती होगी? अधिक चोट न भी लगे तो क्या हुआ? सारा शरीर झकझोर तो उठा था? वृद्ध हो चले हैं। अब ज़रा-सा ही क्लेश उनके लिए बहुत है। परन्तु उन्हें कुछ अधिक क्लेश जान पड़ता हो तो इसका कोई उपाय करना चाहिए बिटिया। भैया तो बिलकुल सीधे-सादे पूरे भोलानाथ हैं। दूसरों के लिए प्राण तक अर्पण करते रहेंगे,. किन्तु उन्हें यदि कोई क्लेश होता है तो उसके लिए कुछ उपाय ही नहीं करना जानते।

बुआ के पास से अपने कमरे के बरामदे में आकर निर्मला चुपचाप कुछ सोच रही थी। आज कई दिनों से मिस्टर घोष के भावों में परिवर्तन देख कर वह कुछ खिन्न हो पड़ी थी। आज तक जीवन में चिन्ता या उद्वेग की छाया से उसे उद्विग्न होने का कभी अवसर नहीं पड़ा था, अतएव ज़रा-सी बात में वह भयभीत और व्याकुल हो उठी।

मिस्टर घोष की चिन्ता तो उसे थी ही, साथ ही एक बात और भी उसके मन में बीच-बीच में आया करती। वह बात थी असित की। यहाँ आने के सम्बन्ध में असित ने स्पष्ट रूप से यद्यपि कोई प्रतिज्ञा नहीं की थी, किन्तु फिर उसे न जाने क्यों विश्वास हो गया था कि वह आवेगा अवश्य। मन ही मन वह प्रतिदिन ही उसके आने की राह देखा करती थी। जैसे ही वह किसी नौकर को जरा-सा व्यस्तभाव से आते देखती, आनन्द और उद्वेग के कारण उसका हृदय थरथर काँप उठता। वह सोचती कि अवश्य यह असित के आने की सूचना देने आ रहा है। परन्तु प्रतिवार ही उसे निराश होना पड़ता। असित या परेश कोई भी उसका समाचार लेने के लिए न आया।

निर्मला मन ही मन इन विचारों में तन्मय हो रही थी कि एकाएक पीछे से लीला का कण्ठस्वर सुन कर वह चौंक पड़ी, और और घूम कर जैसे ही उसकी ओर देखा, लीला ने कहा—अब तुम्हारा क्या हाल है निर्मला ? शायद एक बहुत बड़ा एडवेंचर कर बैठी हो ?

लीला प्रतिदिन प्रातःकाल घोड़े पर सवार होकर घूमने के लिए निकला करती थी। आज भी वह उसी वेश में आई थी। परिश्रम से थकी होने के कारण उसके माथे पर ज़रा-ज़रा-सी पसीने की बूँदें थीं और हाथ में घोड़े का चाबुक।

निर्मला ने हँस कर कहा—यह तो बिलकुल वीर-वेश धारण कर रक्खा है तुमने ? तब क्या यों ही मिसेज़ दत्त तुझे तुर्की सवार कहती है ? तुझ पर तो सदा ही मर्दानगी छाई रहती है !

लीला भी हँस पड़ी। उसने कहा—मिसेज़ दत्त भाड़ में जायँ ! वे क्या कहती हैं और क्या नहीं कहतीं, यह जानने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझती। तुम केवल अपना हाल बताओ। सुना था कि हाथ में बहुत ज्यादा चोट लग गई थी। अब कैसी हो ?

बनावटी अभिमान से मुँह फेर कर निर्मला ने कहा—शायद यही सुन कर पन्द्रह दिन के बाद खबर लेने आई हो? तुम्हें इतनी ममता दिखाने की जरूरत नहीं है। तुम्हें अपना हाल बताये बिना मेरा बिगड़ता ही क्या है?

बातें करती-करती दोनों कमरे में आकर बैठ गईं। प्रातःकालीन सूर्य की स्वच्छ किरणों से उस समय कमरे का फ़र्श परिपूर्ण था।

लीला ने ज़रा-सा उतावली के साथ निर्मला के पट्टी-बँधे हुए हाथ की ओर दृष्टि डाल कर कहा—ठीक कहती हो भाई, तुम्हें देखने के लिए मुझे और पहले आना चाहिए था। प्रतिदिन ही आने की इच्छा होती थी, किन्तु कई दिन से घर में ऐसा झंझट मचा है कि किसी तरह भी न आ सकी। किरण से रोज़ हाल मिल जाया करता था कि तुम अच्छी हो। यदि यह बात न होती तो भला क्या मैं निश्चिन्त बैठी रहती? तो क्या इसके लिए तुम सचमुच रुष्ट हो गई हो?

दोनों हाथ से लीला निर्मला का गला पकड़कर उसकी ओर ताकने लगी। उसके मुँह का भाव देखकर निर्मला हँस पड़ी। उसने कहा—तुम भी कैसी पागल हो? हँसी की बातें भी तुम्हारी समझ में नहीं आतीं! मुँह की आकृति ऐसी बना ली है कि मानो मेरे रुष्ट होने से तुम्हारा ठिकाना ही न रहेगा? इधर उद्दण्डता इतनी है!

लीला ने हँस कर कहा—हाँ भाई, उद्दण्ड मैं हो सकती हूँ, परन्तु हृदय मेरा बड़ा सरल है। जिनसे मैं स्नेह करती हूँ उनका स्नेह मैं पूर्णमात्रा में सदा ही उपलब्ध करना चाहती हूँ। अन्यथा मुझसे रहा नहीं जाता। इसके अतिरिक्त एक तो दुनिया में मेरी किसी से बनती नहीं। मित्रों में एक तुम हो और एक किरण है। तुम लोग भी यदि झगड़ा कर लोगे तो भला मैं कहाँ जाऊँगी?

निर्मला ने कहा—अस्तु, अब तो यह झगड़ा होकर समाप्त

हो चुका, परन्तु तुम जो कहती थीं, तुम्हारे यहाँ आज-कल कौन-सा झगड़ा-झंझट चल रहा है? आज दो सप्ताह से तो मैं घर से निकली नहीं, अतएव कहीं का कुछ समाचार नहीं मिला। तुम्हारे यहाँ क्या कोई नई बात हुई है? तुम्हारे यहाँ ऐसी झंझट की कौन-सी बात खड़ी हो गई?

लीला ने अवज्ञा के साथ कहा—नई बात और क्या होगी? वही अरुणवाली बात, जो चारों ओर फैल गई है न, इसी सम्बन्ध में अम्मा और वीणा के मित्र सहानुभूति प्रकट करने आते हैं। वीणा के दुख के कारण उन्हें नींद ही नहीं आती। इधर वीणा को दुख किस बात का है, यह किसी तरह मेरी समझ में नहीं आता है। खूब अच्छी तरह वह खाती-पीती है और आनन्द से घूमती है। कोई मिलने के लिए आता है तो उसके मुख पर विषाद की रेखा अवश्य छा जाती है, और आँखें डबडबा आती हैं। यह सब पाखण्ड देख कर मेरे तो हाड़ जल जाते हैं। अम्मा तो चौबीस घंटे चिन्ता में ही व्याकुल रहती हैं कि वीणा का आघात कैसे सँभल सकेगा। इसमें मज़े की बात यह है कि जो व्यक्ति सचमुच नेत्र-हीन होकर आजन्म के लिए संसार के सारे सुखों से वञ्चित होगया है, उसके सम्बन्ध में कोई एक शब्द भी मुँह से नहीं निकालता। क्या यों ही किसी से मुझसे नहीं पटती?

बड़ी देर तक निर्मला ने कोई बात न कही। बरामदे की कार्निस के ऊपर कबूतरों का झुंड अविराम ध्वनि से गुटर गूँ गुटर गूँ कर रहा था। प्रभात की स्निग्ध और झिरझिरी हवा से बँगले की फूल-पत्तियाँ धीरे-धीरे हिल रही थीं।

उसी ओर ताकती-ताकती इतनी देर के बाद निर्मला ने अन्य-मनस्क भाव से कहा—सचमुच भाई, वीणा दीदी का हृदय न जाने कैसा है? अरुण बाबू से मेरी कोई विशेष बातचीत कभी नहीं हुई। साधारण जान-पहचान भर थी। फिर भी उनकी याद

आने पर चित्त में न जाने कैसी खिन्नता आजाती है। ऐसा रूप, ऐसे गुण और ऐसी उच्च आत्मा, सब व्यर्थ हो गये ? किन्तु उनसे इतना प्रेम करके भी वीणा दीदी ने ऐसी विपत्ति के समय में एक-बारगी उन्हें क्यों त्याग दिया ? इसी लिए मेरे मन में कभी-कभी आता है कि प्रेम में क्या इतनी स्वार्थपरायणता होती है ? मनुष्य क्या केवल अपनी सुख-सुविधा के ही लिए किसी से प्रेम करता है ? इस सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है लीला ?

लीला का मुँह लाल हो उठा था। उसने उत्तेजित भाव से कहा---मेरा विश्वास है कि यथार्थ प्रेम कभी इतना हीन नहीं हो सकता। परन्तु प्रेम के नाम पर बहुत-सी खोटी चीज़ें भी तो संसार में चलती हैं। इसी लिए ये सब बुरी चीज़ें हमारी दृष्टि पर प्रायः पड़ा करती हैं। ये सब खरी नहीं हैं।

निर्मला ने कहा---केवल अरुण बाबू ही नहीं, यह चौधरी, पहचानती तो हो, अभी हाल में बैरिस्टर होकर आया है। यह बेचारा कितना चाहता है वीणा दीदी को। वीणा दीदी के लिए यदि प्राण देने की आवश्यकता पड़े तो भी शायद हँसते-हँसते दे देगा। एक मनुष्य दूसरे को शायद इतना नहीं चाह सकता, परन्तु यह जानबूझ कर भी वीणा दीदी उसके साथ इस तरह का तमाशा करती और खेल खेलती हैं। मनुष्य के हृदय के साथ इतनी निष्ठुरता, छिः ! मुझे इतना बुरा लगता है।

लीला ने कहा---अच्छा लगे या बुरा लगे, हम कर ही क्या सकती हैं ? वह स्वयं जो कुछ अच्छा समझेगी वही तो करेगी ? और चौधरी ही क्यों इस तरह प्राण देता है ? इन्हीं लोगों ने तो कुत्तों की तरह पीछे-पीछे दौड़ दौड़ कर वीणा का मिजाज़ इतना बढ़ा दिया है ! मुझे तो ऐसे निरर्थक प्राणियों से किसी तरह की सहानुभूति नहीं है। बल्कि देखने पर विरक्ति ही होती है।

ज़रा-सा सोचकर निर्मला ने कहा---भाई, मेरे विचार से तो चौधरी

ऐसा निरर्थक नहीं जान पड़ता। मुझे तो ऐसा ही लगता है कि उस बेचारे ने अपने को खोकर प्रेम किया है। वीणा दीदी उसके साथ कैसा भी व्यवहार करें, इनसे प्रेम किये बिना वह रह ही नहीं सकता। क्या वह नहीं समझता कि उसके प्रति प्रतिदिन कितनी अवज्ञा और कितना तिरस्कार प्रकट किया जाता है? फिर भी वह अपने को संयत क्यों नहीं कर पाता? उसमें वह शक्ति नहीं है। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य कितना असहाय और कितना निर्बल हो जाता है, यह उसकी दशा देखने से ही ज्ञात हो जाता है।

लीला ने हँसते-हँसते कहा—जी हाँ, मास्टर साहब, मालूम पड़ता है कि इस सम्बन्ध में आप को यथेष्ट ज्ञान हो गया है। चौधरी जैसा समझे, वैसा करे। अब ज़रा तुम अपनी बात बताओ। उस दिन क्या हुआ था?

"वहाँ का सारा हाल तो तुमने किरण बाबू से सुना ही है, उसे अब क्या बताऊँ? किरण बाबू कूद गये थे, इसलिए उन्हें चोट नहीं लगी। पिताजी को भी अधिक चोट नहीं लगी, किन्तु मेरा ही हाथ एक-दम से दाब में आ गया था, इसलिए हड्डी में बड़ी चोट लग गई थी। परन्तु अब पीड़ा बहुत कम हो गई है, अब मैं अच्छी हूँ।"

"और अपने उन वनवासी मित्रों का तो थोड़ा-बहुत हाल बतलाओ। किरण से तो फिर उन लोगों की मुलाक़ात हुई नहीं, वह उनका कुछ भी हाल नहीं बता सकता। इतनी जगह छोड़ कर भला वे लोग वहाँ क्यों पड़े रहते हैं भाई! उनका कुछ मामला ही नहीं समझ में आता। वे लोग तुम्हें कैसे मालूम पड़े?

निर्मला के मुँह पर ज़रा-सी लालिमा दौड़ गई। उसने कहा—उनके सम्बन्ध में मैं ठीक-ठीक कुछ कह नहीं सकती। इतनी बात अवश्य है कि वे दोनों ही बड़े सज्जन और उदार प्रकृति के हैं। जब तक हम लोग थे, हमारी सुविधा के लिए शक्ति भर उन

लोगों ने कुछ उठा नहीं रक्खा। इसके अतिरिक्त घंटा ही भर तो हम लोग वहाँ थे, वह भी हाथ की पीड़ा के ही मारे अधीर थी मैं! ऐसी दशा में उस समय जान ही क्या सकती थी?

इस बात से विस्मित होकर लीला ने कहा—क्यों, उस दिन से उन लोगों से क्या तुम्हारी मुलाक़ात फिर नहीं हुई? इतने दिन में तुम्हारा हाल जानने के लिए भी वे लोग एक बार नहीं आये?

इस प्रश्न से निर्मला अपने को लज्जित-सी क्यों समझने लगी, यह बात वह स्वयं न समझ सकी। कुण्ठितभाव से मुँह फेर कर उसने कहा—आये कहाँ? पिताजी, किरण बाबू, सभी ने तो आने के लिए बार-बार अनुरोध किया था। एक बार मैंने भी कहा था। परन्तु उन लोगों में से तो कोई आया नहीं।

भौंह सिकोड़ कर लीला ने कहा—यह तो बड़े आश्चर्य की बात है। परन्तु यह तो भाई उन लोगों का अन्याय है। कम से कम शिष्टाचार की दृष्टि से भी उन्हें एक बार तुम्हारा हाल अवश्य लेना चाहिए था।

यह चिन्ता निर्मला के भीतर ही भीतर सदा जाग्रत् रह कर उसे व्यथित कर रही थी। परन्तु प्रकट रूप से उसने उदासीन भाव से कहा—इसमें अन्याय क्या है? या तो वे वहाँ होंगे नहीं या कोई और कारण होगा। जिनके सम्बन्ध में कुछ मालूम नहीं है उनकी चर्चा न करना ही अच्छा है। अन्त में उसने हँस कर कहा—विशेषतः इस बात से पता चलता है कि कम से कम वे लोग आदमी-जैसे आदमी हैं। और लोगों की तरह किसी स्त्री का मुँह देखते ही वे मूर्च्छित नहीं हो जाते या परिचय करने का अवसर पाते ही उनसे बात-चीत करने के लिए अधीर नहीं हो उठते। क्या यह अच्छा गुण नहीं है?

लीला खिलखिला कर हँस पड़ी। उसने कहा—उनका यह स्वभाव अच्छा हो सकता है, किन्तु इस तरह उनकी वकालत करने

के लिए तुम क्यों प्राण दे रही हो ? किसी तरह का गड़बड़ तो नहीं कर रक्खा है ?

एकाएक निर्मला के मुख की लालिमा देखकर वह रुक गई। उसने कहा—नहीं भाई निर्मला, बुरा न मानना, मैं यों ही हँसी कर रही थी। जानवर देखते-देखते मुझे तो बड़ी विरक्ति हो गई है। यदि एक सचमुच का आदमी देखने को मिला तो उसके प्रति तुम्हारी अपेक्षा मैं कम श्रद्धा नहीं करूँगी। परन्तु आज तो भाई, अब चलूँगी। बड़ी देरी हो गई। तुम्हारी तबीअत तो अब अच्छी है। साँझ को हमारी ओर ज़रा आ जाना। घर पर बैठी-बैठी क्या करती हो ? खेल न सकोगी तो न सही, ज़रा-सा घूम-घाम कर गपशप करके चली आना। ठीक है न ? आओगी ?

निर्मला ने कहा—देखूँ भाई, पिताजी चलेंगे तो आऊँगी। नहीं तो उन्हें अकेले छोड़ कर—

"क्यों ? क्यों ? चाचाजी क्यों न आवेंगे ? कहाँ हैं वे ? अच्छे तो हैं ?"

"बहुत अच्छे नहीं हैं। इधर कई दिनों से उनका शरीर अच्छा नहीं रहता। अभी तक उठे भी नहीं।"

लीला ने उठकर कहा—तो आज उनसे मुलाक़ात न होगी। साँझ को तुम लोग आओगे तब तो अच्छा ही है, नहीं तो मैं फिर आऊँगी।

## ( ११ )

अपने काम-काज से निपट कर किरण जब घर लौटा तब उसने देखा कि 'हाल' के बरामदे में लीला अकेली खड़ी है।

"आ गईं तुम, कितनी देरी हुई। अरुण से मुलाकात हो गई न ?" मुस्कराते हुए लीला के समीप आकर किरण ने उससे मिलाने के लिए सदा की भाँति अपना हाथ फैलाया। परन्तु आज लीला

उसके मुँह की ओर ताक न सकी। किरण को देखते ही उसका अन्तस्तल थर-थर काँपने लगा। उसका मुँह एकदम रक्तहीन और विवर्ण हो उठा था। उसने मस्तक नीचा करके पृथ्वी की ओर दृष्टि गड़ाये हुए कम्पित स्वर से कहा—किरण, तुमसे बहुत-सी बातें करनी हैं। आओ, ज़रा किसी एकान्त स्थान में बैठ जायँ, तो सब कुछ बतलाऊँ।

किरण की बुद्धि चक्कर में आ गई। लीला की तेजोमय मूर्ति से वह परिचित था, लज्जा और सङ्कोच के भार से मस्तक झुका कर वह जिस रूप में विराजमान थी वह उसके लिए बिलकुल नया था। उसका खिला हुआ मुँह सूख गया, और अत्यन्त उद्विग्न होकर उसने कहा—बात क्या है लीला? आज तुम्हारी तबीअत कैसी है?

मस्तक झुका कर लीला ने कहा—आज मैंने एक बड़ा अनुचित कार्य कर डाला है! उसके लिए तुम या और लोग मुझे क्या कहेंगे, यही मैं सोच रही हूँ।

किरण अधीर हो उठा। लीला ने अनुचित कार्य कर डाला है, क्या यह सम्भव है? ऐसा कौन-सा कार्य वह कर सकती है जिसके लिए वह स्वयं इस तरह कुण्ठित और कातर हो उठी है? बहुत ही उत्सुक होकर किरण ने कहा—ऐसा कौन-सा अनुचित कार्य तुमने कर डाला है? आओ, ज़रा यहीं बैठ कर बतलाओ तो सही। आख़िर हुआ क्या है?

बरामदे के कोने में दोनों एक बेंच पर बैठ गये। समीप ही एक पीपल की डाली में रस्सी का झुलना डाल कर माली का लड़का गिरधरिया बहुत ही निश्चिन्त भाव से झूल रहा था। लीला अपने म्लान नेत्रों की कुण्ठित दृष्टि उसी पर गाड़ कर बोली—मैंने सचमुच बड़ा अनुचित काम किया है किरण! परन्तु ऐसा क्यों किया है, यह सब तुम्हें समझा कर बताऊँगी। मेरी सारी बातें

सुन कर जरा मेरी अवस्था पर विचार करो। आज सवेरे अरुण से मिलने के लिए मैं जानेवाली थी, यह तो तुम्हें मालूम ही है। मैंने स्वयं अपनी इच्छा से ही यह दुस्साहस का काम करने का सङ्कल्प किया, किसी के रोकने या समझाने की ओर ध्यान नहीं दिया। परन्तु जब तुम्हारे घर की तरफ़ घोड़ा चला दिया तब न जाने किस लज्जा और सङ्कोच के कारण मेरा अन्तस्तल रह रह कर काँप उठने लगा। मैं सोच रही थी कि जीवन में जिसे मैंने क्षणभर के लिए भी नहीं देखा और जिसके साथ मेरा किसी तरह का सम्बन्ध भी नहीं है, उसी अपरिचित व्यक्ति से मिलने के लिए जो मैं घोड़ा दौड़ाये जा रही हूँ, यह विचित्र बात मेरे दिमाग़ में कैसे आई? आज की इस सनक का फल आगे चलकर क्या होगा? उस समय मन में आया कि तुम्हारे रोकने पर मैं मान क्यों न गई? साथ ही यह भी सोच रही थी कि हम लोगों की पहले-पहल की जान-पहचान किस रूप में होगी? क्या कह कर मैं अपना परिचय दूँगी? यही सब तर्क-वितर्क करती-करती मैं चली आ रही थी। हँसो न। मैं तुम्हें सारी कथा सुनाती हूँ। पहले सोचा—कहूँगी कि मैं वीणा की बहन हूँ। मेरा नाम लीला है। आपने मुझे कभी देखा नहीं है। परन्तु आपके आगमन का समाचार पाकर आपके दर्शन के लिए मैं स्वयं उपस्थित हुई हूँ। सम्भव है, आगे चलकर हमारी-आपकी मित्रता होजाय? क्षण ही भर में यह विचार पलट गया। मैंने सोचा, अपनी बातचीत का सिलसिला इस तरह छेड़ूँ। यहाँ प्रवेश करने की जो अनधिकार चेष्टा मैंने की है उसके लिए क्षमा कीजिए। वीणा के पास से मैं आपका एक पत्र लेकर आई हूँ। अपना प्रथम परिचय मैं किस तरह दूँगी, यही बात कई तरह से घुमा-फिरा कर याद करती आ रही थी। सङ्कल्प-विकल्प दोनों ही समानरूप से होते थे, क्योंकि कोई भी बात मन को जँचती नहीं थी। ख़ैर, तुम्हारे घर के समीप

पहुँचते-पहुँचते एक बात निश्चय कर ली। परन्तु उस समय एक कठिनाई और आ पड़ी। जितना ही मैं तुम्हारे घर के समीप आती, उतना ही मेरी यह करतूत इतनी अद्‌भुत और लज्जाजनक मालूम पड़ने लगी कि मैं लौट जाने का विचार करने लगी, सोचा कि अब जाने की आवश्यकता नहीं है।

कहते-कहते लीला कुछ क्षण के लिए निस्तब्ध हो गई। बगीचे से चिड़ियों का कलरव सुनाई पड़ रहा था। वृक्षों की पत्तियों को हिला-हिला कर हवा झर झर बह रही थी। उसकी धीमी-धीमी हिल्लोलों से बगीचे की फूली हुई लतायें और लम्बी-लम्बी घास की पंक्तियाँ हिल रही थीं। किरण ने कुछ कहा नहीं, वह चुपचाप ताकता रहा। वह कुछ निश्चय न कर सका कि अब कौन-सी बात सुनने के लिए मुझे तैयार होना पड़ेगा।

बड़ी देर के बाद लीला फिर कहने लगी—लौट गई होती तो शायद अधिक अच्छा होता। परन्तु तुम तो मेरे स्वभाव से परिचित ही हो, जो कुछ निश्चय कर लेती हूँ वह मुझे करना ही पड़ता है। नहीं तो स्वयं अपनी ही ओर से मुझे छुटकारा नहीं मिलता। यही कारण था कि सारी लज्जा और सङ्कोच को दबा कर घोड़ा बढ़ाया और यहाँ आकर पहुँच गई। मेरा घोड़ा पकड़ने के लिए एक साईस बढ़ा। अरुण के सम्बन्ध में मैंने उससे पूछा। उसने उनका कमरा दिखा दिया और घोड़े को लेकर अस्तबल की ओर चला गया। धीरे-धीरे बरामदे में जाकर मैं कमरे के द्वार के पास खड़ी हो गई। उस समय वे मेज के पास बैठे मस्तक पर हाथ रक्खे शायद कुछ सोच रहे थे।

"मैंने बहुत ही धीरे-धीरे कमरे में पैर रक्खा था। परन्तु मेरे पैरों की इतनी धीमी आहट भी उनके कानों से अगोचर न हो सकी। वे चौंककर आगन्तुक को जानने के लिए पूछने लगे—कौन? चपरासी? उस समय मैं सहम गई थी। मेरा अन्तस्तल

काँप रहा था, मुँह से कोई बात निकाल न सकी। कुछ क्षण प्रतीक्षा करके उन्होंने फिर पूछा—कौन यहाँ आया है? बोलता क्यों नहीं? परन्तु उस समय मैं क्या बोलती? जो कुछ याद कर रक्खा था वह सब तो भूल गई थी। केवल हक्का-बक्का होकर एक दृष्टि से उनका मुँह देखती खड़ी रही। उनका तरुण, यौवन की शोभा-रूपी सम्पत्ति से भरा हुआ चेहरा, और उसी चेहरे पर उन बड़ी बड़ी काली-काली आँखों की शून्य और लक्ष्यहीन दृष्टि! जिस समय वे आगन्तुक को जानने के लिए अपने ज्योतिहीन नेत्रों की व्याकुल दृष्टि उठाकर असहाय के समान इधर-उधर ताक रहे थे, उस समय मेरे नेत्रों को फोड़-फोड़ कर जल गिरने लगा। इधर मेरी नीरवता के कारण बहुत ही चञ्चल होकर उन्होंने कहा—किरण, क्या तुम अभी ही लौट आये? बोलते क्यों नहीं? इस बार बहुत ही सहमती हुई मैं बोल उठी—किरण अभी लौटकर नहीं आये। केवल मैं तुम्हें ज़रा-सा देखने आई हूँ। मेरे मुँह से यह बात निकलते ही वे कुर्सी पर से कूद पड़े और बोले—यह क्या? वीणा, क्या तुम मुझसे मिलने आई हो? यह कहकर सेकंड भर में ही मेरा हाथ पकड़ कर उन्होंने खींच लिया।

किरण अभी तक चुपचाप था। यह बात सुन कर उसने चौंक कर कहा—यह कैसी बात है? उसने तुम्हें वीणा समझ लिया? ऐसी ग़लती! क्या आश्चर्य है!

लीला ने कहा—उसी ग़लती के कारण तो यह सब अनर्थ हुआ। मेरे पास बैठ कर उन्होंने आँसुओं की झड़ी लगा दी। मेरा चित्त तो पहले से ही डावाँडोल हो रहा था, बाद को उस आकस्मिक घटना के कारण मेरी बुद्धि इस तरह चक्कर में आ गई कि उनसे कुछ कहने या उन्हें किसी बात के लिए रोकने की कोई शक्ति ही न रह गई। मन में केवल यही बात आती थी कि अरुण ने यह क्या कर डाला? बाद को धीरे-धीरे फिर मन में आया कि

वीणा की और हमारी रूप-रेखा, शरीर के गठन तथा बोली में इतनी समानता है कि अँधेरे में घर में ही लोग एक दूसरे को पहचानने में भूल कर जाते हैं। आड़ से बातचीत करते समय भी हम दोनों की बोली के सम्बन्ध में लोगों को भ्रम हो जाता है, यह ठीक-ठीक नहीं मालूम पड़ता कि लीला बोल रही है या वीणा बोल रही है।

किरण अधीर भाव से बोल उठा—अस्तु, इससे क्या? बाद को तुमने अपना परिचय देकर उसका भ्रम दूर कर दिया है न? इतने ही में मामला तय हो गया। तब आगे क्या हुआ? उसने फिर तुमसे कुछ कहा?

लीला ने मस्तक झुकाकर कहा—वही तो कहने जा रही हूँ, तुम चुपचाप सुनते चलो। बाद को जब मैं अपने को ज़रा-सा सँभाल सकी तब उनके हाथ से अपना हाथ छुड़ा लिया और खिसक कर बैठ गई। परन्तु अपना परिचय देने के लिए उनके मुँह की ओर जैसे ही ताका, वैसे ही मेरा गला रुँध गया।

"मैंने देखा, भूल से मुझे वीणा समझ कर उनके हृदय में फिर से एक बहुत बड़ी आशा और आनन्द जाग्रत् हो उठा है। पहले-पहल जब मैंने उन्हें देखा था तब मानो उनके मुख पर जीवन का कोई लक्षण ही नहीं था। उनका मुख कितना मलिन था, निराशा और वेदना की उस पर कैसी छाप थी! किन्तु मुहूर्त भर में ही कैसा परिवर्तन हो गया, यह मैं कह कर तुम्हें नहीं समझा सकूँगी, किरण! वे मानो नवीन जीवन, नवीन स्फूर्ति और नवीन उत्साह से परिपूर्ण हो उठे। वे अपने आप ही पागल की तरह बक रहे थे—ओह, तब तुमने मुझे भुलाया नहीं वीणा? तब क्या तुम फिर मेरे ही पास लौट आई हो? शायद मेरा पत्र पाकर तुम बहुत ही दुखी हुई होगी। मुझे बहुत ही हृदयहीन और निष्ठुर समझ कर कितना रोई होगी! परन्तु सच कहता हूँ वीणा, वह पत्र लिखा था मैंने केवल शुष्क कर्तव्य-रक्षा के लिए और घोर निराशा

के कारण। इस अवस्था में तुम्हें अपने साथ जकड़ रखकर कष्ट देने की ज़रा भी इच्छा नहीं थी, इसी लिए यह सब किया है। अन्यथा मेरे हृदय में तुम्हें पाने के लिए कितनी लालसा थी, कितनी आकुलता थी, यह मैं तुम्हें किस तरह समझाऊँ? अब तुम फिर मेरे पास लौट आई हो, इससे मुझे कितना सुख मिल रहा है, यह जो अन्तर्यामी हैं वे ही जानते हैं।

"आनन्द के उच्छ्वास में वे इसी प्रकार पागल की तरह बकते जा रहे थे। उस समय मैं उनसे यह कैसे कह सकती थी कि तुम भूल कर रहे हो, वीणा अब तुम्हें नहीं चाहती, उसने तुमसे सारा सम्बन्ध त्याग दिया है, अब तुम उससे किसी तरह की आशा न करो। जो व्यक्ति जीवन के सभी सुखों से वञ्चित हो गया है, उसका आशा का यह क्षीण आलोक भी किस हृदय से मैं बुझा देती? यह मैं जानती थी कि मैं अन्याय कर रही हूँ, परन्तु फिर भी मैं मुँह खोल कर कुछ कह नहीं सकी किरण! मैंने उनके साथ इस प्रकार बातचीत की है जिससे वे अन्त तक मुझे वीणा समझ कर ही आनन्द में मग्न रहे।

"लीला!" एकदम उमड़े हुए क्रोध से जलकर किरण ने लीला के मुँह की ओर ताका।

लीला ने एक बार अपनी दृष्टि उठाकर किरण की ओर ताका और फिर उसने तुरन्त ही मस्तक नीचा कर लिया। उस समय उसका मुख-मण्डल रक्तशून्य और विवर्ण था। उसके पतले और केवल लाल-लाल दोनों ओंठ अधिक आवेग के कारण काँप रहे थे।

उसे चुपचाप देखकर किरण ने बहुत ही कठोर स्वर में कहा—मुझे आश्चर्य होता है कि तुमने ऐसा काम किस तरह किया?

दोनों हाथ से मुँह ढाँक कर लीला बोल उठी—नहीं, नहीं किरण, तुम मुझसे क्रोध नहीं कर पाओगे। मैं मा के सामने अपने इस कृत्य का उत्तर दे सकूँगी, पिताजी के समक्ष भी युक्तियाँ

उपस्थित कर सकूँगी, परन्तु तुम, तुम तो मेरे एकमात्र मित्र हो, मुझे बहुत ही प्रिय हो, तुम मुझसे रुष्ट हो, यह मैं नहीं सहन कर सकूँगी !

लीला की इस आकुलता से किरण ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। उसने कहा—यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि तुमने किस तरह ऐसा निर्लज्जता-पूर्ण कार्य किया है ? वह कितना दुखी है, कितना असहाय है, भाग्य का ठुकराया हुआ है। वह किसी के विनोद या हँसी का पात्र नहीं है। इस तरह का छल तुम उससे कैसे कर सकी हो ? स्वयं तुम्हारे मुँह से भी सुनकर इस बात का विश्वास करने की मेरी इच्छा नहीं होती। तुमने ऐसा काम कर डाला ?

अपने सजल नेत्रों को उठाकर लीला ने करुण दृष्टि से किरण के मुँह की ओर ताका। उसने कहा—मैंने तुम्हें बहुत ही उद्विग्न किया है किरण, अब तुम्हारा तिरस्कार मुझे सहन करना ही पड़ेगा।

कुछ देर तक दोनों नीरव थे। किरण क्षुब्ध और विस्मित था। दारुण विरक्ति से उसका हृदय परिपूर्ण था। वह लीला के विषम आचरण की बात सोच रहा था। इधर लीला अपने हृदय की दीनता देखकर स्वयं हतबुद्धि हो गई थी। वह सदा से ही अपनी इच्छा के अनुसार चलकर अपनी रुचि का काम करती आई है। उसने बराबर अपने दर्प की रक्षा की है, कभी किसी के रोष या असन्तोष की ज़रा भी परवा नहीं की। फिर आज उसे यह क्या हो गया है ? यह भी क्या वह पहले कभी सोच सकी थी कि किरण के सामने मैं मस्तक न उठा सकूँगी या उसके रोष का भय मुझे व्याकुल कर देगा ?

गिरिधारी अपने झूले पर निश्चेष्ट-भाव से धीरे-धीरे झूल रहा था। उसे झूलते देखकर उसके साथी सुक्खन के हृदय में कौतुक की ऐसी उद्दाम स्पृहा जागृत हुई कि उसने दबे पाँव पीछे

से धीरे-धीरे आकर अपनी समस्त शक्ति से गिरधारी को धक्का दिया और झूले को बहुत जोर से झुला दिया।

गिरधारी उस समय बहुत ही आराम से झूलते-झूलते आँख मूँद कर जवान आदमियों का-सा झूले का एक गीत गा रहा था—पिया गये परदेसवा लिखे ना पाती रे हारी। एकाएक झूले के बहुत ऊपर चढ़ जाने पर गिरने के भय से व्याकुल होकर उसने अपना गीत अधूरा ही छोड़ दिया और बड़े जोर से चिल्लाया—माई रे माई!

सुक्खन हँसते-हँसते लोट-पोट हो रहा था। हथेलियाँ बजाते-बजाते वह सामने आकर खड़ा ही हो रहा था कि माली के झोंपड़े से उसकी स्त्री बड़बड़ाती हुई आई। "कौन हरामज़ादा है"—आदि कहती हुई काली के रूप में उसे आती देखकर असमय में ही मज़ा किर-किरा हो जाने के कारण सुक्खन विपरीत दिशा में चम्पत हो गया।

गिरिधारी के चीत्कार से सचेत होकर किरण ने कहा—इस बात को खूब अच्छी तरह समझ लो लीला! दया, सहानुभूति और ममता बहुत अच्छी चीजें हैं। परन्तु सभी वस्तुओं की सीमा होती है। उसके बाहर जाने पर अच्छी वस्तु की भी मर्यादा नहीं रह जाती। तुमने जिस मार्ग का अवलम्बन किया है वह बहुत ही हेय है—खासकर तुम्हारी निजी सम्मान-रक्षा की दृष्टि से। इसके अतिरिक्त अरुण के हृदय में इस तरह की भ्रमपूर्ण भावना जाग्रत् करने से उसके प्रति कितना अत्याचार होगा, यह तुम नहीं समझ सकती हो? जिस अनिवार्य निराशा और व्यथा का उसे सहन करना ही पड़ेगा, उसका पहले से ही अभ्यास करना अच्छा है। दो दिन के लिए सान्त्वना देकर व्यर्थ में उसे नया दुख देने में क्या लाभ है, यह तो किसी तरह मेरी समझ में आता नहीं!

कुसुमित चन्द्रमल्लिका के वृक्ष पर वायु का खेल देखते-देखते लीला ने कहा—मैंने आदि से अन्त तक सोचकर देख लिया है

किरण! तुम्हारे आने से पहले ही मैंने सोच रक्खा है कि किस तरह मेरे आत्मसम्मान पर भी आघात न पहुँचेगा और अरुण के प्रति भी किसी प्रकार का अत्याचार न होगा।

"अर्थात् अन्त तक वह तुम्हें वीणा ही समझता रहेगा, और तुम उसके साथ विवाह कर लोगी, यही न?" किरण का स्वर फिर तेज़ पड़ गया।

लीला ने कहा—मुझे अब भी आशा है कि कुछ दिन सोचने-समझने के बाद वीणा अपने विचार में परिवर्तन करेगी। तब तक मैं इसी प्रकार बीच-बीच में आ-आकर उनसे मिल जाया करूँगी। और यदि वीणा ने किसी तरह भी न समझा तो अरुण के साथ विवाह कर लेने में भी मझे कोई आपत्ति नहीं है। क्योंकि मैं उन्हें चाहती हूं।

"यहीं तुम भूल करती हो। तुम उसे कभी नहीं चाहती हो।"

"सचमुच! मैंने खूब सोच-समझ लिया है, मैं उन्हें चाहती हूँ, सचमुच चाहती हूँ।"

"कभी नहीं।" बहुत ही क्रुद्ध होकर किरण ने कहा—तुम अपनी दया और सहानुभूति को चाह समझती हो और एक नादान का-सा काम करने जा रही हो, मैं यह सब कभी न होने दूँगा।

मन-ही-मन बहुत क्षुब्ध होकर लीला ने किरण की ओर देखा। उसकी दृष्टि बहुत ही कातर थी, विनय से परिपूर्ण थी। उसने कहा—किरण, तुम मेरे इतने दिन के मित्र होकर मेरे साथ ऐसा व्यवहार करोगे?

"तुम्हारे साथ मेरी मित्रता है, इसी लिए नासमझी से यदि कोई अनुचित कार्य करने लगो तो समय के अनुसार उसका प्रतीकार करने का मुझे अधिकार है। मैं अरुण को समझा कर सारी बातें कह दूँगा और यह भी बतला दूँगा कि शायद तुम दुखी न हो, इसलिए उस समय लीला कुछ कह नहीं सकी। परिस्थिति समझ में

आ जाने पर अरुण रत्ती भर भी बुरा न मानेगा। वह मनुष्य है। मनुष्य के ही समान उसे निराशा का कष्ट मस्तक झुका कर सहन करने दो। तुम स्वयं ऐसा क्यों नहीं समझ रही हो कि यह काम कितना अनुचित हो रहा है?"

लीला कुछ देर तक चुप थी। बाद को मस्तक उठा कर उसने दृढ़ स्वर से कहा—मैं तुम्हारे विचार से सहमत नहीं हो पाती हूँ। तुम्हारी मध्यस्थता के फलस्वरूप जिस बेचारे को इतना क्लेश मिला है उसे ही फिर नवीन रूप में यातना भोगनी पड़ेगी। तुम्हें मालूम है कि उनका दुर्भाग्य मेरे लिए भी तुम्हारे ही समान तुच्छ विषय नहीं है। तुम्हें या और किसी को सन्तुष्ट करने के लिए उन्हें मैं दुख न दे सकूँगी।

कहते-कहते लीला के मुख की स्वाभाविक ज्योति फिर वापस आ गई। तेज और गर्व के मारे वह सीधी होकर खड़ी हो गई, और स्थिर दृष्टि से किरण की ओर ताक कर उसने कहा—मालूम है तुम्हें, मैं अपने आप ही अपनी स्वामिनी हूँ। दूसरे के विचारों और इच्छा का अनुसरण करके चलने का मेरा स्वभाव नहीं है। किसी दिन मैं स्वयं अरुण के सामने ये सारी बातें स्वीकार करूँगी। यह सब सुनकर भी जब वे मुझे चाहते रहेंगे तब उन्हें सुखी करने के लिए प्राणों की बाजी लगा कर प्रयत्न करूँगी। अपना भविष्य मैंने स्वयं स्थिर कर लिया है, उसके सम्बन्ध में किसी को और कुछ कहने-सुनने का क्या अधिकार है? तुमसे मैं इतना भर चाहती हूँ कि मेरे कहने से पहले तुम कोई बात प्रकट न करना। इस समय यदि तुमने मुझे धोखा दिया तो मैं आजन्म तुमसे घृणा करूँगी। जानते तो हो कि तुमसे कितना प्रेम करती हूँ मैं?

"मैं नहीं जानता! जानने की आवश्यकता भी नहीं है। तुम यदि अपनी ही इच्छा के अनुसार चलती हो तो मुझे बोलने का क्या अधिकार है?" क्रोध से मुँह लाल करके किरण बरामदे में टहलने लगा।

लीला क्षण भर किरण के तमतमाये हुए चेहरे की ओर ताकती रही। आज यह उसके कैसे पराजय का दिन था! उसका आत्म-बल और अहङ्कार सब कहाँ का कहाँ विलीन होने लगा! किरण यदि रुष्ट होकर उससे दूर रहे तब तो वह क्षण भर भी स्थिर नहीं रह सकती!

अपने सारे अभिमान को तिलाञ्जलि देकर लीला फिर किरण के पास गई। उसने कहा—किरण, क्रोध के कारण चाहे कुछ भी कहो, मैं सचमुच तुमसे प्रेम करती हूँ। तुमसे मैं कोई बात छिपा नहीं रख सकती। आज भी मैंने तुमसे सारी बातें खोल कर कह दी हैं। इतने पर भी यदि तुम अनुचित हठ के कारण अरुण को कष्ट दो तो जीवन में मैं कभी तुम्हारा मुँह न देखूँगी। परन्तु अब, क्या तुम इस सङ्कट के समय अब मेरी एक भी बात न मानोगे किरण? इसी तरह इतनी आसानी से मुझे दूर भगा दोगे? आँसुओं के उच्छ्वास से लीला का स्वर रुँध गया।

उसी समय लीला की ओर घूम कर किरण खड़ा हो गया। उसने कहा—कहो, क्या कहती हो?

"मेरा इतना ही विश्वास करो कि जो प्रेम वीणा को मिलना चाहिए, उसे चोरी से अपने अधिकार में करने के लिए मैं नहीं आई हूँ। अरुण का दुख भुला रखने के ही लिए मैंने यह कार्य किया है। जब तक मैं स्वयं उन्हें सारी बातें समझा न दूँ तब तक तुम चुप रहो। मैं कभी-कभी आकर उनसे मिल जाया करूँगी। इसमें मेरी या उनकी कोई हानि न होगी। बतलाओ, मेरी यह बात मानोगे?

किरण ने बहुत ही अप्रसन्न होकर कहा—तुम्हारी इस बात से मेरे समस्त हृदय में विद्रोह मचा हुआ है। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि तुम्हारे इस कार्य का मैं सभी अंशों में विरोध कर रहा हूँ। तुम नागिन हो, धोखेबाज हो! तुम स्वेच्छाचार कर

रही हो। तुम अब वह लीला नहीं हो, इसलिए स्वभावतः तुम्हारे प्रति मेरा अब वह पहले का भाव नहीं रह सकेगा। कौन ऐसा स्वेच्छाचार सह सकता है ?

अब लीला को भी जोरों का क्रोध आ गया। उसने कहा—स्वेच्छाचार कैसा ? अब तो तुम अंट-संट की बात बकने लगे ?

लीला की ओर ताक कर वैसी ही उत्तेजना के साथ किरण ने कहा—स्वेच्छाचार नहीं तो और क्या है ? आज तुमने जो कार्य किया है उसे करना तो दूर की बात है, कोई भले आदमी की लड़की उसकी कल्पना तक नहीं कर सकती। तुमने एक अपरिचित पुरुष के साथ स्वयं भिखारिन की भाँति जाकर मर्यादा से कहीं अधिक घनिष्ठता बढ़ा दी है। यह सोच कर मैं अवाक् हो जाता हूँ ! देखना, अन्त में जाकर या तो तुम अरुण के साथ विवाह करोगी या आत्मज्ञान से शून्य एक साधारण स्त्री से भी अधम हो जाओगी। जो खेल तुम खेल रही हो उसका अन्तिम परिणाम यही हो सकता है।

लीला का मुँह लाल हो गया। जरा देर तक वह मस्तक नीचा किये चुपचाप खड़ी रही बाद को सिर ऊँचा करके स्वाभाविक रूप में उसने कहा—भाड़ में जाय तुम्हारी वह बात ! तुम चाहे कुछ भी सोचो-समझो, तुम्हारे सोचने-विचारने की ओर ध्यान देने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है। अब यह बतलाओ कि मेरी बात रक्खोगे या नहीं !

किरण अवाक् होकर कुछ देर तक उसकी ओर ताकता रहा। इतनी बक-झक, इतने तर्क-वितर्क और इतना अपमान, फिर भी अपना हठ न छोड़ेगी ? कैसे स्वभाव की है यह लड़की ? अन्त में अत्यन्त रोष से उसने कहा—रखनी ही पड़ेगा। नहीं तो और उपाय क्या है ?

## ( १२ )

एक अज्ञात विषाद का भार हृदय में लिये हुए लीला घर लौटी। किरण की वह परवा नहीं करती, यह बात तो उसके मुँह पर

ही वह सुना आई है, फिर भी उसके मन का भार दूर क्यों नहीं हुआ? आँसुओं का एक प्रबल उच्छ्वास उसके अन्तस्तल को ठेल-ठेल कर उठना चाहता था!

घर पर लीला के सुख-दुख का साथी कोई था नहीं। वह सभी से दूर रहा करती थी। उसका प्यारा कुत्ता ही एक-मात्र उसका साथी था। लीला को जो कुछ कहना होता वह सभी अपने जिम को सुनाया करती। जिम भी उसकी बातों को गम्भीर भाव से समझने की चेष्टा किया करता।

घर लौट कर अपने आहत हृदय से लीला कमरे में गई और अपने टेरियर को गोद मे ले लिया। किरण के ऊपर क्रुद्ध होकर उसे भूलने की चेष्टा करते-करते वह जिम के मस्तक पर हाथ फेरने लगी और कहा—तुम तो मेरे पास हो ही, यही बहुत अच्छा है। किरण को भाड़ में जाने दो। उसके लिए मैं सोच करके क्यों मरूँ? है न? उसके बिना क्या मेरे दिन ही न कटेंगे?

इस बात का अनुमोदन करने के विचार से जिम ने एक बार भौंक कर अपनी पूँछ हिलाई। लीला फिर कहने लगी—उसकी कोई बात अब मैं हृदय में नहीं लाना चाहती। मुझे अब एक नया मित्र मिल गया है। तुम जानते हो? उसके पास मैं तुम्हें एक दिन ले चलूँगी। वह बहुत अच्छा है, समझे? वह तुम्हें बहुत प्यार करेगा। तुम भी उसे प्यार करना। ठीक है न?

लीला का हाथ चाट कर जिम ने इस बात पर अपनी सहमति प्रकट की। बाद को एक लम्बी साँस लेकर वह इसे सोचने का प्रयत्न करने लगी।

लीला मुँह से चाहे कुछ भी कहती रही हो, किन्तु समस्त दिन लज्जा ने उसके हृदय को गम्भीर भार के समान दाब रक्खा था। सचमुच उसने एक अनुचित कार्य कर डाला है! इस बात का उसने पहले क्यों नहीं अनुभव किया?

किरण के मुँह पर उसके साथ वह काफ़ी वाद-विवाद कर चुकी है। उसके इस काम में कोई दोष नहीं है, सदिच्छा से प्रेरित होकर ही उसने यह काम किया है, इसे वह बार-बार प्रमाणित कर चुकी है। किन्तु इस समय एकान्त कमरे में बैठ कर जब वह आज सवेरे की घटनाओं पर विचार करने लगी तब वह जितना ही सोचती उसे अपने ऊपर उतनी ही लज्जा आती। अपने को बार-बार धिक्कार कर वह मानो धरती में गड़ी जाती थी।

जिस किसी भी दृष्टि-कोण या प्रकार से वह अपने इस कार्य पर विचार करती रही हो, सामाजिक नियमों के अनुसार इस पर और कोई भी उस तरह से विचार न करेगा। समाज में लोग किसी भी कार्य पर उसका उद्देश देख कर विचार नहीं करते। वे केवल बाहर का काम देखते हैं और यह देखते हैं कि जो काम हुआ है वह समाज के प्रचलित नियमों के अनुकूल है या नहीं। लीला तो इतने दिन तक समाज की सभी प्रचलित विधि-व्यवस्थाओं और संस्कारों को तुच्छ समझ कर दर्पपूर्वक अपनी इच्छा के ही अनुसार चलती आई है, परन्तु आज सभी ओर से उसकी ऐसी पराजय क्यों हो रही है? वह संस्कार की लज्जा ही तो उसे आज इतना क्लेश दे रही है!

किरण ने सच्ची ही बात कही है। वह स्वयं भिखारिणी बन कर एक अपरिचित युवक के पास गई है और उसे धोखा देकर उसका प्रेम और आदर ग्रहण किया है। एकान्त कमरे में बैठ कर लीला ने लज्जा से रँगा हुआ अपना मुँह ढँक लिया। भला यह बात सुनकर उसे कोई क्या कहेगा? कहीं उसकी मा को यदि मालूम हो गया तो?

लीला थर्रा उठी। उस समय कौन से कुविचार उसके मस्तिष्क में समा गये थे! किस तरह वह ऐसा अपमानजनक कार्य कर सकी है! उसकी मा सदा ही उसे निर्लज्ज और असभ्य कह कर

डाँटा करती हैं, किन्तु उस निर्लज्जता की सीमा का वह कहाँ तक अतिक्रमण कर सकती है और कर चुकी है, यह शायद वे स्वप्न में भी नहीं सोच सकतीं। लीला तो सदा से ही वीणा तथा उसकी तरह की अन्य बालिकाओं को कठपुतली कह कर उनके प्रति घृणा प्रकट करती और उनकी खिल्लियाँ उड़ाती आई है। आज उसका फल उसे मिल गया। ऐसा काम करना तो बहुत बड़ी बात है, वे लोग मन में कभी ऐसी कल्पना तक नहीं कर सकतीं। यह बात यदि प्रकट हो गई तो समाज में भला वह कैसे मुँह दिखा सकेगी? आज पहला दिन था, जब लीला ने अपने उद्दाम तथा एकाङ्गी स्वभाव के सम्बन्ध में विचार करके लज्जा तथा वेदना का अनुभव किया है।

परन्तु जो हो गया है, उसमें से कुछ लौटा लेने का तो कोई उपाय है नहीं। केवल वीणा यदि अपने विचार बदले तो सारी बातें छिप सकती हैं। अथवा उसका मतलब समझ कर अरुण ही उसे क्षमा कर दे। लीला तो अपनी इस वञ्चना का मूल्य अन्त तक देने के लिए तैयार है!

अरुण की दशा का स्मरण आते ही लीला के हृदय का सारा सङ्कल्प-विकल्प, सारी लज्जा, धीरे-धीरे दूर होगई। हर्ष, पुलक और आनन्द के कारण अरुण के उज्ज्वल मुख पर जिस शोभा का उदय हुआ था उसने हृदय पर उदित होकर स्वयं लीला को भी न जाने किस भाव के आवेश से मुग्ध कर दिया। वह अरुण से प्रेम करती है! आज वह उसके लिए अपने हृदय में जिस भाव का अनुभव कर रही है, पहले तो कभी और किसी पुरुष के प्रति वैसा अनुभव किया नहीं।

अन्धे और असमर्थ अरुण को अपनी इच्छा से ही वरण करके उसके जीवन के सभी सुखों तथा दुःखों में उसने अपने आप को सम्मिलित कर दिया है और उसका भार अपने मस्तक पर रखकर संसार के मार्ग में

चली जा रही है ! कल्पनारूपी नेत्रों से अपने जीवन के सम्बन्ध का यह दृश्य देखकर लीला का चित्त अपार आनन्द और करुणा से परिपूर्ण हो गया। हाय, वह दुखी है, असहाय है। आज विपत्ति के दिन, उसके चारों ओर के मित्रता, स्नेह, प्रेम तथा सहानुभूति के बन्धन, क्षण भर में ही टूट गये ! आज वह संसार में अकेला है, मित्रहीन है, असहाय है ! लीला ने अपनी इच्छा से ही उसके पास जाकर उसे वरण कर लिया है। अपने हृदय के अटल और एकनिष्ठ प्रेम के आश्रय में वह अरुण के निराश और अन्धकारमय जीवन में आशा और प्रेम का दीपक जला कर उसे बचा लेगी। इसमें और किसी को कुछ कहने-सुनने का अधिकार ही क्या है ?

लीला के अन्तःकरण को ठेल-ठेल कर केवल एक बात निकलना चाहती थी ! आँख मूँद कर मन ही मन अस्पष्ट स्वर से उसने यही बात कही कि अरुण मेरा है। सचमुच वह केवल मेरा है ! समाज के शासन या अन्य किसी कारण से मैं उसे कभी त्याग न सकूँगी। मैंने जो कुछ किया है उसके लिए कभी लज्जा का अनुभव न करूँगी। आवश्यकता पड़ने पर सभी के सामने अकुण्ठित-भाव से स्वीकार कर लूँगी !

"अरुण मेरा है।" इस बात को स्पष्ट भाव से स्वीकार कर लेते ही लीला नव-पल्लवित प्रेम के आवेग तथा पुलक से उद्वेलित हो उठी। उसके हृदय का रक्त तीव्र वेग से प्रवाहित हो उठा ! क्षण भर में ही उसके हृदय की सारी लज्जा और धिक्कार न जाने कहाँ अदृश्य हो गया। इस प्रवाह में उसकी इतनी देर की लोकलज्जा, माता-पिता का भय, किरण के क्रोध आदि की चिन्ता कहाँ अदृश्य होगई, यह वह स्वयं भी न समझ सकी।

उस दिन, दिन ढलते समय, टेनिसकोर्ट में लीला वीणा तथा अन्य दो मित्रों के साथ टेनिस खेल रही थी। सारा संशय और संकल्प-विकल्प विलीन हो चुकने के कारण उसका हृदय निर्मल हो

चुका था। अब इसी तरह यदि वह किरण को भी समझा दे सकी तो सारे झंझटों से मुक्त होकर निश्चिन्त हो जायगी। इधर कई घंटा पहले अपने चुटीले अभिमान के गर्व से किरण को अपने हृदय में वह बिलकुल तुच्छ समझ चुकी थी।

खेल में लीला रह-रह कर चकित हो उठती थी। एक परिचित प्रिय पदध्वनि, हृदय को प्रफुल्लित करनेवाला एक परिचित कण्ठ स्वर, सुनने के लिए उसका मन प्रतिक्षण उत्सुक हो उठता। परन्तु धीरे-धीरे समय व्यतीत हो चुका, किरण तो अभी तक आया नहीं!

सवेरे किरण जब किसी तरह भी लीला से सहमत न हो सका, बल्कि कठोर भाव से उसका तिरस्कार करके उसे बहुत-सी अपमान-जनक बातें सुना दीं, तब घर आकर क्रोध और अपमान के कारण लीला का मन किरण की ओर से बिलकुल ही फिर गया। वह यदि इतनी आसानी से अपनी इतने दिनों की मित्रता का अन्त कर सकता है तो लीला को ही उतनी क्या गरज पड़ी है? मानों उसी का किरण के बिना निर्वाह न होगा! इसके बाद किरण यदि फिर दो दिन के बाद अपनी इच्छा से ही लीला के पास आवे तब भी लीला उसकी परवा न करेगी!

इसके बाद दिन के समय जब वह अपनी करतूत पर गम्भीर भाव से विचार करने लगी तब एक बार उसके मन में आया कि किरण ने जो कहा है वही सच है। अपराध मेरा ही है। अपराध करके भी मैं व्यर्थ में उसके ऊपर क्रोध कर रही हूँ। क्रोध करने का मुझे कोई अधिकार नहीं है। किन्तु उसके बाद ही अरुण के प्रति जो नवीन अनुराग उत्पन्न हुआ था उसकी धारा में ये सारी चिन्तायें तथा अनिश्चय तिरोहित हो गये। उस समय वह कुछ भी न सोच सकी। किन्तु दिन ढलते समय लीला ने सोचा कि मैंने जो कुछ किया है उसमें कोई दोष तो नहीं है, किन्तु उसके कारण किरण के

साथ जो सदा के लिए अनबन हो रही है, यह ठीक नहीं। इतने दिनों का हम लोगों की मित्रता का बन्धन क्या ज़रा-सी बात में तोड़ दिया जा सकता है? किरण यदि एक बार आ जाता तो सारी कठिनाई अभी ही दूर हो जाती। उसके लिए अधीर होकर लीला इधर-उधर टहलने लगी, किन्तु किरण आया नहीं। अन्त में जब आशा न रह गई तब लीला क्लब में आई। उसने सोचा था कि रुष्ट होकर किरण मुझसे मिलने चाहे भले ही न आवे, किन्तु क्लब में खेलने तो अवश्य ही आवेगा। वहीं उसके सामने परिस्थिति को खूब स्पष्ट करके उसे समझा दूँगी। किरण को विश्वास है कि लीला अरुण से प्रेम नहीं करती। इसी विश्वास के कारण वह इतना रुष्ट हुआ है। यह बात यदि उसे किसी तरह समझा सकी तो सारा सन्देह ही दूर हो जायगा। किरण ने लीला को जो-जो कड़ी-कड़ी बातें कही थीं वे सभी भूल कर एक बार उससे मिलने के लिए उत्सुक-भाव से लीला घूमने लगी।

खेल समाप्त हो गया, किरण तब भी न आया। अन्धकार होते ही एक-एक करके सभी लोग कमरे में चले गये। कुछ लोग तो घर लौटने का भी उद्योग कर रहे थे। लीला उन सबका साथ छोड़ कर बरामदे में आकर चुपचाप खड़ी हो गई।

उसके हृदय का उद्वेग असह्य होता जा रहा था। वह सोचने लगी—तो क्या किरण अब सचमुच न आवेगा? क्या उसने मेरे साथ सारा सम्बन्ध त्याग दिया?

कमरे के भीतर जाने की लीला की इच्छा नहीं हो रही थी। जिस दिन उसने गीत गाया था, उस दिन से उसके गुणों पर मुग्ध होकर बहुत से लोग उसके भक्त हो गये थे। लीला को देखते ही वे लोग उसकी तारीफ़ के पुल बाँधने लगते। इससे खीझ कर जहाँ तक होता वह क्लब में आया ही नहीं करती थी, यदि आती भी तो उन लोगों से बच कर ही रहा करती थी।

पहले-पहल किरण से जिस तरह परिचय हुआ था, बरामदे में खड़ी होकर लीला एकाग्र मन से उसी के सम्बन्ध में विचार कर रही थी। लन्दन से लौट कर जिस दिन वह आई, उस दिन से एक दिन के लिए भी किरण से उसका वियोग नहीं हुआ। लीला रोज़ सवेरे घोड़े पर सवार होकर घूमने निकलती, आधे रास्ते में आकर किरण उसके साथ हो जाता। तब वे साथ ही साथ घोड़ा दौड़ाकर कितनी दूर तक घूमते-फिरते। इधर के इर्द-गिर्द में जिधर और जितनी दूर तक घूमने लायक़ एकान्त स्थान थे, वे सभी इन लोगों के परिचित थे। बारी-बारी से हर एक स्थान में पिकनिक का प्रबन्ध करके इन दोनों ने कितना समय गाने और आमोद-आह्लाद में व्यतीत किया है। कभी-कभी तो ऐसा भी होता कि किरण किसी कुञ्ज की ठंडी छाया में तरह-तरह की खाद्य-सामग्रियाँ सङ्ग्रह कर रखता और लीला बहुत दूर तक घूमने के कारण प्रबल क्षुधा का सञ्चय करके आती और उन सामग्रियों का सदुपयोग करती, इससे घर लौट कर कुछ भी न खा पाती। उसकी यह अवस्था देख कर मिसेज़ राय एक अनुभवी चिकित्सक की तरह गम्भीर भाव से कहतीं कि तुम्हारी परिपाक-क्रिया में कुछ विकार आगया है। साथ ही साथ उसके लिए एक 'टानिक' की भी व्यवस्था हो जाती। अन्त में दिन ढलते समय जब किरण से मुलाकात होती तब वही चर्चा छेड़ कर हँसते-हँसते दोनों लोटपोट हो जाते। कितने दिनों की कितनी बातचीत, कितने गम्भीर विषयों की आलोचनाओं, कितने सुखमय दिनों, साँझ के समय की कितनी विनोदमय बातों की प्रगतिमय स्मृति से लीला का हृदय उज्ज्वल हो उठा था। तो क्या आज इन सभी का अन्त हो गया?

एक अवर्णनीय यन्त्रणा मानो सैकड़ों सुइयों की भाँति लीला के हृदय को बेधने लगी, जिससे क्षण भर के लिए अलग होना असह्य और असम्भव-सा जान पड़ता था। वह आज एक दिन

में ही एक ज़रा-सी बात पर इतनी आसानी से लीला के जीवन-पथ से बहुत दूर भाग गया। लीला का नवीन प्रेम का नवलब्ध आनन्द, उसके इस समय की व्यथा से कातर हृदय को किसी तरह भी सान्त्वना न दे सका। अतीत की कितनी ही छोटी-बड़ी स्मृतियाँ उसके व्यथित हृदय को उद्वेलित करने लगीं।

( १३ )

लीला के हृदय की बेकली इतनी अधिक बढ़ गई थी कि उसे वह किसी तरह दूर न कर सकी। रात को बिस्तरे पर पड़े ही पड़े उसने स्थिर कर लिया कि कल सवेरे वसन्तपुर जाकर मैं ही किरण से मुलाक़ात करूँगी और उसका सारा मनमुटाव दूर कर आऊँगी। अरुण से मिलने के लिए तो अब मुझे वहाँ कभी-कभी जाना ही पड़ेगा। परन्तु जिसके यहाँ जाऊँगी उससे इस तरह की अनबन रखना कितना बुरा होगा! कैसे भी हो, किरण से मेल किये बिना मेरा काम किसी तरह न चलेगा। विशेषतः ऐसी अवस्था में जब कि अपने इस कार्य के ऊपर पहले-पहल मैंने स्वयं लज्जा और संकोच का अनुभव किया है। किन्तु ऐसी अवस्था में, जब कि मैंने इस सम्बन्ध में अपना अन्तिम निर्णय कर लिया है और मेरा सारा सङ्कल्प-विकल्प दूर हो चुका है, तब किरण ही क्यों अपने हृदय में एक निर्मूल धारणा की जड़ जमा कर इस तरह दूर-दूर फटकता रहे। इसका तो कोई उपाय करना ही पड़ेगा।

सवेरे उठते ही घोड़े पर सवार होकर लीला वसन्तपुर की ओर चली। वह सोचने लगी कि दिन चढ़ आने पर किरण कहीं घर से निकल न जाय। किन्तु मुलाकात होने पर पहले-पहल उससे कहूँगी ही क्या? अब पहले की तरह दौड़ कर उसका हाथ तो पकड़ सकती नहीं! कहीं ऐसा न हो कि मुझे देखते ही वह मुँह फेरकर चला जाय! यही सब उधेड़बुन करती हुई लीला चली जा रही थी।

किरण के द्वार पर जब लीला पहुँची तब साईस ने दौड़कर उसका घोड़ा पकड़ लिया और उसके उतर जाने पर घोड़े को अस्तबल में ले गया। बेहरा ने सूचना दी कि सरकार घर में नहीं हैं। जाते समय कह गये है कि मिस साहब आवेंगी, उनकी आवभगत में किसी तरह की त्रुटि न होने पावे। इसलिए हम सब आपकी सेवा के लिए तैयार है।

किरण घर में नहीं है! शायद वह इसी लिए आज सवेरे ही घर से निकल गया है कि कहीं देर करने पर लीला से मुलाकात न हो जाय। यह सोचकर निस्तब्धभाव से लीला कुछ देर तक बरामदे में खड़ी रही। कुछ क्षण तक तो सोचने-विचारने या कुछ करने की उसमें शक्ति ही न रही।

किरण ने क्या उसे सचमुच एकदम त्याग दिया! अब वह कभी उससे मुलाकात तक न करेगा! लीला बड़ी आशा से आई थी। इस आघात से उसकी अन्तरात्मा बड़ी दुखी हुई। प्रभात का निर्मल आकाश अपनी सारी शोभा और विचित्रता लेकर उसके नेत्रों के सामने मलिन हो गया। लीला के मन में आया कि मेरा यहाँ का लेन-देन अब एक-दम से भुगत चुका है। मुझे अब और कुछ करना नहीं है।

बेहरा कुछ क्षण तक विस्मित-भाव से लीला की ओर ताकता रहा। बाद को वह चला गया। लीला ने भी इसी तरह कई मिनट काट दिये। अन्त में उसके निस्पन्द शरीर में फिर से चेतना आई, उसने सुना कि घर के भीतर से अरुण वीणा वीणा कह कर पुकार रहा है।

लीला चौंक पड़ी। अरुण की आवाज सुनते ही उसके हृदय की निर्जीवता पल भर में जाती रही। वह यहाँ खड़ी होकर इतने समय तक क्या सोच रही थी?

मेज के पास कुर्सी पर बैठा हुआ अरुण अधीर-भाव से वीणा के

आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके मुखमण्डल पर कितनी आकुलता थी! एक अधीर आकांक्षा और उद्वेग उसके दृष्टिहीन और असहाय मुँह पर विकसित हो रहा था। उसका वह मुँह देखते ही लीला के हृदय की सारी अशान्ति और वेदना क्षण भर में विलीन हो गई।

अरुण के पास जाकर जैसे ही वह खड़ी हुई, बहुत ही मृदु और कोमल स्वर में उसने कहा—आगई हो वीणा? तुम्हारे घोड़े की टाप कान से मैंने पहचान ली है। आज जैसे ही तुम फाटक पर पहुँची हो, वैसे ही मुझे मालूम हो गया था। तब से अभी तक मैं इतनी व्याकुलता से प्रतीक्षा कर रहा था कि मेरे लिए एक-एक क्षण एक युग हो रहा था!

लीला को अपने आप पर बड़ी विरक्ति हुई। वह अपने को धिक्कारने लगी। उसे आज क्या हो गया था? इस बेचारे को व्यर्थ में क्लेश देकर इतनी देर तक किस चिन्ता में मग्न थी वह?

दुखी हृदय से समीप आकर लीला ने अरुण का हाथ पकड़ लिया। वह कहने लगी—आज तो मैं कल की अपेक्षा सवेरे ही आगई हूँ अरुण! क्या मुझे अधिक विलम्ब हो गया है?

अरुण ने उसका कोमल हाथ अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया। वह कहने लगा—सवेरे ही आई होगी। तुम्हारे हिसाब से शायद देरी न हुई होगी। परन्तु मेरा अपना जो हिसाब है उससे तो आज-कल का एक-एक मिनट बिलकुल और ही तरह का हो रहा है। कल तुम जब से गई हो तब से मिनट पर मिनट और घंटे पर घंटा गिन-गिन कर किस तरह अपना समय काटा है और अब तक तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहा हूँ, यह तुम न समझ सकोगी वीणा। कोई भी दृष्टिमान व्यक्ति इसे समझ ही नहीं सकता। आशाओं और मादक आकांक्षाओं मेरे आँखें तो हैं नहीं कि तुम्हें देखूँगा,

मैं अपने समस्त हृदय, अन्तरात्मा और इन्द्रियों से तुम्हारे सान्निध्य का अनुभव भर करना चाहता हूं।

दोनों ही एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए बड़ी देर तक चुपचाप बैठे रहे। भावों के आवेग से हृदय जब उच्छ्वसित और पूर्ण हो जाता है तब उस भाव को मुंह से प्रकट करने की भाषा नहीं रहती, साथ ही उसे प्रकाशित करने की प्रवृत्ति भी नहीं होती। अपनी एक-मात्र प्रिय वस्तु को अपने समीप पाकर अरुण आनन्द के मारे अपने आपको भूल गया था। लीला का भी हृदय उस समय अरुण के प्रति अपरिमित प्रेम से परिपूर्ण था। उस समय वह सोच रही थी कि अरुण मेरे भावी पति हैं। उनके समीप इस रूप में आने में मेरी कोई हानि नहीं है। कल यहाँ से जाने पर अरुण को भूल कर किरण की चिन्ता से कितनी व्यग्रता से अपना इतना समय काटा है, यही सोच कर वह अवाक् हो रही थी। कुछ देर के बाद अरुण ने पुकारा—वीणा !

"अरुण !—अरुण !"

"कब मैं तुम्हें सदा के लिए पा जाऊँगा ? तुम्हें अपनी कहने का अधिकारी मैं कब से बनूँगा ?"

लीला ने स्नेह-पूर्वक उसके उत्कण्ठित और व्यग्र मुंह की ओर ताका। उसने कहा—इतनी घबराहट किस बात की है अरुण ? मैं तुम्हारे पास ही तो हूँ। क्या अब भी मेरी बात पर तुम्हें विश्वास नहीं हो रहा है ?

"नहीं, यह बात नहीं है। तुम्हारे कथन पर मैं किसी प्रकार का सन्देह नहीं कर सकता। स्वर्ग की देवी हो तुम। मिथ्या का आश्रय कभी न ले सकोगी। परन्तु मुझसे नहीं रहा जाता। जब समझता था कि तुम्हें प्राप्त करने की मुझे कोई आशा नहीं है तब किसी तरह अपने हृदय को सँभाल लिया था। संसार में मनुष्य जब अपना सर्वस्व खोकर बिलकुल निःस्व हो जाता है

तब उसके हृदय की भी अवस्था वैसी ही हो जाती है। किसी तरह के सुख-दुख का अनुभव करने की शक्ति उसमें नहीं रहती। वही निराशामय अवस्था उस समय मेरी भी हुई थी। यही कारण था कि इतनी आसानी से मैं तुम्हारे ऊपर से अपना सारा अधिकार उठा सका था। परन्तु कल जब से मुझे मालूम हुआ है कि संसार में अब मेरे लिए आशा करने की कोई वस्तु है और वह वस्तु तुम्हीं हो, जिसे मैंने अपने यौवन के अदम्य उच्छ्वास में पूर्ण हृदय से प्यार किया है, तब से मेरा हृदय कितना अधीर हो रहा है, यह तुम्हें समझा न सकूँगा। सारा दिन और सारी रात अधीर आग्रह के साथ प्रतीक्षा करने के बाद घण्टे दो घण्टे भर के लिए तुम्हें पाकर मेरा हृदय तृप्त नहीं होता। यदि तुमने इतना प्यार किया है तो अब मुझसे दूर न रहो वीणा। तुम्हें छोड़कर रहना एक क्षण भी मेरे लिए असह्य-सा मालूम पड़ रहा है।

"ऐसा ही होगा अरुण। जहाँ तक हो सकेगा, शीघ्र ही पिताजी से यह बात कहूँगी। तब अधिक समय तक प्रतीक्षा न करनी पड़ेगी। परन्तु उससे पहले मुझे तुमसे बहुत सी बातें करनी हैं। किसी दिन अवसर पाकर वह सब तुमसे कहूँगी। उन्हें सुनकर भी यदि—"

बात काट कर अरुण ने कहा—तुम्हें जो कुछ कहना हो, किसी समय भी कह सकती हो। उसमें अवसर-कुअवसर का क्या प्रश्न है? परन्तु मुझसे यदि पूछना चाहो तो मुझे इस समय न तो कुछ कहना है और न कुछ करना है। इच्छा होती है कि कुछ दिन तक चुपचाप तुम्हारे पास पड़ा भरर हूँ। शायद तुम्हें याद होगा कि पहले जब मैं तुम्हारे पास रहा करता तब मेरे अन्तःकरण में तुम्हारे प्रति प्रेम की इतनी उन्मत्त धारा उमड़ती कि मैं बेहद बकवादी बन बैठता। परन्तु अब? आँखें न रहने से हमारा वह सभी जाता रहा। बाहर के संसार से ग्रहण करने की रूप-रस, शोभा-सम्पत्ति आदि जो कुछ सामग्रियाँ थीं, वे सभी मेरे लिए मर-सी

गई हैं। अब अनुभूति ही मेरा एक-मात्र अवलम्बन है। उसी के सहारे पर मैं जीवित हूँ। इस समय मैं और कुछ चाहता नहीं, केवल इसी तरह तुम्हारे हाथ पर हाथ रक्खे हुए और 'तुम मेरे पास हो', इसी बात का अनुभव करते हुए, चुपचाप पड़ा रहूँ। जीवन में और सभी सुखों से निराश हो गया हूँ। परन्तु इस सुख से भी मुझे वञ्चित न करो वीणा। यह क्या? रोती हो? रोती क्यों हो वीणा?

अरुण की बात सुनते-सुनते वेदना और करुणा के मारे लीला का हृदय फूला आ रहा था। नेत्रों का जल पोंछ कर उसने कहा—ऐसी बात न कहो तुम। यह सुनकर मुझे बड़ा कष्ट होता है। तुम इतने निराश क्यों हो रहे हो? हम-तुम जब साथ-साथ रहेंगे तब तुम्हें मालूम होगा कि तुम्हारे सुख का ज़रा भी अंश नष्ट नहीं हुआ।

बड़े आदर और स्नेह के साथ अरुण ने अपने रूमाल से लीला की आँखें पोंछ दीं। उसने कहा—तुम्हारे इन नेत्रों का जल मेरे इस दग्ध और मरु जीवन में की शान्तिमय वर्षा की बूँदें हैं। इस समय भी एक व्यक्ति के हृदय में मेरे प्रति इतना स्नेह और इतनी करुणा सञ्चित है, यह जान कर ही मेरे हृदय में जीवित रहने की आशा और अभिलाषा फिर से लौट आई। मेरा सभी तो जा चुका था वीणा। तुम्हीं फिर से मुझे लौटाल सकी हो

लीला मुग्ध नेत्रों से अरुण की ओर ताकती रही। उसके खिले हुए चिहरे और प्रेम-पुलकित बातों से उसके हृदय का आनन्द और आशा प्रकाशित हो रही थी। लीला ने मन ही मन सोचा, तुम्हें सुखी करना ही मेरे जीवन का एक-मात्र कार्य है। मेरी इस स्वेच्छा-चारिता के लिए मेरी कोई कितनी ही निन्दा क्यों न करे, मैं किसी तरह तुम्हें छोड़ूँगी नहीं।

बात ही बात में उस दिन दो घण्टे कट गये लीला जब

उठने लगी तब उसने मेज पर एक कापी पड़ी हुई देखी। उसने कहा—क्या यह कापी तुम्हारी है ? तुम लिख सकते हो ?

एक म्लान हँसी हँस कर अरुण ने कहा—जब मैं अकेला रहता हूँ तब कुछ अट-पट काम करता रहता हूँ। किसी न किसी तरह समय तो काटना ही है। लिखना—उसे लिखना तो कह नहीं सकते ?

कापी उलट-पलट कर लीला कुछ समय तक उसे देखती रही। अन्त में उसने कहा—किन्तु तुम्हारा लिखना तो टेढ़ा-मेढ़ा है नहीं। इसमें थोड़ा-बहुत जो दोष है मेरे विचार मे कुछ दिन बैठे-बैठे यदि अभ्यास करो तो शायद यह भी जाता रहेगा और तुम्हारा लिखना बड़ा अच्छा हो जायगा।

अरुण ने कहा—मैं तो बराबर ही अभ्यास कर रहा हूँ। पहले बहुत टेढ़ा-मेढ़ा होता था। लिजी ने कुछ समय तक मेरा हाथ पकड़ कर लिखने का अभ्यास कराया था। उसका पूरा हाल तुम्हें मैं किसी और दिन बताऊंगा वीणा। आज इस तरह जो अपने देश मे लौट आया हूँ, यह केवल उसी की सेवा-शुश्रूषा का फल है। उस समय भी शायद वह मुझे स्मरण करके दुखी होती होगी।

बड़े सम्मान के साथ लीला ने कहा—तुम्हारे मुँह से उनका नाम सुनते ही मेरे हृदय मे उनके प्रति कितनी श्रद्धा हो रही है, उसे कैसे प्रकट करूँ ? हम-तुम जब साथ-साथ रहेंगे तब पत्रों मे तुम मेरा परिचय करा देना, मैं उन्हे पत्र लिखूँगी। किन्तु अरुण, तुम कितना सुन्दर लिख सकते हो ! कितनी अद्‌भुत तुम्हारी लिखने की शक्ति है ! तुम्हारा लिखना मुझे इतना अच्छा लगता है !

खुशी के मारे अरुण का मुख उज्ज्वल हो उठा। उसने कहा—सचमुच वीणा ? मैं क्या इतना सुन्दर लिखता हूँ कि वह तुम्हें भी पढ़ने में अच्छा लगता है ? तब तो कहना चाहिए कि मेरा लिखना सीखना आज सार्थक हो गया !

लीला ने कहा—मैं सच कहती हूँ कि तुममें अद्भुत शक्ति है लिखने की। देखो अरुण, मेरे जी में एक बात आती है। तुम एक उपन्यास क्यों नहीं लिखते? यदि कुछ दिनों तक एक टाइपिस्ट रखकर तुम टाइप करना सीख सको तो लिखने की कोई चिन्ता ही न रह जाय। विलायत में मैंने देखा है कि अन्धे लोग टाइप राइटिंग की सहायता से बहुत कुछ लिख जाते हैं। वहाँ का कोई अन्धा भी असमर्थ या अकर्मण्य नहीं है! तुम यदि ऐसा करो तो तुम्हें अपने हृदय के विचार और कल्पनायें प्रकट करने की सुविधा हो जाय। इसके अतिरिक्त इस ओर तुम्हारा चित्त इतना रमा रहेगा कि वाह्य जगत की आवश्यकताओं या नेत्रों के अभाव से तुम्हें कोई भी क्लेश न मालूम पड़ेगा। अभी तो कुछ दिन अभ्यास कर लेने पर तुम हाथ से भी अच्छा लिखने लगोगे। यदि कोई त्रुटि रहेगी तो कभी-कभी मैं आकर उसे सुधार दूँगी। इस प्रकार हम दोनों के उद्योग से एक बड़ी सुन्दर पुस्तक तैयार हो जायगी।

आशा और आनन्द के मारे अरुण का मुख उज्ज्वल हो उठा। उसने कहा—तुमने आज मुझे एक नया मार्ग प्रदर्शित कर दिया वीणा! यह बात कभी मेरे दिमाग़ में आई नहीं थी। बाहर का काम करने की शक्ति से जो मैं वञ्चित हो गया हूँ, उसी रुकी हुई शक्ति को यदि फिर से लौटाल पाना सम्भव हो, तो एक दूसरी दिशा से अपने को प्रकट करने का मुझे क्षेत्र मिल जायगा। तुम्हारे कथन के अनुसार कार्य करने का प्रयत्न मैं अवश्य करूँगा। आज किरण जब लौटकर घर आवेगा तब उससे भी इस विषय में परामर्श करूँगा। देखूँ, वह क्या कहता है?

( १४ )

उस दिन चौथे पहर एक पार्टी के उपलक्ष्य में मिस्टर राय के यहाँ बड़ी धूमधाम थी। पटना के सभी प्रतिष्ठित राज-कर्म्मचारियों

जमींदारों तथा शिक्षित समुदाय के व्यक्तियों को इस पार्टी में निमन्त्रित किया गया था और सभी ने उसमे योग भी दिया था। लम्बे-चौड़े बग़ीचे के एक किनारे में एक सुन्दर शामियाने के नीचे अतिथियों के जलपान का आयोजन किया गया था। दूसरी ओर टेनिस कोर्ट में टेनिस और बैडमिंटन का खेल जारी था। अस्तङ्गामी सूर्य की किरणें बरगद और पीपल के बड़े-बड़े वृक्षों के घने पत्तों के बीच बीच मे निकल कर मैदान और 'लान' को रञ्जित कर रही थीं। बग़ीचे के दूसरी ओर वादकों का एक दल आये हुए अतिथियों को आनन्दित करने के लिए अपने बैंड में सभी प्रचलित सुरों को अलाप रहा था।

वीणा सुन्दर-सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित होकर अपने पिता के अतिथियों की आवभगत में व्यस्त थी। नीले रंग की बनारसी साड़ी उसके गोरे, कोमल और सुन्दर शरीर को लपेटे हुए झलमला रही थी। उसकी सुन्दर और सुडौल बाँहों पर सुनहरे काम की कुरती शरीर के रंग में बिलकुल मिल गई थी। गले में हीरों से जड़ी हुई नेकलेस, कानों में छोटी-छोटी दो मोतियों की इयरिङ्ग तथा कलाइयों में रत्नों से जड़ा हुआ सुवर्ण का कङ्कण उसकी शोभा का प्रस्तार कर रहा था। वह अपनी मृदु और मधुर मुसकान तथा सुन्दर रूपरेखा के साथ घम-फिर कर सबके साथ बातचीत कर रही थी। जब वह जिस ओर जाती उसी ओर से अस्फुट प्रशंसा का गुञ्जन उठकर उसे अधिक प्रसन्न तथा गर्व से परिपूर्ण कर देता था।

लीला ऐसी पार्टियों की पक्षपातिनी नहीं थी। यह संयत सुजनता तथा हर समय का बँधे हिसाब से चलना उसके लिए असम्भव था। इसी लिए यथासम्भव शीघ्र ही वह लोगों के बीच से उठ आई और अतिथियों के आदर-सत्कार का भार वीणा पर छोड़ कर उसने अपने साथ के खेलनेवालों को लेकर टेनिस कोर्ट में खेल जमा दिया।

साफ़-सुथरे कपड़े पहने हुए खानसामा चाय, केक और तरह-तरह की मिठाइयों से भरे हुए बरतन लेकर सबके पास घूम रहा था। मिसेज राय की मित्राणी ने हाथ में चाय का प्याला लेकर कहा—आपकी छोटी लड़की तो नहीं दिखाई पड़ रही है!

मिसेज राय टकटकी लगाये हुए वीणा की कुंठाहीन तथा स्वाभाविक गति और सामाजिक नियमों की रक्षा करके सब के साथ समान रूप से बातचीत करने की शक्ति मुग्ध-भाव से देख रही थीं। गर्वमय आनन्द के मारे उनका मातृ-हृदय उछल रहा था। परन्तु लीला का प्रसङ्ग उठते ही उनके मुख-मण्डल पर विरक्ति की रेखा झलकने लगी। उन्होंने कहा—लीला बहुत ही अस्थिर और उच्छृङ्खल प्रकृति की लड़की है। अभी थोड़ी ही देर हुई वह टेनिस खेलने चली गई है। इसके अतिरिक्त उसके ऊपर सारा भार छोड़कर मैं निश्चिन्त भी तो नहीं हो सकती हूँ! मेरी वीणा ही ऐसी है जिसे कोई बात सिखानी नहीं पड़ती, सभी बातों में वह समान है।

एक घूँट चाय पीकर मिसेज दत्त ने कहा—ठीक कहती हो। तुम्हारी यह लड़की रूप-गुण सभी में समान है। इसी से तो मैं सबसे कहती फिरती हूँ कि वीणा-जैसी लड़की हमारे समाज में और कहीं भी नहीं दिखाई पड़ती। अच्छा, भला बोस के यहाँ का कुछ हाल सुना है न? वही सुधीर बोस जो डाक्टर हैं। आज सवेरे उनके यहाँ बड़ा गोलमाल मच गया!

मिसेज राय ने कहा—क्यों, क्या हुआ? मैंने तो कुछ सुना नहीं।

अभी तक सेन बाबू की धर्मपत्नी अपने विपुल शरीर का भार एक आराम-कुर्सी पर रखकर विशेष ध्यान के साथ गोझे के मधुर रस का आस्वादन करने में व्यस्त थीं। डाक्टर के यहाँ की बात कान में जाते ही उन्होंने कान खड़ा करके चकित-भाव से कहा—क्यों? क्यों? क्या हुआ है सुधीर बाबू के यहाँ? वे तो कल सवेरे भी मुझे देखने आये थे।

ज़रा-सा जानकार की-सी हँसी हँसकर मिसेज दत्त ने कहा—हूँ:, कल सवेरे! यहाँ घंटे भर में कितने युग की बात उलट जाती है, और आप कह रही हैं कल सवेरे की बात! यह घटना हुई है आज सवेरे। कल सवेरे क्या किसी को ऐसी बात की आशा थी? आज-कल समय बहुत बुरा लगा है दीदी! ऐसा युग लगा है कि किसी को पता ही नहीं रहता कि कब किसके यहाँ क्या हो जायगा। मानो आठों पहर कोई तलवार घूम रही है। कब किसके मस्तक पर आ गिरेगी, इसके लिए सबको सदा ही शङ्कित रहना पड़ेगा।

उस समय जितनी महिलायें उपस्थित थीं वे सब शीघ्र ही आनेवाली विपत्ति की छाया की समीपता से मन-ही-मन उद्वेग और भय से आतङ्क में आ गईं। मामला क्या है? अवश्य कोई बड़ी भारी घटना हो गई होगी। मिसेज़ दत्त शहर भर की सभी ख़बरें रक्खा करती हैं। जब वे कह रही हैं तब अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। यह सोचकर किसी महिला ने भय से मुँह सुखा कर कहा—क्या बात हुई है डाक्टर साहब के यहाँ? क्या आप आज सवेरे उनके यहाँ गई थीं?

मिसेज़ दत्त ने एक बार दृष्टि दौड़ा कर चारों ओर देखा—वहाँ जितने लोग वर्त्तमान थे, उन सबके मुख पर आग्रह और कौतूहल का चिह्न झलक रहा था। तब उन्होंने मन में प्रसन्न होकर कहना आरम्भ किया—उस समय क्या वहाँ जाने का उपाय था? पुलिसवालों ने सारे घर को चारों ओर से घेर लिया था। डिप्टी कमिश्नर, सुपरिन्टेंडेंट, इंस्पेक्टर आदि पुलिस के बड़े-बड़े कर्मचारी—लाल पगड़ी का दल डटा था। सड़क की मोड़ तक इतनी भीड़ थी कि कहीं सरसों रखने की भी जगह नहीं थी। यह जो नलिन—डाक्टर साहब का बड़ा लड़का, इस साल बी० ए० पास करके निकला है न? आप लोगों ने तो उसे देखा ही होगा। कुछ दिन तक यहाँ खेलने भी आता था! देखने में तो वह इतना शान्त,

शिष्ट और नम्र लड़का है, उसके सम्बन्ध में क्या किसी ने कभी सोचा था कि ऐसा लड़का भी कभी अनार्किस्टों के दल में सम्मिलित हो सकता है ?

अनार्किस्ट ! भय और विस्मय के मारे सभी लोग बिलकुल सन्नाटे में आ गये। कुछ देर तक वहाँ निस्तब्धता छाई रही। मिसेज़ राय जज की स्त्री थीं। उनके पति ज़िले के सबसे प्रधान राजकर्मचारी थे। किसी बात के लिए विशेष आग्रह प्रदर्शित करना या व्यग्र होना उनके लिए शोभाजनक नहीं था। वे सदा ही अपने पद की उचित मर्यादा का ध्यान रखकर चला करती थीं। परन्तु यह बात सुनकर वे भी सदा की गम्भीरता रक्षित न रख सकीं। उन्होंने विस्मित होकर कहा—नलिन अनार्किस्टों के दल में मिल गया है ? यह तो केवल आश्चर्य की ही नहीं, बल्कि असम्भव-सी बात जान पड़ती है। उसके विरुद्ध पुलिस को क्या कोई प्रमाण मिल गया है ?

"प्रमाण नहीं मिला ? वे लोग भी भीतर ही भीतर कब से तमाम बातों का पता लगा रहे थे। नहीं तो व्यर्थ में उसे पकड़ कैसे सकते थे ? तलाशी लेने पर ही तो उन्हें रिवालवर, बम, टोटा आदि बहुत सी चीज़ें मिली थीं। सुना है कि नलिन के नाम के बहुत से पत्र भी मिले हैं, जिनसे शायद और भी बहुत-सी भयङ्कर घटनाओं का पता चल गया है। कल सवेरे के अख़बार से सभी ख़बरें आपको मिल जायँगी।

मिसेज़ राय ने चिन्तित भाव से कहा—यदि सचमुच गुप्त रखने की कोई बात प्रकट हो गई होगी तो वह क्या अख़बार में छपेगी ? अख़बार में केवल समाचार-भर छपेगा। धीरे-धीरे देश की कैसी अवस्था होती जा रही है ! इन थोड़े-से छोकड़ों के दिमाग़ में ऐसी पागलपन्थी आगई है, मानो वे ही थोड़े-से बम फेंककर और दस-बीस आदमियों को मार कर इतने बड़े प्रतापशाली

ब्रिटिश-राज्य को उड़ा देंगे। इससे अँगरेज़ों की कोई भी हानि न होगी। इस प्रयत्न मे असफल होकर ये स्वयं अलबत्ता नष्ट हो जायँगे। इसके अतिरिक्त इन लोगों के असन्तोष का क्या कारण है, यह भी मेरी समझ में नहीं आता। अँगरेज़ों के राज्य में हम लोग जिस शान्ति, सुख़ और मान-प्रतिष्ठा का उपभोग कर रहे हैं, यह क्या कभी पहले भी था? मैं अवाक् होकर सोचती रहती हूँ कि ये सब लड़के पढ़-लिख़ कर समर्थ हो जाने पर भी ऐसे ग़लत रास्ते पर क्यों चलते हैं?

मिसेज़ दत्त का मुँह गम्भीर हो गया। उन्होंने कहा—तो इसके ज़रा देर पहले मैं और क्या कह रही थी? जितने अच्छे-अच्छे लड़के हैं और दो-चार परीक्षायें पास कर चुके हैं, वे प्रायः सभी इस दल में हैं। आज-कल के लड़कों में यह एक हवा-सी समा गई है। इसी लिए तो कहती हूँ कि हम सबके ही लड़के पढ़-लिख रहे है, बाहर से देखने-सुनने में सभी अच्छे जान पड़ते हैं, किन्तु भीतर-भीतर कौन क्या कार्रवाई कर रहा है, यह तो मालूम नहीं पड़ता। जिस दिन जो पकड़ा जायगा, उसी दिन उसका रहस्य सबको मालूम होगा। यह जो नलिन के ही बारे में सारे शहर में हलचल मची हुई है, इसके सम्बन्ध में और दूसरों की बात तो जाने दीजिए, उसके माता-पिता को भी क्या कुछ बिन्दु-विसर्ग मालूम था? आज दूसरे वक़्त समाचार पाकर जब उनके यहाँ गई तब उसकी माँ बेचारी धर्ती पर पड़ी रो रही थी। उसे मैं सान्त्वना क्या देती, मै स्वयं फूट-फूट कर रोने लगी।

यह बात समाप्त करके मिसेज़ दत्त ने जेब से रूमाल निकाला और अपनी सूखी आँखों को एक बार पोंछ डाला।

यह समाचार पाकर महिलाओं में से कुछ सचमुच शङ्कित हो उठी थीं। उनके हृदय में बार-बार केवल यही बात जाग उठती

थी कि किस दिन और किसके घर में सुधीर बाबू के घर की घटना की पुनरावृत्ति होगी।

मैदान के दूसरी ओर तम्बू के भीतर मिस्टर राय अन्यान्य राजकर्मचारियों तथा अपने बन्धु-बान्धवों के साथ बात-चीत कर रहे थे। देश की सामयिक अवस्था, वर्तमान युद्ध का भविष्य तथा युद्ध के बाद संसार की राजनैतिक अवस्था में भावी परिवर्तन आदि अधिक गम्भीर विषयों की चर्चा में उनकी सभा विशेष रूप से निमग्न थी।

वीणा का चित्त धीरे-धीरे ऊबता जा रहा था। तीसरे पहर से साँझ तक केवल व्यर्थ की बातें सुनते-सुनते और इधर-उधर घूमते-घूमते वह कुछ उद्विग्न-सी हो उठी थी। अवसर देखकर एक बार वह सभा से निकल पड़ी और मैदान में आकर खड़ी हुई। न जाने किसकी आशा से वह रह-रह कर फाटक की ओर ताक रही थी।

बीच-बीच में टेनिसकोर्ट से चिल्लाहट की ऊँची आवाज और हँसी की ध्वनि वायु में मिल कर बह रही थी। लीला पर उसे क्रोध भी आता था और ईर्ष्या भी होती थी। वह किस तरह से समाज के सारे नियमों को त्याग कर आनन्दपूर्वक मैदान में खेल रही है! इधर वीणा? वह बेचारी तीसरे पहर से ही कितने ऐरे-गैरे आदमियों के साथ व्यर्थ की बातें बकते-बकते हैरान हो रही थी! मानो सारी ग़रज उसी को थी। लीला केवल मौज उड़ाने के लिए ही तेज है! किसी तरह का झंझट देखते ही वह खिसक जाती है।

हेमन्त-ऋतु का रहा-सहा भी थोड़ा-सा दिन व्यतीत होता जा रहा था। सूर्य की मलिन किरणों की रक्तिम आभा उस समय भी अँटारियों की ऊँची मुँडेरियों पर, ऊँचे-ऊँचे पेड़ों की चोटियों पर, चमचमा रही थीं।

मैदान की खुली हवा में खड़ी होकर वीणा किरण के सम्बन्ध में सोच रही थी। आज वह अभी तक क्यों नहीं आया? तीसरे पहर

से ही वह उत्सुक भाव से किरण की राह देख रही थी, किन्तु फिर भी अभी तक वह दिखाई न पड़ा। इधर चौधरी, दत्त, गाँगुली तथा सेन आदि के अनिच्छित वार्तालाप तथा स्तवगान से क्रोध के मारे उसकी तबियत झुँझलाई जा रही थी। जिनकी आवश्यकता नहीं है, केवल वे ही दौड़-दौड़ कर घेरे रहते हैं और जिसकी सदा खोज की जाती है उसका दर्शन ही नहीं मिलता।

मैदान के दूसरे किनारे पर बैंड में प्रेम-सम्बन्धी एक गीत की गत बज रही थी। क्षण भर स्थिर होकर वीणा उसका सुर सुनती रही। अन्त में विरक्ति के भाव से अपने आँचल में गुथा हुआ गुलाब का फूल खोल कर वह उसे सूँघने लगी और मन-ही-मन कहा—साँझ हो गई, किन्तु अभी तक वह आया नहीं।

किरण के साथ वीणा की जब पहले-पहल मुलाकात हुई थी तब से वह सदा ही इसी तरह का उदासीन भाव रखता आया है, वह सदा ही बहुत संयत और गम्भीर रहा है। उसके स्वभाव में ओछापन या चञ्चलता कभी दिखाई नहीं पड़ी। शारीरिक शक्ति तथा अंगों की सुगठित सुन्दरता से उसका प्रायः छः फुट का लम्बा शरीर परिपूर्ण था। फुटबाल, हाकी, क्रिकेट, तथा पोलो आदि के खेलों और शिकार में उसका-जैसा निपुण युवक उस ज़िले में और कोई था ही नहीं। उसका हृदय बहुत ही कोमल था, दयालुता तथा स्नेह-ममता तो मानो उसके शरीर में कूट-कूट कर भरी थी। परन्तु यह सब होते हुए भी वह हृदय के असीम बल से बली था। छोटे बच्चों को वह बहुत प्यार करता। उनके साथ जब वह खेलने लगता तब स्वयं भी उन्हीं के समान बच्चा बन जाता। दो मील के भीतर आस-पास के जितने बच्चे थे, उन सबसे ही किरण की मित्रता थी। उन सबके जन्मदिन के अवसर पर किरण उनके लिए उपहार लिये फिरा करता। उसे जब कोई छोटा बच्चा मिल जाता तब वह अपना सारा काम-काज भूल जाता।

जिले भर के सभी लोग किरण को अच्छी तरह से पहचानते थे। अपनी उच्च शिक्षा, अतुलित ऐश्वर्य, संयमशील तथा सरल स्वभाव के कारण उसने सभी लोगों में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी।

महिलाओं में भी किरण की खासी प्रतिष्ठा थी। उनसे वह सदा ही नम्र तथा सुजनता-पूर्ण व्यवहार किया करता। तो भी उसके नाम की चर्चा में त्रुटि न हुआ करती। सौन्दर्य के प्रति अनासक्ति ही उसकी इस चर्चा का प्रधान कारण था। नवयुवतियों से वह अबाध रूप से मिला करता, वे लोग जिस बात के लिए आग्रह करतीं या विशेषरूप से अनुरोध करतीं उसे वह पूरी कर दिया करता, किन्तु आज तक किसी के प्रति उसका कोई पक्षपात नहीं देखने में आया।

वीणा जब यहाँ आई है तब पहले-पहल मुलाकात होने पर उसने सोचा था कि किरण की इतने दिनों की सारी अनासक्ति तथा गर्व मेरे सामने अवश्य ही चूर्ण हो जायगा। आज तक उसकी सुन्दरता तथा शक्ति की पराजय कहीं हुई नहीं थी, इसलिए वीणा की यही धारणा थी कि किसी के सामने मुझे कभी मस्तक ही न झुकाना पड़ेगा। परन्तु किरण के सामने यह बात बिलकुल उलटी हुई।

दिन पर दिन बीतते जाते थे, किन्तु किरण के व्यवहार में कोई विलक्षणता दिखाई न पड़ी। वीणा से वह खुल कर मिलता, उसके और भक्तों की तरह उसके रूप की प्रशंसा भी करता, उसके साथ गीत गाता और गपशप करता, परन्तु उसके हृदय में वीणा प्रवेश नहीं कर पाई।

किरण की परीक्षा करने के लिए तथा उसके हृदय में ईर्ष्या का भाव जाग्रत् करने के लिए वीणा ने उसके सामने ही कितने बार अन्य युवकों के प्रति अधिक घनिष्ठता प्रदर्शित की है, परन्तु किरण टस से मस नहीं हुआ। बल्कि जब कभी वह किसी

अपरिचित व्यक्ति को देखता तब उसके लिए स्थान रिक्त करके वह स्वयं ही वहाँ से खिसक जाया करता था।

किरण को अपनी ओर आकर्षित करने में वीणा जितनी ही असफल हो रही थी, उतना ही उसके हृदय में आग्रह भी बढ़ता जाता था। विशेषतः स्त्रियों का यह स्वभाव होता है कि और सब तो वे सहन कर सकती है, किन्तु अपने प्रति किसी की उदासीनता उन्हें सह्य नहीं होती। इससे उनका सङ्कल्प तथा बदला लेने की इच्छा और प्रबल हो उठती है। वे अपनी समस्त शक्ति लगा कर अहङ्कारी को नीचा दिखाने पर तुल जाती हैं।

किरण को परास्त करने की एकान्त इच्छा वीणा के हृदय में सदा ही जाग्रत् रहा करती थी। इतने में ही एकाएक अरुण के साथ वीणा का विवाह स्थिर हो गया और सबसे पहले किरण ने ही प्रसन्न मन से अपने मित्र को बधाई दी।

लीला के विलायत से लौट कर आते ही किरण के स्वभाव में आकाश-पाताल का अन्तर हो गया। उसकी सारी गम्भीरता, स्त्रियों की ओर से उदासीन भाव तथा उनके प्रति अनासक्ति आदि जहाँ की तहाँ चली गई, और उसमें इतना परिवर्तन हो गया, मानो वह पहले का किरण रह ही न गया।

दो-चार दिनों में ही अन्तरंग मित्र के समान वे दोनों एक दूसरे का नाम लेकर पुकारने लगे। सारा दिन और साँझ के समय भोजन का समय छोड़ और कभी वे दोनों एक दूसरे से पृथक नहीं होते थे। साथ-साथ वे दोनों घूमते, साथ-साथ खेलते, गीत गाते और हँसते-खेलते पड़े रहते।

लीला के साथ किरण की इतनी घनिष्ठता वीणा की आँखों में काँटे की तरह गड़ रही थी। केवल वीणा ही नहीं, बल्कि मण्डली भर की नवयुवतियाँ किरण का यह रुचि-परिवर्तन देखकर क्रोध और ईर्ष्या की अधिकता से जल रही थीं। लीला के ही सम्बन्ध

में वे चौबीस घंटे कानाफूसी किया करतीं और सोचतीं कि लीला में विशेषता किस बात की है।

अरुण के साथ विवाह का निश्चय भंग हो जाने पर वीणा किरण को फिर अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न कर रही थी, किन्तु किसी दिन अनुकूल समय में उससे मुलाकात न हो सकने के कारण उसकी झुँझलाहट तथा क्रोध की सीमा न रही। वह सोचने लगी कि लीला कितनी बेहया और निर्लज्ज है कि रात-दिन किरण को वह अपने ही अधिकार में किये रहती है, क्षण भर के लिए मैं उससे बात भी नहीं कर पाती हूँ।

वीणा को आशा थी कि शायद आज किरण से बातचीत करने का अवसर मिल जाय। लीला टेनिसकोर्ट में है, साँझ होने से पहले लौटेगी नहीं। इस बीच में किरण यदि आ जाता!

बड़ी देर तक मैदान में अकेले ही घूमते-घूमते ऊब कर वीणा निराश भाव से शामियाने की ओर फिर लौटी जा रही थी। उसका आज का दिन व्यर्थ में बीता। अतृप्ति के अवसाद से उसका हृदय परिपूर्ण हो रहा था। उसी समय फाटक पर किसी के मोटर का हार्न बज उठा। वीणा का अनुत्साहित हृदय फिर आनन्द और आशा से परिपूर्ण हो उठा। उसने जब देखा तब किरण मिसेज़ राय से बातचीत कर रहा था।

(१५)

किरण जब समीप आगया तब वीणा ने हँस कर उसकी अभ्यर्थना की और कहा—आज-कल तो आपके दर्शन ही नहीं होते। कहाँ थे इतने दिनों तक?

किरण उसकी बगलवाली कुर्सी पर बैठ गया। उसने कहा—मेरे घर पर एक अतिथि आये हैं। तुमने नहीं सुना है? वे बाहर कहीं घूम फिर तो सकते नहीं, इसी लिए आजकल मैं घर पर ही रहा करता हूँ।

वीणा ने दृष्टि उठाकर देखा, इन कुछ दिनों में ही किरण मानो कुछ उदास और दुबला हो गया था। उसके मुखमंडल पर न जाने कैसी क्लान्ति और विषाद की छाया थी।

अरुण के साथ रात-दिन घर के भीतर बंद रहते-रहते और उसकी सेवा-सुश्रूषा करते-करते किरण सचमुच क्लान्त हो गया है, यह सोच कर वीणा के हृदय को जरा-सा क्लेश हुआ, किन्तु उस समय इन सब बातों पर विचार करने का उसे अवकाश नहीं था। आज उसे बहुत से काम करने थे।

वीणा ने कहा—आपसे मुझे बहुत-सी बातें करनी हैं। किन्तु पहले मैं केवल इतना ही पूछना चाहती हूँ कि जब आपके साथ हमारे परिवार की इतनी घनिष्टता है और आपसे किसी तरह का पर्दा नहीं है तब आप मेरे साथ इतने शिष्टाचार के साथ क्यों बर्ताव करते हैं? हमारी-आपकी तो कल की जान-पहचान है नहीं।

किरण जरा-सा विस्मित होकर वीणा की ओर ताकने लगा। अन्त में उसने कहा—इतने दिनों के बाद आज अचानक ऐसी बात क्यों छेड़ दी मिस राय? इसमें क्या केवल मेरा ही अपराध है? आप भी तो मुझे सम्मान पदर्शित करके दूर ही रखती आई हैं!

वीणा का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—मुझे तो आपको सम्मान प्रदर्शित करना ही पड़ेगा। मैं भला बेअदबी कैसे कर सकती हूँ—कभी ऐसा हो सकता है! आप बहुत बड़े हैं न? आपके साथ उस तरह बातचीत करने में मुझे बड़ी लज्जा आती है। परन्तु आज से आपको मेरा नाम लेकर और तुम शब्द का प्रयोग करके ही बातचीत करनी होगी। बहुत दिनों से मैं यह बात कहने का विचार कर रही थी, किन्तु कभी ऐसा अवसर ही नहीं मिला।

उसके मुँह पर दृष्टि स्थिर रखकर किरण ने कहा—मैं तो ऐसा करने को अभी ही तैयार हूँ, किन्तु मेरी एक शर्त है।

वीणा ने मस्तक उठाया। किन्तु किरण की दृष्टि में दृष्टि

मिलते ही वह फिर नीचे की ओर ताकने लगी। उसने कहा—शर्त कौन-सी है?

"यही कि तुम भी मुझे किरण कह कर ही बुलाना और बातचीत में तुम शब्द का प्रयोग करना। केवल यही मेरी शर्त है। जानती तो हो कि मैं कैसा दृढ़-निश्चयी हूँ, एक बार जो कह देता हूँ, वही करता हूँ।

जो किरण सदा ही गम्भीर भाव धारण किये रहता था, आज उसे इस प्रकार सरल भाव से बातचीत करते और हँसते देखकर वीणा को मन ही मन बड़ा भरोसा हुआ। शायद इस बार उसका प्रयत्न सफल हो सकेगा। उसने कहा—ख़ैर, और जो भी हो, आज का :स तरह आपका —नहीं—तुम्हारा इस तरह छिपा रहना बड़ा बुरा हुआ। तुम्हारे न रहने से सारा उत्सव ही मिट्टी में मिल जाता है।

"मेरे न रहने से? यह तो सुनकर ही मुझे सुख मिल रहा है। किन्तु मेरे ही कारण जब तुम्हारा मनोरञ्जन नष्ट हो जाता है तब उन लोगों की क्या दशा होगी?" यह कहकर किरण उनकी ओर, जो मुग्ध भाव से वीणा की उपासना में तत्पर थे, उंगली उठाकर हँसने लगा।

वीणा ने ताने के साथ कहा—रहने भी दो। उनका क्या होगा और क्या न होगा, इसे मैं क्या जानूँ?

"हाय, बेचारे कितने दीवाने हैं। मेरी धारणा है कि तुम्हें उनकी दशा भली न होगी। यह जो नया सिविलियन है, शायद उसका नाम मिस्टर दत्त है। हाँ, मिस्टर दत्त ही उसका नाम है। वह तो तुम्हारे ऊपर इतना मुग्ध है कि तुम ब्रिज खेलना नहीं पसन्द करती हो, इससे उसने भी बन्द कर दिया है।"

"झूठी बात है! वह रोज ही लीला के साथ खेलता है।"

किरण ने हँस कर कहा—और चौधरी? देखो न बेचारे का शरीर कितना खराब है, परन्तु फिर भी छुट्टी लेकर वह देश नहीं जाता। यह किसके लिए? और यह बैरिस्टर? इसका तो यह हाल है कि उस दिन तुम्हें चौधरी से हँस-हँस कर बातें करते देखकर इतना व्याकुल हुआ कि जरा सँभल न जाता तो पोलो के खेल में ही उसका खातमा हो जाता।

लज्जा और विरक्ति के मारे वीणा लाल हो उठी। उसने कहा—बस, हो चुका। यह सब व्यर्थ की बकवाद करने में लाभ क्या है? वे लोग यदि नासमझी या पागलपन का काम करते हैं तो इसमें मेरा क्या दोष है? मैं उनसे घृणा करती हूँ।

"क्या यह ठीक है? मुझे तो मालूम है कि कुछ दिन पहले कम से कम एक आदमी से तुम घृणा नहीं करती थीं।"

वीणा ने मस्तक नीचा कर लिया। उसे यह मालूम था कि मैंने जो अरुण के साथ विवाह करने का प्रस्ताव भंग कर दिया है, उसके लिए लोग तरह-तरह की बातें कर रहे हैं। इस सम्बन्ध में किरण के भी विचार जानने का उसके हृदय में आग्रह उत्पन्न हुआ। वह कहने लगी—जिसके सम्बन्ध में तुम यह बात कह रहे हो, उसे मैंने अनुमान से जान लिया है। इस सम्बन्ध में मुझे भी बहुत-सी बातें कहनी हैं। आओ, ज़रा उठकर टहलें।

टहलते-टहलते वे दोनों ही टेनिसकोर्ट के पास आकर खड़े हुए। वहाँ से कुछ दूरी पर बैंड बज रहा था।

वीणा ने गम्भीर होकर कहा—शायद तुमने सुना होगा, अरुण ने मुझे एक चिट्ठी लिखी थी। उसमें उन्होंने अपनी अवस्था का विवरण लिखा था और मुझसे विवाह का प्रस्ताव भंग कर देने का अनुरोध किया था। तुम्हें तो यह मालूम ही है कि हमारे-उनके बीच में इस विषय की बातचीत अभी केवल तीन मास से चल रही थी। फिर भी यदि वे ऐसा प्रस्ताव न करते तो मैं स्वयं उन्हें

कभी नहीं त्याग सकती थी। किन्तु उनका हृदय बहुत उच्च है। उन्होंने स्वयं यह प्रस्ताव मेरे पास भेज दिया, मेरे ऊपर इतना बड़ा अन्याय वे नहीं कर सके। मा ने भी ऐसा करने में ही कल्याण समझा। क्योंकि इन बातों में मैं बड़ी दुर्बल हूँ। उनके नेत्रों के दृष्टिहीन हो जाने का समाचार पाकर मुझे इतनी चिन्ता हुई थी कि उसके मारे मैं पागल हुई जा रही थी। उस समय मेरी तो सुध-बुध एकदम से ही लुप्त हो गई थी।

कोर्ट से लीला का कण्ठ-स्वर सुनाई पड़ा। उसके साथियों का ऊँचे गले का कोलाहल और परिहास तथा लीला की मधुर हँसी का स्वर कान में पड़ते ही किरण की खोई हुई स्मृति फिर जाग पड़ी; कान उठाकर वह उसी ओर ताकने लगा। वीणा जो कुछ कह रही थी वह उसके कानों तक नहीं पहुँचा।

हाथ में 'बैट' लिये हुए लीला उस समय लौटने का उद्योग कर रही थी। खेल समाप्त हो चुका था। किरण मुग्ध और अतृप्त नेत्रों से उसके पसीने से भीगे हुए और पाउडर से रँगे हुए मुँह की ओर ताकता रहा। उसकी दृष्टि में इतनी पिपासा और बुभुक्षा लक्षित हो रही थी, मानों वर्षों से उसने उसे न तो देखा है और न उसकी बातें सुनी हैं।

लौटते समय लीला की दृष्टि किरण पर पड़ी। आनन्द के मारे उसका मुखमंडल उसी समय विकसित हो उठा। उन दोनों में परस्पर जो मनमुटाव और एक दूसरे का साथ छोड़ देने की बात हुई थी उसे भुला कर पहले की ही तरह घनिष्ट भाव से वह चिल्ला उठी—किरण कब आये तुम? यह बात समाप्त होते ी लीला किरण की ओर दौड़ी जा रही थी; किन्तु किरण उसी समय गम्भीर हो गया।

मुँह से कोई बात न कहकर किरण ने मस्तक पर से टोपी उतार ली और जरा-सा हँस कर उसी समय वीणा के साथ बगीचे की ओर चला गया।

लीला और किरण का यह भाव वीणा की दृष्टि से छिपा न रहा। इस घटना से उसे विश्वास हो गया कि आज मैं निश्चितरूप से किरण को पा गई हूँ। इससे उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा।

पहले की बातचीत का सिलसिला छेड़ कर किरण ने कहा—तो क्या अरुण को तुमने सचमुच त्याग दिया है? इस सम्बन्ध में मुझे कुछ कहना नहीं है। मैं यों ही पूछ रहा हूँ।

चलते-चलते वीणा ठहर गई। किरण के मुखमंडल पर उसने अपनी काली-काली आँखें गड़ा दीं, और कहने लगी—तुम्हें इस सम्बन्ध में सब कुछ कहने का अधिकार है। क्या तुम उनके विश्वास-पात्र मित्र नहीं हो? इस सम्बन्ध को भंग कर देने के लिए मैंने उन्हें पत्र लिख दिया है। अतएव हमारा-उनका सारा सम्बन्ध टूट चुका है। किन्तु किरण, तुम केवल अरुण के ही मित्र नहीं हो, बल्कि हमारे परिवार से भी तुम्हारी विशेषरूप से घनिष्टता है। तुम सच-सच बताओ, क्या इस विषय में मैंने कुछ अन्याय किया है?

किरण तत्काल ही कोई उत्तर न दे सका। वह चुपचाप सोचने लगा। लीला ने अरुण के साथ जो व्यवहार करना आरम्भ किया था उससे घृणा और क्रोध के मारे किरण का अन्तस्तल जला जा रहा था। वह सोच रहा था, इस समय वीणा यदि अपना मत बदल दे तो सब काम बन सकता है। अन्यथा अन्त में चल कर जो उपद्रव खड़ा होगा, उसकी कल्पना करने की भी शक्ति और साहस मुझमें नहीं है। आज वीणा के साथ वाद-विवाद करके उसका मत परिवर्तित करने के ही विचार से किरण आया भी था। किन्तु वीणा जब उसी से पूछ बैठी तब वह एकाएक कोई उत्तर न दे सका।

किरण को नीरव देखकर वीणा फिर कहने लगी—मैं जानती हूँ कि लोग इसके लिए मेरी भरपेट निन्दा कर रहे हैं। परन्तु

इसमें मेरा अपराध क्या है? मैंने सीधे तौर से अपनी असमर्थता स्वीकार करके उसे सच्ची बात सूचित की है, यही न? मनुष्य के मन पर तो किसी का जोर चलता नहीं। मेरा मन इस अवस्था में उन्हें स्वामी के रूप में नहीं स्वीकार कर सका। तब केवल लोक-लज्जा के कारण उसकी अस्वीकृति को दबाकर यदि उनके साथ विवाह कर लेती तो परिणाम यह होता कि हम दोनों का ही जीवन नष्ट हो जाता। क्या इसी में भलाई थी?

इस बार किरण ने उसकी बात का उत्तर दिया। उसका न्यायनिष्ठ तथा कर्तव्यपरायण चित्त स्वार्थ के लिए कोई न्याय-विरुद्ध बात नहीं कह सका। उसने कहा—यदि कोई व्यक्ति इसके लिए तुम्हें दोषी ठहरावे तो यह उसकी भूल है। मैं तो कभी नहीं कह सकता कि यह विवाह भंग करके तुमने अन्याय किया है। विवाह का प्रश्न अपना निज का प्रश्न है। इस पर कभी और किसी का जोर नहीं चल सकता।

वीणा का मुँह उज्ज्वल हो उठा। वह कहने लगी—मेरा यह विश्वास है कि जीवन भर के लिए ऐसी भूल करने की सलाह तुम मुझे कभी नहीं दे सकते। इसके अतिरिक्त एक बात और है। अभी थोड़े दिनों से मुझे यह अनुभव हुआ है कि मैंने यह सम्बन्ध स्थिर करने में भूल की थी।

"क्या ऐसी भी बात है?" किरण ने जरा-सा चकित भाव से वीणा के मुँह की ओर ताका।

वीणा ने मस्तक नीचा कर लिया। वह कहने लगी—मैं सच कह रही हूँ, इसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है। हमारा यह सम्बन्ध बहुत जल्दी में स्थिर हो गया था। उस समय मैं अपना विचार अच्छी तरह से पक्का नहीं कर सकी थी। अब मैंने समझा है कि अरुण को इस प्रकार मैं कभी नहीं प्यार कर सकती थी।

किरण ने कहा—तब तो यही कहना चाहिए कि इस सम्बन्ध

का भंग करना सभी दृष्टियों से अच्छा हुआ। इतनी बड़ी बात को दाब न रखकर उसका एक फ़ैसला कर दिया है, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है।

किरण मुँह से तो यह बात कह गया, किन्तु उसका हृदय बहुत निराश हुआ। उसने समझ लिया कि मेरे लिए अब कोई आशा नहीं है। अरुण के हाथ से लीला को निकाल लेने का अब दूसरा कोई उपाय नहीं रह गया है।

बातचीत करते-करते वे दोनों बड़े शामियाने के समीप आ पहुँचे। बिजली के उज्ज्वल और ज्योतिष्मान प्रकाश से चारों दिशायें देदीप्यमान थीं। भीतर से पियानो का मधुर शब्द आकर वहाँ की निस्तब्धता को भंग कर रहा था।

वीणा ने कहा—तुम्हारे साथ इस सम्बन्ध में बातचीत हो गई, यह अच्छा ही हुआ। इतने दिनों तक यह बात मेरे हृदय पर एक भार-सी जमी थी। तुम्हारी बात सोच कर मुझे इतना भय मालूम पड़ता था कि मुँह से उसका वर्णन करना सम्भव नहीं है।

किरण वीणा की बात का ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझ सका। ज़रा-सा आश्चर्य में आकर उसने कहा—मेरी बात सोच कर भय हो रहा था? इसका मतलब? मैं तो तुम्हारी इस बात का ठीक ठीक अर्थ नहीं समझ पाता हूँ।

"अर्थात्—मैंने सोचा था कि तुम—तुम।" वीणा की ज़बान बन्द हो गई। बहुत ही कुंठित और लज्जित भाव से उसने अपना मस्तक नीचा कर लिया। बाद को ज़रा देर में उसे फिर साहस आ गया। उसने कहा—मैं समझती थी कि शायद तुम भी इस काम के लिए मुझे नीची निगाह से देखोगे। जैसा कि और लोग कह रहे हैं, वैसा ही तुम भी कहोगे, यही सोच कर मुझे बड़ा भय मालूम हो रहा था।

विषाद के भाव से किरण हँसा। एक गम्भीर और लम्बी

साँस उनके अन्तस्तल से उठी और फिर उसी में मिल गई।
उसके मतामत से उसे क्या पड़ी है? वही लीला तो है जिसने उस दिन उसका सारा अनुरोध, सारे युक्ति-तर्क, उड़ा कर उसके साथ कैसा व्यवहार किया था?

किरण ने कहा—यह सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है कि इस बात को सोच-सोच कर तुमने बड़े कष्ट का अनुभव किया है। मेरा तो विश्वास था कि मेरी धारणा या मतामत पर कोई ध्यान नहीं देता। इस तुच्छ बात के लिए तुमने इतना कष्ट क्यों उठाया है वीणा? यह बात समाप्त करके किरण कुछ विशेष ध्यान से वीणा की ओर ताकने लगा।

वीणा तम्ब के सामने उज्ज्वल प्रकाश में खड़ी थी। किरण के इस प्रकार ताकने तथा कोमल वार्तालाप से उसने मन ही मन सुख का अनुभव तो किया, किन्तु साथ ही लज्जा के मा॰ सिन्दूर के समान उसका शरीर लाल हो गया। शायद इतने दिन के बाद उसका प्रयत्न सफल हुआ है! आज सचमुच उसे बड़ी लज्जा मालूम पड़ रही थी, परन्तु फिर भी अपने मनोभावों को किसी तरह दबा कर उसने मस्तक ऊँचा किया। क्योंकि आज ही उसे अपना विचार प्रकट कर देना था। समय और अवसर सदा तो आता नहीं!

"मैं यदि यह कहूँ कि मेरी दृष्टि में तुम्हारी धारणा या मतामत अमूल्य है, तो क्या तुम इसमें बड़ा आश्चर्य मानोगे?" यह बात समाप्त होते ही उसने फिर अपना मुँह फेर लिया और बिजली की एक बत्ती की ओर ताकने लगी।

किरण कुछ क्षण तक मुग्ध दृष्टि से उसकी ओर ताकता रहा। सौन्दर्य की अधीनता संसार में सभी को स्वीकार करनी पड़ती है, विशेषतः यदि सौन्दर्य की प्रतिमा स्वयं किसी पुरुष के प्रति अपना अनुराग प्रदर्शित करे तब तो उस समय अपने मन को ठिकाने पर रखना पुरुष की शक्ति से परे है। वीणा की बातों का मर्म समझने

में किरण को बिलम्ब नहीं हुआ। आज वह अरुण के सम्बन्ध में बीणा का मनोभाव जानने के लिए आया था। उसके बदले में उसे जो कुछ आभास मिला उसकी उसने कभी कल्पना नहीं की थी। एकाएक यह बात सुन कर कुछ देर के लिए वह हक्का-बक्का हो गया।

यह बात एकाएक कह डालने के कारण बीणा के भी मुख-मंडल पर कुंठा और लज्जा का भाव झलकने लगा। खड़ी होकर वह मन ही मन पश्चात्ताप करने लगी। और सबके साथ तो वह निःसंकोच भाव से इस तरह की बातचीत कर भी सकती है, किन्तु किरण के सामने ऐसी बात मुँह से निकालना कितना लज्जाजनक है। पहले यह बात वह समझ नहीं सकी।

सन्ध्या की ठंडी हवा बीणा के खुले हुए बालों को उड़ाकर झरझराती हुई बह गई। अँधेरे आकाश पर दो-एक तारे भी उदित होकर उसकी ओर एक दृष्टि से ताकने लगे।

एकाएक चकित भाव से अपने को सँभाल कर किरण ने बीणा की ओर देखा। उसकी बात के उत्तर में उसने बहुत ही स्वाभाविक और कोमल स्वर से इतना भर कहा—यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई बीणा कि संसार में एक ऐसा भी व्यक्ति है जो मेरी तुच्छ धारणा का कुछ मूल्य समझता है। तुम इन सब बातों की चिन्ता न करो। मैंने तो पहले ही कह दिया है कि इस विषय में दूसरे लोगों के मतामत का विचार न करना चाहिए, यह केवल अपने हृदय में अनुभव करने की बात है।

उन दोनों ने ही जलपान के लिए तम्बू में प्रवेश किया।

( १६ )

मिस्टर घोष अपने घर के सामने बरामदे में अकेले बैठे थे। साँझ प्रायः हो चली थी। उसका मौन अन्धकार उस समय धीरे

धीरे अपनी छाया का चारों ओर विस्तार कर रहा था। मिस्टर घोष शून्य हृदय से अपने अतीत जीवन की बहुत पुरानी कथा पर विचार कर रहे थे। उनके जीवन की जो छोटी-बड़ी घटनायें धुँधली होकर उनके स्मृति-पट पर से उड़ गई थीं, आज वे एक विशेष घटना के कारण उज्ज्वल होकर जागृत हो उठीं।

पिता की मृत्यु होने पर मिस्टर घोष को जिस समय इतनी बड़ी जमींदारी का उत्तराधिकार मिला, उस समय उनकी अवस्था बहुत थोड़ी थी। उस समय उनके हृदय में इतना बल नहीं था कि वे अपने दुर्बुद्धि और कुचक्री कर्मचारियों के प्रभाव से बच कर चलें। उनका सुकुमार और चंचल मस्तिष्क सदा आमोद-प्रमोद की चिन्ता से ही व्यस्त रहता, राजकाज की ओर विशेषरूप से दत्तचित्त होने की कभी प्रवृत्ति न होती। परिणाम यह होता कि सारी जमींदारी में स्वार्थपरायण तथा अर्थलोलुप कर्मचारियों का ही बोलबाला था और अपने स्वामी के नाम पर वे लोग प्रजा पर स्वेच्छाचार करते और जोंक की तरह रात-दिन उन सबका रक्त चूसते रहते। अपनी नीति-कुशलता के कारण उन कर्मचारियों ने ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा था कि प्रजा की कोई भी शिकायत मिस्टर घोष के कानों तक न पहुंच पाती। यदि कोई बात मिस्टर घोष सुन भी लेते तो वे लोग ऐसी बुद्धिमानी के साथ उन्हें समझाते कि वे एकदम पानी हो जाते और उनकी चाल किसी तरह समझ न पाते। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके अधिकारारूढ़ होने के थोड़े दिन बाद ही जमींदारी भर में हाहाकार मच गया।

मिस्टर घोष के अन्तःपुर से मिला हुआ एक बगीचा था। उसके बीच में एक पक्का चबूतरा था, जिसके सामने स्वच्छ जल से भरा हुआ एक छोटा-सा तालाब था। जमींदारी का अधिकार प्राप्त करने के प्रायः दो वर्ष बाद मिस्टर घोष एक दिन साँझ को उसी चबूतरे पर अकेले बैठे थे। तालाब के अगल-बगल ताड़ और नारियल के

जो वृक्ष लगे थे उनकी छाया को वक्ष-स्थल पर धारण करके तालाब का जल मन्द वायु के आवेग से काँप रहा था। चबूतरे के दोनों बगल चम्पा के दो फूले हुए वृक्ष थे। उनके फूलों की तीव्र और मधुर सुगन्धि से वहाँ की हवा अत्यधिक सुरभित होकर मादकता का प्रसार कर रही थी।

साँझ का अँधेरा जब अधिक घना हो चला तब एकाएक एक दीर्घाकार पुरुष आस-पास के वृक्षों की डालियों की आड़ से चुप-चाप निकला और मिस्टर घोष के सामने आकर खड़ा होगया। अपने सामने एकाएक ऐसी घटना देखकर मिस्टर घोष चकित हो गये। उस समय उनके पास कोई नौकर था नहीं। उन्होंने कहा—तुम कौन हो? अन्तःपुर के बाग़ में प्रवेश करने का साहस तुम्हें कैसे हुआ?

आगन्तुक ने उत्तर दिया—हुजूर, घबराने की कोई बात नहीं है। यहाँ मैं किसी बुरे अभिप्राय से नहीं आया हूँ। हुज़ूर के अधिकार में मंडलगढ़ नाम का जो परगना है, वहीं मेरा निवास है और मेरा नाम है रामगोविन्द दत्त। मैं दुखी प्रजा की ओर से दो बातें निवेदन करने के लिए यहाँ आया हूँ। अनेक प्रयत्न करने पर भी आपसे अकेले में मिलने का अवसर मैं नहीं प्राप्त कर सका, इसलिए विवश होकर मुझे ऐसे उपाय का अवलम्बन करना पड़ा है।

मिस्टर घोष के जीवन में वह दिन विशेष रूप से स्मरणीय था। उसके बाद से ही मंडलगढ़ के परगने के सम्बन्ध में कितना विरोध, कितना मामला-मुक़द्दमा और कितना झगड़ा-झंझट करना पड़ा और अन्त में जाकर वह कलंक की कालिमा पुत गई जिसका धोना जीवन में सम्भव नहीं रह गया। क्षण भर के मोह के कारण उन्होंने ऐसी बेढब भूल कर डाली, जिसके कारण उनका सारा जीवन एकदम चौपट हो गया।

मिस्टर घोष यही सोच रहे थे कि पाप का बीज यदि एक बार बो दिया गया तो लाख प्रयत्न करने पर भी फिर वह निर्मूल नहीं किया जा सकता। समय पाकर वह पनपकर फूले-फलेगा ही। उसके फल को रोकना शायद मानव शक्ति से परे है। अन्यथा पचीस वर्ष पहले एक दिन की दुर्बलता के कारण उन्होंने जो अन्याय किया था और जिसके सम्बन्ध की बातें इतने दिनों में लोगों के चित्त से उतर गई हैं वही इतने दिनों के बाद एक नवीन रूप धारण करके उनके सन्मुख क्यों आ पड़ती ?

अँधेरे आकाश में केवल एक तारा उदित होकर मिस्टर घोष के मस्तक पर चमचमा रहा था। उस तारे पर ही अपनी दृष्टि स्थिर करके मिस्टर घोष ने अपने मन में अस्पष्ट रूप से कहा—ओह, ठीक उसी की तरह का लम्बा और गठीला इसका भी शरीर है ! चेहरा भी वैसा ही धीर और दृढ़ताव्यंजक है। साथ ही उसी की-जैसी अग्निमय और मर्मभेदी दृष्टि है ! रूप-रेखा में वह अपने बाप के सर्वथा समान है। मैं मूर्ख हूँ, बिलकुल अन्धा हूँ। इसी लिए उसे देखने पर भी मेरे हृदय में किसी प्रकार के सन्देह का उदय नहीं हुआ। ये सब बातें मैं बिलकुल भूल गया था।

मिस्टर घोष का परिचय पाते ही असित की आँखों में जो भयंकर अग्नि-शिखा प्रज्वलित हो उठी थी उसकी याद आते ही वे एकाएक काँप उठे।

उस बहुत दिन पहले के किये हुए पाप का प्रायश्चित्त करने का समय अब आ गया। उन्होंने जो कर्म किये हैं उनका फल भोगना तो अनिवार्य है। किन्तु हाय ! निर्मला ? वह तो उन्हें छोड़ कर और कुछ जानती ही नहीं ! उसके लिए क्या उपाय किया जायगा ?

उसी समय अन्धकारमय बरामदे में मनुष्य की एक अस्पष्ट मूर्ति धीरे-धीरे अग्रसर हो रही थी। मिस्टर घोष की दृष्टि जैसे ही उसके ऊपर पड़ी, एकाएक कुर्सी पर से वे उछल पड़े और चिल्ला

कर कहने लगे—कौन ? कौन यहाँ आया है ? तलवार, तलवार ! चपरासी !

"बाबू ! बाबू ! यह तो मैं हूँ। तुम एकाएक इतने भयभीत क्यों हो रहे हो बाबू ? मेरे अतिरिक्त यहाँ और कौन आ सकता है ?" यह कह कर निर्मला दौड़ती हुई आई और पिता से लिपट गई।

"ओह, तू है ? निर्मला, तू ? आह, अच्छा हुआ। अँधेरे में पहचान नहीं पाया। सचमुच मैं बहुत चौकन्ना और भयभीत हो उठा था।" यह बात कहते-कहते मिस्टर घोष बहुत ही शान्त भाव से कुर्सी पर फिर बैठ गये। उनकी साँस बड़ी तेजी के साथ चल रही थी। संशय और विस्मय से स्तब्ध होकर निर्मला चुपचाप पिता के शरीर पर हाथ फेर कर उन्हें शान्त करने का प्रयत्न करने लगी।

इसके बाद से धीरे-धीरे मिस्टर घोष के जीवन में घोर अशान्ति और उद्वेग की छाया घनी होती गई। वे प्रायः मन मारे बैठे रहते, निर्मला अनेक प्रयत्न करके भी उन्हें पहले की तरह सुखी नहीं कर पाती थी, इस कारण भय और उद्वेग के मारे वह स्वयं भी धीरे-धीरे सूखती जा रही थी। इधर वह इस अशान्ति का कोई कारण भी नहीं जान पाती थी।

निर्मला इतना भर परख पाई थी कि आज-कल मिस्टर घोष बहुत जरा-सी बात से भी चौंक उठते हैं। साँझ होने पर स्वयं सारे दरवाजों और खिड़कियों को खूब अच्छी तरह से देखना और तिवारी को बहुत सावधान रहने के लिए ताकीद करना उनके नित्यकर्म में सम्मिलित हो गया था। उनके ऊपर रात-दिन न जाने किसका आतंक बना रहता। उनके इस परिवर्तन की ओर और तो किसी का ध्यान नहीं गया, किन्तु निर्मला की दृष्टि से यह नहीं बच सका। किन्तु इस भय का क्या कारण है ? वे इतने उद्विग्न क्यों रहते हैं ? इतने दिन तक तो इस अशान्ति का कोई लक्षण

दिखाई नहीं पड़ रहा था? क्या वे किसी अज्ञात शत्रु के भय से उद्विग्न रहा करते हैं? इतने दिन के बाद ऐसा शत्रु ही कहाँ से आ पहुँचा? निर्मला इसी उधेड़-बुन में पड़ी रहती, वह कुछ स्थिर नहीं कर पाती थी। तब वह सोचती कि शायद इनके मस्तिष्क में कुछ विकार उत्पन्न हो गया है। कहीं कुछ दिन के बाद इन्हें उन्माद न हो जाय?

सवेरे प्याले से चाय उड़ेलते-उड़ेलते निर्मला ने कहा—बाबू, आज मैं तुम्हारी एक भी बात न मानूँगी। अभी तिवारी को भेज कर अनिल बाबू को बुलाती हूँ। तुम्हारा शरीर इतना खराब हो गया किन्तु तुम्हें इसकी कोई खबर तक नहीं है।

'डाक्टर आकर क्या करेगा निर्मला? मेरे शरीर में कोई रोग तो हुआ नहीं है। मैं तो अच्छा हूँ बेटी।"

"अच्छे कहाँ हो? इधर थोड़े दिनों से तुम्हारा शरीर न जाने कैसे सूखता जा रहा है। जरा आइने के सामने खड़े होकर देखो तो! सदा तुम न जाने क्या सोचते रहते हो और रह-रहकर चौंक पड़ते हो। पूछने पर कहते हो कि मै अच्छा हूँ। उस दिन भी रात को सोते-सोते कल की ही तरह चिल्ला उठे थे। नींद टूटने पर दौड़ कर मैंने देखा तो स्वप्न में तुम न जाने क्या-क्या बक रहे थे।"

"स्वप्न में मैं बक रहा था? कब? मुझे तो कुछ याद नहीं है निर्मला! मैं क्या बक रहा था? जरा बताओ तो?" उत्कंठित होकर मिस्टर घोष ने पूछा।

निर्मला ने उत्तर दिया—यह तो मैं ठीक-ठीक नहीं बता सकती कि तुम क्या बक रहे थे। थोड़ी देर तक अस्पष्ट भाषा में न जाने क्या अट्टसट्ट बड़बड़ाते रहे हो और फिर तुरन्त ही करवट बदल कर सो गये हो। थोड़ी देर तक मैं वहीं खड़ी-खड़ी यह सब कुछ देखती रही। अन्त में वहाँ से चली आई। पहले तो तुम्हें कभी ऐसा होता

नहीं था। हो न हो, यह सब रोग का पूर्व लक्षण है। इसके लिए तुम्हें अभी से सावधान हो जाना चाहिए, परन्तु तुम तो ऐसी कोई बात सुनोगे नहीं!

अपना चित्त जरा-सा आश्वस्त करके मिस्टर घोष ने कहा—ओह, यह तो कोई ऐसी बात नहीं है। कोई स्वप्न देखता रहा होऊँगा। परन्तु निर्मला, सचमुच आजकल मेरा जी कम अच्छा रहता है। जरा-सी ही बात में मेरा चित्त न जाने कैसे घबरा उठता है और दिमाग़ में तरह-तरह की चिन्तायें उदित होती रहती हैं। इसी से तुम समझती हो कि मेरा शरीर अच्छा नहीं है। परन्तु यह कोई ऐसी बात नहीं है। तुमने अलबत्ता आजकल मेरे पास आना प्राय: बन्द ही-सा कर दिया है। मुझे अकेला छोड़ कर अकेले ही अकेले घूमती रहती हो। इससे और भी मुझे अच्छा नहीं लगता।

निर्मल के भावुक हृदय पर इस बात से कुछ चोट पहुँची। उसने क्षुब्ध स्वर से कहा—ठीक है, अब तो तुम ऐसा कहोगे ही? मैं घड़ी-घड़ी आ आकर खड़ी होती हूँ और कुछ देर तक प्रतीक्षा करके लौट जाती हूँ। तुम बैठे-बैठे जो भी सोचते रहते हो वह केवल तुम्हीं जानते हो, किन्तु मुझे कभी अपने पास बुलाते नहीं। कल भी मैं बड़ी देर तक बरामदे में खड़ी रही। मैंने सोचा था कि तुम देखोगे तो स्वयं पुकारोगे। अन्त में जब देखा कि तुम्हारा ध्यान इधर नहीं आ रहा है, तब जरा आगे पैर बढ़ाया, किन्तु इतने मे ही तुम चिल्ला पड़े। आजकल तुम्हें मेरी कोई परवा नहीं रहती। ऐसा कहकर नेत्रों का जल छिपाने के लिए निर्मला ने अपना मुँह फेर लिया।

मिस्टर घोष बड़ी उतावली के साथ उठे और निर्मला का मस्तक खींच कर अपनी गोद में ले लिया। उसे ढाढ़स देते हुए वे कहने लगे—तुम रोती हो? यह कैसा पागलपन है? तुम्हारी

परवा न करूँगा तो संसार में मेरे और कौन बैठा है जिसकी परवा करूँगा? यह सब जान कर भी तुम इतना अभिमान कर रही हो? दो-तीन दिन मेरा चित्त जरा उद्विग्न था, इसी से तुम्हारी ओर ध्यान नहीं दे सका। नहीं तो तुम्हें छोड़ कर मेरे और कौन है बेटी? मिस्टर घोष यह सब कहते जाते थे, किन्तु उनके कन्धे पर मस्तक रखकर निर्मला रो रही थी।

ज़रा देर तक रो चुकने पर निर्मला जब शान्त हुई तब उसे प्रसन्न करने के लिए मिस्टर घोष ने कहा—नये बग़ीचे में जो पार्टी होनेवाली थी, उसके लिए तुमने क्या प्रबन्ध किया निर्मला? तुम्हारा हाथ तो अब बिलकुल अच्छा हो गया है। अब व्यर्थ में देरी करने से क्या लाभ होगा? अब उसके लिए कोई न कोई प्रबन्ध कर ही लेना चाहिए। ठीक है न?

आज इस प्रस्ताव पर निर्मला कोई विशेष उत्साह न प्रकट कर सकी। उसने उदासीन भाव से कहा—नहीं बाबू, अब इस सब झंझट की कोई आवश्यकता नहीं है। इससे तो यह अधिक अच्छा होगा कि कहीं चल कर हम लोग कुछ दिन तक घूम आवें। इससे तुम्हारा शरीर भी अच्छा हो जायगा और तबीअत भी बहाल रहेगी। यहाँ पड़े-पड़े तो तुमने बहुत दिन काट दिए।

मिस्टर घोष ने भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। उन्होंने कहा—अच्छी बात है, चलो थोड़े दिन तक कहीं घूम-फिर आवें। इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु इसके लिए तुम अपने मित्रों को पार्टी के आनन्द से क्यों वंचित करोगी? तुम्हारे प्रति जब उन लोगों का इतना आग्रह है तब एक दिन सबको बुला कर धूम-धाम के साथ मनोरंजन कर लो। तब कहीं जाने के सम्बन्ध में विचार किया जायगा। ठीक है न?

इस प्रस्ताव पर इतनी आसानी से मिस्टर घोष के सहमत हो जाने पर निर्मला के हृदय का भार बहुत कुछ हल्का हो गया।

उसने कहा—अच्छी बात है। आज दोपहर को बैठकर मैं एक लिस्ट बना डालूँगी कि किसको-किसको निमन्त्रण देना है। लिस्ट जब मैं दे दूँ तब तुम सारी व्यवस्था कर लेना। यही ठीक होगा। असित बाबू वगैरह तो कभी आये ही नहीं। क्या तुमने उस दिन यह मालूम कर लिया था कि उस मकान के अतिरिक्त और कहाँ उनसे मुलाकात हो सकती है? अन्यथा उन्हें कैसे इस पार्टी की सूचना दी जा सकेगी?

जिस स्थान पर वेदना हो रही थी, निर्मला ने बिना जाने वहीं पर आघात भी किया। असित का नाम सुनते ही मिस्टर घोष के मुँह पर झाईं पड़ गई। वे सोचने लगे कि निर्मला अभी तक उन लोगों को भूल नहीं सकी। केवल दो घंटे के लिए जिसके साथ मुलाकात हुई है, उसकी स्मृति महीने भर तक उसके हृदय में क्यों जाग्रत है? उनका ध्यान इस ओर भी गया था कि निर्मला विशेष रूप से परेश का नाम नहीं लेती, वह असित का समाचार जानने के ही लिए सदा उत्सुक रहा करती है।

उन्होंने कहा—शायद वे लोग हम लोगों के बीच में सम्मिलित होने के लिए तैयार नहीं हैं निर्मला! यहाँ आने के लिए उन लोगों से कितना कह आये हैं, यह तो तुम जानती ही हो? परन्तु फिर भी वे आये नहीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने हम लोगों की कोई खोज-खबर भी नहीं ली। ऐसी अवस्था में उनके पास जाकर नवीन रूप से मिन्नत करना मुझे उचित नहीं मालूम पड़ता। ठीक है न?

मिस्टर घोष के इस उत्तर से निर्मला का हृदय सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने ज़रा-सा सोच कर कहा—मुझे तो यह बात सच नहीं मालूम पड़ती बाबू! परन्तु इतने दिनों तक जो आये नहीं, उसका कोई और कारण होगा। वह जब तक मालूम न हो जाय तब तक इस बात का विश्वास कैसे किया जाय! इसके अतिरिक्त गार्डेन पार्टी में उन्हें एक बार निमन्त्रण देकर भी देख लेना चाहिए,

विशेषत: ऐसी अवस्था में जब कि उस दिन तुमने स्वयं यह बात उन लोगों से कही थी। उन लोगों से हमारी जान-पहचान हुई, उस दिन उनके द्वारा हमारा इतना उपकार हुआ, अब उन्हें निमन्त्रण न देना क्या अच्छा मालूम पड़ेगा?

अच्छा नहीं मालूम पड़ेगा, यह तो मिस्टर घोष स्वयं खूब अच्छी तरह जानते थे, किन्तु इसके अतिरिक्त उन्हें जो और बातें मालूम थीं वे निर्मला को बताई नहीं जा सकती थीं। इसलिए वे इसी उधेड़-बुन में पड़े थे कि निर्मला को किस तरह टाला जाय।

जरा देर तक चुप रहने के बाद मिस्टर घोष ने उत्तर दिया—उन लोगों को निमन्त्रण न देना अनुचित तो जरूर मालूम पड़ेगा, किन्तु इसका कोई उपाय नहीं है निर्मला! उस दिन जब उनका पता पूछा था तब बीच में दूसरी बात उठ पड़ी और उसका ठीक-ठीक उत्तर नहीं मिला। ऐसी दशा में—

मिस्टर घोष की बात काट कर निर्मला कहने लगी—यह तो ठीक नहीं हुआ बाबू! चलो आज साँझ को लीला के क्लब में चलें। वहाँ किरण बाबू से पूछूँगी। शायद उन्हें कुछ मालूम हो।

( १७ )

किरण जब बीणा के साथ चला गया तब लीला कुछ समय तक चुपचाप वहीं खड़ी रही। उस दिन का सारा आनन्द-उत्सव और खेल-कूद मानो क्षण भर में ही मिट्टी में मिल गया। पहले कौन जानता था कि जीवन का परिपूर्ण सुधापात्र पल भर में इस तरह सूख जा सकता है!

अनेक प्रयत्न करने पर भी लीला अपनी वर्तमान अवस्था का ठीक-ठीक अनुभव नहीं कर सकी। उसका चुटीला अभिमान मन ही मन गरज उठता था। किरण यदि व्यर्थ में रुष्ट हो कर उसकी इस तरह उपेक्षा करके उसका तिरस्कार कर सकता है तो इसमें

उसी की क्या हानि है? वह भी उसके साथ अब कोई सम्बन्ध नहीं रक्खेगी! किरण की मित्रता से वंचित हो जाने पर सारा संसार तो उसके लिए अँधेरा हो न जायगा। इसके अतिरिक्त भी संसार में सोचने और करने के लिए काफ़ी काम हैं। किन्तु इस संकल्प से अपने अन्त:करण में उसे कहीं से किसी प्रकार का बल नहीं मिला। किरण का तमतमाया हुआ चेहरा और यह बेढंगी उपेक्षा उसकी अन्तरात्मा में बाण-सी लग रही थी। उसके मन में यही बात आती कि दौड़ कर वह किसी एकान्त स्थान में जाय और एक बार खूब जी भर कर रो आवे। परन्तु वहाँ से वह एक पग भी हिल न सकी। केवल नीरव भाव से संध्या के नक्षत्रों से सुशोभित आकाश की ओर ताकती हुई खड़ी रह गई।

अरुण से जब भेंट हुई थी तब से एक सप्ताह बीत गया। उसके बीच में किरण से लीला की भेंट नहीं हुई। अरुण से मिलने के लिए जब वह बसन्तपुर जाती तब किरण उससे पहले ही घर से निकल चुका रहता। साँझ को क्लब में खेलने आना भी किरण ने छोड़ दिया था। जहाँ जिस समय लीला से भेंट हो जाने की सम्भावना रहती, किरण चेष्टा करके उस समय के लिए वह स्थान बचा जाता। उसकी इस स्पष्ट विरक्ति से लीला दिन-दिन सूखती चली जाती थी। फिर भी अभी तक उसे आशा थी कि किरण से भेंट होने पर उसे अच्छी तरह समझा-बुझाकर शान्त कर दूँगी। परन्तु आज जब इन लोगों के ही निमन्त्रण पर किरण इनके यहाँ आया और लीला के आह्वान की उपेक्षा करके वीणा के साथ लौट गया तब उसके लिए आशा करने की कोई भी बात न रह गई।

इसके अतिरिक्त लीला की समझ में एक बात किसी तरह भी नहीं आती थी। किरण के रुष्ट रहने के कारण लीला के अन्त:करण में जो वेदना काँटे की तरह विध रही थी, वह अरुण के पास पहुँचते ही न जाने कहाँ विलीन हो जाती। जब तक वह अरुण के पास

रहती, हँसी-ठट्ठा, गपशप और गाने-बजाने में मस्त रहती। अरुण के प्रति अगाध प्रेम से उसका हृदय परिपूर्ण रहता, उस समय भूल कर भी उसे किरण की याद न आती। परन्तु जैसे ही वह अरुण के पास से हटकर बाहर निकलती, उस घर के चारों ओर कितने दिन के कितने परिचित दृश्य, कितने दिन पहले की सुखमय स्मृति, जाग्रत् हो उठती और उस समय उसके हृदय की छिपी हुई व्यथा फिर से उसे व्याकुल करने लगती। खेल-कूद या पढ़ने-लिखने में उसे किसी तरह भी शान्ति न मिलती। उसका हृदय सदा ही किरण के लिए रोता रहता। यह कैसी विषम समस्या उसके सामने आ पड़ी। इसकी मीमांसा किस तरह और कहाँ हो सकेगी, यह उसकी समझ में ही नहीं आता था।

लीला के खेलने के साथी इतने समय में खेल से निवृत्त होने और ज़रा-सा विश्राम करने के बाद जलपान के लिए दल के दल तम्बू में आ रहे थे। उनके कलरव से सचेत हो कर लीला घूमकर ताकने लगी।

वहाँ से कुछ दूरी पर वीणा और किरण तम्बू के सामने खड़े होकर बातचीत कर रहे थे। लीला ने देखा कि वीणा ने आज कैसा अच्छा शृंगार किया है। उसकी काली-काली आँखों की लज्जा और अनु-राग से भरी हुई दृष्टि किरण के मुँह पर पड़ रही है! किरण क्या कह रहा था, यह तो लीला सुन नहीं सकी, किन्तु उसके मुख पर वीणा के सम्बन्ध में पहले का-सा उदासीन भाव नहीं था।

लीला यह दृश्य अधिक समय तक नहीं देख सकी। मुँह फेर कर वह वहाँ से सीधे अपने कमरे में चली गई और अँधेरे में ही बिस्तरे पर जाकर लेट गई।

कुछ समय के बाद बत्ती जलाने के लिए क्षान्त कमरे में आई और लीला को इस तरह बिस्तरे पर पड़ी देखकर कहने लगी—अरे बिटिया रानी, आज अभी से बिस्तरे पर आकर लेट गई हो? तबीअत तो नहीं कुछ खराब हो गई?

लीला ने चित्त को ज़रा-सा दूसरी ओर फेरने के लिए कहा—नहीं, तबीअत नहीं खराब है। यों ही ज़रा-सा लेट गई हूँ! खेलते-खेलते दिमाग़ में चक्कर-सा आगया है। तू ज़रा देर तक यहीं बैठी रह, कुछ बातचीत तो की जाय।

लीला की यह बात सुनकर क्षान्त के चित्त को बहुत कुछ आश्वासन मिला। पैर फैलाकर वह ज़मीन पर बैठ गई और कहने लगी—दिमाग़ में चक्कर क्यों न आवेगा? रात-दिन उपद्रव तो मचाए रहती हो, हज़ार हो लड़की ही तो हो। चौबीस घंटे इस तरह पुरुषों से होड़ लगाकर दौड़ने में कहाँ शरीर बना रह सकता है? ख़ैर, थोड़ी देर तक लेटी रहो। जी हलका हो जाय।

लीला ने कहा—तुझे इस समय कोई काम तो नहीं है?

हाथ हिलाकर क्षान्त ने उत्तर दिया—काम की बात तो न पूछो बिटिया! काम का भी कभी अन्त होता है? जितना ही करती जाती हूँ, उतना ही बढ़ता जाता है! ख़ैर यह सब भाड़ में जाने दो। तुम इस समय यहाँ अकेली पड़ी हो, इससे इस समय यहाँ बैठना भी तो एक काम ही है। अच्छा, बिटिया रानी, एक बात याद आगई। तुम तो इतनी जगह आती-जाती हो, यहाँ के डिप्टी साहब की स्त्री को कभी देखा है?

"नहीं तो, क्यों?" लीला समझ गई कि क्षान्त आज कोई नई बात खोज लाई है।

"यों ही कह रही हूँ। यहाँ के सब लोग उन्हें जानते हैं न! बड़ी अच्छी स्त्री हैं। देखने में भी बड़ी सुन्दर हैं। इसके अतिरिक्त सब स्त्रियों में डिप्टी साहब की स्त्री का प्रवेश भी है। परन्तु तुम उन्हें कैसे देखोगी? डिप्टी साहब बाहर तो बिलकुल साहबी ठाठ-बाट में रहते हैं, किन्तु घर के भीतर वे बिलकुल पुराने ढंग के हिन्दू की ही तरह रहते हैं। तुम्हारे यहाँ की तरह उनके घर में ईसाईपन का ठिकाना नहीं है। बाबू लोग बाहर चाहे जो करें, स्त्रियाँ अपने क़ायदे पर रहें तो कोई हानि नहीं है। उनके

यहाँ की स्त्रियाँ पालकी छोड़कर क्या कभी एक पग भी चलती है? ख़ैर, यह सब जाने दो, इस समय मैं जो कह रही थी वह यह है कि उनके घर में एक दुर्घटना हो गई है।"

क्षान्त ने एक छोटे-से सन्दूक़चे से एक पान निकाला और डिबिया से चूना निकाल कर उस पर लगाया। तब पान को लपेट कर मुँह में डाल लिया और फिर कहने लगी—डिप्टी साहब के भाई विलायत गये हैं। जानती हो न? शायद कुछ पढ़ने गये हैं। और उनकी जो स्त्री है वह इतनी सुन्दरी है कि उसकी तारीफ़ करते नहीं बनता। ऐसी सुन्दरता तो मैंने कभी देखी ही नहीं। मानो वह साक्षात स्वर्ग की देवी है। विवाह के बाद उसका स्वामी उसे छोड़ कर जब विदेश गया है तब वह छोटी ही थी, परन्तु अब काफ़ी बड़ी हो गई है। उसका नाम है ज्योत्स्ना। ज्योत्स्ना की तरह दिव्य उसका चेहरा भी है।

लीला ने कहा—लोगों के घर का हाल तू इतना कैसे जानती है? क्या संसार भर की ख़बर तेरे पास आती है?

"वाह, मै कैसे न जानूँ! शहर भर में कौन-सा ऐसा घर है जहाँ का हाल मुझे नहीं मालूम है? और उनके यहाँ तो मेरी बहन काम ही करती है। एक दिन मैं अपनी बहन से मिलने गई थी तब उस बहू को भी देख आई थी। हाय, उस सुन्दरता के ही कारण उस बेचारी की ऐसी दुर्दशा हुई। मेरी बहन उसे बहुत चाहती थी। अब वह रो-रोकर मर रही है!

लीला ने व्यग्र होकर पूछा—क्यों? उसे क्या हुआ है?

उत्साह के साथ हाथ हिला कर क्षान्त ने कहा—हुआ है मेरा सिर। एक दिन बात ऐसी हुई कि लड़कों ने चन्दा करके शहर में सरस्वती-पूजा की। उसी दिन प्रतिमा के सामने उन लोगों ने एक थियेटर भी किया। शहर भर में जितनी भी बड़े बड़े घरानों की स्त्रियाँ थीं, वे सभी वहाँ गई थीं। डिप्टी साहब की स्त्री भी अपनी

देवरानी को लेकर थिएटर देखने गई थीं। उस समय क्या किसी को खाक पता था कि ऐसी भी घटना हो सकेगी? अन्यथा इस अभागे थिएटर को देखने ही कौन दौड़ा जाता! इसीलिए लोग अब कह रहे हैं कि वहाँ क्यों गई? न गई होतीं तो ऐसा न होता। मैं कहती हूँ कि मरो। पहले से क्या कोई ब्रह्मा का कोप बाँचता रहता है? भावी का तो कोई पार नहीं पा सकता। इतनी स्त्रियाँ गई थीं और तो किसी को कुछ नहीं हुआ, सारी आफ़त इसी के भाग्य में थी?

लीला ने अधीर भाव से कहा—क्या हुआ पहले यही क्यों नहीं बतला देतीं? तुमसे तो मैं हैरान हो गई हूँ। जहाँ एक बात में सारा मामला तय हो सकता है वहाँ क्यों इस तरह बक-बक करके प्राण देती है? उस बहू को हुआ क्या?

'वही बात तो इतनी देर से बता रही हूँ भाई! परन्तु तुम सुनोगी क्या खाक? सभी बातों में तो तुम्हें उतावली पड़ी रहती है! मानो सदा ही घोड़े पर जीन कसे सवार रहती हो। चार बातें मिला कर न कहूँगी तो भला समझोगी क्या? यही तो कहती हूँ कि सब लोग थिएटर देखने गए थे। वह थियेटर समाप्त होते-होते बिलकुल सवेरा हो गया तब स्त्रियाँ अपनी-अपनी गाड़ी पर सवार होने लगीं। उस भीड़ में ही न जाने कहाँ का एक लुच्चा खड़े खड़े स्त्रियों का मुँह देख रहा था। पड़ते पड़ते उस मुँहजले की दृष्टि एकाएक पड़ी ज्योत्स्ना के ऊपर। मेरी बहन उन लोगों के साथ ही थी। वह कह रही थी कि उस बदमाश की आँखें बाघ की-सी थीं। उस स्त्री को वह इस तरह घूर घूर कर ताक रहा था कि मानो खा जायगा! बेचारी का क्या हाल होगा, इसी चिन्ता में मैं रो रोकर मर रही हूँ। बामा के तो रात-दिन आँसू ही नहीं बन्द होते। डिप्टी साहब के भाई बिलायत से लौटने पर न जाने कैसी आपदा खड़ी करें? मेरा तो अभी से हृदय काँप रहा है!

"व्यर्थ की बातें बक बक कर मर रही है। परन्तु हुआ क्या, यह अभी तक न सुनने में आया। केवल व्यर्थ की बातें बना रही है और एक झूठी कहानी गढ़ रही है।"

बहुत ही उत्तेजित होकर क्षान्त ने कहा—झूठी कहानी तो गढ़ ही रही हूँ! क्षेन्ती अहिरिन झूठ बोलनेवाली स्त्री नहीं है, यह सबको मालूम है। मैं यदि झूठ बोल रही हूँ तो भगवान् मेरे ऊपर वज्र छोड़ दें। सारे शहर में इस बात का ढिंढोरा पिट गया है और मैं तुम्हारे सामने झूठ बोल रही हूँ। अच्छा सुनो, उन लोगों की गाड़ी के पीछे पीछे जाकर वह बदमाश डिप्टी साहब का घर देख आया था। कुछ दिन के बाद भोजन करके ज्योत्स्ना अपने कमरे में सोई थी। द्वार बन्द था। इसी तरह वह रोज सोया करती थी। दिन में सोने की उसकी आदत थी। उस दिन साँझ हो गई, फिर भी द्वार नहीं खुला। तब बड़ी चिल्ल-पों मची, परन्तु भीतर से कोई आहट नहीं मिली। दरवाज़ा तोड़ कर लोगों ने जब देखा तब कमरा ख़ाली पड़ा था, वहाँ ज्योत्स्ना नहीं थी। खिड़की तोड़ कर कोई उसे निकाल ले गया था। खिड़की के सीकचे कटे हुए थे। देखो, कैसी गज़ब की बात हो गई!

लीला अभी तक साँस बन्द करके यह कहानी सुन रही थी। अन्त में उसने अत्यन्त उत्कंठित होकर पूछा—वह गई कहाँ? कौन उसे ले गया?

क्षान्त ने गम्भीरभाव से कहा—यह बात किसी को नहीं मालूम है। केवल मैं और मेरी बहन जानती है। वही आदमी उसे लेकर भागा है।

"तुम लोगों को यह बात कैसे मालूम हुई?"

"इसमें बहुत-सी बातें हैं। तार का एक चपरासी है। वह रोज एक लाल रंग की साइकिल पर सवार होकर बहुत दूर तक तार बाँटने जाया करता है। उसी से उसका पता चला है। बाज़ार

मे बरगद का एक पेड़ है न! उसी के नीचे लेटे-लेटे मेरी बहन एक दिन धूप ले रही थी। वहीं एक दूकानदार रहता है। वह तार का चपरासी उसी दूकानदार का भांजा है। वे ही दोनों डर डर कर चुपके-चुपके बातें कर रहे थे। यह बात यदि डिप्टी साहब के कान मे पहुँची तो झंझट खड़ा हो सकता है न! यहाँ से बड़ी दूरी पर आरामबाग नाम की एक जगह है। वह आदमी वहीं का ज़मींदार है। उसके नाम का एक तार था। चपरासी वही तार देने जब गया था तब ज्योत्स्ना को भी देख आया था। दरवाजे के सामने वह खड़ी थी। शरीर पर उसके बहुत से जड़ाऊ गहने थे और एक बहुत कीमती रेशमी साड़ी थी। उस समय देखने मे वह अप्सरा को भी मात कर रही थी।"

लीला ने बहुत ही चिन्तित होकर कहा—यह तो बहुत बुरी घटना हुई क्षान्त! वह स्त्री बेचारी ऐसे दुष्ट आदमी के चंगुल में पड़ गई है। मेरे विचार से उसकी बड़ी दुर्दशा होगी।

"दुर्दसा तो होगी ही। लौट कर आने पर उसके स्वामी को जब सारी बातें मालूम होंगी तब वह उस स्त्री और पुरुष दोनों की हत्या कर डालेगा। इसके अतिरिक्त लोग कहते हैं कि वह आदमी भी बड़ा पाजी है। उसके अत्याचार के कारण उसकी स्त्री ने विष खाकर आत्म-हत्या कर ली है।"

आत्म-हत्या उसने कब की है?

उसको तो दो महीने हो गये। परन्तु तुम्हारा शरीर अच्छा न होने के कारण इतने दिनों से मै कहीं आ-जा तो सकी नहीं, इसी से कोई समाचार नहीं पा सकी। मेरी बहन आजकल वहीं है। ज्योत्स्ना का पता लगते ही वह उसके पास पहुँच गई। एक तरह से वह आदमी अच्छा भी मालूम पड़ता है। बामा को उसके पास रहने देने में उसने जरा भी आपत्ति नहीं की। बामा आज शहर में कुछ चीज़ें खरीदने आई थी। उसी से मैंने ये सारी बातें सुनी हैं।"

अपनी सारी बातें भूल कर लीला एकाग्रचित्त से ज्योत्स्ना की ही परिस्थिति पर विचार करने लगी। बेचारी ज्योत्स्ना! बिलकुल ही अबोध है। वह जीवन की कठोरता को ज़रा भी नहीं जानती। सम्भव है कि वह उस आदमी पर ही अगाध विश्वास रख कर निश्चिंत बैठी रहे। अब वह उस विश्वास की रक्षा करके चले तभी अच्छा है, अन्यथा उस अभागी स्त्री को न जाने कितनी दुर्दशा भोगनी पड़ेगी।

सोचते सोचते लीला कहने लगी—अच्छा क्षान्त, तेरी बहन तो वहाँ रहती है। वह उस आदमी के सम्बन्ध में क्या कहती है? ज्योत्स्ना को क्या वह सचमुच चाहता है? उसका वह समुचित आदर-सत्कार तो करता है?

अपने काले काले ओठों को उलट कर क्षान्त ने अवज्ञा के साथ कहा—हाय रे अभाग्य! यह सब आदमी और प्रेम! झाड़ू मारना चाहिए ऐसे प्रेम को। तुम लोग तो ये सब बातें जानती नहीं हो बिटिया रानी! ज्यादा से ज्यादा दस बीस पुस्तकें पढ़ी हैं। संसार के रंग-ढंग देखते-देखते मस्तक के बाल पक गये। ऐसे आदमी क्या कभी किसी से प्रेम कर सकते हैं? ऐसे लोगों के दो दिन के आमोद-प्रमोद दो ही दिन में समाप्त हो जाते हैं। बाद को फिर उनका हाल और ही हो जाता है। फिर सुनती हूं कि वह आदमी तो यहाँ का है भी नहीं। वह बंगाल का रहनेवाला है। वहाँ का वह बहुत बड़ा ज़मींदार है। यहाँ भी उसका मकान और कुछ सम्पत्ति है। कभी-कभी आकर थोड़े दिनों तक रहता है और फिर चला जाता है। बामा ने उसके नौकरों से उसका सारा भेद ले लिया है। अभी थोड़े ही दिन हुए, वह यहाँ आया है और आते ही यह कीर्ति भी ले ली। चार दिन के बाद फिर लौट जायगा और लड़की बेचारी सड़क के किनारे पड़ी रह जायगी। इसके अतिरिक्त और क्या होगा? ऐसे काम का फल तो अन्त में इसी तरह का हुआ करता है न!

लीला ने कहा—परन्तु यह बात जब मेरे कान में पड़ गई है तब कोई ऐसी व्यवस्था अवश्य कर दूँगी, जिससे उस लड़की को कोई क्लेश न हो। तेरी बहन तो वहीं रहती है। उससे कह दे कि यदि उस लड़की को कोई क्लेश हो तो वह पहले-पहल आकर मुझे सूचना दे दिया करे।

क्षान्त ने मन ही मन प्रसन्न होकर कहा—सूचना तो वह दे जाया करेगी। बेचारी लड़की का कोई सहारा हो जाता तो उसके जी में जी आता। उसकी दुर्दशा की बात सोच-सोच कर वह रात-दिन रोते-रोते मरी जा रही है। इस बार जब वह इधर आवेगी तब मैं उससे कह दूँगी।

किरण से अनबन हो जाने के कारण लीला फिर मन ही मन बहुत दुःख का अनुभव करने लगी। उसका सखा, सहायक और स्नेही किरण ही था। सभी कामों और सभी बातों में वह छोटे-से बच्चे की तरह सदा किरण के ही सबल आश्रय पर निर्भर रहा करती थी। आज ज्योत्स्ना के लिए लीला के हृदय में जो चिन्ता हो रही थी उससे निवृत्त होने के लिए कौन सत्परामर्श दे सकता था? जिसके अभाव में उसके जीवन का एक भी दिन नहीं व्यतीत होता उसका परित्याग कर देने पर सारा जीवन कैसे व्यतीत होगा? बहुत कुछ सोच-विचार करने पर भी लीला किसी किनारे पर नहीं लग सकी।

## ( १८ )

अरुण को समय काटने के लिए लीला जो उपाय निर्दिष्ट कर आई थी उसके अनुसार वह बड़े आग्रह के साथ कार्य करने लगा।

जो व्यक्ति अनन्त सागर में गोते खा रहा हो वह साधारण-से अवलम्बन को भी अपनी समस्त शक्ति से जकड़ रखने का प्रयत्न करता है, ठीक वही अवस्था उस समय अरुण की भी थी।

अरुण के पास समय की कमी थी नहीं। पहले वह कुछ दिन तक केवल अन्दाजा लगा लगा कर ही लिखन का अभ्यास करता रहा किन्तु उसकी एकाग्र चेष्टा और अध्यवसाय के कारण लिखने में उसका हाथ बराबर बैठता गया। उसके टेबिल पर लिखने की सारी सामग्री किरण ने खूब सजा कर रख दी थी। अरुण उसी टेबिल के पास बैठ कर समान उत्साह से घंटों बैठा लिखता रहता। उसके चेहरे पर कभी श्रान्ति या अवसाद का चिह्न तक न दिखाई पड़ता।

अरुण को जब लिखने का अभ्यास होगया तब उसने रचना की ओर अपना ध्यान आकर्षित किया। इन दिनों वह बाह्य जगत् के अन्य समस्त विषयों को हृदय से निकाल कर केवल लिखने और कल्पना में ही तन्मय रहा करता था। उसे यह भी विश्वास हो गया कि इस प्रकार उसे बड़ी सान्त्वना मिली है। कल्पना की बदौलत वह सदा ही अपने को किसी और ही संसार में देखा करता। वह ससार सत्य था और वहां उसकी कल्पना से उत्पन्न ... सजीव नर-नारी सदा ही विराजमान रहा करते थे। उनके सुख-दुख तथा आशा-आकांक्षा के फेर में पड कर वह बाह्य जगत के अस्तित्व को एक प्रकार से भूल ही जाया करता था। अपनी निज की सृष्टि के आनन्द में कल्लोल करते-करते उसका सारा समय किस प्रकार कट जाया करता, यह अरुण स्वयं भी न समझ पाता। अपने अन्ध-कारमय जीवन तथा उसकी वेदना को वह उत्तरोत्तर भूलता जा रहा था।

लीला बीच-बीच में आकर संशोधन के लिए अरुण की रचनायें पढ़कर सुनाया करती और उसकी लिखने की अद्भुत शक्ति तथा भाषा-सम्बन्धी निपुणता देख कर मुग्ध हो जाया करती। उसका यह दृढ़ विश्वास था कि किसी दिन जनता इस अन्धे लेखक की प्रतिभा पर मुग्ध और चमत्कृत हो उठेगी। वह अरुण से कहा करती कि तुम्हारे अन्दर अभी तक कितनी सुप्त अवस्था में पड़ी हुई थी!

ये सब रचनायें जिस दिन प्रकाशित होंगी उस दिन लोग बिलकुल अवाक् हो जायँगे! वे समझेंगे कि तुममें यह ईश्वर की दी हुई प्रतिभा थी। वह नेत्रों के नष्ट हो जाने पर भी नष्ट नहीं हुई। जिस दिन तुम्हारी पुस्तक प्रकाशित होगी, उस दिन की कल्पना करके मेरा हृदय आनन्द के मारे उछल रहा है।

लीला के हृदय में आनन्द का जो उच्छ्वास आता उसके कारण अरुण भी हँसा करता। उसका हँसना तृप्ति और शान्ति का हँसना होता था। वह कहता—तुम न होती तो मैं कुछ भी न कर सकता। मेरी सब कुछ तुम्हीं हो। चाहे शक्ति समझो, या भरोसा समझो, तुम सब कुछ हो।

लीला के प्रेम और स्नेह के कारण अरुण का शरीर उत्तरोत्तर स्वस्थ होता गया, साथ ही उसके चित्त की प्रसन्नता भी बढ़ती गई। उसकी अवस्था में बड़े वेग से परिवर्तन हो रहा था। उसकी मुखाकृति पर से निराशा और वेदना का चिह्न लुप्त हो गया और उसका स्थान नवजीवन के आनन्द तथा आग्रह ने दखल कर लिया। दूसरे के प्रति प्रेम करने तथा उसका प्रेम प्राप्त कर लेने पर मनुष्य को जो सुख और तृप्ति हुआ करती है, उसी की आभा अरुण के मुखमण्डल पर विशेषरूप से उदित हो उठी थी। लीला के प्रेम, सुख और आशा से उसका हृदय परिपूर्ण था। उसका सुख मानो सदा के लिए स्थायी हो गया था और उसका जीवन अब निरर्थक नहीं रह गया।

आनन्द के उच्छ्वास से परिपूर्ण होकर उसका हृदय कभी-कभी खिल कर प्रकाशित हो उठना चाहता था। उस आनन्द के दुर्जय वेग को अब मन में ही रोक रखने में वह असमर्थ हो रहा था।

अरुण ने एक दिन किरण से कहा कि हम लोगों की बातचीत में तुम क्यों नहीं सम्मिलित हुआ करते? सचमुच—वह कौन है, किस तरह से उसका वर्णन करूँ और किन शब्दों में उसकी ठीक-

ठीक प्रशंसा की जा सकती है, यह मैं समझ ही नहीं पाता। ऐसा तेजस्वी और स्वाधीन मन है। प्रेम और करुणा से भरा हुआ उसका हृदय है! इसके अतिरिक्त उसकी शिक्षा भी कितनी उच्च है! सभी बातों में वह ठीक हमारे ही समान है या यों कहिए कि बातचीत करने और कल्पना करने की शक्ति उसमें हमारी अपेक्षा भी अधिक है। उस शक्ति का परिचय शब्दों के द्वारा नहीं दिया जा सकता। इसी से मैं समझता हूँ कि यदि तुम भी रहो तो बड़ा आनन्द आवे। उस दशा में हम तीनों बड़े आनन्द से समय काट सकेंगे।

किरण के हताश हृदय की तीव्र ज्वाला ने मानो उसके मुँह पर स्याही डाल दी। उसने बड़े अनुत्साह के साथ उत्तर दिया कि मुझे तो समय नहीं मिलता भाई! तुम्हें तो मालूम ही है कि प्रातःकाल कितने काम रहते हैं। इसके बाद उसने साहस करके कहा—क्या तुम्हें पहले की अपेक्षा इन कुछ महीनों में बीणा में कोई परिवर्तन मालूम पड़ रहा है?

किरण को यह जानने का बड़ा कौतूहल हो रहा था कि लीला में बीणा की अपेक्षा कहाँ और क्या अन्तर है, अरुण यह समझ सका है या नहीं। इसी मतलब से उसने यह बात भी पूछी थी।

इसके उत्तर में अरुण ने उच्छ्वसित होकर कहा—ओह, बड़ा परिवर्तन हुआ है। कहता तो हूँ। वह क्या है, यह कहकर मैं नहीं समझा सकता। पहले पहल हम दोनों ही शायद बाहरी सुन्दरता और एक उदास प्रेम में ही विह्वल हो गए थे, अन्तःकरण का परिचय प्राप्त करने या देने का उस समय क्या किसी को अवसर था? परन्तु अब? शायद तुम्हें आश्चर्य होगा, बीणा इतनी सुन्दर है कि मैं उसकी कल्पना तक नहीं कर सकता था। इसके अतिरिक्त उसकी अनुपम सुन्दरता का यदि एक अंश भी न रह जाय तो अब मेरी कोई हानि न होगी। अब मैं उसके हृदय का परिचय पा गया

हूँ। वह हृदय सुन्दर से भी सुन्दर है। लाखगुना सुन्दर है? वह क्या है, यह मेरा हृदय ही जानता है।

किरण को ऐसा जान पड़ने लगा, मानो कलेजे को कोई कुन्द छुरी से काट रहा है। मर्मान्तिक वेदना के मारे दाँत पीसता हुआ वह खिड़की से बाहर निकल गया। अरुण उस समय एक नीला चश्मा रूमाल से पोंछ रहा था। वह कहने लगा कि यहाँ आने से पहले ही यह चश्मा यहाँ भेज देने को मैं लिख आया था। आज इतने दिन के बाद यह मिला है। मेरी धारणा है कि इस चश्मे से मुझे लाभ हो सकेगा। प्रकाश से टकराने पर दोनों नेत्रों में बड़ी पीड़ा होती है।

"प्रकाश से टकराने पर?"—अपनी व्यथा भूल कर किरण ने विस्मित भाव से मुँह फेर लिया। उसने कहा—मेरी तो धारणा थी कि तुम बिलकुल ही नहीं देख पाते हो।

"पहले ऐसा ही मालूम पड़ता था। किन्तु इधर कुछ दिनों से सवेरा होने पर नेत्रों से गाढ़ अन्धकार का पर्दा हट जाता है और नेत्रों में कुछ पीड़ा होने लगती है। यह लक्षण कुछ अच्छा-सा मालूम पड़ रहा है। जान पड़ता है कि इतने दिन के बाद हमारे पंगु स्नायुवों में फिर से सजीवता आ गई है। बम्बईवाले अस्पताल के डाक्टर ने मुझसे क्या कहा था, जानते हो?

किरण को इस विषय में कोई भी बात नहीं मालूम थी। बात यह थी कि अरुण पहले इतना गम्भीर और उदास रहा करता था कि अपने सम्बन्ध में वह कभी किसी तरह की बात ही नहीं करता था। अतएव उसकी यह बात सुनकर किरण ने कहा—क्यों, क्या कहा था? तुमने तो मुझसे कभी कुछ बतलाया नहीं।

अरुण ने प्रसन्नमुख से कहा—वे लोग कह रहे थे कि तुम्हारे नेत्रों के तारों में कोई खराबी नहीं आई है। केवल दृष्टि के स्नायु में धक्का लग जाने के कारण तुम अन्धे हुए हो। तुम्हारा शरीर

यदि स्वस्थ और सबल रह सका, साथ ही चित्त भी खब प्रसन्न रहा, तो समय पाकर ये स्नायु फिर भी सबल हो सकेंगे। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा था कि यह आशा इतनी साधारण है कि इसके बल पर तुमसे कुछ कह नहीं सकता। किन्तु मन यदि स्वस्थ रहा और उसमें स्फूर्ति बनी रही तो तुम्हारी दृष्टि का फिर से लौट आना असम्भव नहीं है। दुख, संशय, व्यथा तथा स्नायविक दुर्बलता आदि हमारी दृष्टि के फिर से लौट आने मे बड़े बाधक हैं। नेत्रों के आरोग्य हो जाने पर भी जीवन में यदि ये सब बाधक फिर से आ पड़ें तो नेत्रों के स्नायु फिर पंगु हो जायँगे और मैं सदा के लिए अन्धा हो जाऊँगा। ये बातें कहते-कहते अरुण अपनी बातों से स्वयं ही भयभीत होकर काँप उठा।

किरण ने मन ही मन ज़रा-सी शान्ति और आनन्द का अनुभव किया। वह सचमुच ही अरुण से स्नेह करता था। उसकी इस शोचनीय अवस्था से किरण के हृदय पर बड़ा आघात पहुँचा था। किन्तु उसकी दृष्टि के फिर से लौट आने की आशा है, यह जान कर उसने कहा—आज यह बात सुनकर मुझे कितनी प्रसन्नता हुई, यह मैं कैसे व्यक्त करूँ? तुमने तो आज तक इस सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं था। यह बात समाप्त करके किरण ज़रा देर तक चुप रहा, बाद को अपने आपही कहने लगा—और किसी को, अर्थात् उन्हें भी यह बात बतलाई है या नहीं? अब अरुण के सामने लीला का नाम किरण स्वाभाविक रूप में नहीं ले सकता था।

चश्मे को अच्छी तरह से पोंछ कर अरुण ने अपनी आँखों पर लगा लिया और दो-एक बार इधर-उधर आँख घुमा कर वह कहने लगा—नेत्रों को अब कुछ आराम मिल रहा है। कितनी पीड़ा हो रही थी! इसके बाद उसने किरण से कहा—वीणा के सम्बन्ध में कह रहे हो? नहीं, मैंने उससे कुछ नहीं कहा। झूठी

आशा देने में लाभ क्या है भाई? यदि किसी दिन मेरे भाग्य से असम्भव भी सम्भव हो जायगा तब तो सभी को मालूम हो जायगा। परन्तु इस समय तो मैं इसकी कल्पना तक नहीं कर सकता हूँ। क्या सचमुच कभी ऐसा दिन आवेगा जब मैं उसका वही सुन्दर मुँह फिर से देख सकूँगा? इतना कष्ट कर मैं रोज़-रोज़ जो तमाम लिखता जा रहा हूँ, यह सब और लोगों की तरह मैं भी कभी देख कर पढ़ सकूँगा? क्या यह कभी सम्भव होगा? मन में तो ऐसी आशा करते डर लगता है!

किरण मन ही मन व्यथित होकर अरुण के आशा और निराशा से कातर तथा उद्वेग से चंचल मुँह की ओर ताकता हुआ मस्ट मारे बैठा रहा। वह स्वयं भी अरुण की इस बात पर पूर्णरूप से विश्वास नहीं कर पाता था। जो नेत्र इतने दिनों तक चिकित्सा तथा तरह-तरह के अन्य उपाय करने पर भी दृष्टिहीन हो गये वे फिर अपने आप ही स्वस्थ होकर कार्यक्षम हो जायँगे, यह बात तो उस समय विश्वास के योग्य मालूम नहीं पड़ रही थी। तो भी वह सोचने लगा कि यदि चिकित्सा-विज्ञान के विद्वानों ने कहा है तो ऐसा हो जाना भी कठिन नहीं है। किन्तु प्रयत्न करने पर भी सान्त्वना की कोई बात उसे नहीं मिल सकी। हृदय को व्यथा से परिपूर्ण करके वह चुपचाप बैठा रहा।

थोड़ी देर के बाद ज़रा-सा शान्त होकर अरुण अपने आप ही कहने लगा—इसी से कहता हूँ कि इधर कई दिनों से मानों थोड़ा-थोड़ा प्रकाश का आभास मिलता है। इसका यदि कुछ अच्छा परिणाम हुआ तो उसका भी श्रेय वीणा को ही होगा। उसी ने मेरे निर्जीव शरीर में प्राणों का संचार किया है। निराशा, दुख और मानसिक वेदना के मारे मैं तो एक प्रकार से चल ही बसा था। मेरे शरीर के सभी स्नायु अशक्त होकर मर चुके थे। यह जो मैं नवीन जीवन प्राप्त कर सका हूँ वह केवल स्नायुओं की अत्यन्त

आश्चर्यजनक कार्यकरी शक्ति है। मुझमें इस तरह की शक्ति का संचार किसने किया है? उसी ने न? दृष्टि लौटा सका तो बहुत अच्छा है, यदि न लौटा सका तो भी मुझे कोई विशेष दुख नहीं है। अब मैंने जीवन की एक नवीन दिशा प्राप्त कर ली है। वीणा ने कई बिलकुल नये ढंग की पुस्तकें ला रक्खी हैं, हम दोनों साथ-साथ पढ़ेंगे और साथ-साथ पुस्तकें लिखेंगे। मैं जो कुछ लिख रखता हूँ उसे वह आने पर शुद्ध कर देती है। आगे चल कर मैं बोल दिया करूँगा, वह लिख लेगी। रात-दिन वह मेरे पास ही पास रहा करेगी। इन सारे सुखों की कल्पना से मेरा हृदय बहुत हल्का हो गया है भाई, उसे पाकर मैं बिलकुल एक नया आदमी हो गया हूँ!

लीला के सम्बन्ध की बातें कहते-कहते आनन्द के उच्छ्वास और सुख के मारे अरुण एकदम से विह्वल हो गया, उसे किसी बात की खबर न रह गई।

"किरण, तुम्हीं मेरे एकमात्र प्रिय मित्र हो। इतने दुख में पड़ कर भी मैंने जो ऐसी शान्ति प्राप्त की है, इससे तुम्हें भी खूब सुख मिला है न? कष्ट सहे बिना दुर्लभ वस्तु नहीं प्राप्त की जा सकती भाई! कभी-कभी मैं यही सोचता हूँ कि दृष्टि से यदि न वंचित होता तो शायद उसे इस रूप में मैं न प्राप्त कर सकता। पहले जिस रूप में उसे पाता, वह पाना तो स्त्री-पुरुष के साधारण मिलन के समान निर्जीव होता। इधर यह मिलन क्या है, इसका सुख मैं तुम्हें कैसे बताऊँ? इसके कारण तुम भी सुखी हुए हो न भाई!

"अवश्य" अपनी स्वाभाविक प्रसन्नता के ही साथ किरण ने यह वाक्य कहने का प्रयत्न किया, किन्तु उसके कण्ठ से वह स्वर न निकल सका। अरुण के पास से उठकर वह अपने कमरे में चला आया और खिड़की के पास खड़ा हो गया। आज वह कहीं किसी काम पर न जा सका।

कुछ दिनों से किरण अपने में एक अतृप्ति, एक अपूर्णता का अनुभव कर रहा था। किसी प्रकार भी, कोई काम-काज करके या लिखने-पढ़ने में चित्त लगा कर उस अपूर्णता को वह दूर नहीं कर पाता था। इस दिशा में किरण को जो असफलता हो रही थी, उसके कारण उसका हृदय सदा ही दुखी रहता। वह कोई भी काम करता या अपना चित्त बहला रखने के लिए कितना भी प्रयत्न करता, किन्तु अन्तस्तल की निराशा दूर न होती। वह सदा ही अनुत्साहित और आनन्दहीन बना रहता।

शरीर से किरण सदा से ही हृष्ट-पुष्ट रहता आया है, साथ ही चित्त भी उसका सदा प्रफुल्लित रहा करता था। उसकी जो भी आवश्यकतायें होतीं उन्हें पूर्ण करने की उसमें यथेष्ट शक्ति थी। आज तक किसी बात के लिए किसी और से उसे सहायता लेने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी। अतः स्वभावतः वह किसी भी विषय में आसक्त नहीं रहता था। सबसे वह बेखटके मिलता, खेलता-कूदता और आमोद-प्रमोद की बातों में भाग लेता, किन्तु किसी भी विषय में वह कभी घनिष्ट भाव से नहीं प्रवेश करता था। उसके इस निर्विकार अटल-अचलभाव में कोई परिवर्तन नहीं कर सका।

लीला ने ही पहले-पहल किरण के प्रशान्त हृदय में भावों की तरङ्गे उत्पन्न की थीं। जिस प्रकार वसन्तऋतु की हवा लगते ही मुरझाई हुई वनस्थली लहलहा उठती है और वृक्ष फल-फूलों से लद जाते हैं, ठीक वैसे ही लीला के सम्पर्क में पड़ कर किरण की स्वाभाविक गम्भीरता भी हवा हो गई और वह एकाएक आनन्द और उमङ्ग के कारण चञ्चल और मुखर हो उठा। उसका शरीर और अन्तःकरण मानो एक अनिर्वचनीय नये रस से अभिषिक्त हो गया।

इस नये भाव की तरङ्गों में पड़ कर किरण ने तीन महीने वहाँ और किस प्रकार काट दिये, इसका कोई हिसाब नहीं था। लीला के साथ उसकी इस तरह बढ़ती हुई घनिष्ठता देखकर समाज

में सभी लोगों ने तरह-तरह की कानाफूसी की है। घर में माता से लीला को इसके लिए काफ़ी फटकार सुननी पड़ी है, किन्तु इन सब बातों से उन दोनों को कोई हानि नहीं हुई। वे दोनों ही कभी किसी की बात पर कर्णपात न करके अपनी रुचि के अनुसार चलते आये हैं। उन लोगों ने कभी स्वप्न में भी यह नहीं सोचा कि हम दोनों का यह सम्बन्ध साधारण स्त्री-पुरुष का-सा है, या जैसा कि सदा से चला आ रहा है इसके लिए हम लोगों के इस सम्बन्ध में पवित्रता होने पर भी लोग हमें बदनाम कर सकते हैं। लीला के सम्बन्ध में किरण की वास्तविक धारणा क्या थी, इसको स्वयं किरण भी नहीं जानता था। न तो कभी उसने इस सम्बन्ध में विचार किया था और न विचार करने का उसके पास समय था। ठीक यही हाल लीला का भी था। वे केवल इतना ही जानते थे कि हम दोनों परस्पर एक दूसरे के मित्र हैं। इसके अतिरिक्त आज तक उनके मन में कभी और कोई बात नहीं आई।

प्रतिदिन प्रातःकाल सोकर उठते ही किरण के मन में यह बात आती कि लीला के साथ घूमने जाना है। उतावली के साथ आवश्यक कामों से निवृत्त होकर वह कपड़े पहनता और फिर घूमने के लिए निकल पड़ता। उसे बराबर यह चिन्ता लगी रहती कि कहीं विलम्ब न हो जाय। दोपहर को घर लौटने पर वह स्नान और भोजन करके विश्राम भी बड़ी कठिनाई से करता, ज़रा-सा दिन झुकते ही फिर लीला के यहाँ के लिए रवाना हो जाता। दोपहरी में जितनी देर तक वह घर में रहता, उतनी देर तक का समय उसे पर्वत-सा मालूम पड़ता। साँझ को दोनों क्लब में जाते और खेल-कूद तथा गाना-बजाना समाप्त होने पर घर लौटते। नौ बजते-बजते किरण लीला को उसके घर पहुँचाकर तब अपने घर जाता। रात को जब तक उसे नींद न आती तब तक का समय केवल दूसरे दिन के प्रातःकाल का कार्यक्रम तैयार करने में ही वह काटता था। इस प्रकार आत्म-

विस्मृति में निमग्न होकर चलते-चलते एकाएक एक बहुत करारी ठोकर खाकर किरण लौट पड़ा और दृष्टि फेरकर देखने लगा।

वह लीला के साथ अरुण की जान-पहचान का पहला दिन था। उस दिन की बातें उसके हृदय में मानों अग्नि के स्फुलिंगों से खुदी हुई थीं।

वह बात सुनकर किरण का न्यायनिष्ठ हृदय पहले लीला की वञ्चना और प्रतारणा के कारण घृणा और क्रोध के मारे जल उठा था। बाद को उसके मन में यह बात आई कि उसका इतने दिनों तक का सञ्चित किया हुआ अपना निजी धन अनजान में ही बड़ी आसानी से दूसरे के हाथ में चला गया! किरण चकित और भयभीत हो उठा।

जिस तरह भटका हुआ पथिक रास्ते में चलते-चलते सामने अकस्मात् कोई कठोर बाधा आ जाने के कारण ठमक कर खड़ा हो जाता है, ठीक वैसे ही यह आघात पाने के बाद किरण भी इतने दिनों की स्वप्नमयी निद्रा से सचेत होकर अपने हृदय को परखने की चेष्टा करने लगा। तब उसे मालूम हुआ कि मेरे चित्त पर लीला का ही अधिकार है। इन कुछ ही महीनों में मुझे पूर्णरूप से तृप्त करके मुझ पर अखण्ड प्रताप से लीला राज्य कर रही है। यह देखकर किरण चकित हो गया। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। क्या वह अभी तक सोया था ?

किरण ने लीला को समझाया। तरह-तरह की युक्तियाँ प्रदर्शित करके उसके कार्य की असारता दिखलाई, साथ ही यह भी सिद्ध कर दिया कि उसका यह व्यवहार न्याय के विरुद्ध है। परन्तु लीला ने किसी प्रकार भी अपने मत का परिवर्तन नहीं किया। तब क्रोध और ईर्ष्या के मारे किरण अधीर होगया, उसने लीला के साथ अपना सारा सम्बन्ध त्याग दिया।

आज एक सप्ताह से किरण ने लीला के यहाँ का आना-जाना बन्द कर रक्खा था। तब से उसने क्लब में जाना भी बन्द कर

रक्खा था। प्रातःकाल लीला अरुण के पास आया करती थी। उसके आने से पहले ही किरण घर से निकलने के लिए उतावला हो जाता और उसके वहाँ पहुँचने से पहले ही निकल जाया करता था। लीला जब तक वहाँ से जाती नहीं थी, तब तक लौट कर वह घर नहीं आया करता था। परन्तु इतना सावधान रहने पर भी फल क्या हुआ? बाहर से लीला से वह बचता अवश्य रहा, किन्तु इस एक सप्ताह में किरण क्या कभी क्षण भर के लिए भी उसे अपने हृदय से पृथक् कर सका है? उसकी अन्तरात्मा इतने दिनों में ही कितनी तृषित और बुभुक्षित हो उठी थी, इसे मुँह से न स्वीकार करने पर भी हृदय से अस्वीकार करने का किरण के पास कोई उपाय नहीं था। परन्तु लीला तो बड़ी आसानी से ही उसे त्याग कर दूसरे की हो गई, अब किरण कर ही क्या सकता था?

खिड़की के पास खड़ा होकर किरण शून्य हृदय से बगीचे के ऊँचे-ऊँचे नारियल के पेड़ों की ओर ताक रहा था। लीला अतिथि के रूप में अपने आप ही उसके हृदय के द्वार पर आई थी। दो दिन हँस-खेलकर और उसे भी आनन्दित करके यदि वह फिर वापस चली गई तो इसमें किरण के हानि-लाभ की कौन-सी बात थी? जिस तरह पहले उसके पास कोई साथी-संगी नहीं था, वह अकेला था, ठीक वैसे ही आज भी अकेला रह गया था। तो इसमें उसके हृदय के इस तरह शून्य और व्याकुल होने की क्या बात थी? कौन सी ऐसी बात थी जिसके कारण वह अपने पहले के ही जीवन में नहीं लौट जा पाता था? उसके पहले जो अवस्था थी वह अब भी तो ज्यों की त्यों बनी थी। उसके काम-काज, मित्रमण्डली, शिकार, खेल-कूद सभी तो वही थे। परन्तु उसमें यह शुष्कता और शून्यता कैसे आगई थी? क्या लीला के लिए? परन्तु वह तो उसका परित्याग करके आनन्द से ही अपना दिन व्यतीत कर रही थी?

किरण इस सोच-विचार में पड़ा ही था कि धीरे-धीरे उसके

हृदय में लीला की उस दिन की वही लज्जा और भय से कातर मुखच्छवि उदित हो आई। वही शक्ति, दर्प और तेज से भरा हुआ मुख था! वह मुख उस दिन उसकी विरक्ति की आशङ्का से कितना कातर और कुण्ठित हो उठा था! उस दिन उसने किरण के प्रति कितनी नम्रता प्रकट की थी! एक एक करके सारी बातें उसके हृदय में आकर छुरी के समान उसे बेधने लगीं। क्रोधान्ध होकर उसने लीला को कैसी कैसी बातें कही थीं। उसे स्वेच्छा-चारिणी आदि कहकर गाली भी दी थी। तो भी वह किरण के सामने कितनी नम्र, कितनी कुण्ठित बनी रही! लीला की उस दिन की अभिमान और व्यथा से भरी हुई सजल दृष्टि याद आकर किरण को व्याकुल करने लगी।

"लीला!" "मेरी लीला।" वह अपने आप ही अस्फुट स्वर से अपने इस प्रिय नाम का उच्चारण करके मन्त्र के समान बार-बार दोहराने लगा। "मैं भला तुझे कभी कष्ट दे सकता हूँ?"

किरण का हृदय व्यग्र हो उठा। उसी समय उसके जी में आया कि दौड़कर लीला के पास जाऊँ। किन्तु हाय, लीला तो अरुण की है! अरुण लीला का है! बीच में पड़नेवाला मैं कौन हूँ? एक दिन जो सर्वस्व का अधिकारी था, वह क्या आज केवल मित्रता की सान्त्वना से ही खड़े खड़े स्वयं अपना सर्वनाश देख सकता है? लीला के पास जाने से अब फल क्या होगा?

किरण और नहीं स्थिर रह सका। अधीर तथा व्याकुल होकर वह कमरे में टहलने लगा। वह कर क्या सकता था? बे-समझे-बूझे केवल दया के वश में होकर लीला जो काम कर बैठी है उसका अन्तिम परिणाम होगा अरुण के साथ उसका विवाह। हृदय की ज्वाला से अधीर होकर किरण एक बार अन्तिम प्रयत्न करने के लिए वीणा के पास गया था। वही यदि लौट कर रास्ते पर आ-जाती, तो सारा काम बन जाता। परन्तु उसके पास से भी तो

किरण को असफल ही लौटना पड़ा है ! अब और कोई उपाय रहा नहीं ! न जाने किस अशुभ मुहूर्त में वसन्तपुर आकर अरुण उसका अतिथि हुआ है ! वही उसके सारे दुख और निराशा का कारण है ! किरण फिर स्थिर होकर खड़ा हुआ। अहा ! असहाय, अन्धा, दुखिया अरुण ! जो एक दिन किरण का अभिन्न-हृदय मित्र था, वह आज उसके प्रेम का प्रतिद्वन्द्वी है ! साथ ही वह इस बात को जानता भी नहीं। उसके इस उमड़े हुए प्रेम की कहानी किरण के हृदय में कैसा दावानल धधका रही थी।

किरण सोचने लगा कि जिस दिन मैंने लीला को नीच, धोखेबाज़ आदि कह कर गालियाँ दी थीं उस दिन लीला ने यही युक्ति उपस्थित की थी कि मेरे इस कार्य का उद्देश केवल अन्धे अरुण के हृदय में फिर से आनन्द की आशा उत्पन्न करके उसकी जीवन-रक्षा करना है। मुझे धोखा देने की उसकी इच्छा नहीं थी। उसके इस उद्देश में कितनी सफलता हुई है यह तो अरुण के चेहरे और शरीर से ही मालूम हो जाता है। आज-कल प्रसन्नता के मारे कैसा उसका चेहरा खिला रहता है ! लीला ने उसके जीवन की गति परिवर्तित कर दी है। ऐसी उसमें अद्भुत शक्ति है ! ऐसा प्रबल उसका व्यक्तित्व है ! इस अतुलित प्रतिभा-सम्पन्न और शक्ति-शालिनी लीला को तुच्छ समझ कर मैंने गालियाँ दी !

लीला ने जो कुछ कहा था उसे उसने कार्यरूप में परिणत करके दिखा दिया। वह यह भी कह चुकी थी कि मैं अन्त तक जाने को तैयार हूं। ऐसा करेगी भी वह। किरण आदि से अन्त तक इस मामले को सोचता रहा। लीला की आशा वह अन्त तक त्याग नहीं सकता था, इधर उसे प्राप्त करने का किरण की दृष्टि में कोई उपाय भी नहीं था। उसका समस्त हृदय निराशा और वेदना के कारण क्षुब्ध और पीड़ित होने लगा। प्रतीकार का कोई भी मार्ग न देखकर वह किंकर्तव्यमूढ़ होने लगा।

जो लीला किरण को प्राणों से भी अधिक प्रिय थी, वही आज अपनी इच्छा से दूसरे को वरण करके उससे दूर हो गई है! साथ ही जो किरण के प्रेम का प्रतिद्वन्द्वी था, जिसने उसके जीवन की सारी सुख-शान्ति अपहरण कर ली थी, वह उसी का परम प्रिय मित्र, बिलकुल असहाय अन्धा अरुण था!

खास किरण के घर में उसकी आँखों के ही सामने उसके मित्र की यह प्रेम-लीला चल रही थी। इस सम्बन्ध में वह केवल श्रोता भर रह गया था उसके प्रतीकार का कोई उपाय नहीं था। उसे धैर्यपूर्वक यह कहानी सुननी पड़ रही थी!

किरण किसी ओर भी सान्त्वना का अवलंबन न प्राप्त कर सका। वह केवल अशान्त होकर निरुद्देश्य भाव से घूमने लगा। मानो उसे भूत लगे हों और विक्षिप्त करके उसे इधर-उधर भटका रहे हों।

( १६ )

"मिस्टर चौधरी, आगामी सप्ताह में कल्याणपुर के महाराज साहब के यहाँ एक बड़ी धूम-धाम का उत्सव होगा। आप उसमें सम्मिलित होने चलेंगे न?" अपनी मधुर मुस्कान के साथ वीणा ने यह बात तरुण बैरिस्टर नीरद चौधरी की ओर इशारा करके कहा।

चौधरी आज बहुत ही उदास और चिन्तित था। वह वीणा का परम भक्त और प्रशंसक था। परन्तु वीणा किसी दिन मुँह फेर कर उसकी ओर ताकती तक न थी। वरन उसको जब चौधरी के हृदय का भाव मालूम हो गया तब वह कौतुकवश उसे बना बना कर खुश हुआ करती थी। कभी वह उसके प्रति अनुराग के लक्षण प्रदर्शित कर उसे मोह लिया करती थी, कभी उसी के सामने किसी अन्य युवक के साथ हँसकर गपशप लड़ाकर तथा अत्यन्त घनिष्टता प्रदर्शित कर उसे ईर्ष्याकुल और कातर कर दिया करती थी।

इस प्रकार वह एक प्रकार के निष्ठुर आनन्द का उपभोग किया करती थी।

वीणा ने जिस दिन किरण के समक्ष अपने आपको प्रकाशित करके उसे अपने हृदय का आभास दिया था, उस दिन से किरण न तो कभी क्लब में गया था और न उसके घर पर ही गया था। अनेक प्रयत्न करके भी वीणा किरण के उदासीन चित्त पर विजय नहीं प्राप्त कर सकी। उसका ठुकराया हुआ हृदय अत्यधिक अभिमान और प्रतिहिंसा की ज्वाला से जल रहा था। वह अभागे चौधरी के ऊपर अत्याचार करके अपने चटीले हृदय की ज्वाला थोड़ी-बहुत कम करना चाहती थी।

कल साँझ का समय चौधरी की बिलकुल उपेक्षा करके वीणा ने मिस्टर दत्त के ही साथ व्यतीत किया था, विशेष प्रयत्न करने पर भी चौधरी उसके साथ एक बात तक नहीं कर सका। इस कारण चौधरी को इतना दुख हुआ कि वह म्रियमाण-सा हो उठा था। वीणा के निष्ठुर व्यवहार के कारण उसके हृदय पर अत्यन्त आघात पहुँचा करता था, फिर भी उसे छोड़ कर दूर रहने की शक्ति उसमें नहीं थी। वीणा के उज्ज्वल रूप की शिखा पर मुग्ध पतिङ्गे के समान वह सदा उसी के आस-पास आकर्षित होकर फिरा करता था।

आज वह प्रतिज्ञा कर आया था कि जहाँ तक हो सकेगा, वीणा से बिलकुल ही अलग रहूँगा। यही कारण था कि वीणा की बात पर उसने विशेष ध्यान न देकर उदासीन भाव से कहा—इस समय मैं ठीक नहीं कह सकता हूँ। देखूँ, जाने की सुविधा होती है या नहीं। यह बात कहकर उसने मुँह फेर लिया और ध्यान-पूर्वक एक चित्र देखने लगा।

चौधरी का भाव देखकर मन ही मन हँसती हुई वीणा ने कहा—इसमें देखने की क्या बात है? आपको तो चलना ही पड़ेगा।

किसी अच्छी जगह या आनन्द-उत्सव में अकेले जाना मुझे बिलकुल ही अच्छा नहीं लगता। मित्रमण्डली यदि साथ न रही तो क्या मजा आता है? विशेषतः आप-जैसे घनिष्ठ मित्र के बिना!

चित्र पर से दृष्टि हटा कर चौधरी ने वीणा की ओर देखा। व्यथा और अभिमान से उसकी दृष्टि परिपूर्ण थी। उसने कहा—वहाँ आपको अकेली न रहना पड़ेगा मिस राय! वहाँ आपके परिचित तथा अनुयायी कितने ही आवेंगे। मेरे विचार से वहाँ तो मेरा कोई मूल्य ही नहीं होगा। व्यर्थ में जाकर करूँगा क्या?

यह सुनकर वीणा एकाएक गम्भीर हो गई। जरा देर तक चुप रह कर वह फिर चौधरी के मुँह की ओर ताकने लगी। उस समय उसके मुख-मण्डल पर विषाद की छाया थी। उसने कहा—आप तो प्रायः यह बात कहा करते हैं। जो लोग घंटे दो घंटे के लिए आते हैं उनके साथ शिष्टाचार की दृष्टि से जरा अधिक मिलना पड़ता है और उनका आदर-सत्कार भी कुछ अधिक करना पड़ता है। इसके कारण क्या जो खास मित्र हैं, और घर के आदमी-से हो गये हैं, वे पराये हो जाते हैं? सभी लोग तो बाहरी आदमियों का विशेष आदर किया करते हैं, उसमें शिष्टाचार के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। भला आप इतनी भी बात नहीं समझते?

यह बात सुनकर चौधरी बिलकुल पानी पानी हो गया। वीणा की बातों से मालूम पड़ता था कि चौधरी को वह बिलकुल बाहरी आदमी-सा नहीं समझती। वह उसका घनिष्ठ मित्र है। शायद वह उसे मन ही मन चाहती भी है। इससे चौधरी के हृदय का दुख और अभिमान क्रमशः हल्का होने लगा।

वीणा ने जब देखा कि मेरी दवा रोग पर काम कर रही है तब उसके नेत्रों पर आनन्द और कौतुक की आभा विकसित हो आई। परन्तु उस भाव को दबाकर विषाद के ही भाव से उसने

कहा—ये सब बातें सोच-सोच कर आप एक मिथ्या धारणा बना लेते हैं, जिससे आप के हृदय को क्लेश पहुँचता है और इससे मैं भी बहुत दुखी होती हूँ। अस्तु, अब यह बतलाइए कि आप वहाँ चलेंगे या नहीं। यदि आप न चलेंगे तो मैं भी न जाऊँगी, मा से कोई बहाना करके घर में अकेली ही पड़ी रहूँगी। यह कहकर वीणा ने अभिमान से अपना मुँह फेर लिया, मानो उमड़े हुए आँसुओं को रोकने के ही लिए वह दूसरी ओर ताकने लगी थी।

चौधरी चञ्चल हो उठा। अब अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा करना या वीणा की ओर से उदासीन रहना उसके लिए असम्भव था। उसने उतावली के साथ कहा—नहीं नहीं, आप बुरा न मानिए, मैं ज़रूर चलूँगा। आप जब कह रही हैं तब भला मैं इनकार कर सकता हूँ? उन लोगों ने एक बग़ीचा ऐसी सुन्दरता के साथ सजा रक्खा है! बड़ा रमणीक है! भोजन से निवृत्त होकर हम-तुम ज़रा-सा बग़ीचे में टहल आवेंगे। ठीक है न।

मुँह फेरकर ज़रा-सा म्लान भाव से वीणा हँसी। वह कहने लगी—कल तक आपका यह भाव बना रहे तब न? वहाँ जाने पर चार मित्र-स्नेहियों को देखते ही कदाचित् आपका मनोभाव बदल जाय!

अतृप्त नेत्रों से चौधरी वीणा की ओर ताक रहा था। बहुत दिनों तक वीणा ने उससे ऐसी घनिष्ठता के साथ बात-चीत नहीं की थी। आज उसके हृदय की सारी अशान्ति दूर हो गई और वीणा के प्रति एक प्रबल मोह और आवेग से उसका हृदय चञ्चल हो उठा। अपने आपको वह और न रोक सका। उत्सुक भाव से उसने कहा—क्या सचमुच मेरे सम्बन्ध में आपके ऐसे ही भाव हैं, मिस राय? मेरे दूर रहने से क्या सचमुच आपके हृदय पर चोट पहुँचती है? मेरे लिए तो ऐसी आशा असम्भव-सी मालम पड़ती है!

समीप आकर चौधरी ने वीणा का हाथ पकड़ लिया। अस्पष्ट

और कोमल स्वर से वह फिर कहने लगा—मिस राय, बीणा, बताओ एक बार सच सच बताओ, मेरे हृदय की जो दशा हो रही है वह क्या तुम्हें जानने को बाक़ी है ?

हाथ छुड़ाकर बीणा खिलखिला कर हंसने लगी। उसकी हँसी का शब्द सुनकर कमरे के सभी लोगों का ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ, वे सब मुंह फेरकर उधर जैसे ही ताकने लगे, चौधरी बहुत ही अप्रतिभ और लज्जित होकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया।

"इतना क्यों हँस रही हो मिस राय ? शायद मिस्टर चौधरी ने आज बड़े जोरों की कोई हास्य-रस की कहानी छेड़ रक्खी है। ओह, आपकी हँसी तो आज रुकती ही नहीं मालूम पड़ती। इस कहानी की ओर तो हम लोगों का बिलकुल ध्यान ही न आ सका।" यह कहते हुए मिस्टर सेन उनके पास आकर खड़े हो गये।

"केवल कहानी !" बीणा फिर हँस हंस कर लोटपोट हो गई। "मिस्टर चौधरी नाटक खेलने मे भी ख़ूब पक्के हैं। ऐसे एक पार्ट का अभिनय करके मुझे दिखलाया, ओह, हँसी के मारे मेरा पेट फूल गया।" चौधरी की ओर ताक कर बीणा ने कहा और वह फिर हँसने लगी।

"ऐसी बात है ? वाह ! हम लोगों को क्यों नहीं बुलाया ? मिस्टर चौधरी, मैं समझता हूं कि आप महिलाओं का मनोरञ्जन करने में विशेष दक्ष हैं। आपके इस सौभाग्य से मुझे ईर्ष्या हो रही है। हम लोग तो आरम्भ मे ही इतने गम्भीर हो गये हैं कि किसी तरह असर ही नहीं जमा सकते।"

ईर्ष्यापूर्ण दृष्टि से चौधरी की ओर ताक कर मिस्टर सेन हँसने लगे। चौधरी का मुँह लाल हो गया था। सेन की बात के उत्तर में केवल एक रूखी हँसी हँसकर उसने मुँह फेर लिया।

लीला दूर से उन लोगों को ध्यानपूर्वक देख रही थी। चौधरी उसे सचमुच अच्छा आदमी मालूम पड़ता था। उसके प्रति बीणा

के इस निर्मम व्यवहार से वह मन ही मन वेदना का अनुभव कर रही थी।

मिस्टर सेन वीणा को एकदम अपने अधिकार में करके उससे भिड़ गये। उनकी बातचीत की धारा जब तीव्र वेग से चलने लगी तब चौधरी अपना चटीला हृदय लेकर धीरे धीरे कमरे से बाहर चला आया और बरामदे में खड़ा हो गया। वीणा ने ज़रा-सा मुँह फेरकर उसकी ओर ताका तक नहीं।

"चौधरी, मैंने सब देखा है। क्यों तुम उसके लिए इतना कष्ट सहते हो? वह तुम्हें बनाया करती है। यह बात इतने दिन में भी तुम्हारी समझ में नहीं आई? तुम्हारे हृदय में क्या ज़रा-सा भी बल नहीं है? छिः छिः, तुम्हारी दशा देखकर मुझे दुख होता है।" लीला कमरे से उठ कर आई और उसके पास खड़ी हो गई।

चौधरी के नेत्रों से जल निकल रहा था। वीणा की आजकी उपेक्षा और सबके सामने का अपमान उसके हृदय में बाण-सा चुभ गया था। लीला की ओर एक बार ताक कर उसने अपनी दृष्टि नीची कर ली, कोई बात कह नहीं सका।

लीला ने बहन के समान बड़े स्नेह से उसका हाथ पकड़ लिया और उसे वह सान्त्वना देने लगी—छिः, शान्त होओ। हृदय को स्त्रियों की तरह इतना दुर्बल मत करो। जो केवल तुम्हारी उपेक्षा करके और तुम्हें ज़लील करके खुश हुआ करती है उसके सम्बन्ध की तो कोई बात तुम्हें कभी दिल में भी न लानी चाहिए। तुम्हारे यदि ज़रा भी बुद्धि हो तो मनुष्य के ही समान उसके व्यवहार को सहन करो और उससे दूर रहा करो। जिन सब जानवरों को साथ में लिये हुए वह घूमती फिरती है, उन्हीं के साथ वह मौज से रहे; किसी भले आदमी को उसकी-जैसी लड़की की ज़रूरत नहीं होगी।

चौधरी ने कहा—मैं सभी कुछ समझता हूँ, सभी कुछ जानता

हूँ, किन्तु फिर भी उससे अलग नहीं रह पाता हूँ। तुम्हें यह नहीं मालूम है कि मैं उसे कितना चाहता हूँ। जब वह मुझे नीची निगाह से देखती या मेरी हँसी उड़ाती है तब मेरे जी में आता है कि शायद मैं पागल हो जाऊँगा। बाद को जैसे ही जरा ठिकाने से बातें करने लगती है, वैसे ही वे सारी बातें मेरे हृदय से निकल जाती है। उसे यदि मैं न प्राप्त कर सका तो शायद पागल हो जाऊँगा। उसे छोड़कर मैं किसी तरफ़ भी अपना मन नहीं फेर सकता।

"किन्तु किसके लिए यह सब कर रहे हो, इस बात को भी तो जरा सोचो? वह तो तुम्हें चाहती नहीं। वह भी यदि तुम्हें चाहती होती तो और लोगों के साथ बातचीत करके या इतनी उपेक्षा करके तुम्हें दुखी न कर सकती। उस अवस्था में तो तुम्हीं उसके हृदय पर इतनी दृढ़ता के साथ आसन जमा रखते कि वहाँ और किसी के लिए स्थान ही न होता।"

चौधरी ने अधीर भाव से कहा—तुम्हारा हृदय बड़ा प्रबल है लीला! किन्तु वीणा के सम्बन्ध में तुम्हारे उपदेश का अनुसरण करने की शक्ति मुझमें बिलकुल ही नहीं है। मैं उसकी पूजा करता हूँ। मेरे जीवन की वह ध्रुवतारा है। मेरे समस्त हृदय पर पैर फैला कर वह बैठी है। उसके दुर्व्यवहारों को सहन करने के अतिरिक्त मेरे लिए और कोई उपाय ही नहीं है, क्योंकि उसे खोना और मृत्यु, दोनो ही मेरी दृष्टि में समान है।

चौधरी का मनोभाव देखकर लीला चिन्तित हो उठी। इस तरह प्रेम के दीवाने युवकों के सम्बन्ध मे उसने बहुत कुछ सुन रक्खा था। इनके इस उन्माद का परिणाम प्रायः शोचनीय हो जाया करता है।

इस मामले को टालने के विचार से वह हँसकर कहने लगी—तुम्हारी जैसी दशा मेरी होती तो मैं सबसे पहले किसी डाक्टर के पास जाती। मैं तो समझती हूँ कि यहाँ के जल-वायु के प्रभाव

से तुम्हारे दिमाग़ पर कुछ गर्मी छा गई है, इस समय नियमित रूप से उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। थोड़े दिन के लिए यह जगह बदल कर तो ज़रा देखो !

किन्तु चौधरी इस हास्यमय बात की ओर नहीं ध्यान आकर्षित कर सका। उसके हृदय का अन्धकार दूर होते न देखकर लीला और गम्भीर हो गई। वह कहने लगी—मेरी बात सुनो, चौधरी। वीणा की आशा मे व्यर्थ में दुख मत उठाओ। प्रयत्न करने पर उससे भी अधिक अच्छी स्त्री तुम्हें मिल जायगी, जिसके साथ प्रेम का आदान-प्रदान करके तुम सुखी होगे। तब तुम समझोगे कि वीणा को खोकर भी तुम्हारी या संसार की कोई हानि नहीं हुई। संसार का काम वैसे का वैसा ही चल रहा है और तुम भी खूब अच्छी तरह से हो। यह केवल तुम्हारे एक मानसिक विकार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ज़रा-सा प्रयत्न करके इसे यदि एक बार हृदय से निकाल दो, तो सारा मामला तय हो जाय।

एक रूखी हँसी हँस कर चौधरी ने कहा—मुझे ऐसा जान पड़ता है कि प्रेम के फेर म तुम कभी पड़ी नहीं हो लीला। यदि सचमुच किसी को चाहती होतीं तो ऐसी बात न कहतीं। मनुष्य जिसे चाहता है उसी को पाने के लिए उसका हृदय व्यग्र रहता है। उसके स्थान पर किसी दूसरे को लेकर वह क्या करेगा ? दूध की लालसा कहीं मट्ठे से पूरी होती है ? मैं वीणा से प्रेम करता हूँ, मेरे हृदय म किसी दूसरी लड़की के लिए कोई स्थान नहीं है। उसे या तो उपलब्ध कर लूँगा या एक-दम निराश ही हो जाऊँगा और उस समय मेरे लिए दो ही रास्ते होंगे। या तो निराशा के कारण मैं आत्म-हत्या कर लूँगा या पागल हो जाऊँगा। यह समझ रक्खो कि इसके सिवा कोई तीसरा उपाय मेरे लिए नहीं है।

चौधरी के हृदय का भाव सूचित करके लीला ने एक बार वीणा से कहा कि कुछ भी हो, उसके साथ तुम कोई एक निर्दिष्ट

व्यवहार करो। उसके साथ तुम इस तरह का तमाशा क्यों करती हो? मनुष्य क्या हृदय का खेल करने के लायक एक तुच्छ वस्तु है?

लीला की यह बात सुन कर वीणा तो हँसते-हँसते लोट-पोट हो गई। उसने कहा---तो क्या इस बार उसने तुम्हें वकील किया है? तमाशा छोड़ कर उसके साथ भला और किया ही क्या जा सकता है? क्या तुम चाहती हो कि मै चौधरी के साथ विवाह कर लूँ? उसके पास रक्खा ही क्या है? मेरे लिए एक कपड़ा तक खरीद देने का तो उसे ठिकाना है नही।

लीला ने जरा-सा रुष्ट होकर कहा---यदि उसके साथ वैसा ही साफ़ व्यवहार करो तो न बने? बेचारा व्यर्थ की आशा मे क्यों मरे? निरर्थक आशा देकर और प्रेम का अभिनय करके उसे दौड़ा दौड़ा कर मारने की जरूरत क्या है?

"लीला, तो तुम बेमतलब मुझे छेड़ने क्यो आती हो? मैं तो तुम्हारे किसी अच्छे या बुरे काम में हस्तक्षेप करती नही हूँ। कहती तो हूँ कि उनमें से किसी की ओर भी निगाह उठा कर मै देखती तक नहीं हूँ, फिर भी वे लोग रात-दिन मेरे पीछे-पीछे लगे रहते हैं। उसमें मेरा क्या अपराध है? इसके मैं क्या करूँ?"

"सचमुच जब तुम किसी की ओर दृष्टि उठाकर न ताकती होतीं तो तुम्हारे पास तक फटकने का किसी को साहस न होता। तुम सब के साथ खुलकर मिलती हो, सबसे घनिष्ठता करती हो और प्रेमी के समान बातचीत करने का अधिकार देती हो। साथ ही यह भी कहती हो कि मेरा क्या अपराध है? यह सब कौतुक-प्रियता और खामखयाली के अलावा और कुछ नहीं है।"

"अच्छा, अच्छा, इतना रुष्ट मत होओ। इस बार से चौधरी के साथ मैं बड़ा मधुर व्यवहार किया करूँगी। तब तुम देखना। यह कहते कहते साँझवाली बात वीणा को याद आगई और वह फिर हँस हँस कर लोटपोट होने लगी। उसने कहा---सचमुच लीला,

आज साँझ को ऐसा मजा आया था कि तुझे क्या बतलाऊँ। पहले तो वह क्रोध के ही मारे लाल हो गया था, बात ही नहीं करता था—मेरी ओर मुँह तक नहीं फेरता था, किन्तु मैंने जैसे ही दो-चार बातें कीं, गलकर एक-दम पानी हो गया। उस समय उसका कैसा गद्गद भाव था! तुम्हीं बतलाओ। ये लोग यदि स्वयं पालतू बन्दर की तरह नाचा करते हैं तो इनको नचा कर मनोरञ्जन किये बिना भला कभी रहा जा सकता है? हँसते हँसते वीणा के पेट में बल पड़ गये थे। इधर उसके ओछेपन से विरक्त होकर लीला वहाँ से चली गई।

( २० )

"मैं जहाँ तक समझता हूँ और इनके स्वास्थ्य की जो दशा है, उससे पता चलता है कि इन्हें शारीरिक रोग की अपेक्षा मानसिक रोग ही अधिक है। आप क्या यह ठीक ठीक जानती हैं कि इनके हृदय पर कोई विशेष आघात पहुँचा है या इनकी मानसिक उत्तेजना का कोई कारण है या नहीं?"

निर्मला ने उत्तर दिया—मेरी समझ में तो कोई ऐसी बात नहीं है। जब से मैं बड़ी हुई हूँ और कुछ समझने लगी हूँ तब से तो मैं बराबर ही पिताजी को खूब स्वस्थ और प्रसन्न देखती आ रही हूँ। हममें से किसी को भी कोई ऐसी बात नहीं मालूम है कि इनके हृदय में भी कोई क्लेशकर बात है। आप भी तो गत पन्द्रह वर्ष से पिताजी को देखते आ रहे हैं। क्या इनके मनोभावों में कभी किसी प्रकार का परिवर्तन देखा है?"

मिस्टर घोष के नये बगीचेवाले मकान में खड़े खड़े निर्मला और उसके गृहचिकित्सक अनिल बाबू में इस प्रकार बातचीत हो रही थी। दो-तीन दिन पहले मिस्टर घोष के आन्तरिक आग्रह से यहाँ निर्मला की गार्डेनपार्टी का उत्सव किया जा चुका था। यह भी निर्णय

हुआ था कि कुछ दिन तक यहाँ रहकर वे लोग फिर शहर में लौट जायँगे।

निर्मला की बात के उत्तर में अनिल बाबू ने कहा---उन्हें बाहर से देखने में तो कभी यह नहीं मालूम पड़ा कि कोई ऐसा कारण होगा, परन्तु उनके जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली बातें बाहरी आदमी तो जान नहीं सकेंगे! इसी लिए आपसे पूछा है। सम्भव है, आप के परिवार से सम्बन्ध रखनेवाली कोई ऐसी घटना हो जिसके कारण इनका हृदय व्यथित हुआ करता हो या इनके व्यक्तिगत जीवन की ही कोई ऐसी बात हो, जिसे सोच सोचकर ये भयभीत और उद्विग्न हुआ करते हों। ये सब बातें तो किसी अन्तरङ्ग व्यक्ति के अतिरिक्त और कोई जान नहीं सकता। अतएव कोई इस प्रकार की बात मालूम होती तो इनके रोग का कारण ढूँढ़ने में कुछ आसानी होती।"

निर्मला ने कहा---पारिवारिक दुर्घटना तो मैं केवल अपनी माता की मृत्यु को ही जानती हूँ, परन्तु वह तो एक बहुत पुरानी घटना है। उसके कारण आज इनकी अवस्था में इस प्रकार का परिवर्तन असम्भव-सा जान पड़ता है। इसके अतिरिक्त इन्हें देखने से ऐसा जान पड़ता है कि मानो ये बहुत डर रहे हैं, मानो इन्हें किसी व्यक्ति से किसी प्रकार के अनिष्ट की आशङ्का है, इसी लिए ये भयाकुल हो उठते हैं।

"यह भी तो असम्भव नहीं है कि इनका कोई बहुत बड़ा शत्रु हो और इन्होंने उसके प्रति किसी प्रकार का अन्याय किया हो, जिससे वह सदा ही बदला लेने की घात में रहा करता हो, और उसी के भय से ये आज-कल इस प्रकार उद्विग्न रहा करते हों।"

निर्मला के नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। उसने कहा---पिताजी अन्याय करेंगे, यह बात तो स्वयं आँखों से देखकर भी मैं विश्वास नहीं कर सकती। पिताजी कभी अपनी सुख-सुविधा की

ओर विशेष ध्यान नहीं रखते, उनका अतुलित धन किस किस दिशा में और किस किस प्रयोजन से खर्च हो रहा है, यह तो आप सभी जानते हैं। साधारण नौकर-चाकर को भी कोई कड़ी बात कहकर वे कभी क्लेश नहीं दे सकते। ऐसा उनका हृदय है! वे भला ऐसा कौन-सा कार्य कर सकते हैं, जिसके लिए आज उनके चित्त को इतना खिन्न होना पड़े?

अनिल बाबू बड़े चतुर थे। चिकित्सा के सम्बन्ध में उनका ज्ञान कम नहीं था। मिस्टर घोष से वे बहुत दिनों से परिचित थे, साथ ही पारिवारिक चिकित्सक होने के कारण वे उनके यहाँ एक घनिष्ठ मित्र के रूप में आया-जाया करते थे। निर्मला को इस प्रकार कातर देखकर उन्होंने उसे सान्त्वना दी और कहा कि शायद इस बात से आप के हृदय पर विशेष आघात पहुँचा है, परन्तु वास्तव में यह कोई ऐसी बात नहीं है जिसके लिए आप इतना दुखी हों। अपने दीर्घ अनुभव तथा जानकारी की बदौलत मुझे ऐसी कितनी ही घटनायें मालूम हैं जिन पर पहले किसी को विश्वास नहीं होता था, किन्तु बाद को वे ही सत्य प्रमाणित हुई हैं। कितने बड़े बड़े महान् व्यक्तियों के भी जीवन में कुछ ऐसी बातें देखने में आती हैं जो उनके जीवन के अनुकूल नहीं प्रतीत होतीं। अस्तु, इन सब बातों के फेर में पड़कर आप व्यर्थ में दुखी न हों। चिकित्सक के कर्तव्य से प्रेरित होकर मैं यह बात कह रहा हूँ। यदि ऐसी कोई बात आप जान सकें तो मुझे सूचित करेंगी।

निर्मला ने अपनी आँखें पोंछ लीं और वह कहने लगी—आप जो कह रहे हैं वह यदि ठीक है तो उसके लिए इतने दिनों तक तो कुछ गड़बड़ न हुआ, आज ही कल में यह झमेला क्यों उठ खड़ा हुआ है? सचमुच उन्होंने यदि कोई ऐसा काम किया होता—?

"यह कुछ नहीं कहा जा सकता। सम्भव है, पहले कोई ऐसी बात न रही हो, और आज-कल कोई अप्रिय घटना हो गई

हो अथवा किसी बहुत पुरानी घटना का स्मरण हो आना भी कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। प्रायः कितनी बातें हमारे अन्तस्तल की विस्मृति में निमग्न रहती हैं, किसी साधारण से प्रसङ्ग, किसी बात या घटना के कारण एकाएक उनकी याद आ जाना कोई विचित्र बात नहीं है। आप सदा उनकी ओर अच्छी तरह ध्यान रखिएगा। ऐसे रोगियों को सावधानी के साथ 'वाच' करना ही अधिक आवश्यक होता है। जिस समय वे व्यर्थ में बकने लगते हैं, उस समय यदि हो सके तो उनकी बातें समझने का प्रयत्न कीजिएगा। दो ही एक बात मालूम होने पर भी रहस्य का उद्घाटन करने की चेष्टा की जा सकती है। मैं बीच बीच में आकर देख जाया करूँगा, कोई चिन्ता न कीजिए। यदि कोई आवश्यकता पड़े तो मुझे तुरन्त ही सूचना दीजिएगा।"

डाक्टर चला गया। दिन का चौथा पहर था। अस्तङ्गामी सूर्य की किरणों से अनुरञ्जित आकाश की ओर अपनी विषादमय दृष्टि लगाकर निर्मला चुपचाप ताकने लगी। सामने के ही तिमंजिले मकान की आड़ में सूर्य भगवान् अपना मुँह छिपा रहे थे। इधर एक मास से इस अनिश्चित आशङ्का तथा उद्वेग ने उसके प्रफुल्लित जीवन पर अन्धकार की छाया डालकर उसका सारा आनन्द मिट्टी में मिला दिया है। इसका क्या कभी अन्त होना सम्भव है? अपने को आज वह बिलकुल असहाय, बिलकुल अकेली समझ रही थी। गम्भीर वेदना और उद्वेग के कारण उसके हृदय में बार बार यही बात आती—आज यदि माताजी जीवित होतीं! बुआजी स्वभाव की बड़ी सरल हैं। विपत्ति के समय उनसे किसी प्रकार की सान्त्वना या परामर्श पाने की आशा नहीं है। मेरे एक-मात्र अवलम्बन पिता जी हैं, उनकी यह दशा है। मेरे हितैषी-कुटुम्बी और कोई है नहीं, जिसका सहारा लिया जा सके। जिस माता की आकृति उसके हृदय से लुप्तप्राय हो चुकी थी, आज उसी की याद आ आकर उसके नेत्रों को बार बार सींचने लगी।

उस दिन बड़ी रात तक निर्मला को नींद न आई। अनिल बाबू की बातों को सोच सोचकर वह उन पर विचार कर रही थी। परन्तु मिस्टर घोष के पहले के जीवन की बातों में से यदि कुछ छिपाने योग्य हों तो उनका कैसे पता चलाया जा सकता है? बहुत सोच-विचार करने पर भी निर्मला यह बात स्थिर नहीं कर सकी। वह स्वयं बहुत थोड़ी अवस्था से घर से पृथक् रहती आ रही थी। साल में महीने दो महीने से अधिक कभी घर से उसका वैसा सम्बन्ध नहीं रहा करता था। वह भी यदि देश में ही रहना होता तो भी घर के लोगों से या पास-पड़ोसवालों से बहुत कुछ बातें मालूम हो जातीं। परन्तु बहुत दिनों से निवासस्थान से भी उसके सम्बन्ध का अन्त हो चुका है! तब किससे इन सारी बातों का पता चलाया जा सकता है? केवल बुआजी हैं। उनसे यदि कोई बात मालूम की जा सके तो——

बुआजी की याद आते ही निर्मला के हृदय में जग सी आशा का सञ्चार हुआ। प्रयत्न करने पर कुछ न कुछ तो उनसे मालूम ही हो जायगा। इन्होंने सारा जीवन पिताजी के ही साथ व्यतीत किया है, ये घर की छोटी-बड़ी सभी बातें जानती होंगी।

इस चिन्ता के निवृत्त हो जाने पर भी निर्मला किसी प्रकार शान्त न हो सकी। अनिल बाबू की संशयपूर्ण बातों से उसके हृदय पर बड़ा आघात पहुँचा था। भीतर भीतर वह चिन्ता उसे बहुत पीड़ा दे रही थी। उसके पिता के कलङ्क-रहित और स्वच्छ जीवन में ऐसी कौन-सी गुप्त घटना रह सकती है जो आज उनके जीवन को इस प्रकार अशान्तिमय बना सके।

चन्द्रमा के प्रकाश से चारों दिशायें धवलित हो रही थीं। गम्भीर रात्रि की निस्तब्धता तथा अनुपम सुन्दरता से परिपूर्ण प्रकृति की गोद में बैठी हुई निर्मला चिन्ता से व्यग्र थी, बाल्यजीवन की कितनी ही स्मृतियाँ उसके हृदय पर उदित हो रही थीं।

रात्रि की निस्तब्धता को एकाएक भङ्ग करके धीरे से खट खट शब्द हुआ, मानो कोई भयभीत होकर कमरे का दरवाजा खोलने की चेष्टा कर रहा था। डर के मारे निर्मला काँप उठी। चारों ओर उसने ध्यान से देखा, परन्तु कहीं कुछ दिखाई न पड़ा। वह सोचने लगी, घर के सभी लोग इस समय खर्राटे ले रहे हैं, तो क्या बाहर से कोई आदमी घर में प्रवेश करने का प्रयत्न कर रहा है? निर्मला का सारा शरीर पसीने से तर हो गया। बरामदे में उसकी नौकरानी पड़ी सो रही थी, उसे पुकार कर जगाने के लिए वह दौड़ी, किन्तु अत्यधिक भय के कारण उसका स्वर रुँध गया, गले से आवाज़ न निकल सकी। पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चेष्ट होकर वह किंकर्तव्य-विमूढ़ हो रही थी।

इस बार फिर उसी प्रकार का शब्द सुनाई पड़ा। परन्तु इस बार का शब्द पहले की अपेक्षा कुछ अधिक जोर का था। निर्मला एकाएक चौंक पड़ी और खिड़की से उसने अपना मुँह बाहर निकाला। यह क्या? यह शब्द तो मिस्टर घोष के कमरे की ओर से आ रहा था? निर्मला का हृदय बड़े जोर से स्पन्दित हो उठा। तो क्या उन्हीं का किसी प्रकार का अनिष्ट करने के लिए कोई खिड़की या दरवाज़े से उनके कमरे में प्रवेश करने की चेष्टा कर रहा है? क्या इस विपत्ति की सम्भावना से ही वे आज एक मास से अशान्ति और उद्वेग से दिन काट रहे हैं? यह बात मन में आते ही उसका सारा आतंक और जड़ता उसी समय जाती रही। अस्पष्ट और आर्त्त स्वर से 'बाबू, बाबू' कहती हुई बाण के समान वह कमरे से निकली और मिस्टर घोष के कमरे की ओर दौड़ पड़ी।

बीच रास्ते ही में उसका जाना रुक गया। उसने देखा कि खट से मिस्टर घोष के कमरे का द्वार खुल गया। मतवाले की तरह लड़खड़ाते हुए कमरे से निकल कर मिस्टर घोष बरामदे में खड़े हुए।

चकित होकर निर्मला बीच रास्ते में खड़ी थी। भय और विस्मय के मारे उसका शरीर रोमांचित हो उठा था। यह मामला क्या था? मिस्टर घोष की आँखें आधी मुँदी थीं। मुँह पर जीवन का कोई लक्षण था नहीं। मुर्दे के मुँह का-सा पीलापन उस पर छाया हुआ था। गति रुक गई थी, बाहर से चेतनता का कोई लक्षण उनमें दिखाई ही नहीं पड़ रहा था, जान पड़ता था, मानो घोर निद्रा से ही उठ कर चले आए हैं। ऐसी भयानक घटना निर्मला ने कभी नहीं देखी थी। अतएव पिता की यह अवस्था देखकर स्वयं उसकी भी चेतना जाती रही और निर्जीव-सी होकर वह वहाँ की वहीं खड़ी रह गई। पिता का उस समय का मुँह देखकर उसके समस्त अन्तस्तल को उद्वेलित करके केवल एक व्याकुल रुदन का उच्छ्वास उसके हृदय को ठेल कर निकलना चाहता था, किन्तु उसके कण्ठ से कोई भी स्वर निकल नहीं पाया। उसकी समस्त प्राण-शक्ति का अपहरण करके मानो किसी ने उसे पत्थर की प्रतिमा के रूप में परिणत कर दिया था।

मिस्टर घोष अपने आप अस्फुट स्वर से कुछ कहते कहते दो एक क़दम चलते और बीच बीच में रुक कर खड़े हो जाते। मानो वे कुछ सोच रहे थे। उनकी आकृति पर ऐसा व्याकुल भाव था, मानो वे किसी ऐसी गम्भीर समस्या में पड़े हुए हैं, जो किसी तरह सुलझ ही नहीं पाती।

उनकी आँखें आधी खुली रहने पर भी वे कुछ देख नहीं पाते थे। चलते-चलते एक बार निर्मला के पास आकर वे खड़े हो गए, किन्तु उसकी ओर कुछ ध्यान दिये बिना ही कहने लगे—नहीं नहीं, यह असम्भव है! अपनी सन्तान के सामने अपने मुँह से ही इस तरह की बात कहना! ओह, यह किसी तरह से भी नहीं हो सकता। परन्तु तब! तब क्या होगा?

कुछ क्षणतक शून्य दृष्टि से वे ताकते रहे। एकाएक न जाने किस

बात की याद आगई, जिससे उनका मुँह उज्ज्वल हो उठा। अपनी ही धुन में फिर उन्होंने धीरे-धीरे कहा—ठीक हो गया, ठीक हो गया। लिख जाऊँगा। बस, सब ठीक हो जायगा। आश्चर्य है कि यह बात आज तक ध्यान में नहीं आई।

बरामदे को पार करके मिस्टर घोष अपनी बैठक की ओर चले। निर्मला भी समस्त शक्ति से अपने को सँभालती हुई उनके पीछे पीछे चली। बैठक में आकर मिस्टर घोष अपनी दराज़ के पास पहुँचे और कुंजी खोजने के लिए जेब में हाथ डाला।

रात को पहननेवाले ढीले कोट की जेब उन्हें न मिल सकी। उनकी आकृति पर विरक्ति की रेखा झलक उठी और मेज पर की सारी चीजें बिखेर कर वे कुंजी ढूँढने लगे। निर्मला उनके यह सारे कृत्य चुपचाप देख रही थी। बोलने या उनके समीप जाने का उसे साहस नहीं हो रहा था।

थोड़ी देर तक निरर्थक प्रयत्न करने के बाद क्लान्त होकर मिस्टर घोष एक कुर्सी पर बैठ गए। दोनों हाथों पर मस्तक रख कर धीरे धीरे जो कुछ कह रहे थे उसे सुनने के लिए निर्मला ने बड़ा प्रयत्न किया, किन्तु वह केवल इतना ही सुन पाई—राम गोविन्द जीत तुम्हारी ही हुई। तुमने जिस तरह बदला लिया है!

पिता की बात उसकी समझ में न आई। यह नाम उसने कभी सुना नहीं था। किन्तु इतनी देर के बाद समस्या का समाधान करने के लिए जरा-सा सूत्र मिल गया, उसके लिए यही बहुत था।

मिस्टर घोष फिर उठे। बरामदे को पार करके अपने कमरे के द्वार पर वे आए और कुछ क्षण तक चुपचाप खड़े रहे। बाद को वे कमरे में घुस गये और खट से दरवाजा बन्द कर लिया।

उनके कमरे के बाहर खड़ी होकर निर्मला खिड़की से ताकती रही। जरा देर ही में जोर जोर से उनकी नाक का घर्राटा सुनाई पड़ने लगा।

( २० )

दूसरे दिन सवेरे रसोईघर के सामने बरामदे में बैठी बैठी पाँमुल रख कर बुआ जी तरकारी कतर रही थीं, साथ ही साथ नये नौकर बिहारी से उन्होंने कुछ सौदा खरीदने के सम्बन्ध में बड़ा करारा झगड़ा भी छेड़ रक्खा था। बिहारी उस समय भी बँगला अच्छी तरह नहीं समझ पाता था, इधर बुआजी का हिन्दी का भी ज्ञान अपूर्व ही था। इससे स्वभावतः विरोध शान्त न होकर उत्तरोत्तर संगीन ही होता जा रहा था।

बुआजी बहुत ही अप्रसन्न भाव से टोकरी से एक एक तरकारी निकाल कर खूब सावधानी के साथ उसकी परीक्षा करतीं और अपनी ही धुन में बकने लगतीं—हाय रे भाग्य, जरा इन मूलियों की शकल तो देखो? इसी को बाजार करना कहते हैं? मैं पूछती हूँ कि तेरी आँखें कहाँ थीं? कपाल पर या माथे के पीछे?

बिहारी इस प्रश्न का कोई अच्छा उत्तर नहीं स्थिर कर सका। अतएव मूढ़ की तरह वह चुपचाप ताकता रह गया।

उसे चुप देख कर बुआजी का पारा बराबर चढ़ता ही गया। उन्होंने कहा—फिर मुँह बाकर खड़ा ताक रहा है, मानो बिलकुल बेवकूफ़ है, कुछ जानता ही नहीं। यही मली है, बिलकुल सींक-जैसी! यह तरकारी बनाने या खाने लायक़ है! तुम्हारी तरह सभी तो पशु हैं नहीं! आग लगे ऐसी जात में, कच्ची मूली लेकर जड़-पत्ता समेत चबा कर निगल लेते हैं! वे कभी अच्छी तरह से देख-भाल कर सौदा खरीदेंगे? मुँह से बोला नहीं जाता, जो आँख निकाल कर खड़ा ताक रहा है?

जरा-सा ताव में आकर बिहारी ने कहा—ताकूँगा नहीं तो क्या आँख मूँद लूँगा? हमको बताओ न कि क्या हुआ है? केवल झूठ-मूठ बकती क्यों हो?

बुआजी की जलती हुई आग में घी की आहुति पड़ गई। कड़क कर उन्होंने कहा—मैं तुमसे कहे देती हूँ बिहारी, तू मुँह पर जवाब मत दिया कर। जवाब मैं नहीं सह सकती हूँ। छदाम का सौदा खरीदने का तो शऊर नहीं है, तिस पर जवाब देता है। क्या यों ही मुझे क्रोध आता है? यही तुम्हारा चार पैसे का कोहड़ा है? यह उँगली-जैसी पतली-पतली ज़रा-सी छीमी! इसका दाम चार पैसा है? मुझे बेवकूफ़ बनाने आया है?

बिहारी का मिजाज धीरे धीरे गरम ही पड़ता जा रहा था। इस बार चोरी का इशारा पाते ही उसका क्रोध एकाएक भभक उठा। उसने तमाकर बड़े अभिमान से कहा—चार पैसा दाम नहीं है तो क्या मैंने चोरी की है? तब से खाली बक बक कर रही हैं? कल से हम नहीं जायँगे बाज़ार! यहाँ नौकरी करने आया हूँ, चोरी करने नहीं आया!

पंचम स्वर में बुआजी ने कहा—नहीं भाई, चोरी तुम क्यों करोगे? तुम तो एकदम धर्मपुत्र युधिष्ठिर हो! मर मुँहजले, बोलने को मरता है। भैया का ऐसा काम ही है। अपना घर-गाँव छोड़ कर इन अभागे जंगलियों के देश में आकर बसे हैं। यहाँ के आदमियों की जैसी बुद्धि है वैसी ही अंट-शंट बोली है। तिस पर भी कुछ कहा जाय तो कभी कभी गर्म भी पड़ जाते हैं! तुझसे कहा नहीं था एक नाउ (लौकी) लेते आना! एक भी काम की तरकारी नहीं, ज़रा-सी कोई गीली और रसे की तरकारी न होगी, तो किस चीज़ के साथ उन लोगों को भात खाने को दूँगी? सो वह 'नाउ' लाने को ही यह नमकहराम भूल गया मानो उसे लाने में दब कर मर जाता!

बिहारी ने कहा—यह किसने तुमसे कहा कि भूल गया? 'नाउ' तो मैं ले आया हूँ।

"कहाँ ले आया है, कहीं तो दिखाई नहीं पड़ता, ले आया है?"

"हाँ, हाँ, ले आया हूँ, बाहर खड़ा करके मैं चला आया, नाऊ ड्योढ़ी पर है।"

"मेरा तो जी ऊब गया भाई ऐसे आदमी से! मृत्यु भी नहीं आती कि पिंड छूट जाता। सब चीज़ें तो यहाँ लाया, उसे क्या मरने के लिए ड्योढ़ी पर छोड़ आया है? यहाँ लाने में क्या नवाबजादे का हाथ दर्द करता! बुद्धि की बलिहारी है! जा, ले आ यहाँ।"

बिहारी ने कहा—क्या यहाँ लाना होगा?

क्रोध के मारे दाँत पीसती हुई बुआजी ने कहा—यहाँ नहीं ले आयेगा तो क्या मैं ड्योढ़ी पर जाकर तरकारी बनाऊँगी? कैसी विपत्ति में पड़ गई भाई? तब से बकते-बकते सिर दर्द करने लगा।

बहुत ही अप्रसन्न भाव से भनभनाता भनभनाता बिहारी नाऊ लेने के लिए बाहर चला गया। इधर बुआजी अपनी धुन में बकती रहीं—जले ऐसा देश, यहाँ जब से आई हूँ, बकते बकते हैरान हूँ! नाऊ-कहार, महराज, सब एक तरह के हैं। यहाँ से रसोई में जाऊँगी तब फिर इसी तरह बारह बजे तक बक बक कर प्राण देने पड़ेंगे। भंडारे से एक नारियल निकाल कर लच्छे तो कर दे। थोड़ा थोड़ा करके मैं ही जाकर बनाऊँ, खाना-पीना तो उन लोगों का बन्द हुआ चाहता है। ऐसा खाना बनता है कि भूत भी उसे मुँह में लगाने को न चाहेगा, आदमी तो आदमी ही है।

कद्दूकस धोते धोते वामा कहने लगी—हाँ भाई, महराज का बनाया भात खाते खाते तो मेरा हाजमा ही खराब हो गया। उनकी बनाई चीजें खाने को जी नहीं चाहता। उस दिन ऐसा अच्छा पोस्ता पीस कर और इमली देकर महराज को खूब समझा आई थी कि पकौड़ी भून कर इमली डालना और खूब खट्टी खट्टी कढ़ी करना। अरे राम, जब खाने बैठी तब कढ़ी की शक्ल देखकर दंग रह गई। न वह नुनखार थी और न खट्टी थी, सब एक में मिला कर मानो

पिंड बाँध लिया था। दाल रोटी खाते खाते तो इनकी जिन्दगी कटती है। अच्छी रसोई बनाना कहाँ से जाने ?

इतने में बिहारी ने आकर कहा—बुआजी तुम्हारा नाऊ (नाई) आया है।

उसकी ओर दृष्टि डालते ही बुआजी ने देखा तो एक पाँच हाथ की लम्बी मूर्ति अधमैले कपड़े पहने खड़ी थी। उसका रंग स्याही जैसा काला था और मस्तक पर एक बड़ी भारी पगड़ी थी, बगल में एक मैले कपड़े की किस्वत थी और पैरों में देहाती जूता था। बुआजी अवाक् होकर सन्दिग्ध दृष्टि से इस बिभीषण मूर्ति की ओर ताकती रहीं।

बामा ने भयभीत होकर एक बार उसकी ओर देखकर कहा—तेरा मतलब क्या है बिहारी, जरा बतला तो सही! कोई बात नहीं, चीत नहीं, कहाँ से न जाने किसको लाकर एकदम घर में खड़ा कर दिया है ? तेरी बदमाशी बहुत बढ़ गई है।

बिहारी ने कहा—झूठी बात मत बोलो बामा, तुमने सुना नहीं था, बुआजी ने ही तो कहा था, कि यहाँ बुला लाओ। मैं तो उसे ड्योढ़ी पर खड़ा करा आया था।

क्रोध से काँपते काँपते बुआजी ने कहा—मैंने क्या कहा था ? तू समझता है कि तेरी चाल मैं कुछ समझती ही नहीं हूँ! दगाबाज कहीं का! इस डाकू के साथ सध-बध कर इसे घर का भेद-भाव और रास्ता दिखलाने लाया है! बामा, जरा निर्मला को बुलाओ तो, अपने नौकर की कारसाजी देख ले। किसी दिन आधी रात को गले पर छुरी न फेरी तो मेरा नाम नहीं।

इन सब अनुचित अभियोगों का मर्म तो बिहारी समझ नहीं सका, परन्तु बुआजी की बकझक से खीझ अवश्य उठा था। क्रोध में आकर जब वह स्वयं भी अपने पक्ष-समर्थन का प्रयत्न करने लगा तब दोनों ओर का वादविवाद तुमुल कलह के रूप में परिणत हो

गया। ठीक उसी समय रंगमंच पर निर्मला ने प्रवेश किया और कहने लगी—मामला क्या है भाई ? क्या हुआ बुआजी ? इतनी बकझक किस लिए मची है ?

बिहारी के लिए उस समय निर्मला डूबते का सहारा हो गई। उसने कहा—देखो न बिटिया रानी, आज सबेरे से बक बक करके बुआजी ने मुझे एकदम से हैरान कर दिया है। अपने आप ही कहा था कि एक नाऊ बुला लाओ। मैं नाऊ बुला लाया, तब उससे नाखून वग़ैरह कटवाती नहीं, केवल चिल्ला भर रही हैं। चोर, बदमाश, डाकू, हरामजादा, वग़ैरह जो मन में आता है, वही कहती हैं। मैं अब यहाँ नौकरी न करूँगा।

बुआजी ने हाँफते हाँफते कहा—तुम नौकरी न करोगे तो मानो हमारा जहाज ही डूब जायगा। देखो, बच्ची, हमने इसको कोई ऐसी बात नहीं कही। जब यह बाजार जा रहा था तब मैंने कहा था कि एक नाउ (लौकी) ले आना, बिना किसी गीली तरकारी के खाया नहीं जाता। खैर, इस बात को तो भाड़ में जाने दो। न जाने कहाँ से इस कातिल डकैत को लाकर घर के भीतर घुसा दिया है। ऊपर से चट चट जवाब देता है। भैया को उठने दो, तो इसे मजा चखाती हूँ।

दोनों पक्षों का वक्तव्य सुनकर निर्मला का मलिन मुख क्षण भर में हँसी से विकसित हो उठा। उसने हँस कर कहा—उसे चार पैसे देकर वि-ा कर दे बिहारी ! बुआ जी इस समय नाखून न कटावेंगी।

"इतनी देर हाय-हत्या न करके वही बात पहले कह देतीं तो क्या बिगड़ जाता ! तब से खाली बखेड़ा ! खाली बखेड़ा ! चला आव भाई।"

नाई को लेकर बिहारी बहुत ही अप्रसन्न भाव से बाहर चला गया।

निर्मला ने कहा—इसमें उसका कोई दोष नहीं है बुआ जी।

तुमने उसे 'नाउ' लाने को कहा था। वह बँगला तो समझता नहीं। यहाँ के लोग 'नाउ' नापित को कहते हैं। इसी लिए वह एक नाई बुला ले आया था। इस देश में रहना है तो जरा यहाँ की बोली भी सीखनी होगी। नहीं तो यहाँ के लोगों से काम नहीं ले सकोगी।

बुआजी उस समय भी हाँफ रही थीं। निर्मला की यह वक्तृता सुनकर वे अवाक् हो गई, उनके मुँह से फिर कोई बात नहीं निकली।

वामा ने कहा—दण्डवत् करती हूँ तुम्हारे ऐसे देश को बच्ची, जहाँ के लोग नाउ कहने से नापित पकड़ लाते हैं। उस मुँह-जले नाई का कैसा भयानक चेहरा था? जान पड़ता था कि कहीं का डाकू, या क़ातिल है। क्या यों ही मेरा मन यहाँ नहीं लगता? यहाँ का सारा कारख़ाना ही सृष्टि से परे है।

निर्मला अभी तक यही सोच रही थी कि मैं अपनी बात बुआजी के सामने किस तरह छेड़ूँ। वामा की इस बात से अवसर पाकर उसने कहा—सचमुच बुआजी, आजकल मेरा भी मन यहाँ नहीं लगता। यहाँ रहते तो बहुत दिन बीत गये, अब एक बार अपना घर-गाँव देखने को भी जी चाहता है।

अपनी रुचि के अनुकूल यह प्रस्ताव देखकर, इतनी देर के बाद बुआजी के हृदय का क्षोभ और विरक्ति दूर हुई। चित्त में प्रसन्न होकर उन्होंने कहा—यह तो अच्छी बात है बच्ची! आदमी को क्या चिरकाल तक परदेश ही अच्छा लगता है, या सदा वह परदेश में ही पड़ा रहना पसन्द करता है? आज भैया जब खाने आवेंगे तब उनसे कहूँगी कि यहाँ अब निर्मला का जी नहीं लगता, अब तुम्हें यहाँ का डेरा कूच करना होगा। ठीक है न?

इस बात का उत्तर न देकर निर्मला ने कहा—परन्तु बुआजी, क्या तुम समझती हो कि इतने दिन बाहर बिता कर हम लोग जब देश में चलेंगे तब वहाँ आराम से रह सकेंगे? हमें कोई कठिनाई तो नहीं होगी?

बुआजी ने कहा—वाह बिटिया, रह क्यों न सकेंगे? तुम्हारे बाप की बदौलत क्या वह गाँव पहले का-सा ही उजाड़ है? चारों ओर बड़ी बड़ी पक्की सड़कें हैं, स्कूल है, अस्पताल है, लड़कों के खेलने का मैदान है। अब वह गाँव क्या है, बिलकुल शहर है। जो चीज़ चाहो वही पा सकती हो। वहाँ रह क्यों न सकोगी? जंगल-झाड़ी काट काट कर दो बड़े बड़े बगीचे लगवा दिए हैं, एक बड़ा-सा तालाब खुदवा दिया है, उसमें साफ़ जल सदा हलकता रहता है।

बीच में ही रोक कर निर्मला ने अधीर भाव से कहा—मेरे कहने का यह मतलब नहीं है। सुनती हूं कि गाँव के लोगों में आपस में दलबन्दी, लागडाँट, मनमुटाव, और शत्रुता रहती है। पिताजी के सम्बन्ध में तो कोई ऐसी बात नहीं है? उनकी शत्रुता तो किसी से नहीं है।

"मेरी बात सुनो। भैया तो हैं भोलानाथ आदमी। फिर उनके साथ किसी की कैसी शत्रुता? वहां के लोग देवता की तरह इनके प्रति श्रद्धा करते हैं। फिर भी हर तरह के आदमी होते हैं। चार आदमी मिलकर इनके विरुद्ध भी कानाफूसी कर सकते हैं। तुम इतनी बड़ी हो गई हो, अभी तक विवाह नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त तुम लोगों की चाल-ढाल भी तो अब बिलकुल बदल गई है न? परन्तु इन सबसे तुम्हें क्या करना है? लुक-छिप कर न जाने कौन किसको क्या कहता है? उस ओर ध्यान देने की ही क्या आवश्यकता है?

निर्मला ने कहा—आज तुम अपने देश का ही हाल बताओ, बुआजी, सुनने की मुझे बड़ी इच्छा है। हमारे घर पर आजकल कौन कौन हैं, हमारे घर के आसपास किसके घर हैं, यह सब मैं जानना चाहती हूँ। इसके बाद ही खूब स्वाभाविक रूप से बात ही बात में उसने पूछा—अच्छा बुआजी, हमारे देश में रामगोविन्द नाम के कोई एक आदमी हैं, क्या तुम उन्हें पहचानती हो?

तुमने उसे 'नाउ' लाने को कहा था। वह बैतला तो समझता नहीं। यहाँ के लोग 'नाउ' नापित को कहते हैं। इसी लिए वह एक नाई बुला ले लाया था। इस देश में रहना है तो ज़रा यहाँ की बोली भी सीखनी होगी। नहीं तो यहाँ के लोगों से काम नहीं ले सकोगी।

बुआजी उस समय भी हाँफ रही थीं। निर्मला की यह वक्तृता सुनकर वे अवाक् हो गई, उनके मुंह से फिर कोई बात नहीं निकली।

बामा ने कहा—दण्डवत् करती हूं तुम्हारे ऐसे देश को बच्ची, जहाँ के लोग नाउ कहने से नापित पकड़ लाते हैं। उस मुँह-जले नाई का कैसा भयानक चेहरा था? जान पड़ता था कि कहीं का डाकू, या क़ातिल है। क्या यों ही मेरा मन यहाँ नहीं लगता? यहाँ का सारा कारख़ाना ही सृष्टि से परे है।

निर्मला अभी तक यही सोच रही थी कि मैं अपनी बात बुआजी के सामने किस तरह छेड़ूँ। बामा की इस बात से अवसर पाकर उसने कहा—सचमुच बुआजी, आजकल मेरा भी मन यहाँ नहीं लगता। यहाँ रहते तो बहुत दिन बीत गये, अब एक बार अपना घर-गाँव देखने को भी जी चाहता है।

अपनी रुचि के अनुकूल यह प्रस्ताव देखकर, इतनी देर के बाद बुआजी के हृदय का क्षोभ और विरक्ति दूर हुई। चित्त में प्रसन्न होकर उन्होंने कहा—यह तो अच्छी बात है बच्ची! आदमी को क्या चिरकाल तक परदेश ही अच्छा लगता है, या सदा वह पर-देश में ही पड़ा रहना पसन्द करता है? आज भैया जब खाने आवेंगे तब उनसे कहूँगी कि यहाँ अब निर्मला का जी नहीं लगता, अब तुम्हें यहाँ का डेरा कूच करना होगा। ठीक है न?

इस बात का उत्तर न देकर निर्मला ने कहा—परन्तु बुआजी, क्या तुम समझती हो कि इतने दिन बाहर बिता कर हम लोग जब देश में चलेंगे तब वहाँ आराम से रह सकेंगे? हमें कोई कठिनाई तो नहीं होगी?

बुआजी ने कहा—वाह बिटिया, रह क्यों न सकेंगे? तुम्हार बाप की बदौलत क्या वह गाँव पहले का-सा ही उजाड़ है? चारों ओर बड़ी बड़ी पक्की सड़कें है, स्कूल है, अस्पताल है, लड़कों के खेलने का मैदान है। अब वह गाँव क्या है, बिलकुल शहर है। जो चीज़ चाहो वही पा सकती हो। वहाँ रह क्यों न सकेंगी? जंगल-झाड़ी काट काट कर दो बड़े बड़े बगीचे लगवा दिए हैं, एक बड़ा-सा तालाब खुदवा दिया है, उसमें साफ़ जल सदा हलकना रहता है।

बीच में ही रोक कर निर्मला ने अधीर भाव से कहा—मेरे कहने का यह मतलब नहीं है। सुनती हूं कि गाँव के लोगों में आपस में दलबन्दी, लागडाँट, मनमुटाव, और शत्रुता रहती है। पिताजी के सम्बन्ध में तो कोई ऐसी बात नहीं है? उनकी शत्रुता तो किसी से नहीं है।

"मेरी बात सुनो। भैया तो है भोलानाथ आदमी। फिर उनके साथ किसी की कैसी शत्रुता? वहाँ के लोग देवता की तरह इनके प्रति श्रद्धा करते हैं। फिर भी हर तरह के आदमी होते हैं। चार आदमी मिलकर इनके विरुद्ध भी कानाफूसी कर सकते हैं। तुम इतनी बड़ी हो गई हो, अभी तक विवाह नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त तुम लोगों की चाल-ढाल भी तो अब बिलकुल बदल गई है न? परन्तु इन सबसे तुम्हें क्या करना है? लुक-छिप कर न जाने कौन किसको क्या कहता है? उस ओर ध्यान देने की ही क्या आवश्यकता है?

निर्मला ने कहा—आज तुम अपने देश का ही हाल बताओ, बुआजी, सुनने की मुझे बड़ी इच्छा है। हमारे घर पर आजकल कौन कौन हैं, हमारे घर के आसपास किसके घर हैं, यह सब मैं जानना चाहती हूँ। इसके बाद ही खूब स्वाभाविक रूप से बात ही बात में उसने पूछा—अच्छा बुआजी, हमारे देश में रामगोविन्द नाम के कोई एक आदमी हैं, क्या तुम उन्हें पहचानती हो?

एकाएक यह बात सुन कर बुआजी चौंक उठीं और तीव्र दृष्टि से निर्मला के मुंह पर ताकने लगीं। उस समय वह अन्यमनस्क भाव से बेगन की एक फांकी लेकर जमीन पर कुछ लिख रही थी। उसे देखने से यह नहीं मालूम पड़ता था कि रामगोविन्द के सम्बन्ध में वे कुछ जानती है? बुआजी कहने लगीं—कौन रामगोविन्द? ऐसा कोई तो नहीं याद पड़ता। ओह, ठीक बात, एक रामगोविन्द थे, परन्तु वे हमारे यहां के नहीं थे, वहीं पास के एक दूसरे गाँव में रहते थे। परन्तु उन्हें क्यों पूछ रही हो? क्या भैया से कभी उनके सम्बन्ध में कुछ सुना है?

निर्मला ने उदासीन भाव से कहा—नहीं, मैंने कुछ सुना नहीं। यों ही, पिता जी से दो-तीन बार उनका नाम सुना था, इसी से पूछती हूं। क्यों बुआजी, वे क्या करते थे? क्या इस समय भी वे वहां रहते हैं?

जरा-सा व्यस्त भाव से बुआजी ने कहा—इस समय उनके घर का कोई वहां नहीं रहता। तुम्हारे बाप के साथ उनका बहुत दिन तक मामला चलता रहा, ससुराल से एक बार मैं आई थी तब सुना था। यह बीस-बाइस वर्ष की बात है। बाद को किसे क्या हुआ था, यह ठीक ठीक में नहीं जानती। जितने आदमी हैं, उतनी तरह की बातें करते हैं, परन्तु उनके घर का अब कोई वहां नहीं रहता है।

निर्मला ने उद्विग्न भाव से पूछा—लोग क्या क्या कहते हैं बुआजी?

बुआजी ने गम्भीर भाव से कहा—यह सब सुन कर तुम क्या करोगी बच्ची? उसके अतिरिक्त उन व्यर्थ की बातों पर मुझे विश्वास भी नहीं होता। भैया कभी ऐसा काम .... कहते कहते वे उठ पड़ीं और कहने लगीं—जरा रसोई-घर में जाकर देखूं तो महराज क्या कर रहा है? हमारे यहाँ तो सभी एक से एक बढ़कर कामकाजी हैं!

दोनों हाथों से अपना माथा दाब कर पकड़े हुए निर्मला वहीं बैठी रही। इधर रसोई के बहाने से बात टाल कर बुआजी उठ गईं। उनके भाव से मालूम हो गया कि ये जानती बहुत-सी बातें हैं, किन्तु उन सबको किसी दिन प्रकट न करेंगी। निर्मला ने यह तो समझ ही लिया कि पिताजी के जीवन में ऐसा कोई गुप्त रहस्य है जिसके कारण वे आज इस तरह की मर्मान्तिक अशान्ति का अनुभव कर रहे हैं। निर्मला मन ही मन बहुत लज्जित और दुखी हो रही थी। जिस पिता का उन्नत और उदार चरित्र इतने दिनों तक पवित्र आदर्श की तरह श्रेष्ठ था उस देवता के-से चरित्र में कलंक की कौन-सी कालिमा लगी है, जो छिपाने के योग्य है और किसी के सामने जिसकी चर्चा ही करना उचित नहीं है! उस चिर-स्थायी कलंक का भार हृदय पर छिपाए रख कर पिताजी कितनी कठोर और कितनी मर्मान्तिक वेदना का चुपचाप अनुभव कर रहे हैं? सोते-जागते किसी समय भी चिन्ता की उस ज्वाला से उन्हें छुटकारा नहीं मिलता। गम्भीर सुषुप्ति में भी वह चिन्ता एक कमरे से दूसरे कमरे में उन्हें घुमाया करती है। कल रात में चन्द्रमा के प्रकाश में निर्मला ने पिता का जो पाण्डुवर्ण का मुँह देखा था उसकी याद आ गई, साथ ही उस समय की उनके मुँह से निकली हुई अधूरी बात—नहीं, नहीं, अपने मुँह से यह बात नहीं कही जा सकती—भी याद आई। ओह, किस तीव्र वेदना की ज्वाला उन्हें रात-दिन जलाती रहती है?

मर्माहत होकर निर्मला चुपचाप रोने लगी। ऐसा कौन-सा अनुचित कार्य पिताजी ने कर डाला है! कदाचित् वह बात अब उनसे दबा कर नहीं रक्खी जाती। कदाचित् वे चाहते हैं कि निर्मला को सब कुछ बता कर अपना हृदय शान्त कर लूँ, किन्तु दुर्निवार लज्जा के कारण उस बात को प्रकट करना उनके लिए असम्भव हो रहा है। इस समय अब वह क्या कर सकती है? इस परिस्थिति में वह किस प्रकार उन्हें ज़रा-सी शान्ति दे सकती है?

निर्मला इसी उधेड़बुन में पड़ी थी कि बिहारी ने आकर कहा—एक आदमी आया है बिटिया रानी! वह कहता है कि दो दिन से कुछ खाना-पीना नहीं हुआ। बहुत दुबला हो गया है वह। जरा उसे देखो तो!

अपने नेत्रों का जल पोंछ कर निर्मला ने पूछा—कौन है वह? कोई भिखारी है? महराज से माँग कर तुम उसे कुछ नहीं खिला सके? हमसे कहने क्यों दौड़े आए?

बिहारी ने मस्तक हिलाकर कहा—नहीं, नहीं, भिखारी नहीं है! कोई भला आदमी है। बहुत भला आदमी मालूम पड़ता है। इसी लिए उसे बैठाकर मैं आपको सूचना देने आया हूँ। भिखारी होता तो महराज से माँग कर मैं उसे जरा-सा भात खिला न देता?

वह बाग़ और मकान शहर के बिलकुल किनारे पर था। वहा न तो कोई ऐसी बस्ती थी—और न लोगों का इधर आना-जाना ही रहता था। इससे निर्मला सोचने लगी कि यहाँ एकाएक भूखा होकर कौन-सा भला आदमी आ पहुँचा, यह निर्मला समझ न सकी। दूसरा उपाय न देख कर वह उठी और कहने लगी—चलो, देखें, कौन आया है?

टेबिल पर मस्तक रख कर एक बंगाली युवक बाहर के कमरे में कुर्सी पर बैठा हुआ सामने बग़ीचे की ओर ताक रहा था।

बिहारी के कण्ठस्वर से चकित होकर उसने जैसे ही मुँह फेरा, सामने निर्मला आ रही थी। उसकी ओर दृष्टि जाते ही उपवास से सूखा हुआ उसका मुँह आह्लाद की अधिकता से उज्ज्वल हो उठा। सम्मानपूर्वक कुर्सी पर से उठ कर उसने कहा—यह क्या, आप यहीं रहती हैं!

विस्मित होकर निर्मला ने देखा—वह असित था।

( २२ )

कल्याणपुर के महाराजा के खूब सजे हुए राजभवन के एक

उज्ज्वल और आलोकमय कमरे में किरण के साथ खड़ी वीणा बात-चीत कर रही थी।

महाराज के यहाँ पुत्र उत्पन्न हुआ था, उसी के उपलक्ष्य में एक बहुत बड़े उत्सव का आयोजन किया गया था। ज़िले के सभी राज-कर्मचारी, ज़मींदार तथा वहाँ के और सब धनी-मानी व्यक्ति इस उत्सव में सम्मिलित हुए थे। महीना भर पहले से ही इस उत्सव का प्रबन्ध हो रहा था, साथ ही इसकी चर्चा भी खूब हो रही थी। महिलाओं में परस्पर एक दूसरे से मुलाकात होने पर उस दिन की पोशाक के ही सम्बन्ध में बातचीत होती और इस सम्बन्ध में सम्मतियों का आदान-प्रदान भी होता। साथ ही पोशाकों की ख़रीद भी बढ़ती ही जाती।

वीणा उस दिन अपने शरीर की अनुपम आभा तथा बहुमूल्य वस्त्रों और आभूषणों के कारण चमचमा रही थी। वह वायलेट रंग की एक साड़ी पहने थी, जिस पर सुनहरी ज़री के गुलाब के बड़े बड़े फूल कढ़े थे और गले में उसके मोतियों की माला थी। घने काले और नर्म बालों के ऊपर हीरे की एक तितली खूब चमकीले तारे के समान चमचमा रही थी।

आज फिर एक बार किरण के ऊपर अपनी मोहिनी शक्ति का प्रयोग करके उसे जीतने का उसने संकल्प किया था।

लीला 'हाल' के भीतर मिसेज़ राय के पास बैठी थी। उसने सुना, वीणा कह रही थी कि मेरी यह आज की नई पोशाक कैसी मालूम पड़ रही है?

किरण का उत्तर स्पष्ट सुनाई पड़ा—आज मुझसे कुछ कहा नहीं जाता वीणा, मेरी आँख झुलस गई है। यह मेरी समझ में ही नहीं आता कि आज मैं तुम्हें देखूँ या तुम्हारी पोशाक देखूँ।

वीणा का सुन्दर मुँह आनन्द और लज्जा के मारे लाल हो गया। बहुत ही सन्तुष्ट होकर उसने किरण का हाथ पकड़ लिया

और कहने लगी—किन्तु आज जितनी देर तक हम लोग यहां रहेंगे उतनी देर तक तुम्हें मेरे ही साथ रहना पड़ेगा। रहोगे न?

इस बात के उत्तर में किरण ने जरा-सा हंस भर दिया।

पास ही खड़ा चौधरी सतृष्ण नेत्रों से वीणा की ओर ताक रहा था। वीणा के साथ दृष्टि मिलते ही वह उसके बगल में जा कर खड़ा हो गया। किन्तु वीणा ने घूम कर भी उसकी ओर नहीं ताका। "चलो ज़रा बग़ीचे में घूम आवें," कह कर किरण का हाथ पकड़े हुए अपने हृदय के उल्लास में वह कमरे से निकल गई।

मिसेज राय प्रसन्नतामयी दृष्टि से उन दोनों को देख रही थी। कन्या के लिए किरण-जैसा वर पाकर कौन नहीं अपने को सौभाग्य-शाली समझेगा? वीणा यदि उसे अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हो सकी तो उससे बढ़कर आनन्द की बात और क्या हो सकती है?

केवल लीला का हृदय किसी अज्ञात विषाद के कारण उद्विग्न हो उठा। किरण के साथ उसका विरोध आज भी दूर नहीं हुआ। वह सोचने लगी कि आजकल वीणा के साथ इसकी इतनी घनिष्ठता क्यों है? उसे उस दिन की बात याद आई जब वह मैदान में किरण के ही बग़ल में खड़ी होकर गपशप करती थी। उस समय का दृश्य उसके हृदय-पटल पर उदित हो आया। उसे अब यह अच्छी तरह मालूम हो गया कि वीणा आजकल सबको छोड़ कर केवल किरण को ही अपनी मुट्ठी में करने का प्राणपण से प्रयत्न कर रही है। इसमें उसके बुरा मानने की कौन-सी बात हो सकती थी, यह उसकी समझ में न आया। किन्तु हृदय में यह धारणा आते ही वह व्यग्र हो उठी। हो सुन्दरी! फिर भी तो किरण को प्राप्त करने की आशा करना उसके लिए कितने दुस्साहस की बात है? किरण क्या कोई ऐसा-वैसा आदमी है?

कल्याणपुर के आस-पास कई मील तक रोशनी की धूम थी।

मैदानों और बग़ीचों में स्थान-स्थान पर रङ्गीन लालटेनें गड़ी थीं, बनावटी फ़ौवारों से निकल-निकल कर सुगन्धित जल की धारा चारों ओर बह रही थी। मैदान में तरह-तरह की आतशबाज़ी की धूम थी, जिससे उस रात को वहाँ से दूर रहनेवाले भी उसे देख-देख कर, प्रसन्न हो रहे थे।

किरण आज और दिनों की अपेक्षा भी बहुत अधिक गम्भीर था। केवल शिष्टाचार की रक्षा के ही लिए वह वीणा के साथ बरामदे में टहल रहा था।

वीणा ने सोचा था कि आज की रात का सारा समय किरण के साथ इच्छानुसार मनोविनोद करने में बिताऊँगी, परन्तु ज़रा देर में ही उसने अनुभव कर लिया कि किरण के ऊपर अपनी इच्छा का प्रयोग करना उसके लिए सम्भव नहीं है। सारी शक्ति का प्रयोग करके उसने किरण को अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न किया, किन्तु कोई फल न हुआ।

किरण का चित्त आज स्थिर नहीं था। वह वीणा से हँसता था, उसके साथ बात-चीत करता था, किन्तु केवल रूखे शिष्टाचार के लिए। उसके हँसी-ठट्ठे में किसी प्रकार के आनन्द या हार्दिक अनुराग का लक्षण नहीं था। वह वीणा के पास था अवश्य, किन्तु उसका चित्त लीला की ही ओर लगा था और उसी के चेहरे पर उसकी दृष्टि भी थी।

बड़े ठाट-बाट से खाना-पीना समाप्त हो गया। बाहर मैदान में कलकत्ते का बैंड बज रहा था। 'हाल' में स्थान स्थान पर भिन्न भिन्न प्रकार के सुप्रसिद्ध सङ्गीत-विशारदों की मजलिस में देशी राग-रागिनियों का आलाप हो रहा था। जो लोग निमन्त्रण में आये थे वे सब भोजन के बाद अपनी अपनी इच्छा के अनुसार बैंड सुन सुन कर बग़ीचे में घूमते, आतशबाज़ी देखते और दल बाँध-बाँध कर इधर-उधर टहल रहे थे।

लीला बरामदे में खड़ी एक बहुत मशहूर उस्ताद का सितार सुन रही थी। आज इस प्रमोद-भवन के विपुल उत्सव में हृदय खोल कर वह भाग नहीं ले सकी। किसी एक अज्ञात विषाद के भार से उसका हृदय मानो उदास हो उठा था। हाल के भीतर उसके मित्र-सहचर हँसी-मज़ाक और गप-शप कर रहे थे, परन्तु इन सब बातों में उसका चित्त नहीं लग रहा था। भोजन के बाद अवसर पाकर वह चुपके से उन लोगों के बीच से निकल आई और बरामदे में आकर अकेली खड़ी हो रही।

बिजली का अत्यन्त उज्ज्वल प्रकाश चन्द्रमा की किरणों को मलिन करके हँस रहा था। अधिकांश लोग इधर-उधर चले गये, इससे वह लम्बा-चौड़ा 'हाल' क़रीब क़रीब सूना हो गया। इस गम्भीर रात्रि की निस्तब्धता में सितार की मधुर झङ्कार से सुर की लहरी हर एक दिशा में उछली पड़ रही थी। अपनी वेदना को भूल कर लीला आत्म-विस्मृत के समान एकाग्रभाव से विहाग का आलाप सुनने लगी।

"अरे आप यहाँ हैं? भोजन के बाद से आपकी खोज में मैं कितनी जगह गया।" यह कहते हुए मिस्टर दत्त आकर लीला के पास खड़े होगये। पहले की भाँति वे फिर कहने लगे—सितार शायद आप को अधिक पसन्द है। है न? इतने ध्यान से सुन रही हैं आप!

ज़रा-सा हँसकर लीला ने कहा—मैं अपने देश के सभी बाजे पसन्द करती हूँ। इसके अतिरिक्त मैं समझती हूँ कि हमारे देश की राग-रागिनी की तरह संसार में कहीं और कोई भी वस्तु नहीं है। मेरा विचार है कि यहाँ के सङ्गीत-शास्त्र का खूब अच्छी तरह अनुशीलन करूँ। आपको क्या नहीं पसन्द है?

"मुझे? बहुत पसन्द है। इस सम्बन्ध में मैं आपसे अक्षर-अक्षर सहमत हूँ। विशेषतः मेरा अवकाश का समय तो सङ्गीत

की चर्चा में ही कटता है। साँझ होने के बाद मेरे और कोई काम-काज तो रहता नहीं, लगातार ग्यारह बजे रात तक सितार बजता रहता है।"

"अच्छा? तब तो आप खुद एक पक्के उस्ताद हैं। इतने दिन यहाँ रहे, परन्तु हम लोगों को कभी कुछ सुनाया नहीं। यह तो आपका बहुत बड़ा अन्याय है।"

मिस्टर दत्त ने हँसकर कहा—आपने मेरी बात को ग़लत समझा है मिस राय! मैंने कहा है कि ग्यारह बजे रात तक सितार बजता रहता है, परन्तु यह तो कहा नहीं कि उसे मैं ही बजाता हूँ। बजानेवाले मेरे उस्ताद हैं, मैं तो आराम-कुर्सी पर बैठे बैठे सुनता भर रहता हूँ।

"परन्तु आपको तो काफी अवकाश रहता है। एक आदमी भी नियुक्त कर रक्खा है। तो आप क्यों नहीं सीख लेते? क्या सुनने भर से ही इन सब बातों में तृप्ति होती है? मैं तो जब तक किसी विषय पर अपना पूर्ण अधिकार नहीं प्राप्त कर लेती तब तक उसकी ओर से मुझे तृप्ति नहीं होती।"

"यदि ऐसा होता तो अच्छा ही था। परन्तु सभी लोग तो हर विषय पर अधिकार कर नहीं सकते? यही गड़बड़ है। उद्योग मैंने बहुत किया, किन्तु अन्त में यही सिद्ध हुआ कि सङ्गीत की सरस्वती मुझसे बिलकुल विमुख हैं। इससे स्वभावतः मुझे उनके पास से भाग खड़ा होना पड़ा।" यह कह कर मिस्टर दत्त हँसने लगे।

लीला भी हँसी। कुछ देर के बाद मिस्टर दत्त ने कहा—जो भी हो, इतने दिन आप लोगों के यहाँ बड़े सुख से कटे मिस राय, परन्तु अब शीघ्र ही यह सब छोड़कर फिर उसी निर्वासन में लौट जाना पड़ेगा। छुट्टी के दिन जैसे ही जैसे पूरे हो रहे हैं, वैसे ही वैसे मेरे हृदय को मानो एक प्रकार का उद्वेग और आतङ्क दबाता चला जा

रहा है। किस तरह मैं अपने निःसङ्ग जीवन का दीर्घ समय अति-वाहित करूँगा, यह समझ में ही नहीं आ रहा है।

मिस्टर दत्त बङ्गाल के किसी ज़िले के मजिस्ट्रेट थे। छुट्टी लेकर वे कुछ दिनों से पटना में रहा करते थे।

लीला ने मिस्टर दत्त के मुँह की ओर अपनी दृष्टि फेरी। वह दृष्टि ममता और सहानुभूति से परिपूर्ण थी। मन ही मन दुखी होकर उसने पूछा—क्या वहाँ बिलकुल अकेले पड़ जाने के कारण आपको क्लेश होता है? मैं तो सर्वथा अकेली रहने की कल्पना तक नहीं कर सकती। मुझे जहाँ तक स्मरण है, इस तरह मैं कभी नहीं रही।

एक लम्बी साँस लेकर मिस्टर दत्त कहने लगे—यह कोई साधारण कष्ट नहीं है। वही एक बहुत बड़ा मकान—शहर से बहुत दूरी पर—एक नदी के तट पर। उधर वैसी बस्ती भी नहीं है। उसी के एक कोने में दो कमरों में मैं रहता हूँ। दिन का समय तो काम-काज में किसी तरह कट जाता है, परन्तु जब साँझ हो जाती है तब एक एक क्षण पर्वत हो जाता है। न रहा गया तो कोई पुस्तक लेकर आरामकुर्सी पर लेट जाता हूँ, परन्तु पढ़ने में भी मन नहीं लगता। कोई काम-काज करने को भी जी नहीं चाहता, शरीर ढीला किये पड़ा रहता हूँ। रात को दस बजे के बाद नौकरों की कृपा से कच्चा-पक्का जो भी मिल गया उसी को मुँह में ठेल कर सो जाता हूँ। दिन पर दिन इसी प्रकार बीतते चले जा रहे थे। अन्त में बहुत असह्य हो जाने पर एक उस्ताद रख लिया है, उन्हीं का बाजा सुनते सुनते किसी प्रकार समय व्यतीत हो जाता है। यही मेरा वहाँ का जीवन है।

"परन्तु इतना कष्ट क्यों सह रहे हैं मिस्टर दत्त? आप तो जब चाहें तभी अपने लिए एक जीवनसङ्गिनी खोज सकते हैं। निरर्थक इतना क्लेश सहने की आवश्यकता ही क्या है?" यह

बात कह कर एक मित्र के समान सरल भाव से लीला मिस्टर दत्त का मुह ताकने लगी।

"यह तो आप ठीक कह रही हैं मिस राय! परन्तु मनष्य को जिस वस्तु की कामना होती है उसे क्या वह सदा माँगते ही पा जाता है? कभी-कभी तो उद्वेग और आशङ्का के कारण उसके सम्बन्ध में जबान तक खोलने का साहस नहीं होता।"

अपने मुखमण्डल पर मिस्टर दत्त की बहुत ही गम्भीर और आग्रहपूर्ण दृष्टि का अनुभव करके लीला ने जरा-सा खीझ कर अपना मुँह फेर लिया। इस प्रसङ्ग को और बढ़ाने की न उसे इच्छा हुई और न साहस हुआ।

कुछ क्षण तक मिस्टर दत्त चुप रहे। अन्त में उन्होंने जरा इधर-उधर करके बहुत ही नम्र और मृदु स्वर में कहा—मैं आपसे एक बात कहना चाहता हूँ मिस राय! यदि आज न कह सका तो कदाचित् फिर कभी उसे कहने का अवसर ही न मिलेगा। इसलिए मैं आपकी आज्ञा चाहता हूँ।

लीला ने मस्तक उठा कर देखा। मिस्टर दत्त का उद्वेग और उनकी चञ्चलता देखकर उसने अनुमान से उनका मनोभाव बहुत कुछ समझ लिया और मन ही मन वह विरक्त हो उठी। किन्तु अपने को सँभाल कर स्थिर दृष्टि से मिस्टर दत्त की ओर ताकती हुई स्वाभाविक रूप से उसने कहा—कहिए न? आप तो मेरे इतने दिन के मित्र हैं। आपको अदब-क़ायदे की क्या जरूरत है?

लीला की स्थिर दृष्टि और उसकी अपरिवर्तित आकृति देखकर मिस्टर दत्त का उत्साह और आशा बहुत कुछ क्षीण हो गई। फिर भी उन्होंने कहा कि व्यर्थ में लम्बी भूमिका बाँधकर मैं समय नहीं नष्ट करना चाहता मिस राय! मुझे जो कहना है वह चट से कह दूँगा। मैं आप से प्रेम करता हूँ। मेरी सभी बातें तो आपको मालूम हैं। मुझे यदि इस योग्य समझें—

लीला के मुँह पर एक तीव्र वेदना की छाया पड़ गई, मानो किसी ने उसके अत्यन्त व्यथाजनक स्थान को जोर से रौंद डाला है! किरण का स्नेह खोकर लीला आज कितने दिन से रात-दिन कैसी मर्मान्तिक यन्त्रणा का उपभोग कर रही है। इधर एक व्यक्ति के हार्दिक अनुराग का प्रत्याख्यान करके उसे भी वही आघात वह कैसे दे?

मिस्टर दत्त कहते ही रहे—मैं बहुत दिनों से आपसे परिचित हूँ और आपका मित्र हूँ, इस बात का गर्व करने का भी अधिकार मुझे है। किन्तु अपने हृदय का यह भाव इतने दिन तक मैं स्वयं भी नहीं जान सका था। आपने क्लब में जिस दिन गीत गाया था, उस दिन मैंने आपको मानो नवीन रूप में देखा। उस दिन से मेरा हृदय आपकी शोभा और आपके प्रति अनुराग से परिपूर्ण है। मैंने बहुत उच्च आशा की है मिस राय, इतने बड़े सौभाग्य के योग्य नहीं हूँ। परन्तु—

लीला ने व्यथित हृदय से मिस्टर दत्त के उच्छ्वास को रोक दिया। उसने कहा—इसमे योग्य-अयोग्य की कोई बात नहीं है मिस्टर दत्त! शायद मेरे कारण आपको क्लेश हुआ है, इसके लिए क्षमा कीजिए। मैंने यह निश्चय कर लिया है कि विवाह न करूँगी। यदि करती तो कदाचित् आपके प्रस्ताव से असहमत न होती।

मिस्टर दत्त का मुँह मलिन हो गया। लीला फिर उनकी ओर न ताक सकी। वह किसी को भी कष्ट नहीं दे सकती थी। मिस्टर दत्त की म्लान दृष्टि का अनुभव करके उसने अपना मस्तक नीचा कर लिया।

कुछ देर तक मिस्टर दत्त चुपचाप बैठे रहे। 'हाल' के भीतर उस समय भी सितार बज रहा था, मानो किसी की युगयुगान्तर से सञ्चित वेदना सुर के भीतर से फूल-फूल कर और रो-रो

कर अपने को प्रकाशित करना चाहती थी। नीचे बगीचे में दल के दल खूब सज सजाये स्त्री-पुरुषों का मेला था, तेज इत्र और फूलों की सुगन्धि वायु में मिल कर उस स्थान को मादक और सुगन्धिमय बना रही थी।

एकाएक निस्तब्धता भंग करके मिस्टर दत्त ने कहा—किन्तु यह तो आपकी बिल्कुल असङ्गत इच्छा है मिस राय? आपकी यह इच्छा बहुत दिनों तक न रह सकेगी। जल्दी हो या देर में हो, किसी दिन आपको अपने इस विचार में परिवर्तन करना ही पड़ेगा। ऐसी दशा में आप मुझे क्यों व्यर्थ में वञ्चित करेंगी?

उनकी अन्तिम उक्ति उनके हृदय की निराशा और विलाप-ध्वनि के समान गूँज उठी।

लीला ने कहा—आप वीणा से पूछ लीजिए। उसकी विवाह करने की इच्छा है। परन्तु ऐसी इच्छा मेरे हृदय में बिलकुल ही नहीं है। मेरा विश्वास है कि विवाह होते ही सारी उन्नतियों में बाधा पड़ जाती है। कन्यायें जब पत्नी हो जाती हैं तब उनका अपने आप पर स्वतन्त्र अधिकार नहीं रह जाता। एक प्रकार का बन्धन या भार उनके सिर पर चढ़ ही जाता है। चाहे वह प्रेम के कारण हो या दबाव के कारण हो।

"परन्तु मेरी पत्नी वायु के समान स्वतन्त्र रहेगी, मैं कभी उसकी इच्छा या स्वाधीनता पर किसी प्रकार की बाधा न डालूँगा।"

"यह सम्भव है। किन्तु क्षमा कीजिए, वर्त्तमान अवस्था में पत्नी बनने का-सा उत्तरदायित्व स्वीकार करने की इच्छा किसी प्रकार भी मेरे हृदय में नहीं उत्पन्न होती।"

"कदाचित् कुछ दिन के बाद आपके विचारों में परिवर्तन हो सके। जितने दिन कहिये, उतने दिन तक प्रतीक्षा करने के लिए मैं तैयार हूं।"

लीला ने बहुत ही झुंझलाहट के साथ मुँह फेर कर कहा—यह

असम्भव बात है। मैं कब अपना विचार परिवर्तन करूँगी, यह बात स्वयं मुझे भी नहीं मालूम है। तब भला आप कैसे प्रतीक्षा करेंगे? हमारी आपकी मित्रता चिरस्थायी हो सकती है, किन्तु इस प्रसङ्ग को यहीं समाप्त हो जाने दीजिए।

लीला की बात समाप्त होते ही एकाएक किरण आकर वहाँ खड़ा हो गया।

"यदि तुम लोगों की बातचीत में मैंने कुछ विघ्न डाला हो तो क्षमा करना। लीला, तुम्हें बुलाने के लिए एक आदमी ने मुझे भेजा है।"

यह कह कर पहले की तरह अकुण्ठित और स्वाभाविक भाव से लीला का हाथ पकड़ कर उसे लिये हुए किरण बाहर चला गया।

( २३ )

इस आकस्मिक घटना से लीला कुछ देर के लिए भौचक्की-सी हो गई थी। आज एक महीना हो रहा था, तब से लीला से सारा सम्बन्ध त्याग कर किरण बाहर ही बाहर घूम रहा था। लीला के अनेक प्रयत्न करने पर भी उससे कभी उसने एक बात नहीं की। फिर आज एकाएक उसने ऐसा क्यों किया? यह सब लीला की समझ में किसी तरह भी न आया। उसके हृदय का अन्तर्भाग इस तरह काँप रहा था कि क्षण भर के लिए मानो उसकी साँस ही रुक गई। आज महीने भर से लीला मन ही मन उस क्षण की कामना कर रही थी, जब उसे किरण से बातचीत करने और उसके साथ घूमने का अवसर मिल सके। परन्तु जिस समय उसका अत्यभिलषित सुअवसर अनायास ही आ गया, उस समय कोई बात मुँह से निकालने की उसमें शक्ति ही न रह गई।

बगीचे की ओर ताकता हुआ किरण भी चुपचाप खड़ा था। वह क्या चाहता है, उसके हृदय का वास्तविक भाव क्या है,

यह वह स्वयं ही नहीं जानता था—उसने तो इतना भर समझा था कि इस तरह अब मुझसे नहीं रहा जाता।

आज महीना भर से लीला से पृथक् रह कर अपने हृदय के साथ युद्ध करते-करते किरण बहुत ही श्रान्त तथा क्षतविक्षत हो गया था। लीला से झगड़ा करके उससे दूर रहना किरण की शक्ति से परे था, इधर लीला को अपने समीप देखकर भी क्रोध से उसका हृदय जल उठता था। उस समय केवल कड़वी बात के अतिरिक्त उसके मुँह से और कुछ निकलता ही नहीं था। लीला ने नादान की तरह यह अद्भुत कार्य करके उसके हृदय में इतनी प्रबल अग्नि क्यों धधका दी?

जो दूर भी नहीं रक्खा जा सकता, साथ ही उसे पास लाने पर भी हृदय में अग्नि की ज्वाला असह्य हो उठती है, उस व्यक्ति के साथ किस तरह का व्यावहार करना चाहिए, यही बात किरण चित्त को एकाग्र करके सोच रहा था।

आज जिस समय वह यहाँ आया था उस समय भी उसका सङ्कल्प पहले की ही तरह दृढ़ था। वह संकल्प यह था कि लीला से मैं कोई सम्बन्ध न रक्खूँगा। परन्तु धीरे धीरे उसकी प्रतिज्ञा शिथिल होने लगी। महीना भर उसने लीला के मुँह की ओर नहीं ताका था, उसकी कोई बात भी नहीं सुनी थी। क्या और अधिक समय तक मनुष्य इस तरह रह सकता है? दुनिया भर के गँवारों का दल—जो लीला के हृदय को जरा भी नहीं पहचानता—उसके सम्बन्ध की कोई भी बात नहीं जानता—उसे रात-दिन घेरे फिरेगा और वह दूर रह कर पिपासित नेत्रों से वह दृश्य देखता रहेगा?

मन का आवेग एक बार इतना अनिवार्य हो उठा कि किरण एकाएक झपट कर दत्त के पास से लीला को हटा ले आया।

बरामदे की रेलिंग पकड़े हुए लीला मस्तक नीचा किये खड़ी थी, उसका शरीर काँप रहा था। किरण ने दृष्टि फेर कर एक

बार उसकी ओर ताक कर देखा। फूल के समान सुकुमार चन्द्रमा की किरणों में धुला हुआ उसका वही मुख था जिसे देख-देखकर किरण सदा ही प्रसन्न होता आया है। इसी के लिए उसका समस्त जीवन इस तरह अस्थिर हो उठा है! जिस तरह आज वह सबके सामने अपने अधिकार के गर्व से उसे खींच लाया है, क्या उसी प्रकार सारी बाधाओं तथा विघ्नों को अपने सबल बाहुओं से ठेल कर इस सुकुमारी तरुणी को अपने अधिकार में ला सकेगा? उसके अतिरिक्त लीला पर और किसका इतना अधिकार हो सकता है? परन्तु— परन्तु आज वह स्वयं उसके सारे प्रेम और स्नेह की उपेक्षा कर उसके पास से बहुत दूर चली गई है!

"किरण!" लीला ने बड़ी कठिनाई से अपने को बहुत कुछ सँभाल कर पुकारा—"किरण!"

किरण चौंक उठा। बहुत दिन के बाद आज इस प्रिय आह्वान के कारण उसके सारे शरीर में मानों सुख की एक धारा बह गई। वह केवल आत्मविस्मृत-सा होकर लीला के मुँह की ओर ताकता रहा, उत्तर न दे सका।

जरा देर तक प्रतीक्षा करके लीला ने फिर कहा—किरण! मुझे बुलाने के लिए किसने भेजा था, तुमने तो बतलाया नहीं।

"किसी ने नहीं।"

"तब क्या तुमने मिथ्या कहा था?"

"मिथ्या न कहता तो भला दत्त किसी तरह से आज तुम्हारा पिंड छोड़ता?

कुछ क्षण तक फिर दोनों नीरव रहे। गत दिनों की कितनी घटनायें, कितनी छोटी छोटी बातें, जरा जरा-सी-बातों के कितने झगड़े और कितनी सुखस्मृतियाँ हृदय में उदित होकर दोनों के ही चित्त को चञ्चल कर रही थीं। इतने दिनों के वियोग के बाद पहले की ही भाँति स्वच्छन्द भाव से मिलने के लिए दोनों

का हृदय व्याकुल हो उठा था, किन्तु इस थोड़े दिनों के विरोध ने उन दोनों के बीच में ऐसी मज़बूत दीवार खड़ी कर रक्खी थी कि पहले के सरल जीवन में प्रवेश करने का उन्हें कोई मार्ग ही नहीं मिला।

कुछ देर के बाद लीला फिर बोली। आज इतने दिनों के बाद उसे जो अवसर मिला है उसका तो सदुपयोग उसे करना ही पड़ेगा। उसे जो कुछ कहना है वह सब सिलसिलेवार कह देना होगा!

"तो इतने दिन के बाद मुझे क्षमा किया है किरण?" एकाएक किरण फिर कड़ा हो गया। उसने कहा—तुम्हें क्षमा? कभी नहीं, मैं तुम्हें कभी न क्षमा कर सकूँगा।

लीला का मुख बिलकुल ही रक्त से शून्य और सफ़ेद हो गया। उसने बड़े क्लेश से कहा—क्यों किरण, मैंने कौन-सा इतना बड़ा अपराध किया है?

हम तो यही समझते हैं कि कपट करके दूसरे के प्रेम का अभिनय करना अपराध और अन्याय है!

सङ्कोच और लज्जा के मारे लीला गड़ गई। उसने समझ लिया कि किरण के साथ मेरे विरोध का अन्त होने की अब कोई आशा नहीं है। मेरे अपराध के सम्बन्ध में वह ऐसी दृढ़ धारणा कर बैठा है कि उसे समझा-बुझा कर या युक्तियाँ प्रदर्शित करके किसी तरह भी नहीं शान्त किया जा सकता। तब उसके लिए व्यर्थ में क्यों हैरान होऊँ? जो विच्छेद होगा ही उसे स्वीकार कर लेने के अतिरिक्त और उपाय ही क्या है?

लीला ने कहा—जिस दिन मैंने पहले-पहल अपना विचार प्रकट किया था, उस दिन से तुम यह एक ही बात कह रहे हो किरण! मनुष्य का कार्य देखकर ही उसे सदोष या निर्दोष समझना सदा ठीक नहीं होता, उसका उद्देश समझ कर ही उसके सम्बन्ध में कुछ निर्णय करना ठीक होता है। यह बात तुम्हें समझाने के

लिए मैंने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु समझना तो दूर रहा, आज तक तुमने मुझे एक बात भी कहने का अवसर नहीं दिया। अस्तु, अब मैं यह सब बातें तुमसे कभी न कहूँगी। केवल एक बात तुमसे कहनी है। मैं जानना चाहती हूँ कि हमारी-तुम्हारी इतने दिनों की मित्रता का क्या यहीं पर अन्त हो जायगा?

किरण इस बात का एकाएक कोई उत्तर न दे सका। कुछ देर तक चुप रह कर उसने कहा—इससे पहले, अर्थात् इस बात का उत्तर देने से पहले मुझे भी तुमसे एक बात पूछनी है। तुमने जिस मार्ग का अनुसरण किया है उसके अन्तिम परिणाम या प्रतीकार के सम्बन्ध में कोई उपाय सोचा है?

"इस सम्बन्ध की तो आदि से अन्त तक की सारी बातें मैंने पहले से ही सोच रक्खी हैं। और वे बातें तुमसे छिपाने की कोशिश तो कभी मैंने की नहीं किरण? अब मैं इस बात का अनुभव कर रही हूँ कि इस सम्बन्ध में वीणा अपने विचार कभी न परिवर्तित करेगी। इससे यह निश्चय किया है कि शीघ्र ही मैं अरुण के सामने सारी बातें स्वीकार करूँगी। वीणा की चिट्ठी मेरे जीवन को दिन-दिन कितना विषमय करती जा रही है। अब मैं इस तरह की लुका-छिपी में नहीं रह पाती हूँ।"

"उसके बाद? सब सुन कर यदि वह तुम्हें घृणा के साथ दुतकार दे तब तो मामला खूब बन जायगा न? मैंने यह बात सुनते ही पहले जिस दिन उससे सब कह कर मामला तय कर देना चाहा था, उस दिन यदि मेरी बातें मान ली होतीं तो शायद समस्या इतनी जटिल न हो पाती।"

"तुम मेरी बातों को सदा से गलत समझते आ रहे हो किरण! मैं कहती हूँ कि वह मुझे कभी न अपने पास से लौटा सकेगा। मुझे त्यागने की शक्ति उसमें नहीं है। उसके लिए वीणा अब नाम भर को है। चाहे मैं वीणा होऊँ या लीला ही होऊँ, इसमें कुछ

होना-जाना नहीं है। वह केवल मुझे ही चाहता है। मुझसे उसने यथार्थ रूप से प्रेम किया है और उस प्रेम के ही कारण मेरे सभी दोषों और अपराधों को हँसते-हँसते क्षमा कर देगा। किसी दिन भी वह मुझे दूर नहीं रख सकेगा।"

यह बात कितनी सच है, यह किरण जिस तरह मन ही मन अनुभव कर रहा था, उस तरह और कौन करता? किन्तु लीला यह नहीं जानती थी कि यह चिन्ता ही किरण के सारे जीवन को दुखमय बनाये दे रही है। किरण मुझसे प्रेम करता है, मुझसे वञ्चित होने के ही कारण वह इतना उद्विग्न हो उठा है, इस बात का सन्देह एक बार भी उसके हृदय में नहीं उत्पन्न हुआ।

लीला की बातों से किरण के हृदय की ज्वाला फिर धधक उठी। क्रोध के मारे दाँत पीसते-पीसते उसने अपना मुँह दूसरी ओर फेर लिया और ज़ोर देकर अपने को सँभालने का प्रयत्न करने लगा। बाद को लीला की ओर मुँह करके रुँधे हुए स्वर में उसने कहा—यह तो उसके पक्ष की बात हुई। परन्तु तुम अपनी ओर से इस मामले को कैसा समझती हो?

यह कहकर लीला का उत्तर सुनने के लिए किरण व्यग्र हो उठा।

"मेरी ओर की बात जानकर तुम क्या करोगे?" लीला के नेत्रों में आँसू आ रहे थे। उन्हें छिपाने के लिए फ़ौवारे की ओर ताक कर उसने कहा—"मैं ठगिन हूँ, झूठी हूँ, स्वेच्छाचारिणी हूँ! मैं यदि कुछ कहूँ भी तो उस पर तुम्हें कैसे विश्वास होगा?"

हृदय के आवेग से लीला के दोनों पतले-पतले होंठ काँपने लगे।

उस समय लीला की मुखाकृति पर दृष्टि जाते ही किरण का सारा क्रोध और दृढ़ता हवा हो गई। पहले की ही तरह फिर प्यार से उसे पुकारने तथा उसके नेत्रों का जल पोंछ देने के लिए वह व्यग्र हो उठा। अपनी लीला को कड़ी बात कहकर और उससे

रूखा व्यवहार करके उसने उसे बड़ा क्लेश दिया है, उस तरह अब वह नहीं रह सकता ।

कोमल और मृदु स्वर में 'लीला' कह कर किरण ने जैसे ही हाथ फैलाया, वैसे ही किसी की छाया दिखाई पड़ी ।

"खूब मज़े से खिसक आई हो ! मैं कितनी देर से आपकी खोज में कहाँ-कहाँ भटक रहा हूँ !" कहते हुए मिस्टर सेन आकर लीला के पास खड़े हो गये ।

किरण अब कोई बात न कह पाया । सेन की ओर क्रोधमयी दृष्टि से ताककर वह तुरन्त ही वहाँ से चला गया ।

( २४ )

"उठ आइए मिस राय ! उधर आतशबाज़ी शुरू हो गई है, सब लोग देखने गये हैं । आप दिखाई नहीं पड़ीं इससे मैं खोजता-फिरता हूँ ।"

लीला के साथ आकर मिस्टर सेन बरामदे के दूसरे कोने में खड़े हुए । नीचे मैदान में अग्निक्रीड़ा हो रही थी । जो लोग निमन्त्रण में आये थे वे सब खिड़कियों, बरामदे और छत पर से आतशबाज़ी देख रहे थे ।

लीला के हृदय में उस समय तृप्ति नहीं थी । शून्य दृष्टि से वह ताक रही थी । मिस्टर सेन की तरह-तरह की बातें, आतशबाजी के तरह-तरह के आश्चर्यजनक और मनोहर खेल तथा वहाँ जो लोग उपस्थित थे, उन सबके आनन्द-उत्सव उसे ज़रा भी नहीं अच्छे मालूम पड़ रहे थे । किरण से उसके विछोह का रुकना सम्भव नहीं मालूम पड़ता था, इसलिए वेदना के मारे उसका चित्त क्षुब्ध और पीड़ित हो उठा था । अपनी इच्छा से लीला ने जिस मार्ग का अनुसरण किया था उसका अन्तिम फल था अरुण के साथ उसका विवाह और अरुण के साथ विवाह होने का मतलब था

किरण से सदा के लिए विछोह। अपना यह मृत्युबाण उसने स्वयं अपने ही हाथों से तो बनाया था। आज इससे बच कर चलने की उसमें शक्ति नहीं थी। चाहे कितनी भी हानि या यन्त्रणा क्यों न हो, उसका तो उसे सहन करना ही पड़ेगा।

आतशबाज़ी खतम हुई। फिर भी मिस्टर सेन का लीला को छोड़ कर जाने का कोई लक्षण न दिखाई पड़ा। कुछ दिनों से लीला यह अनुभव कर रही थी कि मेरी ओर मिस्टर सेन का झुकाव अधिक है, इससे उनकी ओर से उसका चित्त ऊब-सा उठा था। जहाँ तक होता वह मिस्टर सेन का साथ बचा कर चलती। विशेषतः आज, जब उसका चित्त बहुत ही दुखी था, उनकी बातचीत से वह बहुत ही घबरा उठी थी।

लीला की घबराहट की ओर मिस्टर सेन ने ध्यान नहीं दिया। आज वे अपनी ही चिन्ता और आशा से विह्वल थे। बात ही बात में लीला के गाने की शक्ति की चर्चा छेड़ कर वे उसकी तारीफ़ का पुल बाँधने लगे। उन्होंने कहा—मैं समझता हूँ कि इस विषय में आपकी जो अतुलित शक्ति है उसका आप कोई सदुपयोग नहीं करतीं। परन्तु यह बड़ा अनुचित है। अभ्यास न रहने पर धीरे-धीरे कहीं स्वर की मधुरता ही न नष्ट हो जाय।

इस बात का कोई उत्तर न देकर लीला ने हँस भर दिया। कैसे अशुभ मुहूर्त्त में उसने क्लब में गीत गाया था! एक ही तरह की बात बहुत-से आदमियों के मुँह से सुनते-सुनते वह ऊब गई थी!

"आप हँसती हैं? मैं सच कहता हूँ, आपका गाना सुनकर मैं इस तरह मुग्ध हो गया हूँ कि कुछ कह नहीं सकता। मुझे कहना तो न चाहिए, किन्तु कहे बिना भी नहीं रहा जाता। जिसके साथ आपका विवाह होगा वह कैसा सौभाग्यशाली पुरुष है यह बात जब मन में आती है तब उस अज्ञात व्यक्ति के भाग्य पर मुझे ईर्ष्या होती है।"

लीला ने हँसकर कहा—यह आपकी भूल है। उस व्यक्ति पर ईर्ष्या न करके आपको दया करनी चाहिए। आप जानते नहीं, मैं बहुत ही हठीली और धुन की पक्की हूँ, इसी लिए मुझसे किसी की बनती नहीं।

मुँह पर अविश्वास की हँसी विकसित करके मिस्टर सेन ने लीला की ओर देखा और कहने लगे—ठट्ठा करती हैं आप! मैं इस बात पर कभी नहीं विश्वास कर सकता हूँ। मिस्टर सेन ज़रा-सा रुक गये। एक बार खाँस कर लीला की ओर ताकते हुए उन्होंने बड़े सङ्कोच से कहा—कहने का साहस तो नहीं होता मिस राय! परन्तु यदि आप अभय दें तो कह ही डालूँ। वह स्थान यदि मैं प्राप्त कर सकूँ तो सारा उत्तरदायित्व लेने को तैयार हूँ।

हक्का-बक्का-सी होकर लीला चुपचाप बैठ रही। किसी की भी आशा तोड़ कर उसके हृदय को क्लेश पहुँचाने में लीला को स्वयं बड़ा दुःख होता था, परन्तु संसार भर के युवक यदि उसी के साथ विवाह करने के लिए पागल हो उठें तो वह कर ही क्या सकती थी।

लीला को चुपचाप देख कर मिस्टर सेन ने फिर कहा—मेरी बात पर विचार कीजिएगा मिस राय! यदि आपको मैं पत्नी के रूप में प्राप्त कर सका तो अपने को धन्य समझूँगा। मैं आपको कितना चाहता हूँ, यह कैसे बतलाऊँ? आज-कल रात-दिन आपका ही चेहरा चित्त पर चढ़ा रहता है, दूसरी कोई बात ही नहीं सूझती। कचहरी में भी आपकी सुध नहीं भूलती। कभी-कभी तो तजवीज़ में भी भूल कर आपका नाम या आपके सम्बन्ध की बातें लिख मारता हूँ।

"वही तमाम क्रिमिनल अभियुक्तों के बदले में? विरक्ति की तीव्र हँसी में लीला ने इस बात को उड़ा देना चाहा।

"अन्त में आपने मेरे साथ ठट्ठा करना शुरू कर दिया है?"

मिस्टर सेन निराशभाव से लीला की ओर ताकने लगे। अन्त में उन्होंने कहा—मुझे अपने सम्बन्ध में कुछ कहना नहीं है मिस राय ! मेरे हृदय में आपके प्रति जो अखण्ड प्रेम है, केवल उसी को मुझे आपसे निवेदन करना है। मनुष्य स्वयं चाहे कितना ही तुच्छ क्यों न हो, किन्तु उसके हृदय का एकनिष्ठ और पवित्र प्रेम तो कभी उपेक्षा की वस्तु नहीं हो सकता। जिस दिन मैंने आपको इस रूप में देखा है उस दिन से मुझे—

सेन के उच्छ्वास में एकाएक बाधा पड़ गई। उस समय वीणा बहुत ही व्यग्रभाव से वहाँ जाकर खड़ी हुई। उसके साथ में चौधरी था।

"मिस्टर सेन, आप जरा मिस्टर चौधरी से बातचीत कीजिएगा? लीला से मुझे कुछ खास बात करनी है।" यह कह कर मधुर मुस्कराहट के साथ वीणा ने मिस्टर सेन की ओर देखा।

सेन उसी जिले के मजिस्ट्रेट थे। उनसे मुक्ति पाने की आशा से लीला अभी तक व्यग्र दृष्टि से इधर-उधर ताक रही थी, अब वीणा की बात सुनते ही सेन के उत्तर की प्रतीक्षा न करके वह तुरन्त ही उठ खड़ी हुई।

लीला को जरा-सा दूर ले जाकर वीणा ने बहुत ही व्यग्र-भाव से चुपके-चुपके पूछा—किरण कहाँ गया? वह तो दिखाई नहीं पड़ रहा है? जरा देर पहले तुम्हारे ही पास तो मैंने उसे देखा था?

वीणा की आकृति पर ईर्ष्या की छाप देखकर लीला को हँसी आ रही थी, फिर भी मुँह पर गम्भीरता लाकर उसने कहा—शायद भीड़ में कहीं खो गया होगा। बिल्कुल छोकड़ा है न!

"ठट्ठा मत करो लीला। हर समय का तुम्हारा ठट्ठा अच्छा नहीं लगता।" वीणा ने रोष के भाव से कहा—तुम्हें बतलाना पड़ेगा कि वह कहाँ गया। और तुम्हारी भी कैसी बुद्धि है? इतनी

देर तक उसके साथ अकेले में बैठ कर बातचीत करती रही हो? यह सब निर्लज्जता का व्यवहार देखकर ही तो लोग इस तरह की बातें कह सकते हैं! दुनियादारी का जरा-सा ज्ञान नहीं है तुमको?

लीला ने वीणा को और भी जलाने के लिए कहा—वह स्वयं जाकर मुझे बुला ले आया था, मैं तो मिस्टर दत्त के साथ खड़ी सितार सुन रही थी। मुझे बुलाकर वह बरामदे में ले आया और कहा—चलो, ज़रा गप-शप की जाय। तब से बड़ी देर तक यहीं रहा। आतशबाज़ी शुरू होने पर सेन मुझे आतशबाजी देखने के लिए इधर ले आये, उसी समय से मैंने उसे नहीं देखा कि वह कहाँ गया।

वीणा बहुत ही अधीर हो उठी। उसने कहा—उससे मेरा तय हुआ था कि आज वह आदि से अन्त तक मेरे ही साथ रहेगा। साँझ से बराबर था भी। खाते समय शोर-गुल और भीड़-भाड़ में वह न जाने किस ओर कहाँ ग़ायब हो गया! बाद को देखा तो वह तुम्हारे पास जमा था! मेरी समझ में नहीं आता कि तुम दोनों को कौन-सी ऐसी बात करनी थी जो इतनी देर तक जमे रहे?

लीला और कुछ नहीं बोली। चारों ओर के शोर-गुल और तरह-तरह की उत्तेजनाओं से उसका शरीर न जाने कैसा भारी-सा मालूम पड़ रहा था। वीणा बहुत ही क्रोध और अभिमान के साथ किरण की खोज में इधर-उधर ताक रही थी।

हाल में एक किनारे पर लीला और वीणा के बहुत-से मित्र एकत्र होकर बात-चीत कर रहे थे। अमिया ने कहा—आज-कल निर्मला तो कहीं दिखाई ही नहीं पड़ती। क्लब में जाना तो उसने क़रीब-क़रीब छोड़ ही दिया है, किसी पार्टी या सभा-सोसाइटी में भी अब वह नहीं दिखाई पड़ती। उसे क्या हो गया है?

मिस बेला अभी तक दीवार से लटकाये हुए बड़े आइने में अपना सुडौल और सुन्दर मुँह बड़े ध्यान से देख रही थीं। अब

उन्होंने मुँह फेर कर कहा—कोई ऐसी बात नहीं है। मिस्टर घोष का शरीर आज-कल अच्छा नहीं रहता, इससे वह आ नहीं सकी। उस दिन अपने नये बागवाले मकान में निर्मला ने पार्टी दी थी तब तुमने देखा नहीं था मिस्टर घोष को कि उनका चेहरा कैसा खराब हो गया है?

नीलिमा ने कहा—और चाहे कुछ भी हो भाई, निर्मला के भाग्य अच्छे हैं! मिस्टर घोष के मरने पर उनकी सारी सम्पत्ति उसी के हाथ लगेगी। दो-चार भाई-बहन भी तो नहीं हैं कि हिस्सा-बाँट होगा। जो लोग माता-पिता की एक-मात्र सन्तान होते हैं उनका जीवन बड़ा सुखमय होता है। ठीक है न?

उस मित्रमण्डली के बीच में रेवा कुछ गम्भीर और विवेकशील थी। उसने कहा—क्या रुपया-पैसा होने से ही जीवन सुखमय हो जाता है? यह बात तुम्हें किसने बतलाई? मान लो कि कोई आदमी रुपये की ढेरी पर बैठा है, रुपये के बदले में जितनी भी भोग-विलास की सामग्रियाँ उपलब्ध हो सकती हैं उन सबका वह स्वच्छन्दतापूर्वक उपभोग कर रहा है। ऊपर से देखने में वह बहुत सुखी मालूम पड़ सकता है, परन्तु उसकी मानसिक अवस्था का यदि गम्भीरता-पूर्वक अध्ययन किया जाय तो सम्भव है कि उसके जैसे दुखी संसार मे बहुत कम मिलें। संसार में वास्तविक सुख प्राप्त करना बड़ा कठिन है।

अमिया उतावली के साथ बोल उठी—रहने दो भाई रेवा, देश-काल का विचार किये बिना ही जहाँ जब जी में आता है, तुम दार्शनिक वक्तृता झाड़ने लगती हो। तुम्हारा इस प्रकार का उपदेश तो न जाने कितना पेट में डाल चुकी हूँ, परन्तु आज यहाँ भी जब उसे आरम्भ कर दोगी तब तो बड़ा अन्याय होगा। यहाँ पार्टी में आई हूँ कि घंटा आध घंटा मनोरञ्जन हो, गप-शप, गाने-बजाने और हँसी-ठट्ठे में यह समय जरा आनन्द से कटे, परन्तु

यहाँ भी मुँह गम्भीर करके जब उन्हीं बातों की आवृत्ति करने लगोगी तब तो सारा मजा ही किरकिरा हो जायगा।

रेवा इस क्षणिक चपलता और निःसार आमोद-प्रमोद के विरुद्ध कुछ कहने ही जा रही थी कि बेला ने एकाएक उसे रोक लिया और कहने लगी—क्या व्यर्थ की बकवक तुमने लगा रक्खी है? यह सब रहने दो। आज वीणा, लीला आदि कोई नहीं दिखाई पड़ती। क्या आज वे आई नहीं है? वीणा के बिना पार्टी बिलकुल जमती ही नहीं।

सुन्दरता के लिए अरुणा सेन विख्यात थी। वीणा जब से विलायत से लौट कर आई है तब से उसकी वह ख्याति प्रायः लुप्त-सी हुई जा रही थी। इसलिए अरुणा वीणा की सुन्दरता की प्रशंसा सुनकर ईर्ष्या के मारे जल उठती है। बेला की बात सुनते ही जरा-सा क्रोध में आकर उसने कहा—तुम लोगों की ये सब बातें सुनकर मेरी हड्डियाँ जल जाती है। वीणा के न रहने से पार्टी ही नहीं जमती! क्यों? वीणा के अतिरिक्त समाज में क्या और कोई लड़की ही नहीं है? यही कह-कह कर तो तुम लोगों ने उसका मिजाज इतना बढ़ा दिया है कि घमण्ड के मारे धरती पर उसके पैर ही नहीं पड़ते। और इसी तरह के आजकल पुरुष भी यहाँ आकर इकट्ठे हो गये है! इन्हें और कहीं ठिकाना नहीं मिलता, रात-दिन केवल वीणा और लीला के ही पीछे लगे रहते हैं!

नीलिमा ने कहा—हाँ भाई, तुम जो कहती हो, वह ठीक है। वीणा ने भी उन बेचारों को क्या चक्कर में डाल रक्खा है! उन सबकी नाक में उसने इस तरह नकेल लगा रक्खी है कि जिसे जिधर चाहती है उसे उधर ही घुमाती है और स्वयं तमाशा देखती है। अभी जरा ही देर हुई, मैं उसे बगीचे में देख आई हूँ। किरण चौधरी का हाथ पकड़े वह घूम रही थी। परन्तु जिस रूप में वह घूम रही थी उसे देखकर क्या कोई यह कह सकता था कि वह

एक भले घर की लड़की है ? उसका उस समय का हाव-भाव, बात-चीत करने का ढंग और हँसी यदि तुम लोग देखतीं ! हमें तो कोई काट डाले तब भी वैसा ढंग नहीं बना सकतीं ! छिः, कैसी घृणा होती है उसका आचरण देखकर !

घृणा और लज्जा से संकुचित होकर नीलिमा ने जैसे ही मुँह फेरा, वैसे ही अरुणा बोल उठी—परन्तु किरण से वीणा की वह सब चलेगी ? औरों की तरह वह भी तो जानवर है नहीं ! उसकी नाक में नकेल लगा कर नचाना इतना आसान नहीं है !

वीणा कितनी निर्लज्ज है और पुरुष भी अन्धभक्त होकर किस तरह उसके पीछे लगे रहते हैं, इसी विषय पर नवयुवतियों की मंडली में तर्क-वितर्क हो रहा था। उधर अधिक अवस्थावाली महिलाओं की एक दूसरी मंडली थी उसमें बैठ कर मिसेज़ सेन अपनी घनिष्ठ सखियों में मिसेज़ राय के सम्बन्ध में कानाफूसी कर रही थीं—जज साहब की दुलहिन को तो जरा देखो दीदी, आँखें चरितार्थ हो जायँगी ! अभी ये युवती ही बनी हैं ! इतनी बड़ी-बड़ी दो-दो लड़कियाँ है, पूर्ण युवती, तिस पर भी इस तरह का ठाट बनाती हैं ! राम राम ! हमारा तो देख कर ही लज्जा से सिर नीचा हो जाता है।

मिसेज़ तरफ़दार एक बार 'हाल' के बाहर दृष्टि घुमाकर दंग हो गईं। वे कहने लगीं—बाप रे ! देखो न ! बुढ़ाई में ऐसा ठाट-बाट ! जैसा दुनिया का दस्तूर है, उम्र-उम्र में सब चीजें अच्छी लगती हैं। इस उम्र में ऐसा ठाट बनाने में लज्जा नहीं आती ? माना कि उनके घर में हीरा-मोती का ढेर लगा है। और यह बात मालूम किसे नहीं है ? फिर लोगों को यह सब दिखलाने की क्या ज़रूरत है भाई ?

बरामदे में खड़ी खड़ी मिसेज़ राय किसी से बातचीत कर रही थीं। उनकी ओर ताक कर मिसेज़ पालित ने कहा—परन्तु तुम्हारा यह

कहना अनुचित है अबला! जिसके घर में हीरा-मोती का ढेर है और जिसके दिल में हौसले हैं, वह क्यों नहीं पहनेगा? कहने को कुछ भी कहो, मगर सच पूछा जाय तो सुन्दरता में कहो, धन-दौलत में कहो, पढ़ने-लिखने में कहो, या भलमनसाहत में ही कहो, इस शहर में उनके घरवालों की बराबरी करनेवाले कितने हैं?

इस तरह का उत्तर पाकर मिसेज़ तरफ़दार का क्रोध भभक उठा। वे ज़रा कर्कश स्वर से कहने लगीं—रहने दो भाई, रहने दो! भगवान् करे, उनके घर की-सी पढ़ाई-लिखाई और भलमनसाहत की छाया और किसी के घर पर न पड़े! क्या उनके घर की कोई बात हमसे छिपी है? परन्तु दूसरे के घर की चर्चा करने की तो मेरी आदत नहीं है, नहीं तो इनके यहाँ के ऐसे-ऐसे चरित्र सुनने में आते हैं कि सुन कर कान में उँगली दे लेने की इच्छा होती है। मैं कुछ कहती नहीं हूँ इसी से......।

मिसेज़ तरफ़दार की यह बात सुन कर किसी को भी धैर्य न रहा। नगर के एक अधिकारी और एक प्रतिष्ठित परिवार के सम्बन्ध में कौन-सी निन्दा और रहस्य की बात प्रकट हुई है, यह जानने के लिए जितनी महिलायें उपस्थित थीं वे सभी व्यग्र हो उठीं।

तब मिसेज़ तरफ़दार मुँह पर गम्भीरता का भाव प्रकट करके कहने लगीं—यही जज साहब की लड़कियों की बात कह रही थी। वीणा के चरित्र तो तुम लोग अपनी आँखों से देखती हो! पुरुषों के साथ वह कैसे निर्लज्ज भाव से मिलजुल कर घूमती-फिरती है। इसके अतिरिक्त अरुण के साथ भी उन मा-बेटियों ने मिल कर कैसे-कैसे चरित्र किए हैं! यह सब भी तो देखा ही है। जब तक उसके दिन अच्छे थे तब तक उसका आदर-सत्कार सब कुछ था। और जब उसके बुरे दिन आए तब बस, जाओ भैया! अपना रास्ता देखो! इधर इस छोटी लड़की का आजकल जैसा किस्सा चल रहा

· उसे यदि सुनो—वह जो किरण है न! बसन्तपुर का ज़मींदार। उस छोकड़े ने विवाह नहीं किया है। घर में उसके नौकर-चाकर हैं और वह है। वहाँ रोज़-रोज घोड़ा दौड़ाकर सवेरे से ग्यारह-बारह बजे तक लीला क्यों अड्डा जमाये रहती है, बताओ तो? उसके घर में भी क्या चार-छः लड़के-लड़कियाँ हैं कि उनसे उसकी मित्रता है, इसलिए मिलने-जुलने जाती है? समाज के सिर पर चढ़ कर इस तरह की मनमानी हो रही है! क्या जज साहब की लड़की होने के ही कारण इनका यह अनाचार सह लेना पड़ेगा? हम लोगों के घरों में भी तो दस लड़कियाँ हैं। उन्हें इन लोगों का उदाहरण दिखलाना या इनसे मिलने-जुलने देना क्या हम लोगों को उचित है? तुम लोग खुद सोचो इस बात को।

वहाँ जितनी महिलायें उपस्थित थीं वे सब यह बात सुन कर कुछ समय तक लज्जा और घृणा के मारे एक भी बात मुँह से न निकाल सकीं। उसके बाद ही चारों ओर इस सम्बन्ध में तरह-तरह की कानाफूसी होने लगी—"बाप रे, ऐसी बात है! यह तो बड़ी लज्जा की बात है! ऐसे आदमी को गले में फाँसी लगा कर मर जाना चाहिए!" मैं तो पहले ही समझती थी कि ये पहाड़-जैसी लड़कियाँ किसी दिन कोई न कोई अनर्थ करेंगी ही।" कहती हूँ कि मा-बाप क्या रात दिन आँख में पट्टी बाँधे रहते हैं! ये सब लड़कियाँ कहाँ क्या-क्या अनर्थ करती फिरती हैं, यह कभी आँख खोल कर वे नहीं देखते?"

"हूँ! वे लोग क्यों देखने लगे?" विजय के गर्व से एक बार मिसेज़ तरफ़दार की ओर देख कर मिसेज़ पालित ने कहा—उन लोगों के विचार से तो इसमें देखने-सुनने की कोई बात ही नहीं है। उसकी मा तो वीणा-जैसी लड़की के रूप-गुण के अभिमान से ही चूर है! वह समझती है, यह तो लड़कियों की बहादुरी है! परन्तु उनके जो-जो चरित्र मैं सुनती या देखती हूँ, उन पर विचार

करने से बल्कि हम लोग, जिनमें इतनी शिक्षा-दीक्षा नहीं है और जिन्हें सभ्यता का भी ज्ञान नहीं है, वे ही......।"

"वह कुछ भी हो, ये सब बातें यदि सच हों तो इनका कुछ प्रतीकार करना चाहिए।" यह कह कर मिसेज़ सेन अपने मोटे-ताजे शरीर का भार किसी प्रकार उठाकर उत्तेजित भाव से सीधी होकर बैठ गईं।

"जज साहब की लड़की होने के ही कारण क्या समाज में जो चाहेंगी वही करेंगी। यह आधिपत्य तो हम कभी न सहा करेंगी! परन्तु क्यों दीदी, यह बात तुम्हें मालूम कैसे हुई?

मिसेज तरफ़दार ने जरा-सा गर्व के साथ कहा—दुनिया में क्या कोई बात छिपी रहती है? जो लोग यह सब तमाशा रात-दिन स्वयं देखते-सुनते रहते हैं, ख़ास उन्हीं से मैंने सुना है। आवश्यकता पड़ने पर सबके सामने बुला कर प्रमाणित करवा दूँगी। मैं इसमें न तो कोई बात अपनी ओर से मिला कर कह रही हूँ और न उड़ी-पड़ी बातों के आधार पर कह रही हूँ। किरण का बेहरा हमारे बेहरे का भाई है। उसी से मैंने यह बात सुनी है। क्यों नीरू दीदी, तुम आज कोई बात क्यों नहीं कह रही हो?

एक बात कह डालने के कारण मिसेज़ पालित अभी तक बहुत ही संकुचित और कुंठितभाव से मिसेज तरफ़दार की दर्पपूर्ण दृष्टि के सामने अपराधी के समान बैठी थीं। इस भाव से सम्बोधित होने पर उत्तर देने के लिए उन्होंने जैसे ही मस्तक उठाया वैसे ही मिसेज़ राय ने धीरे-धीरे राजरानी के समान पदोचित गम्भीरता और मर्यादा के साथ 'हाल' में प्रवेश किया।

मिसेज़ राय ने 'हाल' में जैसे ही प्रवेश किया, वैसे ही वहाँ के महिला-समाज की सारी उत्तेजना, विरक्ति और समालोचना जहाँ की तहाँ रह गई। क्षण भर में दृश्य बिलकुल बदल गया। मिसेज़ सेन ने बहुत प्रसन्नभाव से मिसेज राय की अभ्यर्थना करके

कहा—आओ कमला दीदी, आओ। अभी-अभी मैं इन लोगों से कह रही थी कि सब आई है, लेकिन कमला दीदी न जाने क्यों नहीं दिखाई पड़ती हैं। इतनी देरी कर दी ?

नमस्कार करने के बाद मिसेज तरफ़दार ने हँस कर कहा—आपके बिना हम लोगों की सभा न जाने कैसी सूनी-सी मालूम पड़ती है, वह किसी तरह जमती ही नहीं। बीणा, लीला वग़ैरह कहाँ हैं ? आई हैं न ?

नमस्कार और प्रतिनमस्कार की प्रतिक्रिया समाप्त होने पर मिसेज़ राय ने ज़रा-सा हँस कर मिसेज़ सेन की बातों के उत्तर में कहा—आई तो मैं बड़ी देर से हूँ। मिसेज दत्त से ज़रा बात करने लगी थी, इससे देरी हो गई। बीणा, लीला सभी आई हैं। वे शायद बग़ीचे में घूमने गई हैं। मिसेज़ दत्त ने आज अपने भतीजे से मेरा परिचय करा दिया है न। बड़ा अच्छा लड़का है। उसके घर के लोग बङ्गाल के बड़े भारी ज़मींदार हैं। राजा की उनकी उपाधि है। लड़के को देखने से ही मालूम हो जाता है कि यह ज़रूर किसी बड़े घराने का लड़का है। जैसा उसका चेहरा है वैसा ही वह शिष्ट है। बोल-चाल में भी अच्छा है। तुम लोगों से उसकी मुलाक़ात हुई है ?

"नहीं तो। मिसेज़ दत्त तो अभी तक 'हाल' के भीतर ही नहीं आईं।"

मिसेज़ तरफ़दार ने कहा—उनके भतीजे शायद यहाँ घूमने के लिए आये हैं। परन्तु वे लोग गये कहाँ ?

बरामदे के बिलकुल किनारे पर लीला अवसन्न-सी चुपचाप खड़ी थी। 'हाल' का बाजा उस समय बन्द हो गया था। निमंत्रित व्यक्तियों में से बहुत से लोग अपने-अपने घर लौटने का उद्योग कर रहे थे। लीला के पास खड़ी होकर बीणा रोषमय शब्दों में कह रही थी, मेरा आज का प्लैन मिट्टी करके किरण ने सारा मज़ा ही किरकिरा कर दिया। उसका वादा था कि खाने के बाद तुम्हें लेकर बग़ीचे में घूमूँगा,

लेकिन अब उसका दर्शन नहीं मिल रहा है। शायद लाचार होकर अन्त में चौधरी के ही साथ जाना पड़ेगा।

( २५ )

इत्र की बहुत तेज़ खुशबू से एकाएक वह स्थान महक उठा। मिसेज़ दत्त के कण्ठ के परिचित स्वर से चौंक कर लीला और वीणा घूम कर ताकने लगीं। मिसेज़ दत्त के साथ उनका भतीजा कुमार गणेन्द्रभूषण भी था।

"अरे, लीला-वीणा, हो! तुम लोग यहाँ हो? तुम्हारी मा तो कहती थीं कि वे बगीचे में घूमने गई हैं। आओ, गुणेन्द्र! इन लोगों से तुम्हें मिला दूँ।" यह कहती हुई मिसेज़ दत्त आगे बढ़ीं और लीला का हाथ पकड़ कर कहने लगीं—यह मिसेज़ राय की छोटी लड़की लीला है, और वह बड़ी वीणा है। यह मेरा भतीजा है वीणा! इसी के सम्बन्ध में मैं तुमसे कह रही थी।

कुमार गणेन्द्रभूषण बहुत ही नम्रभाव से दो क़दम आगे बढ़े और उन्होंने बड़े आदर से लीला को नमस्कार किया। उसके बाद वीणा की ओर उनकी दृष्टि पड़ते ही उसकी उज्ज्वल तथा देदीप्यमान आभा से टकराकर आँखें चकाचौंध हो गईं! नमस्कार करने की उन्हें याद ही न रही, क्षण भर वे अनिमेष दृष्टि से वीणा की ओर ताकते रहे।

लीला और वीणा ने देखा कि कुमार बहुत ही सुन्दर और आकर्षक पुरुष हैं। खूब साफ़ और गोरा रंग है, लम्बा और गठीला शरीर है। पहनने के कपड़े महीन, सुन्दर और भले आदमी के-से हैं। दोनों हाथों में हीरे की अँगूठियाँ हैं, वे तारों की तरह चमक रही हैं।

मुहूर्त भर में अपने को सँभाल कर कुमार ने वीणा को नमस्कार किया और बहुत ही नम्रभाव से कहा—बुआजी से आप दोनों

बहिनों की इतने बार और इतनी अधिक प्रशंसा सुन चुका हूं कि आप लोगों से मेरा नया परिचय है, यह बात मालूम ही नहीं पड़ती।

कुमार की उस क्षण भर की मुग्ध और स्निग्ध दृष्टि का अर्थ समझने में वीणा को देर न लगी। उसके अन्तःकरण की सारी विरक्ति उसी समय दूर हो गई। नवीन उल्लास और आवेश के कारण उसके दोनों नेत्र मनोहर ज्योति से चमचमा उठे, मधुर हँसी हँस कर वह एक बार मिसेज दत्त की ओर ताकी और फिर कहने लगी——मौसीजी, छुटपन से ही हम लोगों को इतना चाहती हैं कि हमारी चर्चा सदा ही उनकी जबान पर ही रहती है। परन्तु हमारे सम्बन्ध में वे जो कुछ कहें उस पर खूब विचार किये बिना विश्वास न कर लीजिएगा, क्योंकि स्नेह की अधिकता के कारण हमें कभी-कभी वे हद से ज़्यादा बढ़ा देती हैं।

मिसेज दत्त ने ज़रा स्नेह की हँसी हँस कर कहा——हाँ जी पुरखिन, ठीक कहती हो! तुम लोगों की प्रशंसा मैं खूब बढ़ा-बढ़ा कर करती हूँ न? आहा! कमला का और हमारा मेल क्या आज का है? छुटपन में हम दोनों साथ-साथ खेलती थीं, साथ-साथ खाती थीं, और साथ-साथ सोती थीं। उसके बाद विवाह होते ही कुछ दिनों के लिए हम दोनों एक दूसरे से बहुत दूर हो गईं। अन्त में कितनी जगह घूमते-घूमते फिर यहाँ आकर मुलाक़ात हुई। उन्हीं कमला की लड़की हो तुम दोनों। हमें कितनी प्यारी हो!

मिसेज दत्त के उच्छ्वास में बाधा डालकर वीणा ने कहा——चलो मौसीजी, 'हाल' के भीतर चलकर बैठें। यहाँ कब तक खड़ी रहेंगी? बड़ी रात हो गई है।

वीणा ने यह बात कही तो थी मौसीजी को सम्बोधित करके परन्तु उसने कहा था कुमार की ही ओर मुँह करके।

सब लोग 'हाल' की ओर बढ़े। लीला को उस समय बड़ी क्लान्ति मालूम पड़ रही थी। 'हाल' के भीतर इतने लोगों की भीड़

तथा रोशनी की गर्मी में जाने को उसका जी नहीं चाहता था। परन्तु इच्छा न रहने पर भी वह सबके पीछे-पीछे चली जा रही थी। वह 'हाल' के भीतर पैर रखने को ही थी कि पीछे से किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रख दिया।

लीला चौंक पड़ी। पीछे घूमकर उसने देखा तो किरण खड़ा था।

"तुम बहुत थकी-सी जान पड़ती हो लीला! चलो, बाहर मेरे साथ चलकर खुली हवा में बैठो।

किरण की इस सरल और स्नेहपूर्ण बात से मुग्ध-सी होकर लीला चुपचाप उसके पीछे-पीछे चल पड़ी।

पास के एक कमरे में जाकर किरण ने बर्फ़ मिलाकर एक गिलास सोडा लीला को दिया। टेबिल पर छोटी-छोटी तश्तरियों में मिठाइयाँ सजी थीं। उनमें से एक तश्तरी लीला की ओर बढ़ा कर किरण ने कहा कि ज़रा-सा खा लो। तुम्हारा मुँह इतना सूख गया है! यदि इस तरह रहोगी तो तबीअत खराब हो जायगी।

इस प्रकार का प्रेममय अनुरोध टालने की शक्ति लीला में नहीं थी। वह सचमुच थक गई थी और प्यास भी उसे लगी थी। आँखें मूँद कर उसने गिलास का सोडा पी लिया। तब कहने लगी—'तुमने तो कुछ नहीं खाया किरण?

"मुझे तो कोई आवश्यकता नहीं है। मैं काफ़ी खा चुका हूँ। आओ, ज़रा हवा में बैठ जायँ।"

बरामदे में दो कुर्सियाँ खींच कर दोनों आदमी बैठ गये। किसी के मुँह से कोई बात न निकली।

लीला के हृदय में एक प्रकार की वेदना से मिश्रित सुख की तरंगें उठ रही थीं। वह सोचने लगी, अब भी—अब भी किरण मुझे कितना चाहता है! मेरे अनुचित व्यवहार से वह रुष्ट हुआ है, अभिमान करके मेरे समीप से वह दूर चला गया है, तो भी,—

तो भी उसके हृदय में मेरे प्रति पहले जो स्नेह था, उसे तो उसने नष्ट नहीं होने दिया! दूर रहने पर भी वह पहले की ही भाँति मेरे प्रति आज तक सावधान दृष्टि रखता है! मुझे क्लान्त देख कर वह अपना सारा क्रोध और अभिमान भूल गया और मेरे पास दौड़ा आया। उन पिछले दिनों के ही समान उसने खिला कर और पंखा हाँक कर मुझे स्वस्थ करने के लिए भरसक प्रयत्न किया। मैंने लाख अपराध किये हैं, फिर भी किरण पहले की ही तरह मेरा सबसे प्रिय मित्र है!

ये सब बातें सोच कर लीला बहुत ही दुखी हुई। वह चुपचाप बैठी थी और उसके हृदय की वेदना आँसुओं की बड़ी-बड़ी बूँदों के रूप में निकल कर गिरने लगी। किरण की प्रीति और उसका अनन्त प्रेम पाकर उसे नष्ट कर देना कैसा मर्मान्तिक क्लेश था! क्या कभी वह दिन फिर न आवेगा जब इन दोनों हृदयों का व्यवधान दूर होकर पहले का-सा ही सरल और सुखमय जीवन वापस आ जायँ?

लीला ने किरण के निस्तब्ध और गम्भीर मुखमंडल की ओर एक बार देखा। वह उसके कितना समीप था, परन्तु फिर भी ऐसा जान पड़ता था, मानो आज वह लीला के पास से बहुत दूर चला गया है!

किरण नीचे बगीचे की ओर ताक कर चन्द्रमा के प्रकाश में कोमल पौधों, पत्तियों तथा किसलयदल का नृत्य देख रहा था। आज उसका चित्त इतना डावाँडोल था कि कब वह क्या करता है और मुँह से कौन-सी बात निकालता है, यह कुछ वह सावधानी के साथ नहीं सोच पाता था। आज उसका हृदय चारों ओर से सिमट कर लीला की ही ओर आकर्षित हो रहा था, परन्तु जो लीला उसे त्याग कर दूसरे को आत्मसमर्पण कर चुकी थी उससे किरण को कहना ही क्या था? मन के भीतर इतने दिन का दबा

हुआ अनुराग प्रबल आवेग से अपने को प्रकाशित करने के लिए हृदय को ठेल-ठेल कर निकलना चाहता था। अपने को संयत रखने के लिए किरण प्राणपन से चेष्टा करके पत्थर की मूर्त्ति के समान चुपचाप बैठा था।

एकाएक किरण का स्वप्न भंग हुआ। लीला की ओर उसने ध्यान से देखा। उसके तरुण मुख पर क्लान्ति और वेदना की छाया वर्त्तमान थी। उसकी बड़ी-बड़ी और काली-काली आँखें रोते-रोते लाल हो गई थीं। बिखरे हुए बालों के गुच्छे, आँख, मुँह और माथे पर छिटक कर उसकी मलिन और विषादमय मूर्त्ति को मनोरम और आकर्षक बना रहे थे।

लीला की ओर एक बार ताकते ही किरण चकित हो गया। उसने कहा—यह क्या! तुम रोती हो?

तुरन्त ही वह अपनी कुर्सी अधिक समीप ले जाकर लीला के पास बैठ गया और बड़े प्रेम से लीला का हाथ अपने हाथ में ले कर उसने कहा—क्या हुआ लीला? रोती क्यों हो?

इस स्नेह-स्पर्श के लिए लीला कितने दिन से तृषित थी? अपने को वह अब और न रोक सकी। एकाएक किरण के दोनों हाथ पकड़ कर उसने बड़े आवेग से अपने पास खींच लिया और उच्छ्वसित हृदय से ज़रा-सी बच्ची की तरह रोने लगी।

लीला को इस तरह रोती देख कर किरण की बुद्धि चक्कर में आगई। वह बहुत ही चञ्चल और अधीर हो उठा। पहले की ही तरह बड़े आदर और स्नेह से वह लीला के नेत्रों का जल पोंछते-पोंछते कहने लगा—छिः, इस तरह रोओ मत। चुप रहो, नहीं तो सिर दर्द करने लगेगा। क्या हुआ है, ज़रा बताओ तो?

"मैं तुमसे सब कुछ बताऊँगी। परन्तु इससे पहले मैं एक बात जानना चाहती हूँ। एक बात भर मुझसे बता दो। क्या तुमने क्षमा कर दिया है मुझे? तुम्हें मालूम नहीं है कि तुम्हारे रुष्ट रहने के

कारण मैं मरी जा रही हूँ।" लीला के आँसू फिर प्रबल वेग से बहने लगे।

यह बात सुन कर किरण ने एक बार लीला के आँसुओं से भीगे हुए कातर मुख की ओर ताका। लीला के हृदय-पट पर छिपा हुआ चित्र मानों स्पष्ट रूप से किरण के सामने उदित हो आया। उसके हृदय का सारा रोष और अभिमान उसी समय जहाँ का तहाँ हो गया, अपने आप को भूल कर वह बोल उठा—इसी लिए इतना रोती हो? तुम्हें तो मैंने बहुत दिन पहले ही क्षमा कर दिया था लीला! तुम्हें क्षमा किए बिना मुझसे कभी रहा जा सकता है?

"बच गई! मेरे हृदय का भार उतर गया। समस्त भू-मंडल के राज्य के बदले में भी मैं तुम्हारी मित्रता नहीं खोना चाहती हूँ। अच्छा, मुझे यदि क्षमा कर दिया है तो अब तो मुझसे दूर-दूर न रहा करोगे किरण?

लीला के मुखमण्डल पर सुख और लज्जा से मिली हुई हँसी थी और नेत्रों में जल था। किरण कुछ समय तक मुग्ध दृष्टि से उसकी ओर ताकता रहा। अन्त में वह कहने लगा—पागल हुई हो? तुम्हें मालूम नहीं है लीला कि तुमसे दूर रहने में मेरे ही जीवन को कितना सुख मिल सकता है? यह बात मुँह से निकलते ही किरण ने फिर अपने आप को सँभाल लिया। वह सोचने लगा—ऐं, मैं यह क्या करने जा रहा हूँ? अपनी एकमात्र मित्र लीला से मैं जो बात कह सकता था, वही बात अरुण की वाग्दत्ता लीला से तो कह नहीं सकता!

लीला को बड़े जोर का जाड़ा लग रहा था। उसके कारण उसके अंग-अंग काँप रहे थे। उसके सूखे हुए मुँह और लाल-लाल आँखों की ओर देख कर किरण बहुत ही उद्विग्नभाव से कहने लगा—तुम्हारा चेहरा तो बहुत उतर गया है लीला! क्या तुम्हारी

तबीअत कुछ ख़राब है? गाल पिचक गया है और आँखें तो बिल-कुल गल सी गई हैं।

"मुझे और तो कोई तकलीफ़ नहीं मालूम पड़ती। केवल सारे शरीर में कम्पन भर हो रहा है। शायद मुझे सर्दी अधिक लग गई है।"

किरण ने लीला के मस्तक पर हाथ रख कर देखा तो वह बहुत गरम था। उसने कहा—तुम्हें ज्वर है लीला! अब यहाँ रहने पर उसके और भी बढ़ जाने की आशंका है। मैं जाकर मिसेज़ राय से कहता हूँ। तुम्हारे लिए अभी ही घर जाना आवश्यक है।

"नहीं, नहीं, मा से कहने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें और वीणा को तो तुम जानते हो। यहाँ के आनन्द का अनुभव जब तक वे अन्त तक न कर लेंगी तब तक यहाँ से हिलने की नहीं। मुझे और किसी की आवश्यकता नहीं है। मैं केवल तुम्हें भर चाहती हूँ। तुम मेरे पास बराबर बने रहो, तभी मैं अच्छी रहूँगी। तुम अभी यहाँ से जाओगे तो नहीं?"

"तुम कैसी पागल हो लीला? ऐसी अवस्था में तुम्हें यहाँ छोड़ कर मैं घर चला जाऊँगा? परन्तु तुम्हें अब ज़रा गर्म जगह में रहना चाहिए। तुम्हारे स्वास्थ्य के सम्बन्ध में मुझे बड़ा भय हो रहा है।"

इधर-उधर दृष्टि दौड़ाने के बाद किरण को एक छोटा-सा सोने का कमरा दिखाई पड़ा। तब वह ज़ोर देकर लीला को उसी कमरे में ले गया और बिस्तरे पर लिटा दिया। किरण स्वयं जो दुशाला ओढ़े था उसे उतार कर उसने लीला को ख़ूब अच्छी तरह से ओढ़ा दिया और कहा—अब तुम चुपचाप सो जाओ। उठने पर तुम्हें और सर्दी लगेगी। मैं ज़रा मिसेज़ राय को तुम्हारा हाल दे आऊं।

किरण उठने को था कि लीला ने उसका हाथ पकड़ कर खींच

लिया और कहा---नहीं किरण, तुम यहीं बैठो, मुझे अकेली छोड़ कर कहीं मत जाओ।

लीला के शरीर की उष्णता तथा शिथिलता बढ़ कर उत्तरोत्तर असह्य होती जा रही थी, अन्त में ज्वर का प्रकोप इतना बढ़ गया कि वह अचेत हो गई। ज्वर के ही आवेग में आकर बीच-बीच में वह अनाप-शनाप भी बक देती। उसकी यह अवस्था देखकर भय और उत्सुकता के मारे किरण निस्तब्ध बैठा रहा।

एक बार लीला एकाएक चौंक कर उठ पड़ी और वह बिस्तरे पर बैठ गई। उसने विह्वल भाव से चारों ओर ध्यानपूर्वक देखा और कहने लगी---ओह, तुम बठे हो। मैं स्वप्न देख रही थी कि चले गये हो! मुझे ऐसा जान पड़ता है कि मेरा दिमाग़ गड़बड़ होता जा रहा है! क्या कहती हूँ, यह समझ नहीं पाती। छाती में पीड़ा हो रही है। साँस नहीं ली जाती। मुझे क्या हो गया है, ज़रा बताओ तो?

किरण ने लीला को बिस्तरे पर फिर सुला दिया। उसने कहा---तुम ज़रा सो जाओ। सर्दी लगने से ज्वर हो आया है, इसी लिए तुम्हें ऐसा मालूम पड़ रहा है। नींद आ जाने पर सब ठीक हो जायगा।

"तुम चले तो न जाओगे? यदि न जाने का वादा करो तो मैं निश्चिन्त होकर सोऊँ। सीने में न जाने कैसी पीड़ा हो रही है? साँस नहीं ली जाती। मुझे छोड़कर चले न जाना किरण?"

"जाऊँगा कहाँ लीला? मैं भला तुम्हें छोड़ कर कहीं जा सकता हूँ? मैं यहीं बैठा हूँ।"

"एक बात और है किरण। केवल एक बात,---उसी को कहकर फिर मैं शान्ति से सो जाऊँगी। तुम विश्वास करो किरण, मैं अपनी इच्छा से अरुण को ठगना नहीं चाहती। मेरा जो उद्देश्य था, वह

एकाएक और तरह का हो गया। मैं सचमुच ठगिन या धोखेबाज नहीं हूँ किरण.....! यह बात केवल तुम......

तीव्र वेदना और आत्मग्लानि से किरण के मुँह पर कालिमा छा गई। आर्तस्वर से वह बोल उठा—क्षमा करो लीला, मुझे क्षमा करो। मैंने जो कुछ कहा है, उसे भूल जाओ। तुम जानती नहीं हो कि मेरे हृदय को कितना क्लेश हुआ है, उस दिन! उस समय मैं क्रोध से पागल हो उठा था, अन्यथा ऐसी अनुचित बात मैं तुम्हें कभी कह सकता था?

लीला और कुछ न कह सकी। शान्ति और तृप्ति की हँसी उसके मुख पर विकसित हो आई। किरण का हाथ पकड़ कर जरा-से बच्चे की तरह वह सो गई। मानो वह अपने किसी अभिभावक की गोद में सोई थी।

अपने हृदय की सारी सुख-शान्ति खोकर उद्विग्न हृदय से लीला के चेतनाहीन मुख की ओर ताकता हुआ किरण बैठा रहा। लीला के इस कठिन रोग की अवस्था तथा उसकी कातरता देखकर किरण का हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा था। उसके निर्मम व्यवहार से लीला अपने अन्तःकरण में कितना आघात पा रही थी! आज महीने भर से वह मन-ही-मन कितने उद्वेग और अशान्ति का अनुभव कर रही है, कदाचित् वही इस भयंकर रोग का भी कारण है। उसके हृदय में किस प्रकार प्रचंड क्रोध का आविर्भाव हुआ था और अरुण की ओर लीला का झुकाव देखकर कैसी ईर्ष्या की अग्नि धधक उठी थी, यह सोच कर किरण का हृदय बहुत दुखी हुआ। वह अपने आपको बार-बार धिक्कार कर सोचने लगा—तो क्या कहीं अन्त में मैं स्वयं ही लीला की मृत्यु का कारण बन बैठा?

किरण बहुत ही उद्विग्न था। उसके हृदय को बड़ी चिन्ता थी। फिर भी बहुत सूक्ष्म आनन्द की एक बिजली की-सी रेखा उसके सारे शरीर में दौड़ रही थी। आज वह निश्चित रूप से

समझ सका है कि लीला अज्ञात रूप से, निष्कपट हृदय से, केवल मुझे ही चाहती है। अरुण के प्रति उसका जो भाव है, जिसे वह अपना प्रेम समझती है, वह केवल दया और सहानुभूति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस समय भी लीला उसका हाथ पकड़े कैसे विश्वास और भरोसे से निश्चिन्त होकर सो रही है। यह विश्वास का भाव और यह निर्भरता, क्या वह किरण के अतिरिक्त और भी किसी के प्रति प्रदर्शित कर सकती है? अचेत लीला के मुख की ओर देख देखकर किरण संशय और सुख के बीच में भूलने लगा।

## ( २६ )

असित के इस प्रकार आने की निर्मला को कोई आशा न थी। अतएव उसे एकाएक देखकर पहले वह कुछ क्षण तक विस्मित और चकित होकर उसकी ओर देखती रही। उसके हृदय की गति इतनी बढ़ गई थी कि मानों उसका दम घुटने लगा था।

असित स्वयं भी कम आश्चर्य में नहीं था। यहाँ इस तरह निर्मला से मुलाक़ात हो सकती है, इसकी उसे कोई सम्भावना नहीं थी। जरा देर तक निर्मला के निस्तब्ध मुँह की ओर ताक कर उसने कहा—मुझे एकाएक देखकर शायद आप अवाक् हो गई हैं। परन्तु हम लोगों के दिन तो इसी तरह गली-गली की राख छानने में ही सदा व्यतीत हुआ करते हैं! यह कह कर उसने जरा-सा हँस दिया।

निर्मला उस समय भी अपनी स्वाभाविक अवस्था में नहीं आ पाई थी, फिर भी अपने को बहुत कुछ सँभाल कर धीरे-धीरे उसने कहा—परन्तु आप बहुत ही कृश और दुर्बल दिखाई पड़ते हैं। आज तक शायद आप यहाँ नहीं थे? हम लोगों ने उस स्थान पर आपको कई बार खोजा था।

लज्जा से काँपते हुए उसी मधुर स्वर से आकर्षित होकर असित कुछ क्षण तक निर्मला के लाल और सुन्दर मुँह की ओर ताकता रहा। बहुत दिन पहले के एक प्रातःकाल का चित्र धीरे-धीरे उसके हृदय-पटल पर जाग्रत् हो रहा था। उस दिन का वही मधुर प्रभात—चारों ओर छिटकी हुई सूर्य की सुनहरी किरणें, और उस निर्जन प्रदेश के गिरे-पड़े मकान में निर्मला का यन्त्रणा से कातर, करुण और सुन्दर मुख, मानो उसके बलिष्ठ और सबल चित्त में किसी मायालोक के स्वप्नों का जाल बुनने लगा।

कुछ क्षण चुप रह कर निर्मला फिर बोली—आपके वे मित्र—वही, जिन्हें मैंने उस दिन देखा था, कहाँ हैं? अच्छे तो हैं?

इस प्रश्न से एकाएक असित का स्वप्न भङ्ग हो गया और चौंककर सचेत होने के बाद उसने कहा—ओह, आप परेश के सम्बन्ध में कह रही हैं? वह अच्छा है। परन्तु हम तो दोनो ही आदमी यहाँ नहीं थे। आप लोगों से जिस दिन मुलाक़ात हुई थी उसके दूसरे ही दिन किसी विशेष कार्य से हम लोग पंजाब चले गये थे। तीन-चार दिन हुए, वहाँ से लौट कर आया हूँ। दानापुर में एक काम था। उससे निबट कर आते-आते रास्ते में ज्वर हो आया, इससे एक टूटे हुए शिवालय में पड़ा रहना पड़ा। अन्त में आज सवेरे जब उठा तब सोचा कि सबसे पहले कुछ खाने का प्रबन्ध कर लेना आवश्यक है, अन्यथा भूख के मारे चला न जायगा। यही घर पहले मिला इससे—इतना कहकर उसने ज़रा-सा हँस दिया और फिर कहने लगा—यह ज़रूर था कि यहाँ आपका दर्शन मिलने की मुझे ज़रा भी आशा नहीं थी।

निर्मला की पीठ पर मानो किसी ने चाबुक मार दिया। एकाएक असित को देखकर वह इतने आश्चर्य में आ गई थी कि बिहारी ने उसे जो कुछ कहा था उसका बिलकुल ध्यान ही न रहा। लज्जा और पश्चात्ताप के मारे वह मन-ही-मन बहुत दुखी हुई

और कहने लगी---देखिए तो, मेरा यह कितना अन्याय है कि आपको दो दिन से भोजन नहीं मिला और मैं खड़ी-खड़ी गप लड़ा रही हूँ। आप ज़रा-सा बैठिए, मैं अभी आ रही हूँ।

निर्मला जैसे ही ज़रा-सा दरवाज़े की ओर बढ़ी, वैसे ही असित बोल उठा---परन्तु पहले आपसे एक बात पूछ लेनी है।

"मुझे अधिक विलम्ब न होगा, अभी आती हूँ" कह कर निर्मला तीव्र गति से भीतर चली गई, उसने असित को एक शब्द कहने का भी अवसर न दिया।

दस मिनट के बाद एक थाली में भोजन की सामग्री लिये हुए निर्मला लौट आई। थाली को टेबिल पर रखकर उसने एक गिलास गर्म दूध असित की ओर बढ़ाया और कहने लगी---पहले यह दूध पी लीजिए, खूब गर्म है।

असित ने एक बार भोजन की उत्तम-उत्तम सामग्रियों से सजी हुई थाली की ओर देखा और फिर वह हँस कर कहने लगा---आपके प्रबन्ध में कोई कमी नहीं है। इन सामग्रियों से मेरा एक दिन खूब अच्छी तरह से कट सकता है। परन्तु एक बात है। यह घर किसका है ? या आप ही यहाँ कैसे आ गई ? यह कुछ मेरी समझ में नहीं आ रहा है।

"इस बात के लिए इतनी चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है ? यह घर हमारा ही है। आप भोजन कीजिए। मैं ऊपर से पिता जी को बुलाये लाती हूँ।"

क्षण भर में ही असित का मुँह बहुत गम्भीर हो उठा। ज़रा देर चुप रह कर उसने कहा---यह आप लोगों का---अर्थात् मिस्टर घोष का घर है ?"

निर्मला विस्मित होकर असित की ओर ताक रही थी। उसने कहा---आप इतनी चिन्ता किस बात की कर रहे हैं ? किसी दूसरे के घर पर मैं आपकी अभ्यर्थना नहीं कर रही हूँ। अभी थोड़े

ही दिन हुए, पिता जी ने यह बाग़-मकान ख़रीदा है। उस दिन यहीं आ रही थी जब ......।

"तब मुझे क्षमा कीजिए। यहाँ आतिथ्य स्वीकार करने में मैं असमर्थ हूँ।" यह कहकर असित गम्भीर भाव से कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ।

असित के इस भाव से निर्मला के चेहरे पर कुछ फीकापन आ गया। सन्नाटे में आकर वह चुपचाप उसकी ओर ताकती रही। इस घटना का कारण किसी तरह भी उसकी समझ में नहीं आ रहा था।

और कोई बात न कह कर असित दरवाज़े की ओर बढ़ा। जब निर्मला ने देखा कि यह सचमुच चला जा रहा है तब वह व्याकुल कण्ठ से पुकार कर बोली——ज़रा-सा खड़े रहिए असित बाबू जाइए नहीं। आप बहुत ही क्लान्त हो गये हैं। यह अस्वस्थ शरीर लेकर आप बिना खाये कहाँ जा रहे हैं? ज़रा-सा खा लीजिए, तब जाइएगा।

चलते ही चलते मुँह फेरकर असित ने कहा——असम्भव! आपके यहाँ आतिथ्य स्वीकार करना मेरे लिए सर्वथा असम्भव है। मैंने आपको व्यर्थ में क्लेश दिया है, इसके लिए क्षमा कीजिएगा।

निर्मला के उठे हुए हाथ से दूध से भरा हुआ शीशे का गिलास गिरकर चूर-चूर हो गया। असित फिर रुका नहीं। उसने एक बार निर्मला के रक्तशून्य और पीले मुँह की ओर देखा और फिर तेज़ी से चला गया।

( २७ )

लीला का रोग दिन-दिन तेज़ी के साथ बढ़ता जा रहा था। तीन-चार दिन के बाद डाक्टर ने आकर जब परीक्षा की तब उसने कहा कि डबल निमोनिया हो गया है। जीवन की आशा बहुत कम है। क्या होगा, कुछ कहा नहीं जा सकता।

मिस्टर राय के आनन्दमय भवन में आतङ्क और शीघ्र ही आनेवाले शोक की छाया दिन-दिन अधिक घनी होती जा रही थी। लीला के जीवन की आशङ्का से सभी का चित्त बहुत दुखी और व्याकुल था। अनिष्ट की आशङ्का तथा चित्त की व्याकुलता के कारण मिसेज़ राय की उद्धत और अहंकारमय प्रकृति तक परिवर्तित हो गई थी। वे लीला के कमरे में अधिक समय तक नहीं बैठ पाती थीं। अपने कमरे में भी उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी। वे घंटे-घंटे पर नर्सों से लीला क समाचार पूछ कर अधीरतापूर्वक अपना समय व्यतीत करतीं। वीणा भी हृदय में बहुत ही उद्विग्न होकर सदा लीला की खबर लेती रहती।

किरण प्रतिदिन ठीक समय पर वीणा के पास पहुँचता और उससे लीला का हाल पूछ जाता। किन्तु लीला के लिए उसके हृदय में जितनी भी उत्कण्ठा थी, उसके जीवन की आशंका के कारण उसके चित्त को जितनी अशान्ति थी, उसका कोई भी लक्षण नहीं प्रकट हो पाता था। वीणा का विश्वास था कि किरण लीला की बीमारी के बहाने मेरे ही लिए आया करता है।

अन्त में एक दिन लीला के जीवन के संकट का मुहूर्त आ पहुँचा। उस दिन घर के सभी लोग एक एक अतर्कित आशंका के कारण अधीर थे। सभी के मुख पर व्याकुलता का भाव था। देखें, कब क्या होता है, कौन सी बात सुनने को मिलती है। सभी लोग उस दिन बहुत गम्भीर थ, बहुत शान्त थे, बहुत उत्सुक थे।

घर के सभी नौकर-चाकर, सभी नौकरानियाँ लीला के लिए उत्कंठित थी। दुश्चिन्ता के मारे उनमें से किसी की भी आकृति पर जोवन नहीं मालूम पड़ रहा था। सभी के मुख पर विषाद की घनी छाया विराजमान रहती। लीला की आरोग्यकामना से वे लोग निरन्तर प्रार्थना करते रहते, देवस्थानों में मनौतियाँ करते फिरते।

पर चर्चा और लड़ाई-झगड़ा शान्त का बहुत ही प्रिय विषय था।

किन्तु आजकल यह सब भूल कर वह बराबर लीला की रोग शय्या के समीप ही पड़ी रहती। अपनी समस्त शक्ति का प्रयोग करके भी नर्स लोग उसे उस कमरे मे निकालने में समर्थ नही हो सकीं।

परन्तु लीला की रुग्णता के कारण जिसके हृदय पर सब से अधिक आघात पहुंचा था, वह था किरण! यह आघात किरण के लिए और भी अधिक कष्टकर, और भी अधिक दुखदायी, इसलिए हो उठा था कि उसे इस आघात को वह प्रकट नहीं कर पाता था। मन की व्यथा मन ही में छिपाये हुए अपने नियमित काम-काज के लिए उसे सदा घूमना-फिरना पड़ता था।

किरण ने सब कुछ भुला कर सवेरे से रात तक एक आसन पर बैठे-बैठे वह दिन काट दिया उसने कुछ खाया-पिया नही। लीला के जीवन की कोई आशा थी नहीं, फिर भी वह किसी तरह हृदय में इस बात को स्थान नहीं दे सकता था कि उसकी मृत्यु हो जायगी। वह सोचता—लीला की मृत्यु! असम्भव है! इस बात को जब वह सोचने लगता तब एक तीव्र वेदना उसके हृदय में तूफ़ान की तरह उथल-पुथल मचा कर गरज उठती थी।

सारा दिन एक ही प्रकार से व्यतीत हुआ। दिन भर के कठिन परिश्रम और अविश्रान्त यत्न के बाद रात को नौ बजे डाक्टरों ने यह प्रकट किया कि लीला का संकट कट गया है, अब वह बच जायगी।

शान्ति की साँस लेकर अंचल से आँसू पोंछती-पोंछती क्षान्त किरण को यह समाचार दे आई। किरण को वह बहुत चाहती थी।

किरण चुपचाप बैठा था। उसके नेत्रों से आँसुओं के बड़े बड़े बूँद गिर रहे थे। क्षान्त की बात सुनते ही किरण का हृदय शान्ति और कृतज्ञता से परिपूर्ण हो गया और हाथ जोड़ कर वह आकाश की ओर ताकता रह गया।

× × × × ×

चालीस दिन के बाद लीला ने पहले पहल आँखें खोल कर देखा। पहले उसे किसी बात की याद न आई, वह केवल विह्वल-सी होकर नर्सों का अपरिचित मुंह और कमरे की सजावट ध्यान-पूर्वक देखती रही। एक बार उसने क्षीण कंठ से पुकारा—किरण!

चुपचाप आकर नर्स उसके सामने खड़ी हो गई। किरण कौन है, यह नो उसे मालूम नहीं था। जानती भी होती तो डाक्टर की खास हिदायत थी कि रोगी के कमरे में नर्सों को छोड़ कर और कोई न जाने पावे। नर्स ने लीला को बोलने से रोक कर शान्त-भाव से रहने का अनुरोध किया। लीला को भी बड़ी क्लान्ति मालूम पड़ रही थी, इससे वह तुरन्त ही फिर सो गई।

इसके बाद स्वप्न की सी अवस्था में लीला प्रायः देखा करती—वही उत्सव की रातवाला अकेला कमरा है, उसी समय के मन्द-मन्द प्रकाश से वह कमरा प्रकाशित है और रोगशय्या के पास किरण बैठा है। उसकी मुखाकृति पर उद्वेग-जनित कातरता, और गंभीरता भी उसी तरह विराजमान है। लीला के सैकड़ों दोष होने पर भी उसके प्रति किरण के हृदय में कैसा स्नेह है, उसे जरा-सा सुख देने के लिए, उसकी पीड़ा दूर करने के लिए, वह कितना प्रयत्न कर रहा है!

धीरे-धीरे लीला का शरीर जैसे ही जैसे आरोग्य होने लगा, वैसे ही वैसे किरण को देखने के लिए उसकी इच्छा प्रबल होती गई, यहाँ तक कि उसकी अपनी उत्कंठा को रोक रखने की शक्ति जाती रही। उसे ऐसा जान पड़ता, मानो किरण को देखे एक वर्ष से भी अधिक व्यतीत हो गया है!

लीला को एक और आदमी की याद आती। वह था बेचारा अरुण! उसकी याद आते ही लीला चंचल हो उठती। शायद उसे लीला की बीमारी का हाल मालूम भी न हो। इतने दिनों तक न देख कर कहीं वह उसे भी और नवयुवतियों की ही तरह चंचल

और उच्छृंखल न समझने लगा हो! वह न जायगी तो अरुण का तो सभी कुछ नष्ट हो जायगा! क्योंकि अरुण को सुखी और प्रसन्न करने के लिए उसके अतिरिक्त और कौन प्राणों की बाजी लगा कर प्रयत्न कर सकता है!

अरुण की याद आते ही लीला चिन्ता और उत्तेजना के मारे अधीर हो उठती। मन-ही-मन वह जोर देकर कहती—मुझे जीवित रहना ही पड़ेगा! मैं कभी न मरूँगी! जिस कार्य का मैंने श्रीगणेश किया है, यदि जीऊँगी नही तो उसे समाप्त कौन करेगा? यह इच्छा की प्रबलता और हृदय की शक्ति उसके दुर्बल और रुग्ण शरीर में बिजली की शक्ति का संचार किया करती, दिन-दिन उसकी शक्ति प्रबल वेग से बढ़ने लगी।

लीला जब पीड़ित थी तब एक व्यक्ति और बहुत अधिक उत्कंठित हो उठा। बाहर मे अपने हृदय का भाव प्रकट करना मिस्टर राय की प्रकृति के विरुद्ध था। इस घटना को उन्होंने ऊपरी तौर से शान्त भाव मे ही ग्रहण किया था, तो भी उनके शान्त और गम्भीर मुख पर चिन्ता और वेदना की छाया स्पष्ट ही लक्षित हुआ करती। कचहरी से लौट कर जब वे आते तब लीला के सिरहाने घंटों चुपचाप बैठे रहते।

लीला का रोग निवृत्त होने पर मिस्टर राय एक दिन सवेरे उसके बिस्तरे पर बैठे थे। उन्होंने उसका सूखा हुआ हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—तुमने हम लोगों को बड़ी चिन्ता मे डाल दिया था! तुम्हारी बीमारी से हम लोग इतने दुखी थे! खैर, अब तुम बहुत जल्द अच्छी हो जाओगी। है न! मुझे कुछ काम से दिल्ली जाना होगा। मैं चाहता हूँ कि वहाँ से लौट कर आऊँ तब तुम फिर पहले की ही तरह स्वस्थ और सबल दिखाई पड़ो। तब एक पार्टी दी जायगी। बीमारी के समय जो मित्र-स्नेही तुम्हारा समाचार जानने और तुम्हें देखने के लिए आया करते थे, उस दिन तुम उन सबकी आवभगत करना। ठीक है न?

लीला को इस बात से अधिक संतोष नहीं हुआ, बल्कि उसने कुछ व्याकुल भाव से पूछा—और इसी बीच में तुम बाहर भी जाओगे? तुम्हें वहाँ जाने का कौन-सा ऐसा काम है, यह मेरी समझ में तो आता नहीं। तो कब जाओगे? वहाँ से लौटने में तुम्हें कितने दिन लगेंगे?

जरा-सा हँस कर मिस्टर राय लीला के उत्सुक मुँह की ओर ताकने लगे। उन्होंने कहा—क्यों? तुम्हें इतनी चिन्ता क्यों पड़ी है?

लीला ने कहा—तुम हँसते हो, सच कहती हूँ, तुम्हारे चले जाने पर घर में मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता। बतलाओ कितने दिन में लौटोगे?

मिस्टर राय के नेत्र सजल हो आये। उन्होंने लीला के पीले गाल पर हलका-सा चपत जमा कर कहा—चिन्ता न करो, जहाँ तक होगा मैं अपनी इस छोटी बच्ची के पास बहुत जल्द लौट आऊंगा। मैं ही तुम्हें अकेली छोड़ कर अधिक समय तक कैसे रह सकता हूँ?

लीला और कोई उत्तर नहीं दे सकी। क्लान्त भाव से आँखें मूँद कर वह पिता के कन्धे पर मस्तक रक्खे पड़ी रही। मिस्टर राय धीरे-धीरे उसका माथा सुहलाने लगे।

कुछ क्षण के बाद लीला ने कहा—बाबू, आज साँझ को जरा किरण को मेरे पास भेज दोगे? डाक्टर अब भी मुझे झूठ-मूठ अकेली रहने को कहता है। आधा घंटा यदि मैं उसके साथ बात-चीत करूँ तो इसमें मेरी हानि क्या होगी?

जरा देर तक सोच कर मिस्टर राय ने कहा—उससे तुम्हारा काम क्या है लीला? तुम इस समय भी बहुत दुर्बल हो, इसी लिए डाक्टर—

लीला ने पिता को रोक कर व्यग्र भाव से कहा—नहीं बाबू,

नहीं। मैं उसे एक बार देखना चाहती हूँ। मुझे उससे कई बातें करनी हैं।

पिता के गले में लिपट कर वह कहने लगी—तुम एक बार आध घंटे के लिए उसे भेज दोगे? बताओ बाबू। देखो, उससे बातचीत करने में मुझे कोई हानि न होगी। बताओ, भेज दोगे न?

इस प्रार्थना को अस्वीकार करने की शक्ति जज साहब में नहीं थी। उन्होंने कहा—अच्छा, अच्छा। शाम को क्लब में जब उससे मुलाकात होगी तब भेज दूँगा। परन्तु याद रखना, ज्यादा बकने न पाओगी। खबरदार!

( २८ )

संध्या के समय अकेली बैठ कर लीला किरण के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। उस समय भी उसके चेहरे पर खून नहीं चढ़ा था, उसका मुँह बिलकुल पीला था। उसके काले-काले बाल बहुत रूखे हो गए थे। वे दो लटों में गुँथे हुए थे और माथे के दोनों बगल बँधे थे। गाल पिचक जाने के कारण आँखें बहुत बड़ी-बड़ी मालूम पड़ रही थीं।

साँझ होते-होते किरण ने क्लब में प्रवेश किया। वहाँ उसे मिस्टर राय से लीला की बात मालूम हुई, तब वह एक मिनट भी वहाँ नहीं रुका।

मिस्टर राय ने किरण से कहा था कि लीला जरा-सा तुमसे मुलाकात करना चाहती है। तुम्हें यदि विशेष असुविधा न हो तो घर जाते समय उससे मिलते जाना।

असुविधा! किरण का चित्त लीला के पास उड़कर पहुँचने के लिए उद्यत हो गया। इस आह्वान के लिए वह आज कितने दिन से लालायित था, पिपासित हृदय से इसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

खेलना बन्द करके उसने विनीत भाव से कहा—मैं इसी समय उसके पास जाना चाहता हूँ। जाऊँ न?

मिस्टर राय ने कहा—अभी जाना चाहते हो! इतनी जल्दी किस बात की है? तुम दोनों ही एक दूसरे के लिए उसी तरह व्याकुल रहा करते हो! सुविधानुसार किसी समय उसके पास हो लेना, इसके लिए अपने काम-काज या खेलने-कूदने में व्याघात क्यों पहुँचाते हो?

"मुझे इस समय कोई काम नहीं है। इसके अतिरिक्त लीला को आरोग्यता की अवस्था में देखकर मुझे जितना सुख मिलेगा, उतना खेलने-कूदने में कहाँ मिल सकता है?"

किरण वहाँ और नहीं रुका। वह चुपचाप क्लब से निकल पड़ा। उसे भय था कि वीणा को पता चलते ही वह अपने साथ खेलने के लिए जान खाने लगेगी।

रात हो आई थी। रोगी के कमरे की बत्ती शेड से ढँकी थी। उसके टिमटिमाते हुए प्रकाश में किरण ने प्रायः दो महीने के बाद लीला को देखा। तूफ़ान से झकझोरे हुए फूल के समान सूखा हुआ उसका मुँह था। तो भी उसके उसी मुँह पर उसके हृदय की अदम्य शक्ति और तेज पहले की ही तरह ज्यों का त्यों बना था।

लीला के शरीर में आज किसी तरह की सजावट नहीं थी। मुग्ध दृष्टि से उसकी ओर ताक कर किरण ने सोचा—कैसा सुन्दर है यह चेहरा!

पहले वह कुछ बोल नहीं सका, लीला का क्षीण और कोमल हाथ पकड़ कर उसके पास बैठ गया। उसे इतनी बातें कहनी थी, कितने दिनों की कितनी बातें उसके मन-ही मन में संचित हो उठी थीं, परन्तु उस समय किरण कोई भी बात मुँह से नहीं निकाल सका।

लीला ने खूब स्वाभाविक रूप से ही उसकी अभ्यर्थना की। उसके व्यवहार या बातचीत में किसी प्रकार का संकोच या लज्जा नहीं थी।

लीला ने कहा—तुम जानते नहीं हो, ज़रा-सा होश आते ही तुम्हें देखने के लिए मैं कितनी उत्सुक हो उठी थी! कितने दिन तुम्हें पुकारा था, वे लोग मेरी कोई बात सुनते नहीं थे। आज बाबूजी से मैंने कितना कहा, तब उन्होंने तुम्हें भेजा है।

किरण ने कुछ कहा नहीं, वह केवल लीला के मुँह की ओर अनिमेष दृष्टि से ताकता रहा।

"तुम बातें क्यों नहीं करते हो? समझते हो कि ज्यादा बकने से मेरी तबीअत ख़राब हो जायगी? इसके लिए चिन्ता नहीं है। अब मैं बिलकुल अच्छी हो चुकी हूँ—केवल निर्बलता के कारण चल-फिर नहीं सकती हूँ। तुम भी मेरे लिए बहुत घबरा उठे थे किरण?"

लीला के रूखे बालों को माथे पर से हटाते-हटाते किरण ने स्नेहपूर्वक कहा—इसमें भी क्या पूछने की बात है लीला? किस तरह मेरे इतने दिन कटे हैं, यह कह कर तुम्हें समझाना मेरी शक्ति से परे है।

इस बात से लीला को बड़ा सन्तोष हुआ। उसने प्रसन्नतापूर्वक कहा—यह सब मैं जानती हूँ। तुम्हारी तरह मुझे और कोई नहीं चाहता। बाबूजी को छोड़ कर और कोई यदि मुझसे स्नेह करनेवाला है, तो तुम हो। तुमसे मुझे आज बहुत-सी बातें पूछनी हैं। समझ में आया, मैंने क्या कहा? बेचारे अरुण का हाल जानने के लिए मैं और भी घबरा रही थी! वह अच्छी तरह से है न? मुझे न देख कर वह क्या सोचता है?

"वह अच्छा ही है। तुम्हारे लिए वह मन-ही-मन बहुत व्यस्त हो उठा है। मैंने उससे कह दिया है कि अपनी छोटी बहन की बीमारी के कारण वीणा घर छोड़ कर आ नहीं पाती। इसी बात का विश्वास करके वह निश्चिन्त बैठा है।"

"आहा! वह बेचारा भी कैसा बुरा भाग्य लेकर आया है। उसकी याद आते ही मेरे हृदय को इतना क्लेश होता है कि उसे

मैं कह नहीं सकती। कितना उन्नतिशील जीवन किस तरह नष्ट हो गया! किस तरह उसका यह बचा हुआ लम्बा जीवन व्यतीत होगा, यही मैं सोचती हूँ! तुम ठीक मेरी ही तरह उससे स्नेह करते हो, और उसके नष्ट हुए जीवन का दुख मेरे ही समान हृदय में अनुभव करते हो, यह मुझे कितना अच्छा लगता है! मनुष्य होकर जो मनुष्य के दुख-क्लेश को नहीं समझता या नहीं समझना चाहता, ऐसा हृदयहीन मनुष्य मुझसे फूटी आँख से भी नहीं देखा जाता।

किरण का हृदय उस समय लीला के ही लिए व्याकुल था, मानव-प्रकृति के तथ्य पर विचार करने की ओर उसका ध्यान बिलकुल नहीं था। अपने हृदय के आवेग में पूर्ण होकर उसने लीला के दोनों हाथों को अपने हाथों में ले लिया और चुप्पी साधे बैठा रहा।

लीला अपने आप ही कहने लगी—मुझे आजकल न जाने कैसा अकेलेपन का अनुभव हो रहा है! समझ में नहीं आता कि अभी और कितने दिन में शरीर में थोड़ा-बहुत बल आवेगा और मैं जरा-सा बाहर जा सकूँगी। रात-दिन अकेले रहते-रहते मुझे अच्छा नहीं लगता, सदा ही मन में आता है कि ऐसे समय में यदि कोई मेरा साथी होता!

किरण ने अपने भावपूर्ण तथा दीप्तिमय नेत्रों को लीला के मुख पर स्थिर कर दिया। उसने कहा—मुझ पर यदि तुम्हें विश्वास हो तो मुझे ही अपने सारे सुख-दुख के साथी के रूप में ग्रहण कर सकती हो। यह कह कर अपने हृदय की सारी बात वह उस दीप्तिमय दृष्टि के ही द्वारा समझाना चाहता था! परन्तु लीला उसकी बात या दृष्टि का मर्म नहीं समझ सकी। उसने समझा कि किरण का मतलब अपनी चिरस्थायिनी मित्रता से ही है। मुग्ध होकर उसने कहा—तुम सदा ही मुझ पर ऐसी दया रखते हो! मैंने कितनी मनमानी की है, तुम्हारा कितना अपराध किया है, यह सब याद

आने पर मैं सोचती हूँ कि मैं तुम्हारा इतना स्नेह प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं हूँ। संसार में तुम्हारी मित्रता मेरे लिए अमूल्य है!

किरण ने पुकारा—लीला!

उस स्वर से चौंक कर अपने उच्छ्वास को रोकती हुई लीला ने किरण की ओर देखा। उसके उत्तेजनापूर्ण मुख और ज्वलन्त दृष्टि की ओर ताकते ही लीला स्वयं भी अवाक् हो गई।

किरण ने कहा—क्या तुम मेरी बात कभी न समझोगी लीला? देखती नहीं हो, मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ? मेरे इस चाहने को केवल मित्रता कह कर क्यों भूल कर रही हो? और मैं तुम्हें इस बात को किस तरह समझाऊँ, बताओ तो?

लीला के उतरे हुए मुँह पर निस्तब्धता छा गई। इस बात को कभी वह अपनी कल्पना तक में नहीं ला सकी थी। आज वह कैसी एक असम्भव-सी बात सुन रही थी।

किरण ने कहा—अब भी नहीं समझ पाई हो? कितने दिन कितने ढंग से तुम्हें यह बात जताना चाहा, परन्तु तुमने कभी इसे समझने की इच्छा नहीं की। मैंने भी सोच रक्खा था कि जब तक तुम स्वयं इस बात को न समझ लोगी तब तक इस विषय में तुमसे कुछ कहने की आवश्यकता न होगी। परन्तु अब मैं इसे दाब नहीं रख पाता हूँ लीला! आज तीन-चार महीने तक तुमसे दूर रह कर मैंने अपने मनोभाव को अच्छी तरह से समझ लिया है। तुम जानती नहीं हो लीला कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ! तुम्हें छोड़कर रहना मेरे लिए सर्वथा असम्भव है!

इस बार किरण का मतलब समझने में लीला ने भूल नहीं की। आवेग और उच्छ्वास के मारे किरण के मुँह पर लालिमा छा गई थी। आँखों में प्रेम छलछला आया था। उसकी ओर ताक कर लीला पहले तो भौचक्की-सी बैठी रही, बाद को क्षण ही भर में काँप

कर लौट गई। उसका निर्बल शरीर यह उत्तेजना न सह सका, सिर से पैर तक कांपने लगा।

अपने उच्छ्वास को रोक कर किरण शान्त होने का प्रयत्न कर रहा था। लीला की दशा देखकर वह विचलित हो उठा। लीला का कम्पन उस समय भी बन्द नहीं हुआ था। किरण धीरे-धीरे उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। उसने कहा—क्षमा करो लीला! तुमसे यह बात कह कर मैंने अनुचित किया है। मुझे और कुछ दिन तक प्रतीक्षा करनी चाहिए थी। इस समय तुम यह बात भूल जाओ। तुम जब बिलकुल अच्छी हो जाओगी तब इस विषय पर फिर विचार किया जायगा। केवल इतना समझ रक्खो कि मैं तुम्हारा ही हूँ। मेरे जीवन का तुम इच्छानुसार किसी तरह भी उपयोग कर सकती हो। जब तक शरीर में प्राण रहेंगे, मैं तुम्हारा ही रहूँगा।

परन्तु लीला ने कोई भी बात नहीं सुनी। वह विह्वल-सी हो कर अचेत भाव से बिस्तरे पर पड़ी रही।

जिस तरह सैकड़ों वर्ष के अँधेरे घर में एक दियासलाई जलाते ही उसका सारा अँधेरा दूर हो जाता है, उसी तरह किरण की एक स्पष्ट बात से उसका इतने दिन का छिपा हुआ मनोभाव भली भाँति समझ कर लीला भय और विस्मय से अभिभूत हो उठी!

आज उसने समझा कि वह भी किरण को चाहती है। किन्तु हाय, अब! अब तो बहुत विलम्ब हो चुका था! अब समझने से ही क्या लाभ?

ज़रा-सा सावधान होकर लीला ने अपने हृदय की अवस्था की ओर ध्यान दिया। कैसे अपूर्व आनन्द और कैसी तीव्र वेदना से उसका हृदय उद्वेलित हो रहा था!

कितने दिन किरण ने किस-किस तरह उसे यह बात समझाने की चेष्टा की थी। आज एक-एक करके सभी बातें उसके हृदय

पटल पर उदित होने लगीं। वह क्यों नहीं समझ पाई ! क्यों नहीं जान सकी? जब समय था तब उसकी बुद्धि में यह बात क्यों नहीं आई? और आज? आज तो बहुत विलम्ब हो चुका है! अब समझने में ही क्या लाभ होगा?

किरण को खोकर उसने अपने जीवन की सारी सुख-शान्ति को क्यों खो दिया था? किरण के लिए उसका हृदय रात-दिन क्यों रोता-फिरता था? इतने दिन के बाद आज उसने इस बात का स्पष्टरूप से अनुभव किया है! मनुष्य इस तरह अन्धा होकर रह सकता है? आज उसने समझा कि किरण उसके हृदय और शरीर में सर्वत्र व्याप्त हो चुका है, वहाँ और किसी के लिए स्थान नहीं है। किन्तु हाय! इतना बिलम्ब हो जाने पर! अब तो बहुत विलम्ब हो चुका है! अब तक यह बात उसकी समझ में क्यों नहीं आई थी?

जिस किरण को लीला समझती थी कि नारी के प्रेम का जादू इस पर नहीं चल सकता वह उसी के पीछे बिलकुल दीवाना है! करुणा, शक्ति, स्नेह और वीरता में जिस किरण को वह सदा से असाधारण समझती आई थी, वही उसका साथी और मित्र है। जिस पर वह सदा निर्भर रह सकती थी--उसी किरण ने उससे प्रेम करके अपने हृदय पर उसे प्रतिष्ठित कर रक्खा है, यद्यपि लीला के साथ उसकी अवस्था का तारतम्य नहीं है। इस बात को उसने क्यों नहीं समझा था? वह क्यों नहीं जान पाई थी? यदि वह जान पाती तो क्या अरुण के पास जाती? क्या वह कभी उसके पास जा पाती?

लीला के मन में यह बात आई, उसने एक दिन गाया था, यदि तुम वृद्ध होते तो हे मित्र मैं अपना यौवन त्याग देता जिससे तुम्हारी अवस्था का भेद मुझे तुमसे दूर न रख पाता! उस दिन भी किरण ने यह गीत सुन कर मन-ही-मन अनुराग से विह्वल

होकर उसे अपने हृदय की बात सूचित करना चाहा था! उस दिन लीला ने कुछ भी नहीं समझा था! कौन जानता था कि भविष्य में जाकर यह गीत उसी के जीवन में संघटित होगा?

लीला विवेक-बुद्धि और कर्तव्यज्ञान की प्रेरणा से भीतर ही भीतर मर्माहत होकर चुपचाप आँसू बहा रही थी।

अपने जीवन के इस आनन्दमय स्वर्ग का द्वार उसने अपने हाथों से ही सदा के लिए बन्द कर रक्खा है! प्रेम, आशा, आनन्द सभी को तो सदा के लिए बिदा देकर उसे अब अपने आपको कठोर कर्तव्य के वशीभूत कर देना पड़ेगा! अन्धा, असहाय अरुण! उसके दुखमय जीवन के प्रति करुणा और ममता के कारण लीला ने अपने आप उसे ग्रहण किया है! उसके समक्ष वह वचनबद्ध हो चुकी है! उसे त्यागने का कोई उपाय नहीं है!

जो सत्य उसे आज तक अज्ञात था वह सदा ही क्यों न अज्ञात रहा? लीला के सोते हृदय को जगा कर उसे सदा के लिए दुख और निराशा में निमग्न करने के ही लिए उस सत्य ने आज अपने आपको क्यों प्रकट किया? अब वह क्या करे? किरण के ही हृदय पर ऐसी करारी चोट कैसे पहुँचावे?

लीला को कहीं कोई रास्ता न मिला। केवल विदीर्ण हृदय से वह रोने लगी। परन्तु उसका यह कम्पित और निस्तब्ध भाव देखकर किरण के हृदय में आशा का संचार हो रहा था। उसने लीला के दोनों हाथ पकड़ कर कहा—मैं जानती हूँ कि तुमने अरुण से कभी प्रेम नहीं किया। तुमने अपने आपको समझने में भूल की है। तुम अपने हृदय को परख नहीं सकी हो। तुमने केवल मुझसे प्रेम किया है। तुम मेरी हो! मुझसे छीन कर तुम्हें कोई न ले जाने पावेगा! लीला, मुँह ऊपर करो, ज़रा मेरी ओर घूम कर ताको!

लीला की यह धर्म-संकट की अवस्था उसकी दुर्दशा की साक्षी

दे रही थी। वह मस्तक नहीं उठा सकी, दोनों हाथों मे मुँह ढँक कर रोने लगी। वह समझती थी कि उसका हृदय कितना निर्बल है! किरण के सुन्दर मुँह की ओर, जिसे देखकर सदा ही उसका हृदय प्रफुल्लित हो आता था, ताक कर वह अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा नहीं कर सकेगी।

संध्या की शान्ति और नीरवता में उन दोनों ने ही कितनी देर तक चुपचाप काट दिया। केवल मैदान से लौट कर आई हुई गौओं की घंटी की आवाज़ और घोंसले में लौट कर आई हुई चिड़ियों का कलकल गान, जिसे मानों वे दिन को विदाई देने के ही लिए मधुर स्वर मे गा रही थीं, चारों ओर की निस्तब्धता को भंग कर रहा था।

कुछ क्षणों के बाद धीमी आवाज़ से किरण ने पुकारा—लीला!

"कहो।"

"एक बार कह दो—मैं तुम्हें चाहती हूँ। केवल एक बार अपने मुँह से कह दो।"

लीला के हृदय पर मानो किसी ने बाण मार दिया था। बिस्तरे पर फिर वह लोट गई। उसने कहा—किरण, यह भी क्या हँसी-ठट्ठे की तरह ज़रा-सी बात है?

लीला और कुछ बोल नहीं सकी। वह कह ही क्या सकती थी? अरुण को तो वह छोड़ नहीं सकती थी? किरण के इस अगाध प्रेम और विश्वासपूर्ण हृदय को ही वह कैसे इतना बड़ा आघात पहुँचावे? अपना दुःख वह भूल गई, किरण के ही लिए उसका हृदय छटपटाने लगा।

किरण ने मानो लीला की अवस्था को समझ लिया। एक अखंड तृप्ति और पौरुष से उसका हृदय परिपूर्ण हो गया। लीला को शान्त करने के लिए उसने बातचीत करनी शुरू की। अरुण की चर्चा छेड़ कर उसने लीला को यह सूचित किया कि तुमसे मुलाकात

न होने के कारण वह बहुत ही कातर और उद्विग्न हो उठा है! तुम्हारे स्थान पर आजकल मैं ही उसे उसकी पाडुलिपि पढ़ कर सुनाया करता हूँ, इससे मैं ज्यादा कहीं घूमने भी नहीं जाता हूँ, दिन भर उसी के पास बैठा रहता हूँ।

अरुण की चर्चा छिड़ने पर लीला ने तकिया पर से मस्तक उठा कर देखा। उसका मुँह लज्जा के मारे बिल्कुल लाल हो गया था। किरण की ओर बिना देखे ही वह अरुण के सम्बन्ध की बातें करने को उद्यत हो गई।

इतने में नर्स ने आकर सूचित किया कि किरण के यहाँ से जाने का समय अब हो गया है। पहले ही दिन इतना अधिक बातचीत करना ठीक नहीं है।

उस दिन के लिए बिदा लेकर किरण स्वप्न-सा देखता हुआ आकर गाड़ी पर बैठा। नवीन अनुराग से उस समय उसकी आँखें जल रही थीं।

( २९ )

काशी के पंचगंगाघाट पर एक एकान्त चबूतरे पर बैठा हुआ असित एक दृष्टि से वेणीमाधव की गगनस्पर्शी ध्वजा की ओर ताक रहा था। उस स्थान के आस-पास कोई आदमी नहीं था। नीचे अर्द्धचन्द्र के आकार में गङ्गा जी बह रही थीं। सूर्य प्राय: अस्त हो रहे थे। उनकी लाल-लाल किरणें गंगा जी के जल, और उस पार के वृक्षों की पंक्तियों पर बिखरी हुई थीं। घाट का रास्ता प्रायः सूना हो चला था। गंगाजी में केवल दो-चार स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं, जिनकी बातचीत का शब्द वायु में मिलकर उस स्थान की निस्तब्धता बीच-बीच में भंग कर देता था।

उस एकान्त स्थान में बैठ कर असित अपने अतीत जीवन पर विचार कर रहा था। उत्तर बंगाल के एक शान्तिमय और हरे-

भरे गाँव में उसका जन्म हुआ था। उसके उस सुखमय घर का चित्र आज भी उसके हृदय पर स्वप्न के समान उदित हो आया करता था। माता का प्रसन्नता से विकसित और सुन्दर मुख उसे अभी भूला नहीं था। प्रतिदिन सवेरा होते ही उसकी मा उसका मुँह चूम कर जगाती और वह हँसता हुआ उठ कर बैठ जाता। तब से समस्त दिन माता के साथ-साथ लगा रह कर वह उसका मनोरंजन करता रहता। माता चाहे किसी भी काम में लगी रहती, वह उसे पल भर के लिए भी नहीं छोड़ता था। माता-पुत्र मिलकर कितनी बातचीत करते, खुश हो-होकर कितना हँसते थे। साँझ को असित माता की गोद में लेट कर चन्द्रमा की छवि देखा करता। माता उसे कहानियाँ सुनाया करती। उन सुखमय दिनों की धुँधली स्मृति स्वप्न के समान उसके हृदय पर आज भी उदित हो आया करती थी।

माता की गोद में इसी तरह बड़े लाड़-चाव से असित बढ़ रहा था, किन्तु एकाएक न जाने कैसी घटना हुई कि उसकी मा उसे छोड़ कर कहीं चली गई। उसके सम्बन्ध में असित से किसी ने कुछ कहा नहीं। केवल उसके पिता उसे लेकर घर से निकल पड़े और वे निरुद्देश होकर इधर-उधर भटकने लगे। उसी समय से उसके दुखमय जीवन का श्रीगणेश हुआ।

निराश्रय और धनहीन होकर उन पिता-पुत्र ने असहाय अवस्था में भटकते-भटकते अपने जीवन के न जाने कितने दिन काट दिये थे। भूख-प्यास और थकावट के मारे लड़खड़ा जाने पर असित को न जाने कितने बार मा की याद आई थी और उसका हृदय फूट-फूट कर रो उठने के लिए व्यग्र हो उठा था। परन्तु अल्पभाषी और गम्भीर पिता के भय से वह रो नहीं सकता था। मन की व्यथा मन में ही दबा कर वह मौन रुदन से हृदय पूर्ण कर लेता और भीतर ही भीतर व्याकुल हो उठता। कोई उससे चुमकार कर बातें

न करता। कोई उसकी सेवा-यत्न न करता। जरा से लाड़-प्यार के लिए, जरा से स्नेह के लिए, पिपासित होकर उसने अपने दुखमय जीवन का कितना समय व्यतीत कर दिया था।

धीरे-धीरे असित बड़ा हुआ। वयोवृद्धि के साथ ही साथ वह पिता के सुख-दुख में भाग भी लेने लगा। अन्त में उसे उनके हृदय की तीव्र वेदना और प्रतिहिंसा की ज्वाला का भी विवरण मालूम हुआ।

असित ने सुना कि उसके गाँव के जमींदार गिरीन्द्रनारायण घोष ही उसके सारे दुख और अपमान के मलकारण हैं। मंडलगढ़ के परगने के नायव के अत्याचार से ऊब कर असामी लोग जमींदार के बड़े विरोधी हो गए थे। कर्मचारियों की चालबाजी के कारण जमींदार के पास तक जा नहीं पाते थे। असित के पिता ही वहाँ के असामियों में सबसे अधिक बुद्धिमान् थे और वे बड़े उदार और दूरदर्शी थे। उन्होंने सोचा कि असामियों की सारी कठिनाइयों को सचाई के साथ समझाकर सारा झगड़ा तय कर देना चाहिए। इस भाव से प्रेरित होकर उन्होंने दोनों पक्षों में सद्भाव तथा शान्ति स्थापित करने की चेष्टा की थी। इसका फल यह हुआ कि वे जमींदार के क्रोध के पात्र बन बैठे। उनके ऊपर कई झूठे मुक़द्दमे चलाये गये और तरह-तरह के अत्याचार किये गये, जिससे उनका सर्वस्व स्वाहा हो गया।

असित के पिता ने प्रजा का पक्ष लेकर जमींदार को समझाने की चेष्टा करके जो अपराध किया था उसके दंडस्वरूप तरह-तरह से तंग करके और उन पर तरह-तरह के अत्याचार करके भी नायव शान्त नहीं हुआ। एक दिन वे किसी काम से दूसरे गाँव को गये थे। वहाँ से लौटने में उन्हें दो दिन लग गये। आकर उन्होंने जब देखा तब उनका घर सूना था, कहीं कोई नहीं था। पड़ो-सियों ने सूचना दी कि कल रात को जमींदार के बहुत-से नौकर-

चाकर आये थे। घर का दरवाजा तोड़ कर वे लोग जबरदस्ती तुम्हारी स्त्री को पकड़ ले गये। हम लोग जाग उठे थे अवश्य, परन्तु डर के मारे जमींदार के विरुद्ध खड़े होने का साहस नहीं कर सके। बालक अमित को हम लोगों ने तब तक के लिए अपने ही घर पर रख लिया है।

जिस दिन की यह बात है उसी दिन तीसरे पहर तालाब के जल में अमित की मा का निर्जीव शरीर उतरा आया। सतीत्व का गर्व करनेवाली कुलकमला ऐसा अपमान भला कैसे सहन कर सकती थी? अत्याचारियों पर घृणा प्रकट करती हुई उसने आत्म-हत्या की ही शरण ले ली।

उस दिन से अमित के पिता के सारे सुखों का अन्त हो गया। जीवन में उन्हें फिर कभी शान्ति नहीं मिली। वे केवल पुत्र की रक्षा और इस अत्याचार का बदला लेने के लिए घर छोड़ कर निकल पड़े और इधर-उधर भटकने लगे। यही उन पिता-पुत्र के जीवन का इतिहास है।

अमित को जिस दिन ये सब बातें मालूम हुई थीं उस दिन से पिता के ही समान अपने कुल का अपमान करनेवाले परम शत्रु के प्रति प्रतिहिंसा का भाव उसके हृदय में भी जाग्रत् हुआ, शत्रु का अनुसन्धान करके उस पर आघात करने के लिए वह बराबर प्रयत्न करने लगा, परन्तु कभी सफलता नहीं मिली। पिता-पुत्र ने मिल कर कितने ही बार प्रयत्न किया, किन्तु वे कुछ कर न सके। अन्त में भोजन का समुचित प्रबन्ध न होने तथा दुश्चिन्ता और परिश्रम की अधिकता के कारण अमित के पिता का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर भंग होता गया और अपनी मनोवांछा पूर्ण किये बिना ही उन्होंने संसार से बिदा ले ली।

सोचते-सोचते अमित के मन में आई पिता के मृत्यु के समय की बात। यहीं काशी के मणिकर्णिका घाट पर उनकी मृत्यु हुई थी।

वहाँ का एक निर्जन मन्दिर उनकी मृत्यु-शैय्या थी। यन्त्रणा के मारे छटपटा-छटपटा कर उन्होंने सारी रात काट दी थी सवेरे की रात में थोड़ी नींद आई थी। गंगा के वक्ष में वर्त्तमान उस निर्जन श्मशान घाट पर अकेले बैठे हुए असित ने पिता के मुँह की ओर ताकते-ताकते जाग कर सवेरा कर दिया था। बैठे-बैठे वह यही सोचता रहा कि हमारे जो पिता एक दिन धनवान् तथा समृद्धिशाली थे और जिनके पास सारी सुख-सुविधायें वर्त्तमान थीं, वे ही आज पन्द्रह वर्ष से असह्य मनोव्यथा तथा दरिद्रता का क्लेश सहते आ रहे हैं। आज उन्हें पेट भर भोजन नहीं मिलता, सांघातिक रोग से पीड़ित होकर अत्यन्त ही दीन-हीन भिखारी के समान असहाय अवस्था में जमीन पर पड़े हैं! दवा तक का ठिकाना नहीं है! ये बातें सोच-सोच कर विवशता और निराशा की तीव्र यातना से उसका हृदय विदीर्ण होता जा रहा था। रह-रह कर वह इसी बात के लिए पश्चात्ताप करता कि हाय, उपयुक्त पुत्र होकर भी अपने सताए हुए और दुखी पिता को मैं एक दिन भी किसी प्रकार का सुख न दे सका।

प्रातःकाल अरुणोदय के साथ ही साथ रामगोविन्द जाग उठे। एक बार जी भरकर उन्होंने स्निग्ध और शीतल वायु में साँस ली। बाद को मन्दिर के देवता को प्रणाम करके कहा—मेरा समय अब आ गया है असित, मुझे जो कुछ कहना था वह सब तुम्हें मालूम है। अब मुझे कोई नई बात नहीं कहनी है। उन सब बातों की तुम्हें याद भर दिलाए जाता हूँ।

दिन चढ़ आया था। पिता के मुँह पर धूप आ गई थी। असित उठा और अपने शरीर पर का चदरा उतार कर टाँग दिया, जिससे धूप न आ सके।

थोड़ी देर के बाद पिता फिर बोले—मेरी इस मृत्यु-शैय्या के पास तुम प्रतिज्ञा करो कि जिस काम को मैं अपूर्ण छोड़ कर

जा रहा हूँ, उसे तुम प्राणों की बाजी लगाकर पूर्ण करने की चेष्टा करोगे। जिसने तुम्हारी माता का सम्मान नष्ट किया है, जिसके कारण हम लोग जीवन भर तरह-तरह का अपमान और क्लेश सहते आ रहे हैं, उसे जहाँ कहीं किसी भी दशा में पाना, वहीं किसी प्रकार का सोच-विचार किये बिना ही, उसकी हत्या कर डालना। उसके रक्त के बिना मेरी आत्मा को किसी प्रकार भी तृप्ति न होगी। तुम्हारी प्रतिहिंसा इतनी प्रबल होनी चाहिए कि पृथ्वी के चाहे किसी भी भाग में वह मिल सके, उसे ढूँढ़ कर ज़रूर पकड़ना। बताओ, जहाँ कहीं भी वह मिलेगा, उसे खोज लोगे न?

आँखों में आँसू भरे हुए असित ने पिता की मृत्यु-शय्या का स्पर्श करके प्रतिज्ञा की। रामगोविन्द के सूखे हुए अधरों पर तृप्ति की हँसी उदित हो आई। एक बार शान्ति की साँस लेकर वे संसार से सदा के लिए विदा हो गये।

पिता की मृत्यु के बाद असित कुछ दिनों तक निरुद्देश भाव से भटकता रहा, किसी काम-काज में उसका चित्त नहीं लगता था। अपने जीवन का कोई भी लक्ष्य या मार्ग वह किसी तरह भी नहीं स्थिर कर पाता था।

उन्हीं दिनों में बंगाल में बंग-भंग के कारण स्वदेशी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। चारों ओर सभासमितियों, व्याख्यानों और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार आदि का उद्योग होने लगा। सारे बंगाल में हलचल मच गई। असित को मानो डूबते को सहारा मिल गया। जीवन के मार्ग में नवीन प्रकाश का दर्शन पाकर नवीन आवेग और उत्तेजना के कारण वह भी इसी आन्दोलन में कूद पड़ा।

उत्तेजना के बाद शिथिलता का आना अनिवार्य है। सरकार के कर्मचारी जब इन सभासमितियों के कार्यकर्त्ताओं पर अत्याचार करके उन्हें सताने लगे और उनके फाँसने के लिए नये-नये क़ानूनों के जाल फैलाये जाने लगे, तब कार्यकर्त्ताओं की श्रेणी से लोग एक-एक

करके खिसकने लगे, देश-भक्ति की अधिकता उन्हें रोक न रख सकी।

परन्तु इसके साथ ही एक दल और था। उस दल के लोग भी पहले उत्तेजना के वश में आकर ही देश-सेवा के लिए कटिबद्ध हुए थे। परन्तु उस दल के लोगों ने धीरे-धीरे देश को वास्तविक रूप से पहचान लिया था। देश के प्रति उनके हृदय में अनुराग था, और वे उसे स्वाधीन करने के लिए व्याकुल थे। इसलिए तरह तरह से सताये जाने पर भी उन लोगों ने अपना व्रत नहीं भंग होने दिया। जो लोग घर-द्वार छोड़ चुके थे, उन्हें फिर कोई भी प्रलोभन या आतङ्क नहीं लौटा सका। इस दल के लोग सारे बंगाल में स्थान-स्थान पर विप्लव-समितियों का संगठन करने लगे। इन लोगों का दल गुप्त रीति से क्रांति के लिए तरह-तरह से शक्ति का संचय करने लगा।

असित की भी इस दल से पृथक् होने की इच्छा न हुई। पृथक् होकर वह जाता ही कहाँ? संसार में उसके लिए किसी प्रकार का बन्धन या आकर्षण तो था नहीं। देश-सेवा के लिए पूर्ण-रूप से अपना उत्सर्ग करके वह क्रान्तिकारियों के दल में मिल गया।

इस दल में सम्मिलित होने पर भिन्न-भिन्न जाति-धर्म तथा विचार के लोगों से असित का सम्पर्क हुआ और अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता के लिए कठिन से कठिन परिश्रम करके उसे तरह तरह के प्रयत्न करने पड़े। अतएव अपने जीवन की बातें उसे प्रायः भूल-सी गईं। ठीक उसी समय एक दिन पटना के एक निर्जन प्रदेश में अनायास ही उसके प्रबल शत्रु से मुलाक़ात हो गई।

× × × ×

एक गम्भीर और लम्बी साँस लेकर असित ने एक बार चारों ओर ध्यानपूर्वक देखा। उस समय तक सन्ध्या का अन्धकार पृथ्वी पर अवतीर्ण होकर तट पर की भूमि को आच्छादित कर चुका था। गंगा जी के जल में भी वही अन्धकार की छाया थी। गंगा

दूरी पर शुक्ला सप्तमी का चन्द्रमा चमक रहा था। वेणीमाधव के मन्दिर में आरती हो रही थी। वहाँ से शंख और घंटे का शब्द वायु में मिलकर प्रवाहित हो रहा था। असित उठा और वहीं एक कोने से लकड़ी के कुछ टुकड़े संग्रह करके उसने आग जलाई। बाद को कुछ दूर बढ़ कर रास्ते की ओर वह टकटकी लगाकर ताकने लगा, मानो किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था।

जिस दिन मिस्टर घोष से असित की मुलाक़ात हुई थी, उस दिन से उसके हृदय में ऐसा प्रबल उद्वेग उत्पन्न हुआ था और उसके मन की चंचलता इतनी बढ़ी जा रही थी कि वह किसी प्रकार भी अपने को न सँभाल पाता। वास्तव में उस दिन से असित बिलकुल ही अधीर हो उठा था। वह रह-रहकर सोचा करता कि यही हमारा जीवन भर का प्रबल शत्रु है। इसी के हाथ से अपमानित होकर माता जी ने घृणा और धिक्कार के साथ प्राण त्याग दिया था। इसी के अत्याचार से पिताजी का घर-द्वार छूटा था और वे निर्धन होकर भिखारी की तरह जगह-जगह की ठोकरें खाते फिरे। अन्त में तरह-तरह के दुख-क्लेश सहते-सहते वे अकाल में ही मृत्यु का वरण करने के लिए बाध्य हुए थे। मेरे माता-पिता का घातक यह पापिष्ठ आज मेरे हाथ में है। अपनी जन्म-भूमि से सारा सम्बन्ध त्याग कर इसने सुदूर पश्चिम के एक प्रदेश में छिप कर अपना इतना समय व्यतीत किया है, इसलिए बार-बार प्रयत्न करने पर भी हम लोग आज तक इसका पता नहीं लगा सके। किन्तु अब? अब मेरे हाथ से कौन इसकी रक्षा कर सकता है?

पैशाचिक आनन्द और प्रतिहिंसा के तीव्र भाव के कारण असित का समस्त चित्त कुछ समय तक बहुत डावाँडोल रहा। उस समय वह और किसी भी काम में ध्यान न दे सका। उत्तेजना और उद्वेग की अधिकता के कारण वह अशान्त होकर इधर-उधर टहलने भर लगा।

कुछ देर के बाद असित के मन का वह भाव धीरे-धीरे शिथिल पड़ने लगा। वह सोचने लगा कि आज तक मैंने जिस प्रबल प्रतिहिंसा का भाव जाग्रत् कर रक्खा है, उसका पात्र क्या वही सरल-हृदय वृद्ध है, जो कन्या के जीवन से अपना जीवन और उसकी मृत्यु से अपनी मृत्यु समझता है? मिस्टर घोष उस दिन जब बैठे थे, निर्मला के कातर और करुण मुँह की ओर ताक कर उनका हृदय कितना शंकित और उद्विग्न हो उठा था? उनकी दृष्टि से कितना स्नेह और ममता टपक रही थी? जिस हृदयहीन दाम्भिक नरपिशाच के अमानुषिक अत्याचार से हमारा सोने का संसार मिट्टी में मिल गया है, क्या यह वही व्यक्ति है? असित की समझ में कोई बात न आई। निर्मला की तबीअत जब कुछ ठीक हो गई थी तब मिस्टर घोष कैसी सरलता और स्वच्छन्दता के साथ बातचीत करते थे, बात-बात में वे किस तरह निष्कपट भाव से खिलखिलाकर हँस पड़ते थे, उनके चेहरे पर आनन्द की कैसी सरल रेखा विराजमान थी, आदि आदि बातें असित के मन में आने लगीं। और मेरा परिचय मिलने पर उनके मनोभावों में कैसा परिवर्तन हुआ था? ये सब बातें सोच कर असित बहुत ही विचलित हो उठा!

उसका परिचय पाकर घोर लज्जा और पश्चात्ताप की तीक्ष्ण ज्वाला क्या मिस्टर घोष के प्रसन्नमुख पर नहीं विकसित हो आई थी? क्या उस वृद्ध को, जिसका मस्तक पश्चात्ताप, आत्म-ग्लानि और लज्जा के मारे नीचा हो गया था, वध करके उसके इतने दिन के अन्याय का बदला लेना होगा? इस चिन्ता के कारण असित का तरुण और वीर हृदय विद्रोही हो उठना चाहता था। उसकी जोड़ के जितने भी व्यक्ति उसकी प्रतिद्वन्द्विता के लिए खड़े हुए थे उनसे युद्ध करने में असित ने कभी पीछे नहीं पैर रक्खा। परन्तु मिस्टर घोष-जैसे व्यक्ति पर हाथ छोड़ना तो मुर्दे पर अस्त्र चलाना होगा! अपनी करनी पर पश्चात्ताप करके जो स्वयं मर रहा है उस

पर फिर असित किस तरह हाथ छोड़े ? और निर्मला ? उसे तो कदाचित् इन घटनाओं के सम्बन्ध में बिन्दु-विसर्ग भी न मालूम होगा। साथ ही इस घटना का जो भी शुभाशुभ फल होगा वह उस बेचारी निरपराधिनी के ही भाग्य में पड़ेगा। वास्तव में वह उसके ऊपर किसी दिन वज्र के समान एकाएक फट पड़ेगा।

बहुत सोच-विचार करने पर भी असित इस सम्बन्ध में कोई सिद्धान्त नहीं स्थिर कर सका। अपनी समिति के आदेश के अनुसार उसी दिन साँझ को उसे पंजाब चला जाना पड़ा, इससे वह अपनी व्यक्तिगत चिन्ता को स्थगित करने के लिए बाध्य हुआ। तीन-चार मास तक स्थान-स्थान पर घूम-फिर कर वह अक्लान्तभाव से काम करता रहा, अभी एक सप्ताह हुए, अपनी मातृभूमि बंगाल की पश्चिमीय सीमा पर वह फिर लौट कर आया है।

उस दिन वह दानापुर से लौट रहा था। रास्ते में एकाएक फिर निर्मला से मुलाक़ात हो गई। तब से उसके हृदय की चंचलता फिर बढ़ गई थी। उस दिन निर्मला के साथ एक हृदयहीन व्यक्ति के समान वह जिस निष्ठुरता का बर्ताव कर आया था, इधर कई दिन तक वह याद आ आकर हृदय में काँटे की तरह चुभा करता था। वह किसी भी काम में हाथ लगाता या किसी भी विषय पर विचार करने लगता, उस दिन की बात मन में उदित होकर उसे अधीर कर देती। निर्मला के सेवा-परायण हृदय ने जिस सेवा का आयोजन किया था, उसका प्रत्याख्यान करके असित चला आया था, अतएव निर्मला की उस समय की असमाप्त और अतृप्त आकांक्षा का स्मरण करके उसका अन्तःकरण सदा भूख की-सी ज्वाला से अनुतप्त होकर असित को पीड़ित करता रहता तथा रह-रह कर उसे निर्मला का रक्तहीन और उतरा हुआ मुँह याद आता। निस्तब्ध वायु में मिलकर किसी का व्याकुलतामय स्वर उसके कानों में गूँज उठता "ठहरिए, ज़रा-सा ठहरिए असित बाबू, कहाँ जाते

हैं?" उसे यह क्या हो गया था? किसलिए वह इस प्रकार व्यथित हो रहा था?

जिसके रक्त के लिए असित अपने पिता के समक्ष प्रतिज्ञाबद्ध हो चुका था, उसकी याद आते ही उसके हृदय में करुणा का एक ऐसा प्रबल उच्छ्वास उत्पन्न होता कि उसमें उसकी जिघाँसा-वृत्ति निमग्न हो जाना चाहती। असित हृदय से प्रयत्न करके अपने को सम्मत करता और पहले की बदला लेने की प्रबल स्पृहा को जाग्रत् रखने का निरर्थक प्रयत्न करता रहता।

उस दिन मिस्टर घोष के यहाँ का आतिथ्य अस्वीकार करके असित ने ऐसा कौन-सा अनुचित काम किया है? जो उसके कुल का शत्रु है, जिसने उसकी माता का अपमान किया है, जो उसके समस्त दुखों का कारण है, एक लड़की के मोह में पड़ कर क्या पहले की उन सारी बातों को भूल कर कुत्ते की तरह, वह उसी का अन्न ग्रहण कर सकता है? उसने जो कुछ किया है वही उचित है। उसके अतिरिक्त वह और कर ही क्या सकता था? इस विषय में निर्मला को निरर्थक क्लेश अवश्य सहना पड़ेगा, परन्तु उससे असित का क्या मतलब है? आज वह निर्मला की दशा पर विचार करके संकल्प-विकल्प कर रहा है, किन्तु बीस वर्ष पहले जब वह छोटा-सा बच्चा था, तब क्या उसके उदार-हृदय पिता पर इस तरह पैशाचिक अत्याचार करते समय उसके भविष्य पर विचार करके किसी को जरा भी द्विविधा हुई थी? यदि नहीं तो आज असित के ही हृदय में इतनी दुर्बलता क्यों आ रही है? निर्मला की ही चिन्ता बार-बार उदित होकर उसे इस तरह उद्देश से भ्रष्ट क्यों करती है? निर्मला उसकी कौन है? किस मोह से वह उसके भविष्य की चिन्ता करता है? निर्मला को भूल कर असित अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहने का प्रयत्न कर रहा था।

इन कुछ वर्षों में समिति की आज्ञा से असित कितने ही

आदमियों का वध कर चुका था ? उसके हृदय में और तो कभी किसी प्रकार का संकल्प-विकल्प उत्पन्न नहीं हुआ। मरे हुए व्यक्ति के परिवार तथा उसके कन्या-पुत्र की अवस्था पर भी विचार करने की आवश्यकता उसे कभी नहीं प्रतीत हुई। ऐसी दशा में मिस्टर घोष का ही वध करते समय उसे इतनी चिन्ता क्यों हो रही है ? उसके हृदय में जो इतनी दुर्बलता आ रही है, वह इतना चिन्तित हो रहा है, वह क्या केवल निर्मला के ही लिए ? निर्मला का मोह इन थोड़े दिनों में ही उसे इस तरह अभिभूत कर सका है कि अपनी इतने दिनों की दुर्दशा, इतना घोर अपमान वह अनायास ही भूल-सा बैठा है ! मृत्युशय्या पर पड़े हुए पिता के आदेश को क्या वह इतनी आसानी से, इतनी तुच्छ बात के लिए, भूल जायगा ? जिस माता की स्नेहमयी गोद में इस पृथ्वी का प्रकाश उसने पहले-पहल देखा है, जिस माता के हृदय की रक्त-धारा से वह इतने दिन दिन तक पुष्ट हुआ है, उसकी, उसी स्नेहमयी माता की, अतृप्त आत्मा अपनी दुर्दशा का बदला लेने की आशा से असित की ही ओर ताक रही है। ऐसा अधम पुत्र है वह कि इतनी ज़रा-सी बात पर माता की स्मृति की भी अवज्ञा करने जा रहा है !

असित की नस नस में प्रबल वेग से रक्त बहने लगा। क्षणिक मोह और दुर्बलता को भूलकर पहले की ही तरह अपना साहस और शक्ति लौटा लाने के लिए वह फिर प्रयत्न करने लगा। उसने सोचा कि निर्मला के प्रलोभन पर मुझे विजय प्राप्त करनी ही पड़ेगी।

( ३० )

जिस स्थान पर असित बैठा था, वहाँ से कुछ दूरी पर झिल्ली की झनकार के समान सीटी का बड़े जोर का शब्द हुआ, जिसके कारण गङ्गा जी का निर्जन तट ध्वनित हो उठा। उस शब्द के

कारण असित की विचार-धारा छिन्न-भिन्न हो गई। वह भी चौंक कर उठ खड़ा हुआ और ज़रा-सा आगे बढ़कर ज़ोर से सीटी बजाते हुए उसने पहलेवाली सीटी का उत्तर दिया। थोड़ी ही देर के बाद परेश और सुधीर ने उसके समीप आकर पुकारा—असित-दादा।

असित ने कहा—आओ, मैं यहाँ अकेले बैठा-बैठा बड़ी देर से तुम लोगों की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। कहो, कैसा हाल है?

"हाल अच्छा ही है। चलो, ज़रा बैठ जायँ, तब एक-एक करके सारी बातें बतलावें।"

तीनों आदमी आकर घाट के उसी स्थान पर बैठे। सुधीर ने एक बार चारों ओर ध्यानपूर्वक देखा और वह कहने लगा—क्या असित दादा का आज-कल यहीं अड्डा है? जगह का चुनाव तो बहुत अच्छा किया गया है। यहाँ रह कर अकेले-अकेले कुछ दिन बहुत आसानी से काट दिये जा सकते हैं।

चन्द्रमा का प्रकाश आ आकर उस चबूतरे के एक कोने पर पड़ रहा था। परेश वहीं पर लेट गया। उसके ठीक मस्तक के ऊपर एक तारा चमचमा रहा था। उस समय तट पर मनुष्यों का आना-जाना एक दम बन्द हो चुका था, इसलिए वहाँ बिलकुल सन्नाटा था, मन्द-मन्द तरंगों से आन्दोलित होकर गङ्गाजी का जल तट-भूमि से टकरा कर अलबत्ता समताल में ही शब्दायमान हो रहा था।

गङ्गाजी के जल के कणों से शीतल होकर मन्द-मन्द हवा चल रही थी। उसके स्पर्श का सुखोपभोग करते हुए परेश ने कहा—काटे तो जा सकते हैं, किन्तु केवल चन्द्रमा का प्रकाश और ठंडी हवा ही खाकर तो उदरपूर्ति की नहीं जा सकती, यह शरीर बिलकुल स्थूल पदार्थ है न! इसलिए इसको स्थायी रखने के लिए कुछ वास्तविक पदार्थ...।

असित ने बात काट कर कहा कि वास्तविक पदार्थ के लिए

तुम्हें कोई चिन्ता न करनी पड़ेगी। यहाँ मैं ख़ुद वेणीमाधव के मन्दिर का अतिथि हूँ। दोनों समय ख़ूब पेट भर खाने को मिल जाता है। रात को रहने के लिए भी मुझे वहाँ एक कोठरी मिल गई है, सेवा-यत्न में कोई कमी नहीं है। परन्तु दिन को वहाँ बड़ा झमेला रहता है, इसलिए मैंने यह जगह चुन ली है। दिन भर यहीं रहता हूँ। अच्छा, अब यह बतलाओ कि काम-काज किस तरह से चल रहा है?

परेश ने कहा—बचा लिया दादा। इतनी देर के बाद शरीर में बल आया है। मैंने सोचा था कि तुम जैसे दार्शनिक व्यक्ति के सामने खाने-पीने की चर्चा जैसे ही छेड़ूँगा, वैसे ही फटकार बताओगे और कहोगे कि इतने महत्त्व-पूर्ण कार्य के समय इन ज़रा-ज़रा-सी बातों के लिए माथा-पच्ची करने की क्या ज़रूरत है? यही सोच सोचकर मैं घबरा रहा था। अस्तु, आज-कल तुम्हारी तरफ़ का क्या हाल है? उधर तो बिलकुल तैयारी हो चुकी है। केवल बंगाल में ही...बाबू कह रहे थे कि यदि दिन थोड़ा और टाल दिया जाय तो थोड़ा-सा समय और मिल जायगा, इससे लोग ख़ूब अच्छी तरह तैयार हो सकेंगे। तब तक रुपया-पैसा भी कुछ अधिक संग्रह किया जा सकता है।

यह सुनकर असित ने कहा—इस सम्बन्ध में मैंने भी विचार किया था। परन्तु आज-कल ऐसी परिस्थिति आ गई है कि सारी बातों को ध्यान में रखकर विचार करने पर मालूम होता है कि अधिक विलम्ब करने से परिणाम अच्छा न होगा। पंजाब से जब मैं लौटा हूँ तभी यह देख आया हूँ कि उधर के सिपाही बहुत चञ्चल हो गये हैं। वे लोग बहुत समझा-बुझा कर इतने दिनों तक दबा कर रक्खे गये हैं, अब वे इस तरह नहीं मानना चाहते। उनका कहना है कि तुम्हारा समय आते-आते यदि हम लोग योरप के युद्ध में भेज दिये गये तो सारा मामला ही मिट्टी में मिल जायगा।

उत्तर-पश्चिम और विहार के सब बैरिकों में मैं स्वयं घूम आया हूँ। अभी तक वहाँ के भी सब सिपाही हमारी आज्ञा का अनुसरण करने के लिए तैयार हैं। किन्तु अधिक समय तक रोक रखने में उनका भी धीरज न रहेगा। इसी लिए मैं समझता हूँ कि जब सभी तैयार हैं तब शीघ्रता करने से ही लाभ होगा।

परेश ने कहा—यदि ऐसी बात है तो मैं तो समझता हूँ कि तुम एक बार फिर निकल पड़ो। वे लोग बहुत दूर रहते हैं और बंगाल से बाहर का हाल अच्छी तरह नहीं जानते। इसलिए इन सब स्थानों की परिस्थिति का ठीक ठीक अनुभव नहीं कर पाते। उनसे मुलाक़ात करके जब सारी बातें समझाओगे तब सम्भव है कि वे अपना विचार परिवर्तित कर दें। मैं इस बार बंगाल के भिन्न-भिन्न दलों में घूम कर देख आया हूँ। वहाँ के संगठन में जैसी शृङ्खला और शक्ति है, मेरे विचार से वैसी तो और कहीं न होगी। तुम एक बार जाकर देखोगे तब सारी बातें तुरन्त ही मालूम हो जायँगी।

सुधीर अभी तक चुप था। अब उसने कहा—किन्तु इस समय यदि तुम्हें बाहर जाना हो तो इधर से ही ख़ूब सवधानी के साथ निकल जाओ, बीच काशी से होकर जाने का प्रयत्न न करो। पटने में आज-कल धर-पकड़ मची हुई है। नलिन जब गिरफ़्तार हुआ था तब उसके पास न जाने कैसे काग़ज़-पत्र मिले हैं, जिनके कारण काशी में भी बड़ी सरगर्मी से तलाशियाँ हो रही हैं। काशी आने पर तुम जिन दो मकानों में रहा करते थे वे दोनों ही 'सर्च' किये जा चुके हैं। आज मैं उधर गया था तब दोनों पर ही पुलिस का पहरा था।

असित मुस्कराने लगा। उसने कहा—शायद पुलिसवालों की धारणा होगी कि असित जब बाहर गया है तब काशी आने पर इन दोनों में से किसी न किसी मकान में तो जायगा ही। तब हम उसे

आसानी से पकड़ लेंगे। अभी कुछ दिन तक उन बेचारों को इसी सुख की नींद में समय काटने दो। तब तक मैं भी इधर का थोड़ा-बहुत काम सँभाल आऊँ। उन्होंने क्या कभी स्वप्न में भी इस बात की कल्पना की होगी कि मैं उनकी आँखों में धूल झोंक कर दोनों ही मकानों के पास से होकर चला आया हूँ? दानापुर के कन्टनमेंट के काम से निपट कर जब मैं काशी आया तब बारी-बारी से दोनों ही मकानों के द्वार तक गया था, परन्तु वहाँ पुलिस-वालों को देखकर लौट आया। उस समय मैं संन्यासी के वेश में था, इसलिए किसी ने मेरी ओर मुँह फेर कर देखा तक नहीं। वहाँ से लौट कर मैंने यहाँ अड्डा जमाया, तब तुम लोगों को सूचना दी। अस्तु, इस समय यदि कुछ दिनों के लिए मुझे फिर बाहर जाना पड़े तो तुम लोग तो यहाँ रहोगे न?

परेश ने उत्तर दिया—अच्छी बात है। जब तक तुम लौट कर नहीं आओगे तब तक यहाँ का सारा काम-काज हमीं लोग देखते रहेंगे।

असित ने कहा—यहाँ कोई नया काम करने को नहीं है। बीच-बीच में जाकर उन लोगों से मिलते भर रहना होगा। साथ ही इस तरह की बातें भी करते रहना जिससे कि उनका उत्साह कम न होने पावे। यहाँ के लिए इतना ही बहुत है। अमृतसर से सूचना मिली है कि वहाँ भी एक बार जाने की आवश्यकता है। इधर के बड़े बड़े नेताओं से मिल कर जब तक कोई दिन न स्थिर कर लिया जायगा तब तक काम न बनेगा। अतएव मैं बंगाल जाऊंगा और वहाँ सब कुछ ठीक करके अमृतसर चला जाऊंगा। इस बार मैं वहाँ इसी विचार से जा रहा हूँ कि इस सम्बन्ध में जो कुछ करना हो उसका अन्तिम निर्णय हो जाय। उसके बाद यदि भगवान् की इच्छा हुई, यदि इतने दिनों के बाद भारत के भाग्य में सचमुच सदियों की पराधीनता से मुक्त होना बदा होगा,

तो देखोगे कि दो सप्ताह के भीतर ही एक गुरुतर घटना के बीच में भारत का भाग्य किस तरह परिवर्तित हो जाता है।

अन्त के शब्दों का बहुत ही धीरे-धीरे गम्भीर स्वर से उच्चारण करके असित स्वप्न से अभिभूत-सा होकर अनन्त आकाश की ओर ताकता रहा मानो ग्रहतारागओं से खचित सुदूर नील आकाश में भारत का अनिश्चित भविष्य लिखा था उसी को पढ़कर वह एकाग्र मन से निर्णय करने की चेष्टा कर रहा था।

असित के इस गम्भीर कण्ठस्वर ने उसके साथियों के हृदय में भी तीव्र भावों का आवेग उत्पन्न कर दिया। उनके अन्दर एक विचित्र अनुभूति की बिजली स्पन्दित हो उठी। परेश अपने स्वाभाविक व्यङ्ग्य और कौतुकप्रियता को भूल गया और एक अनिर्दश्य आशङ्का और उद्वेग से हृदय को परिपूर्ण करके निस्तब्ध-भाव से ताकने लगा।

सुधीर अपनी कल्पना में ही मग्न था। वह कल्पनारूपी नेत्रों से देख रहा था, मानो समस्त भारत में विप्लव की ज्वाला धधक रही है और चारों ओर मार-काट का बाजार गर्म है। अपने इसी विचार में तल्लीन होकर वह निस्पन्दभाव से बैठा था।

इतने दिनों तक बहुत ही सतर्क होकर तिल-तिल करके, बहुत ही गुप्त रीति से जो देशव्यापी भयंकर आयोजन उन लोगों ने किया था वह सफल होगा या नहीं, इस बात की परीक्षा करने का दिन प्रायः आ गया था। भविष्य के सम्बन्ध में उद्वेग और सन्देह के कारण सभी की अन्तरात्मा काँप रही थी।

तो क्या इतने दिनों की इतनी आशा, इतना आयोजन, अब सचमुच सफल हो जायगा? सारी विपत्तियों से बचकर देश के सभी भागों में शृंखला रखकर क्या इस विराट् यज्ञ की पूर्ति की जा सकेगी? क्या अन्त तक हमारे दल की रक्षा हो सकेगी? तीनों ही व्यक्तियों के हृदय में इसी प्रकार के सैकड़ों प्रश्न जाग्रत हो उठे थे।

निर्जन तट-भूमि पर कोमल तान छोड़ कर गङ्गाजी का जल अश्रान्त भाव से किसी अनन्त की ओर बहा जा रहा था। छोटी-छोटी लहरें नाच-नाचकर तट पर आतीं और कलकलाती हुई वहाँ की भूमि से टकरा कर चली जातीं। कभी-कभी रात में घूमनेवाले पक्षी का अस्पष्ट स्वर वायु में मिलकर वहाँ आ रहा था। रात की गम्भीर निस्तब्धता में पत्थर की मूर्ति-से बैठे हुए इन तीनों युवकों ने बहुत-सा समय इसी अवस्था में व्यतीत कर दिया।

बड़ी देर के बाद ध्यानमग्न प्रकृति की नीरवता को भङ्ग करके परेश बोला—असित दादा?

चौंक कर असित ने मुँह फेरा—क्यों भाई?

"तुम्हें विश्वास होता है?" परेश अपनी आग्रहपूर्ण दृष्टि असित के मुँह पर जमाकर कहने लगा—"इतने दिनों के परिश्रम से यह जो विपुल आयोजन हम लोगों ने कर रक्खा है, इसकी सफलता पर क्या तुम्हें दृढ़ विश्वास है?"

"अवश्य, विश्वास पर ही तो देश के एक छोर से दूसरे छोर तक ऐसा प्रबल सङ्गठन किया गया है। दृढ़ विश्वास और निष्ठा के अतिरिक्त हमारे पास और सम्पत्ति ही कौन-सी है भाई?"

"तब हृदय में इतना संशय क्यों उत्पन्न हो रहा है?"

असित ने कहा—संशय की कोई बात नहीं है परेश! जितने भी बड़े काम आरम्भ किये जाते है, उन सबके आरम्भ में काम करनेवालों के हृदय में एक प्रकार का संशय का भाव या उद्वेग उत्पन्न होता ही है। तुम्हारा यह संशय निरर्थक है। इसे त्याग-कर दृढ़ विश्वास और उत्साह के साथ हम लोगों को कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण होना पड़ेगा। यह विश्वास और आत्मनिर्भरता ही प्रत्येक युग में मनुष्य को महत्ता देती आई है, तरह-तरह की बाधाओं और विघ्नों के बीच से मनुष्य को कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण

करके उसे सफलता से विभूषित कर तो आई है। तब हमीं लोगों के लिए इसका फल अन्यथा क्यों होगा ?

और कोई बात न कहकर परेश मौनभाव से सोचने लगा। असित भी कुछ समय तक चुप रहा। अन्त में उसने कहा---कहने को कोई कुछ भी कहे, किन्तु इस मार्ग का अनुसरण करने से भारत की राष्ट्रीय उन्नति अवश्य होगी और उसकी स्वाधीनता भी फिर से लौट आवेगी। इतने लोगों ने प्राणों तक का मोह छोड़कर जो साधना की है वह क्या कभी निष्फल हो सकती है ? हम लोगों में कोई भी ऐसा नहीं है जिसने नाम या यश के लोभ से इस मार्ग का अवलम्बन किया हो। ऐसा भी कोई व्यक्ति नहीं है जो किसी की उत्साहमय बातें या वक्तृता सुनकर क्षणिक उत्तेजना के कारण इस दल में सम्मिलित हुआ हो। इन लोगों को अपनी अन्तरात्मा से जो प्रेरणा मिली है, अपने जीवन में ही इन्होंने जिस सत्य का अनुभव किया है, उसी की प्रतिष्ठा और साधना के ही लिए ये सब तरह की कठिनाइयों, अत्याचारों तथा दुःख-क्लेश का वरण करके इस कण्टकाकीर्ण और जटिल मार्ग में अग्रसर हुए हैं। यह जो उनके हृदय के देवता का आग्रहपूर्ण आदेश है, यह जो देश के एक दल के लोगों के हृदय और प्राण स्वर से बँधे हुए यन्त्र की भाँति एक ही स्वर की लहरी में कम्पायमान हो रहे हैं, क्या यह सब मिथ्या हो जायगा ? कभी नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। इसी मार्ग से देश का उद्धार होगा। हम-तुम शायद कालरूपी अनन्तसागर में लीन हो जायँ, शायद वह दिन देखने का सौभाग्य हमें न मिले, किन्तु इस देश से ही एक दूसरा भी दल उत्पन्न होगा, जिसके सदस्य देश के उद्धार के लिए अपने हृदय के रक्त का अन्तिम विन्दु तक हँसते-हँसते दे देंगे। इस तरह की एकाग्र साधना क्या कभी व्यर्थ हो सकती है ?

यह बात समाप्त करके असित न जाने क्या सोचने लगा।

परेश और सुधीर को ऐसा जान पड़ा, मानो असित की बातों का एक-एक वर्ण यहाँ की वायु में गूँज रहा है और उसमें से ठीक वही ध्वनि निकल रही है।

कुछ देर तक चुप रहकर असित फिर बोला—जरा सोच कर देखो, कि आज हमारी दशा कितनी दुखमय है! केवल अपने और तुम्हारे सम्बन्ध में ही मै यह बात नहीं कह रहा हूं। देश के नाम पर जिस किसी ने भी इस मार्ग पर पैर रक्खा है, उन सबका ऐसा ही हाल है। धीरे-धीरे ऐसी दशा आ गई है कि उन सबका न कोई सहायक है, न उनके पास किसी प्रकार की धन-सम्पत्ति है, और न उन्हें कहीं से किसी प्रकार की सहानुभूति या स्नेह प्राप्त करने की ही आशा है। घर के या नाते-रिश्ते के लोग आश्रय देने में डरते हैं, मुलाक़ात होने पर मित्र लोग मुँह फेर लेते हैं, सोचते हैं कि इनसे बातें करने पर कहीं किसी झंझट में मैं भी न पड़ जाऊँ! घर में स्थान मिल ही नहीं सकता, रास्ते में खड़ा होने पर पुलिस-वाले पीछा करते हैं। बनैले पशुओं की भाँति कभी किसी वन में कभी किसी झाड़ी में और कभी किसी खण्डहर में छिपकर जीवन बिताना पड़ता है। खाने को कभी आधा पेट मिला और कभी वह भी न मिला। दुःख की सीमा नहीं है। फिर भी इस मार्ग को कोई त्यागना तो चाहता नहीं। सारा दुःख-क्लेश मस्तक पर रखकर वे लोग अपने अपने उद्देश की ओर वेग से चले जा रहे हैं, उनकी गाड़ी कहीं रुकती नहीं। यह कोई दो-एक दिन की बात भी नहीं है। महीने पर महीने और साल पर साल इसी तरह बीतते जा रहे हैं। इतना बड़ा त्याग, इतनी सहिष्णुता और इतनी प्रबल प्रेरणा उन्हें कहाँ से मिली है? यह क्या भगवान् का ही आदेश नहीं है? जिनके द्वारा वे ऐसे महान् कार्य का सम्पादन करनेवाले हैं उन्हें वे इस तरह की अग्नि-परीक्षा में डालकर मनुष्य बना रहे हैं। मेरा विश्वास है कि अब भारत में अवश्य ही युगपरिवर्तन होनेवाला है।

परेश ने कहा—विश्वास तो मेरा भी ऐसा ही है। किन्तु कभी-कभी न जाने क्यों हृदय में संशय उत्पन्न होने लगता है। क्या होगा, क्या न होगा, इसी एक बात की उत्कण्ठा बनी रहती है। अस्तु, हम लोगों की वर्त्तमान अवस्था के सम्बन्ध में तुमने जो कुछ कहा है उसमें कितनी सत्यता है, इस बात का परिचय मुझे इस बार की बंगाल की यात्रा में, साधारण गलियों से लेकर ट्रेनों तक में सर्वत्र मिला है। जहाँ कहीं भी जाता, वहाँ सर्वत्र एक ही तरह की बात मालूम पड़ती। मुझे देख कर सभी को अत्यधिक उत्कण्ठा होती, सभी के व्यवहार में उपेक्षा का आभास मिलता। लौटते समय गाड़ी पर थोड़े-से पढ़े-लिखे और सभ्य आदमी इस दल के लोगों के सम्बन्ध में तरह-तरह के विचार प्रकट कर रहे थे! वे कह रहे थे—इस देश में रह कर देशवासियों का ही माल लूटना! कहीं इसकी, कहीं उसकी हत्या करना! देश में दुनिया भर के उपद्रव और अशान्ति की सृष्टि करना! इन लोगों के उपद्रव से देश की शान्ति और शृङ्खला सब नष्ट हो जायगी। गवर्नमेण्ट का कर्तव्य है कि इस दलवालों को पकड़ कर ऐसा कड़ा दण्ड दे कि एक भी आदमी इसकी जड़ जमाने को न रह जाय। इसी तरह वे लोग न जाने क्या-क्या बक गये। सुनकर मैं तो दंग रह गया। सोचने लगा कि ये लोग यदि इस तरह की बातें करते हैं तो हमीं लोग रात-दिन प्राण दे देकर आकाश-पाताल इकट्ठा करने की चिन्ता में क्यों पड़े रहते हैं? देश की स्वाधीनता का तात्पर्य तो देश की जङ्गल-झाड़ियों की, नदी-पर्वतों की स्वाधीनता से है नहीं! देशवासियों की ही स्वाधीनता तथा सुख-सुविधा की अभिलाषा से हम लोग इतना प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु देशवासियों की सहानुभूति हम लोगों की ओर बहुत प्रबल दिखाई पड़ती है! बेचारा सुधीर तो लड़का ही है। उसकी ओर घूम कर देखा तो दुःख और अभिमान के मारे उसकी आँखें और मुँह

लाल हो गया था। मुझे तो ऐसा जान पड़ा कि कहीं यह रो न दे।

यह कह कर परेश बड़े कौतुक से सुधीर की ओर ताक कर हँसने लगा। असित ने बड़े स्नेह से पूछा—सचमुच सुधीर! वे सब बातें सुनकर सचमुच तुम्हारी आत्मा को इतना क्लेश हुआ था? ऐसी बातों की ओर हम लोगों को कर्णपात ही न करना चाहिए। भाई, जो व्यक्ति इस दिशा में पैर रखना चाहे उसे अपने हृदय को बहुत ही उन्नत बना लेना चाहिए। हम लोगों ने जिस बात को सत्य के रूप में ग्रहण किया है, जिसे अपने कर्तव्य के रूप में स्थिर कर लिया है, उसके लिए समस्त शक्ति से प्रयत्न करते रहेंगे। उसके लिए चाहे कोई हमारी निन्दा करे या प्रशंसा करे, उससे हमारा कोई मतलब नहीं है। यह एक मोटी-सी बात है। गीता का उपदेश तुम्हें याद नहीं है? अनासक्ति——

सुधीर ने बीच में ही रोक कर कहा—वह सब मुझे खूब अच्छी तरह याद है असित दादा! परन्तु तुम परेश दादा की सभी बातों पर विश्वास मत करो। वे बहुत बढ़ा-बढ़ा कर कहते हैं। यह बात अवश्य है कि उन लोगों की बातों से मेरे हृदय पर बड़ा आघात पहुंचा था। वे लोग ऐसी-ऐसी गालियाँ दे रहे थे, उन्हें यदि तुम एक बार सुनते! जिनके लिए हम लोग इस तरह से मर रहे हैं, उनसे सहानुभूति की दो बातें तो सुनने को मिलेंगी नहीं, उलटा गालियाँ सुननी पड़ेंगी! असित दादा, आवश्यकता के समय में भी तुम लोगों के पास ही खड़ा होकर हँसते-हँसते सीने का रक्त गिरा दूँगा। परन्तु भाई, यह सच है कि तुम्हारा जैसा मेरी आत्मा में बल नहीं है। मैं मनष्य हूँ। साधारण मनुष्य के ही समान मेरा हृदय भी अभी सुख-दुःख से परे नहीं हुआ है।

गम्भीर होकर असित ने कहा—तुम ठीक कहते हो सुधीर, हम लोग मनुष्य हैं। मनुष्य सुख-दुःख और आशा-आकांक्षा में ही

गोते खाता रहता है। फिर यही मनुष्य ज्ञानयोग से युक्त होकर एक दिन सुख-दुःख से परे हो जाता है और परम शान्ति का अधिकारी होता है। यदि मनुष्य होकर जन्म लिया है तो साधारण मनुष्यों की भाँति छोटे-से दायरे में ही क्यों पड़े रह जायँगे भाई? आकांक्षा का महान् और उच्च होना ही अच्छा है। इसके अतिरिक्त देश के लोग तो वैसी बाते कहेंगे ही। परिस्थिति पर जिस रूप में हम विचार करते हैं उस रूप में विचार करना तो अभी उन लोगों ने सीखा नहीं है। वे लोग केवल इतना ही सोचते हैं कि अभी हम निश्चिन्त होकर जो सोते हैं, इन क्रान्तिकारियों के उपद्रव के कारण उसमें भी व्याघात पड़ेगा। देश भर में ये उपद्रव मचा देंगे। इसी भय के कारण वे लोग सदा हमारे ऊपर तलवार चलाने को तयार रहते हैं। देशवासियों की बातें तो जाने दो, आगे चल कर हमारे अपने आदमी जो हैं, वे भी हमें त्यागने के लिए बाध्य हो जायँगे। तुम अभी तो घर में हो, चार दिन के बाद वह भी समय आ सकता है, जब तुम्हें घर में स्थान न मिल सकेगा। हम लोगों के अपना-पराया कहीं कोई नहीं है भाई, मस्तक पर केवल भगवान हैं और नीचे यही हमारा देश है। इन्हीं दोनों के बीच में अपने आदमियों की बातें डुबा दो। देश के लोकमत की निरर्थक चिन्ता न करो। तभी तुम्हें शान्ति मिलेगी। परेश, तुम अपना वह गीत सुधीर को सुना तो दो!

उस समय गङ्गा के नीरव और निर्जन तट को मुखरित करके निस्तब्धतापूर्वक सोती हुई प्रकृति को जगा कर परेश का उच्च और मधुर स्वर चारों ओर ध्वनित हो उठा। उसके गीत का आशय इस प्रकार था—

"यदि तुम्हें तुम्हारे आत्मीय स्वजन त्याग रहे हैं, तो इसकी चिन्ता मत करो। तुम यह भी मत सोचो कि मेरी आशा-लता फलवती होगी या यों ही मुरझा जायगी, अन्यथा तुम कर्मक्षेत्र में सफलता नहीं प्राप्त कर सकोगे।"

( २१ )

किरण से उस दिन जब मुलाक़ात हुई थी तब से दो सप्ताह बीत गये। इस बीच में लीला से फिर उसकी मुलाक़ात नहीं हुई। किरण बहुत ही अधीर होकर इस बात की प्रतीक्षा कर रहा था कि लीला के यहाँ से यदि कभी बुलावा आवे तो उससे मिलने के लिए जाऊँ, परन्तु किरण को बुलाने का विचार जब लीला के मन में उदित होता तब उसका हृदय काँप उठता। उस दिन के बाद फिर उससे पहले की तरह सरलतापूर्वक मिलने का साहस उसे नहीं था। किरण भी अब उस तरह बेखटके लीला के पास नहीं जा पाता था।

दो महीने के लम्बे समय के बाद उस दिन लीला नीचे उतर कर बैठक में बैठी थी। उसके पास बैठ कर वीणा बातचीत कर रही थी। रह रह कर वह खिड़की से रास्ते की ओर ताकती भी जाती थी।

लीला जब आरोग्य हो गई तब उसे वीणा में एक बहुत बड़ा परिवर्त्तन दिखाई पड़ा। उसकी पहले की-सी चञ्चलता और कौतुक-प्रियता प्रायः नष्ट हो चुकी थी। पहले उसके चेहरे पर भोग-विलास और मिथ्या दम्भ की जो चटकीली रेखा सदा विराजमान रहा करती थी वह प्रायः लुप्त हो चुकी थी, और उसके अपूर्व सुन्दर मुख पर एक कोमल और मधुर भाव उदित हो आया था। लीला जब रुग्ण थी तब वीणा भी अपना सारा आमोद-प्रमोद भूल गई थी, और सदा लीला के ही पास बनी रहती और शक्ति भर उसकी सेवा किया करती थी। बहन का यह भावपरिवर्त्तन देखकर लीला ने उसके सम्बन्ध में पहले से जो धारणा बना रक्खी थी उसके लिए उसे बड़ा दुख हुआ। वह सोचने लगी कि अभी तक वीणा को मैं बहुत ही हृदयहीन और ओछी प्रकृति की स्त्री समझा करती थी। अपनी इस धारणा के कारण मैंने उसका कितना उपहास, कितनी अवज्ञा की है।

दोनों बहनें बातचीत कर ही रही थीं कि कुमार गणेन्द्रभूषण भी आ पहुँचे और उसी कमरे में प्रविष्ट हुए।

"ओह, आज आप भी नीचे उतर सकी हैं?" कुमार ने बहुत ही नम्रभाव से लीला को नमस्कार किया और एक कुर्सी खींचकर वीणा के पास बैठ गये। बाद को लीला की ओर इशारा करके से कहने लगे—"कैसा चेहरा हो गया है आपका—मानो एक छोटी-सी चिड़िया का है! खैर, अच्छी हो गई, यही कुशल है, हम लोगों को तो इतनी चिन्ता हो गई थी!"

ज़रा-सा मुस्कराकर लीला ने कुमार के नमस्कार का उत्तर दिया।

कुमार के आते ही आने वीणा का मुँह आग्रह और आनन्द से उज्ज्वल हो उठा था। वह कहने लगी—जानती हो लीला कि तुम्हारी बीमारी के समय ये कितने चिन्तित थे? उस समय की इनकी घबराहट यदि तुम देखतीं! घर पर ये शान्तिपूर्वक कभी नहीं रह पाते थे। सवेरे चाय पीकर ही भाग आते और बारह बजे तक यहाँ जमे रहते। तब घर जाकर किसी तरह स्नान-भोजन से निवृत्त होते ही फिर चले आते और रात को दस बजे से पहले कभी नहीं उठते थे। कभी-कभी तो इन्हें घर जाने की इच्छा तक नहीं होती थी। मा बहुत कह सुनकर और तरह-तरह से समझा-बुझाकर भेजती थीं। ये तो रात-दिन चिन्ता के ही कारण व्यग्र रहा करते थे।

वीणा की बातों के उत्तर में कुमार बहुत ही कोमल स्वर में कहने लगे—भला चिन्ता क्यों न होती? वह क्या कोई साधारण घटना थी वीणा? इसके अतिरिक्त इस परिवार से मेरी घनिष्ट मित्रता है, इसलिए तुम लोगों के सुख-दुःख को मैं भी अपना ही सा समझता हूँ। बाहर के और चार आदमी आकर जैसे एक बार हाल पूछ जाते हैं, वैसा करके तो मेरे चित्त को शान्ति मिलती नहीं थी!

वीणा से ये बातें कह कर कुमार ने फिर लीला की ओर इशारा किया और वैसे ही कोमल तथा नम्र स्वर से कहते रहे—मेरे हृदय को सबसे अधिक क्लेश किस बात के लिए ही रहा था, यह आप जानती हैं? रह-रह कर मेरे दिल में यही बात आती कि जिस दिन पहले-पहल आपसे मेरी मुलाक़ात हुई, दो घंटा भी न बीत पाया होगा कि उसी दिन आप इस तरह सांघातिक रूप से बीमार पड़ गईं। उस समय तक अच्छी तरह मैं आप से दो बातें भी नहीं कर पाया था। इधर बुआजी से जिस दिन आपकी प्रशंसा सुनी थी, उसी दिन से आपसे बातें करने के लिए हृदय व्यग्र हो रहा था। तरह-तरह के काम-काज और झञ्झट में फँसे रहने के कारण बहुत दिनों तक तो आ ही नहीं सका था। जिस दिन किसी तरह समय निकाल कर आया, उस दिन यह हाल हुआ। उन दिनों में तो न जाने क्यों मेरे मन में यही बात आया करती कि मेरे साथ यदि आपकी मुलाक़ात न हुई होती तो कदाचित् आपको इतना दण्ड न भोगना पड़ता। यद्यपि इस बात में कोई तत्त्व नहीं जान पड़ता, तो भी आपकी बीमारी के समय मेरे चित्त में बराबर यही बात आया करती और अपने ऊपर मुझे बड़ा क्रोध आता!

कुमार से लीला का केवल दो ही तीन मिनट का परिचय था। इतनी ज़रा-सी देर के परिचय के बल पर इस तरह की घनिष्ठता प्रदर्शित करना अनधिकार चेष्टा तथा शिष्टाचार के विरुद्ध है, तो भी कुमार की बातें इतनी कोमल और नम्रतापूर्ण थीं, उनकी वार्ता से इतनी आत्मीयता टपक रही थी कि उनका इस तरह का व्यवहार लीला को रत्ती भर भी बुरा नहीं लगा। वह कहने लगी—मुझे इसका पता तक नहीं था कि आप मेरी बीमारी की चिन्ता के कारण इतने दुखी हुआ करते हैं। संसार में मित्र-स्नेही तो बहुत मिलते हैं, परन्तु ऐसे मित्र बड़े सौभाग्य

से मिलते हैं, जिन्हें मित्र के दुख से वास्तविक दुख हुआ करता है। आप-जैसा वास्तविक मित्र पाकर मेरी आत्मा को बड़ा सन्तोष हुआ है। अभी यहाँ कुछ दिन तक रहना तो होगा न ?

"इच्छा तो ऐसी ही है, किन्तु यदि कोई विशेष आवश्यकता पड़ गई तो जाना ही पड़ेगा। आपका शरीर तो अब बिलकुल अच्छा हो गया है न मिस राय ? अब तो किसी प्रकार का क्लेश नहीं है ?

लीला ने उत्तर दिया—कोई ऐसा विशेष कष्ट नहीं है। शरीर में थोड़ा-सा बल और आजाय तो तबीअत बिलकुल ठीक हो जायगी। मुझे बीमारी से भी अधिक क्लेश मालूम पड़ता है घर के भीतर बन्द रहने के कारण। कितने दिन से मैं घर के भीतर बन्द हूँ ! ऐसा जान पड़ता है, मानो जीवन भर इसी तरह घर में बैठे ही बैठ मैंने काटा है।

कुमार ने उत्तर दिया—यह तो ठीक है। घर में बैठे-बैठे इसी तरह जी ऊब जाता है। मैं तो जब तक किसी काम-काज में लगा रहता हूँ तभी तक घर में मेरा मन लगता है, नहीं तो वहाँ एक मिनट भी नहीं रहा जाता। मैंने तो सोचा है कि बड़े दिन पर हम लोग मिल कर शिकार खेलने चलेंगे। यहाँ शिकार ही क्या मिलता है ? इसी बहाने से घूम-फिर लेंगे, थोड़ा-सा मनोरञ्जन हो जायगा, साथ ही दो-एक पक्षी भी मार लेंगे। यही यहाँ का शिकार है। हमारे साथ कुछ स्त्रियाँ भी जानेवाली हैं। तब तक आप की तबीअत यदि कुछ सँभल गई तो आपको भी ले चलेंगे। सुना है कि आप घोड़े की सवारी में बहुत निपुण हैं। उस दिन सवेरे से साँझ तक खूब घूमेंगे, इससे आपको बड़ा आनन्द आवेगा।

"देखा जायगा। यदि हो सकेगा तो अवश्य चलूँगी, क्योंकि किसी खुली जगह में जाने की मेरी इच्छा हो रही है।"

लीला की यह बात समाप्त भी न हो पाई थी कि किरण ने मिसेज राय के साथ कमरे में प्रवेश किया। क्लब से लौटते समय मिसेज राय को पहुँचाने के लिए किरण इसी समय प्रतिदिन आया करता था। आते समय वह सदा ही आशा किया करता कि आज लीला से मुलाक़ात होगी। अतएव उसे देख कर किरण बहुत ही प्रसन्न हुआ और एक कुर्सी खींच कर उसके पास बैठ गया।

कुमार को देखते ही मिसेज राय का मुखमण्डल प्रफुल्लित हो उठा। वे कहने लगीं—कहो जी गुणेन्द्र, तुम यहाँ बैठे हो? क्लब में सब लोग तुम्हें मुझसे पूछते थे। कहते थे कि गुणेन्द्र बाबू ने क्लब का आना-जाना और लोगों से मिलना-जुलना सब बन्द कर दिया है। क्या मामला है भाई, जाते क्यों नहीं?

कुमार ने उत्तर दिया—वहाँ जाकर ही क्या करूँगा? मुझे ऐसे-वैसे आदमियों का साथ अच्छा नहीं लगता। जिसका साथ करने की अन्तःकरण से प्रेरणा उत्पन्न होती है, केवल उसी के पास बार-बार जाने को जी चाहता है और उसी के पास बैठे-बैठे समय कट जाता है। तब फिर जगह-जगह घूमने के लिए समय कहाँ मिलता है?

यह बात कह कर कुमार वीणा की ओर ताक कर हँसने लगे।

"अच्छी बात है, बेटा! जहाँ अच्छा लगे, वहीं रहो। लीला के साथ बातचीत हुई है?" यह कहते हुए प्रसन्नता के मारे मिसेज राय का चेहरा खिल गया। वे कहने लगीं—गुणेन्द्र से बातचीत करो लीला, ऐसे गुणवान् लड़के बिरले हैं। किरण, तुम लोग बैठो, मैं कपड़े बदल कर अभी आती हूँ।

मिसेज राय जब कमरे से चली गईं तब लीला ने कुमार की ओर इशारा करके कहा—आप लोग बैठिए। अब सर्दी पड़ने लगी है, इससे मैं भीतर जाती हूँ।

यह सुनकर किरण ने कहा—तुम घूमने जाने के सम्बन्ध में

कहती रही हो न ? कब से तुम बाहर निकल सकोगी ? बतलाओ तो साँझ को आकर मैं तुम्हें ले चला करूँ।

लीला का चेहरा फक हो गया। किरण के साथ अकेले घूमने जाने के सम्बन्ध में आज वह एकाएक कोई उत्तर न दे सकी।

किरण की बातों के उत्तर में वीणा ने कहा—बाबूजी कहते थे कि कल से तुम लोगों को क्लब में पहुँचा कर साँझ को मैं लीला को ज़रा-सा घुमा लाया करूँगा। डाक्टर ने सलाह दी है। यह कह-कर वह हँसने लगी। क्षण ही भर के बाद फिर उसने कहा—जानते हो किरण बाबू, लीला जब से बीमार पड़ी है तब से बाबूजी की सारी स्नेह-ममता उसी के ऊपर है। आज-कल उन्हें हम लोगों की कभी याद ही नहीं आती।

किरण ने हँसकर कहा—ऐसी बात है ? तब तो कहना पड़ेगा कि यह उनका बहुत अनुचित पक्षपात है। अच्छा, इस बार जब उनसे मुलाक़ात होगी, तब मैं यह बात उनसे अवश्य कहूँगा। तो कल मैं चार बजे के बाद यहाँ आऊँगा न लीला ? चलोगी तो ?

लीला ने उत्तर दिया—अच्छी बात है। मैं बाबूजी से कह रक्खूँगी, इससे उन्हें भी प्रसन्नता होगी। अब मेरे शरीर में थोड़ा-थोड़ा बल आ गया है, तुम्हारे साथ गाड़ी पर जाने में शायद कष्ट न होगा।

रात को लीला अपने बिस्तरे पर पड़ी पड़ी चिन्ता-सागर में गोते लगा रही थी। उस समय उसके कमरे में कोई और नहीं था। लीला के मन में यह बात आई कि किरण के साथ जब मेरा कोई भी सम्बन्ध होने की आशा नहीं है तब उसके साथ इस तरह मिलजुल कर मन को बढ़ाते रहना ठीक न होगा। इधर कई दिनों से वह अपनी आत्मा के साथ बहुत युद्ध करती आई है। किरण को भुला कर अरुण को अपने हृदय के आसन पर बैठाने का उसने बहुत कुछ प्रयत्न किया है, किन्तु वह सब

व्यर्थ ही हुआ है। किरण का वह आवेगमय कण्ठस्वर, अनुराग से देदीप्यमान उसकी वह अनिमेष दृष्टि, प्रेम से भरी हुई उसकी बातें, क्षण भर के लिए भी लीला के चित्त पर से नहीं उतरती थीं। किरण की तन्मयतापूर्ण और गम्भीर दृष्टि मानो लीला से कहा करती कि किरण उसी की प्रतीक्षा कर रहा है, यद्यपि लीला को यह स्पष्ट मालूम था कि किरण की यह प्रतीक्षा व्यर्थ है, क्योंकि इस सम्बन्ध में उसका भविष्य तो अब अरुण पर निर्भर है। अरुण तो उसको कभी त्यागनेवाला है नहीं। यह सोच-सोच कर मारे दुःख और वेदना के उसका हृदय किरण के लिए रो रहा था। लीला की दृष्टि में जिसका मिलन स्वर्ग के सुख से भी अधिक मूल्यवान् है, कर्तव्य-वश उसी को त्यागकर कदाचित् अरुण के साथ विवाह करना पड़ेगा, अरुण की साध्वी सेवापरायण पत्नी बनना पड़ेगा।

परन्तु लीला को जब उस दिन की बात याद आती तब उसके सारे शरीर में मानो आनन्द की एक बिजली दौड़ जाती। उसके अन्तःकरण में प्रसन्नता का एक ऐसा प्रबल प्रवाह आता कि उसे रोकना उसकी शक्ति से परे था। वह सोचती, किरण-जैसा असाधारण व्यक्ति मुझसे प्रेम करता है!

मन के इस अदम्य आवेग को भूलकर किरण को पहले की भाँति केवल मित्र के ही रूप में समझने के लिए लीला प्राणपण से अपनी आत्मा के साथ युद्ध कर रही थी। विवाह के लिए मैं दूसरे से प्रतिज्ञाबद्ध हूँ, किरण के प्रति मेरा इस प्रकार का मनोभाव मेरे लिए नितान्त ही अनुचित है, यह विचार उत्पन्न होकर लीला के कर्तव्यनिष्ठ हृदय को सदा ही पीड़ा दिया करता और सर्वदा एकान्त कमरे में पड़ी रहने के कारण यह चिन्ता उसके हृदय से कभी किसी प्रकार हटती ही नहीं थी।

उस दिन क्षान्त ज़रा देर पहले ही सोने के लिए आ गई।

उसने देखा कि लीला अभी जाग रही है अतएव उसके पास आकर वह कहने लगी--अभी तक तुम जाग रही हो? इसी लिए तो आज मैं कुछ सवेरे आ गई हूँ। सोचा था कि देर करने से कहीं सो न जाओ।

लीला समझ गई कि क्षान्त कहीं से कोई नई बात खोजकर लाई है। अतएव वह कहने लगी--इतनी रात को तुम्हे मुझसे कौन-सा काम पड़ गया?

"तुम्हें एक बहुत आवश्यक बात बतलानी है।" यह कह कर क्षान्त वहीं बैठ गई और बहुत ही उत्तजित होकर वह कहने लगी--"हाँ, बिटिया रानी, तुम लोगों का यह कैसा अद्‌भुत व्यवहार है, ज़रा बताओ तो? एक तो तुम सब ऐसी जवान-जवान लड़कियाँ रात-दिन पुरुषों के क़दम से क़दम मिलाकर नाचती-फिरती हो, तिस पर ये मुँहजले भी यहाँ थिरक-थिरक कर नाचने आते हैं। उनके सम्बन्ध में ज़रा-सी जाँच-पड़ताल भी नहीं कर लेते बनता! जो कोई भी आकर कमरे में घुस भर जाय, बस! बलिहारी है बिटिया तुम लोगों की और तुम्हारे मा बाप की! तुम लोगों का-सा आचरण तो हमने जीवन में कभी देखा ही नहीं! देखना भी नहीं चाहती हूँ! छिः छिः, लज्जा और घृणा के मारे मैं तो मर जाना चाहती हूँ!"

लीला ने कहा--खूब, शायद आज फिर तेरा दिमाग़ खराब हो गया है। बात क्या है, जो इतना बकबक कर रही है? बतलाती क्यों नहीं? पहले जो कुछ कहना है सो कह दे, बाद को मरना हो तो मर ही जाना। इस तरह बकबक कर क्यों मर रही है?

"बक-बक कर मरती क्यों हूँ? तुम लोगों की यह चाल-ढाल और आचरण देखकर रहा नहीं जाता, इसी लिए बकती हूँ। आज साँझ को तुम और बड़ी बच्ची जिसके साथ बातचीत कर

रही थीं—गोरा-गोरा-सा आदमी जो दोनों हाथों में हीरे की अँगूठियाँ पहने था, वह मुँहजला यहाँ आकर कब का भला आदमी बन गया, जरा बतलाओ तो ! बदमाश, धोखेबाज, शैतान का बच्चा, बीसों घर नष्ट करके—

क्षान्त की गालियों का प्रवाह रोक कर बहुत ही रोष के साथ लीला ने कहा—चुप बेवकूफ़ ! आज-कल तेरा मुँह बहुत जोर पकड़ता जा रहा है ! जबान सँभाल कर नहीं बोलते बनता ? जितना बोलती नहीं हूँ, उतना ही तुम्हारा साहस बढ़ता जा रहा है ! भले आदमी के लड़के को तू इस तरह गालियाँ देती है ?

"भले आदमी का लड़का ! उसकी सात पीढ़ी में भी कोई भला आदमी नहीं हुआ। क्या पैसा होने से ही कोई भला आदमी बन सकता है ? वह इसी तरह दूसरों का घर नष्ट करता फिरता है ! वही, उस दिन तुमसे जो कहा था न ? यही मुँहजला तो डिप्टी साहब के भाई की स्त्री को घर के भीतर से घसीट ले गया है। इस समय उस बेचारी की दुर्दशा का अन्त नहीं है। उसकी ओर अब निगाह उठाकर देखता तक नहीं। वह आज-कल सागर-पेशे में नौकरानियों के साथ पड़ी रहती है।

लीला चौंक पड़ी। क्षान्त यह क्या कह रही है ! कुमार गुणेन्द्र भूषण ! कुमार ने ही ऐसा नीचतापूर्ण कार्य किया है ! एकाएक उसके दिमाग़ में चक्कर आगया। वह स्वयं कुमार से विशेषरूप से परिचित नहीं थी, परन्तु उनके सम्बन्ध में उसने जो कुछ सुना था उससे उसका विश्वास था कि ये एक सज्जन और सम्मान के पात्र हैं। इसके अतिरिक्त आज साँझ को कुमार ने स्वयं उसके घर में आकर जो विनय और सम्मान प्रदर्शित किया था उसके कारण उसे कोई विशेष आश्चर्य नहीं मालूम पड़ा। लीला की यह धारणा हो गई थी कि अपने इस बर्ताव के बल पर कुमार कभी भी प्रतिष्ठित परिवार से मिल-जुल सकते हैं। परन्तु क्षान्त

इनके सम्बन्ध में क्या कह रही है? लीला की समझ में यह कुछ भी न आया। बहुत ही विचलित होकर उसने कहा—तुझे यह बात कैसे मालूम हुई? वे हमारे एक घनिष्ट मित्र हैं, अभी हाल में ही कलकत्ते से यहाँ घूमने आए हैं, यहाँ तो वे रहते भी नहीं। उनके सम्बन्ध में तुझसे ये सारी बातें किसने कही हैं? ज्योत्सना को जो भगा ले गया है, उसे क्या तू पहचानती है, जो इस तरेह कह रही है?

क्षान्त ने हाथ मटका कर उत्तर दिया—मैं उसे पहचानूँगी कैसे? हमारी सात पीढ़ी में किसी ने ऐसे पाजी आदमी की छाया तक पैर के नीचे नहीं पड़ने दी। मेरे समीप आता तो झाड़ से मार मारकर शरीर का चमड़ा उधेड़ न लेती? मैं भी जब थोड़ी अवस्था की थी तब शरीर का रंग गोरा तो नहीं था, तौ भी काले-कलूटे चेहरे पर भी आभा थी ही! मस्तक पर भौंरों के समान काले-काले बाल इतने लम्बे थे कि उनमें कंघी करके जब छोड़ देती थी तब घुटनों तक पहुँच जाते थे। एक बार गाँव के एक ग्वाले ने....

लीला ने डाँट कर कहा—फिर वही—ऊटपटाँग की बातें बनाने चली है! जो पूछती हूँ, सीधे-साधे दो शब्दों में उसी का उत्तर दे। एक भी निरर्थक बात मत्त कर। बतला—तूने उसे कैसे पहचाना?

"बाप रे, लड़की क्या है, मानो घुड़सवार! मिजाज आठों पहर चढ़ा रहता है! कह तो दिया कि मैं कैसे उसे पहचानूँगी? मैं यदि पहचानती होती तो यह जो तुम्हारी बीमारी के समय से ही इसने यहाँ अड्डा जमा रक्खा है, जब चाहता है तब आता-जाता रहता है, रात-दिन बड़ी बच्ची के साथ फुसफुसाकर न जाने क्या-क्या बातें किया करता है, यह कभी होने पाता! मालकिन तो उसके नाम पर बिलकुल पिघल पड़ती हैं। बड़ी बच्ची का भी

यही हाल है। पता-ठिकाना कहीं कुछ भी नहीं है, सुनती हूँ कि बड़ी बच्ची के साथ इसका विवाह होगा! आज मेरी बहन आई थी न! वही जो ज्योत्सना के पास रहा करती है। आज किसी काम से वह शहर आई थी, इससे मुझसे मिलने के लिए भी ज़रा चली आई। आने पर बैठक की ओर एकाएक उसकी दृष्टि पहुँच गई। उस समय वह तुम दोनों बहनों से खूब घुल-घुल कर बातें कर रहा था। बामा तो उसे देखते ही अवाक् हो गई। उसने मुझसे कहा कि यह शैतान यहाँ आकर तुम लोगों के यहाँ कैसे जम गया? डर के मारे वह यहाँ एक मिनट भी नहीं रुक सकी। तुम्हारा यह राजकुमार यदि बामा को यहाँ देख ले तो क्या वह फिर उसे ज्योत्सना के पास एक पल भी रहने दे? घर पर पहुँचते ही वह उसे या तो कहीं अन्यत्र भेज दे या घर के भीतर ही क़ैद कर रक्खे, उसे यह सन्देह हो जाय कि बात कहीं फैल न जाय?

सारी बातें सुनकर लीला दंग रह गई। वह मन ही मन कुछ सोचने लगी। आज उसने खूब अच्छी तरह से देखा था कि कुमार के साथ वीणा की घनिष्टता आवश्यकता से अधिक बढ़ गई है। माता-पिता इस सम्बन्ध में कोई बाधा डालने के नहीं! इन दोनों की यह घनिष्टता मुझे भी वैसी बुरी नहीं मालूम पड़ती। परन्तु क्षान्त ने जो कुछ कहा है, यह यदि सत्य हो, इस दिखावटी सुजनता और शिष्टाचार के आवरण में कुमार का कुत्सापूर्ण चरित्र यदि सचमुच छिपा हो, तो वीणा को पहले से ही सावधान कर देना चाहिए। इस प्रकार की घनिष्टता को प्रोत्साहन देना उचित नहीं है। अब कुमार के सम्बन्ध में और भी अच्छी तरह से जाँच-पड़ताल कर लेनी चाहिए।

लीला को चुप देखकर क्षान्त फिर कहने लगी—कहती हूँ कि यह संसार क्या गुंडों और बदमाशों का ही अड्डा है बिटिया रानी? यहाँ क्या अब दया-धर्म नहीं रह गया? रात-दिन क्या अब भी

सत्ययुग के ही समान होते हैं? अब भी सूर्य-चन्द्रमा उदय होते हैं! ये मुँहजले क्या सोचते हैं कि अब कलियुग का ही एकच्छत्र राज्य आरम्भ होगया है? अभी ज़रा-सी लड़की! किसी प्रकार के दुःख-क्लेश का नाम तक नहीं जानती थी! बिलकुल भोली-भाली लड़की थी, हँसती-खेलती रहती थी, उसे बीच घर से घसीट ले जाकर यह दुर्दशा कर रहा है! बेचारी ने अब नहाना-खाना भी छोड़ दिया है। सूख-सूख कर वह मरी जा रही है, रात-दिन उसके नेत्रों से जल की धारा नहीं बन्द होती। बताओ, इस तरह वह कितने दिन जीवित रहेगी?

एकाएक लीला के हृदय पर बड़ा आघात पहुँचा। वह सोचने लगी कि अभागिन ज्योत्सना का अन्तिम परिणाम क्या होगा! उसने समझ लिया कि वीणा के साथ घनिष्टता होने के ही कारण वह ज्योत्सना की ओर से उदासीन होगया है। किन्तु उस अभागिनी के प्रति लीला का उदासीन होना तो सम्भव नहीं है। परन्तु उसकी रक्षा के लिए लीला कौन-सा प्रबन्ध कर सकती थी?

लीला ने पूछा—तो क्या अब वह ज्योत्सना के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करता?

"ऐसे आदमी भी कभी किसी के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं? ऐसे लोगों का प्रेम केवल दो दिन का होता है। इसके अतिरिक्त वह घर पर रहता ही कब है? दो महीने से देखती हूँ, सवेरे से साँझ तक तो वह यहीं डटा रहता है? मेरी बहन कहती थी कि रात को कुछ यार-दोस्तों के साथ बाहर के ही कमरे में शराब पीकर बारह-एक बजे तक उपद्रव मचाए रहता है, बाद को वहीं सो जाता है, उस बेचारी के पास तक कभी नहीं फटकता। इसके चरित्र से ऊब कर बेचारी विवाहिता स्त्री विष खाकर मर गई, किसी न किसी दिन ज्योत्सना का भी यही हाल होगा! और न जाने कहाँ-कहाँ कौन कौन सी लीलायें की होगीं? अब यह हमारी बड़ी बच्ची के भी पीछे पड़ा है।

लीला का हृदय काँप उठा। कुमार के हाथ में पड़ने पर वीणा की भी यह दशा होना अनिवार्य है! वह और कुछ न सोच सकी। उतावली के साथ उसने कहा—तू चुप रह क्षान्त! ये सब बातें अब कभी मुँह से मत निकालना। मैं शीघ्र ही इन सारी बातों का प्रबन्ध किये देती हूँ। तू कोई भी बात सुन लेती है तो उसका ढिंढोरा पीटे बिना तुझसे नहीं रहा जाता। इसलिए तुझे सावधान किये देती हूँ कि इन बातों की कहीं भूल कर भी चर्चा न करना। जो कुछ करना होगा, मैं स्वयं करूँगी। किसी दूसरे के कान तक कोई भी बात न पहुँचनी चाहिए।

क्षान्त ने उत्तर दिया—नहीं, नहीं, इसकी चिन्ता तुम मत करो। मैं इतने तुच्छ स्वभाव की नहीं हूँ कि जिससे होगा उसी से सारी बातें कहती फिरूँगी। किससे कौन बात कहनी चाहिए और किससे न कहनी चाहिए, यह समझने की बुद्धि भगवान् ने मुझे दी है। परन्तु बिटिया रानी, जिस तरह हो सके, इस आदमी को यहाँ से दूर कर दो। ऐसे आदमी की परछाईं के ऊपर से होकर चलना तक पाप है। और यदि हो सके तो ज्योत्सना बेचारी का भी कोई सहारा कर दो। बामा ने अपने हाथों से ही पाल-पोस कर उसे इतनी बड़ी किया है, अतएव उसकी दुर्दशा देखकर वह भी उसी के साथ रो-रोकर मरी जा रही है।

( ३२ )

दूसरे दिन साँझ होने से कुछ पहले किरण लीला को बुलाने के लिए मोटर लेकर आया। लीला पहले से ही तैयार बैठी थी, अतएव किरण के आगमन का समाचार पाते ही वह नीचे उतर आई। जीने से बाहर पैर रखते ही उसने देखा कि बैठक में वीणा और कुमार गुणेन्द्रभूषण बैठे हैं।

लीला की ओर दृष्टि जाते ही कुमार बड़े आदर से उठकर

खड़े हो गये। मुस्कराहट के साथ उसे नमस्कार करके वे उसके साथ मोटर तक गये। उसे मोटर पर बिठाकर कहने लगे कि आज आपकी तबीअत बहुत अच्छी मालूम पड़ रही है। थोड़ा-सा घूम-फिर आयेंगी तो शरीर और भी हलका हो जायगा।

लीला ने कुछ नहीं कहा, केवल कुमार के नमस्कार का उत्तर देकर उसने ज़रा-सा हँस कर भर दिया। आज दिन के उजाले में कुमार की ओर ज़रा विशेष ध्यान से ताक कर उसने देखा कि उनका चेहरा सचमुच आकर्षक है। आचरण और व्यवहार भी बहुत ही विनम्र तथा सज्जनतापूर्ण है। परन्तु उनकी चितवन में न जाने कौन-सी ऐसी बात थी जिसे लीला न सह सकी और उसने अपना मुँह फेर लिया।

थोड़ी ही देर के बाद किरण का मोटर नगर की सीमा को पार करके हरे-भरे खेतों और आम के बग़ीचों के बीच से होकर जाने लगा। बहुत दिनों के बाद खुली हवा लगने और प्रकृति की नयनाभिराम और मनोमुग्धकर हरियाली देखने से लीला का शरीर शीतल हो गया, साथ ही उसका हृदय भी प्रफुल्लित हो उठा। प्रसन्नतामयी दृष्टि से किरण की ओर ताक कर उसने कहा—आज यह सब कैसा सुहावना मालूम पड़ रहा है!

किरण ने लीला के प्रसन्नता से विकसित हुए मुख की ओर ताक कर कहा—तो हम लोग इसी समय प्रतिदिन इस ओर घूमने आया करेंगे! ठीक है न? अँधेरा होने से पहले ही लौट भी चला करेंगे, जिससे तुम्हें सर्दी लगने की भी आशंका न रहेगी।

"अच्छी बात है! आह, कैसा अच्छा मालूम पड़ रहा है। ऐसा मालूम पड़ता है, मानो इस तरह की खुली हवा में जीवन भर और कभी निकली ही नहीं हूँ।" इतना कहकर लीला ज़रा-सा ठहर गई और बाद को फिर कहने लगी—किरण, क्या तुम कुमार को अच्छी तरह जानते हो? तुम्हारी दृष्टि में वे कैसे आदमी जान पड़ते हैं?

ज़रा-सा सोच कर किरण ने कहा—उनसे मेरा विशेष परिचय नहीं है। साधारण तौर से उन्हें पहचानता भर हूँ। परन्तु किसी भले आदमी के सम्बन्ध में खूब जाने-समझे बिना किसी तरह की बात कह डालना उचित नहीं है। तो भी न जाने क्यों वे मुझे वैसे नहीं जँचते। जान पड़ता है कि मानो वे अपना स्वाभाविक रूप छिपाये हुए घूमा करते हैं।

लीला ने कहा—तुम्हारा अनुमान ठीक है किरण! कुमार में नाममात्र को भी भलमनसाहत नहीं है। बीमारी से जब से मैं उठी हूँ तभी से देख रही हूँ कि वीणा उससे बहुत अधिक घनिष्टता बढ़ा रही है! माँ भी उसका मन बढ़ाती जा रही हैं। वीणा के लिए मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है!

ज्योत्सना की दुर्दशा तथा कुमार के चरित्र के सम्बन्ध में क्षान्त से लीला ने जो कुछ सुना था वह सब आदि से अन्त तक किरण से कह गई। अन्त में उसने कहा—भला अब उस स्त्री की क्या दशा होगी? वह यदि इस तरह का आदमी है तो सम्भव है कि दस-बीस दिन के बाद उसे घर से भी निकाल दे। तब उसकी क्या दशा होगी? मैंने तो जबसे यह बात सुनी है, तभी से चिन्ता के मारे व्यग्र हूँ। वीणा के साथ कुमार की भेंट-मुलाक़ात बन्द करवा देने से तो इधर का काम बन जायगा, परन्तु ज्योत्सना के लिए क्या करूँ?

लीला की बातें सुनकर किरण बड़ी देर तक गम्भीर बना बैठा रहा, किन्तु बाद को उसने कहा—ये सब बहुत खोटी बातें हैं लीला! इस झंझट में पड़ने की तुम्हें कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसी-ऐसी घटनायें तो संसार में रोज़ ही हुआ करती हैं। तुम्हें यह सब कुछ मालूम नहीं है। और आज पहले-पहल यह बात सुनी है, इसी लिए तुम्हारे हृदय पर इससे इस तरह का आघात पहुँच रहा है! इसके सम्बन्ध में व्यर्थ में चिन्ता करने से तुम्हें क्या लाभ होगा?

लीला ने बहुत ही क्षुब्ध होकर कहा—परन्तु यह बात तो तुम्हारे मुँह से शोभा नहीं देती किरण ! मुझे यह आशा नहीं थी कि तुम इस तरह का उत्तर दोगे । एक बहुत ही थोड़ी अवस्था की लड़की को, जो संसार की भलाई-बुराई को जरा भी नहीं समझती, यदि कोई पाखंडी बलात् खींच कर सड़क पर लाकर छोड़ दे तो उसके लिए केवल दो ही मार्ग रह जाते हैं। या तो वह आत्महत्या करके मर जाय या एकदम अवनति के गड्ढे में गिर जाय। मैं स्वयं नारी होकर नारी-जाति की दुर्दशा की पराकाष्ठा देखती रहूँ और उसके लिए कोई प्रतीकार न करूँ, यह तो मेरे लिए असम्भव-सी बात है। आज प्रातःकाल मैंने बाबूजी से भी इस बात की चर्चा की थी और पूछा था कि उस लड़की के सम्बन्ध में क्या किया जा सकता है। ठीक तुम्हारी तरह उन्होंने भी चिढ़ कर कहा था कि इस झंझट में पड़ने की तुम्हें क्या जरूरत है? क्या तुम्हें अपनी मान-मर्यादा का ध्यान नहीं है? सच कहती हूँ, तुम लोगों का हाल देख देखकर मुझे तो अवाक् रह जाना पड़ता है।

लीला की अभिमान से भरी हुई बातें सुनकर किरण बहुत ही लज्जित हुआ। उस समय उसे और कोई बात मुँह से निकालने का साहस नहीं हुआ। उसने बहुत ही संकुचित होकर कहा—बुरा न मानो लीला ! इस तरह के नीचतापूर्ण कार्यों में भी कहीं तुम्हारा किसी रूप में सम्पर्क है, इस तरह की कल्पना तक से मेरे अन्तःकरण पर बड़ा आघात पहुँचता है। इसी लिए मैंने तुमको रोका था। इसके अतिरिक्त उसके लिए तुम कर ही क्या सकती हो? उसके सगे-सम्बन्धी, यहाँ तक कि उसके मा-बाप भी इस घटना के बाद उसे अपने घर में स्थान न देंगे। तुम स्वयं भी उसे लाकर अपने घर में न रख सकोगी। क्योंकि ऐसा करने से समाज में तुम लोगों की बहुत ही अपकीर्ति होगी। कोई भी

तुमसे अपनी लड़की को मिलने न देगा। इससे तुम स्वयं समझ सकती हो कि एक अनर्थ खड़ा करने के लिए तुम्हारे मा-बाप या और कोई खुशी-खुशी उसे अपने घर में आश्रय देने को तैयार न होगा। इसके अतिरिक्त तुम्हारे देश में ऐसा कोई आश्रम या संस्था भी नहीं है जहाँ इन सब लांछित स्त्रियों को स्थान मिल सके। जब यह हाल है तब भला तुम क्या कर सकती हो?

बहुत ही खिन्न होकर लीला मन ही मन कुछ सोचने लगी। बड़ी देर के बाद मुँह उठा कर उसने निराश भाव से कहा—तो क्या उसके सुधार के लिए अब कोई उपाय नहीं है किरण? इसी तरह से वह बेचारी विपत्ति के सागर में गोते ही खाती रह जायगी?

किरण ने कहा—केवल एक उपाय है। यहाँ ईसाई मिशनरियों की स्त्रियों का जो मिशन है उसी में यदि वह भी भर्ती करा दी जाय तो वहाँ वह अच्छी तरह से रह सकती है। वे लोग उसे अच्छी तरह से रक्खेंगे भी और पढ़ा-लिखा कर या उसकी रुचि और योग्यता के अनुसार कोई दस्तकारी सिखा कर उसे स्वावलम्बी बना देंगे। जब तक वह उपार्जनशील होकर अपनी जीविका अपने आप चलाने के योग्य न हो जायगी तब तक उसका सारा भार मिशन के ऊपर रहेगा। मेरे विचार से तो इससे बढ़ कर और कोई भी व्यवस्था नहीं हो सकती। तुम्हारी तो वहाँ की बड़ी मेम से जान-पहचान भी है।

लीला ने मन-ही-मन बहुत ही क्षुब्ध होकर कहा—मान लो कि उससे मेरी जान-पहचान है और मैं जैसा कहूँगी वैसा वह उसके लिए प्रबन्ध भी कर देगी। परन्तु इस तरह करने पर हमारी क्या रह जाती है? स्वयं हमारे ही समाज में हमारे घर की स्त्रियाँ अपमानित और लांछित होकर मारी-मारी फिरें, मान-मर्यादा को तिलांजलि देकर पेट के लिए उन्हें नीच वृत्ति स्वीकार करने के लिए विवश होना पड़े और हम लोग खड़ी होकर तमाशा देखती रहें?

हम उनके लिए मुट्ठी भर अन्न और जरा-से स्थान का भी प्रबन्ध न कर सकें और उनकी रक्षा का भार लें थोड़े से विधर्मी, जिनसे उनका किसी तरह का सम्बन्ध नहीं है, किसी तरह का मेल-मिलाप नहीं है? कैसी सुन्दर व्यवस्था है! मैं किस मुँह से जाकर यह बात मिस नेल्सन से कहूँगी?

किरण ने गम्भीर भाव से कहा—यह बात हमारे लिए सच-मुच बड़ी लज्जाजनक है लीला! परन्तु जो कुछ सच है उसे तो कहना ही पड़ेगा। केवल यही एक क्या, इस तरह के न जाने कितने उदाहरण हैं। अपने देश के जिन आदमियों को हम नीच और अछूत समझ कर भगा देते हैं, असाध्य रोगों से ग्रस्त होने के कारण जरा-सा नज़दीक आते ही दुतकार देते हैं, उन सब अशिक्षित और असभ्य जाति के लोगों को शिक्षा देने और उन्हें उन्नत बनाने के लिए मिश्नरी लोग कितना परिश्रम और कितना उद्योग करते हैं। वे संक्रामक रोग से पीड़ित व्यक्तियों के लिए आश्रम स्थापित करते हैं। उन्हें निरोग करके उनकी पीड़ा शान्त करने के काम में जीवन-पर्यन्त इतनी सेवा करते रहते हैं, कि उसका कोई ठिकाना नहीं। अस्तु, यदि तुम सचमुच उस लड़की को किसी अच्छी जगह में रखना चाहती हो तो जाकर उसे मिस नेल्सन को सौंप आओ।

लीला ने कहा—अच्छी बात है। इसके अतिरिक्त यदि और कोई रास्ता ही नहीं है तो जाना ही पड़ेगा। अच्छा अब साँझ होना ही चाहती है, इसलिए घर की ओर लौटना चाहिए।

किरण ने वहीं से अपना मोटर लौटा दिया। वे लोग जब घर के समीप आ गये तब किरण ने कहा—अरुण तुमसे मिलने के लिए बहुत अधीर हो रहा है लीला! अब उसे समझा-बुझा कर शान्त रखना मेरी शक्ति से परे है। क्या तुम इधर किसी दिन उससे मिलने के लिए जाओगी?

लीला ने उत्तर दिया––उससे तुम कह देना कि दो ही एक दिन में मैं उससे मिलूँगी। मैंने यह भी निश्चय कर लिया है कि इस बार उससे सारी बातें समझा कर कह दूँगी। बाद को सब कुछ सुनकर वह जो कुछ कहेगा––

यह बात समाप्त किये बिना ही लीला ने अपना मस्तक नीचा कर लिया। किरण क्षण भर तक उसकी ओर दृष्टि करके ताकता रहा। अन्त में उसने कहा––मुझे अब और कुछ नहीं कहना है लीला! तुम जब बीमार थीं, दो महीने तक अरुण के पास बैठ-बैठ कर मैंने इस बात का अनुभव किया है कि तुम्हारे प्रेम में उसने किस तरह से अपने आपको गवाँ दिया है! तुमसे वंचित होकर कदाचित् वह जीवित न रह सकेगा। वह मुझे बहुत प्रिय है, बड़े स्नेह का मित्र है। तिस पर भी अब वह अन्धा है, असहाय है। मैं खड़े-खड़े अपने प्राण न्योछावर कर दूँगा, किन्तु उससे तुम्हें छीन न सकूँगा। यह हो सकता है कि यदि वह स्वयं––रहने दो, उस बात को दिल में लाने से ही क्या लाभ है? मैंने अपने दिल की सब बात उसी दिन तुमसे कह दी थी। मेरा जीवन पूर्णरूप से तुम्हारा ही है। तुम्हें पाऊँ या न पाऊँ, मेरी यह आस्था कभी बदलेगी नहीं।

दो दिन के बाद रात को ग्यारह बजे लीला सोने के कमरे में वीणा से बातचीत कर रही थी। घर के और लोग सोये हुए थे, केवल क्षान्त ही उस समय तक सोने के लिए नहीं गई थी।

वीणा कह रही थी––यह बात तुमसे बतलाये बिना मुझसे रहा ही नहीं जाता था लीला! मैं अपने हृदय में सदा किस प्रकार के आनन्द और तृप्ति का अनुभव कर रही हूँ, उसे कदाचित् बतला कर मैं तुम्हें समझा न पाऊँगी भाई! कुमार से प्रेम करके मेरा हृदय शान्ति और आनन्द से ओतप्रोत हो गया है। जिस समय वे मेरे पास नहीं रहते, उस समय मेरा चित्त ही ठिकाने पर नहीं

रहता। उस समय न तो मेरा किसी काम-काज में मन लगता है और न किसी बात पर विचार ही कर पाती हूँ। रह-रहकर केवल उन्हीं की याद आती है और मैं अधीर हो उठती हूँ। परन्तु जैसे ही वे आते हैं, वैसे ही मेरी सारी बेचैनी हवा हो जाती है। उनमें तन्मय होकर मैं मानो अपने आपको भूल जाती हूँ। वे कुछ कहते रहते हैं और मैं अवाक् होकर उनका मुँह ताकती रहती हूँ। मैं सुनती भर जाती हूँ और जी यही चाहता है कि उनकी बातों का अन्त न हो। उनकी बातें सुनने में मुझे कितना सुख मिलता है, यह मैं तुम्हें किस तरह समझाऊँ? यह सुन कर तुम्हारा हृदय सुखी हुआ है लीला?

लीला कोई उत्तर न दे सकी। उसने वीणा के प्रेम के आवेग से पुलकित मुँह की ओर एक बार अपनी व्यथित और मलिन दृष्टि उठाकर आँखें नीची कर लीं।

वीणा उस ओर ज़रा भी ध्यान न देकर अपनी झोंक में कहती ही गई—जिस दिन मैंने कुमार को देखा है उससे पहले कभी किसी से प्रेम नहीं किया भाई! सदा ही सबको लेकर केवल खेलती रही हूँ, और अपना मनोरंजन करती रही हूँ। तुम्हें तो सारी बातें मालूम ही हैं। मेरे स्वभाव की चंचलता के कारण तुमने कितने ही बार मुझसे कितनी बातें कही हैं, कितना समझाया है। उस समय केवल पुरुषों का प्रेम लेकर लुकाछिपी खेलने में ही मुझे सबसे बढ़कर आनन्द मिलता था। मैं स्वयं किसी से प्रेम नहीं करती थी। परन्तु इस समय उन सब बातों की याद आने पर मुझे बड़ी लज्जा मालूम पड़ती है। मेरे हृदय को अब एक बहुत बड़ी चीज़ मिल गई है। इसलिए मेरी पहले की चञ्चलता और क्षुद्रता नष्ट हो गई है भाई! मेरा हृदय और आत्मा मानो बिलकुल बदल गया है, और मैं एक नये रूप में निखर पड़ी हूँ। इसी लिए मैं सोचती थी कि कब तुम्हारी तबीअत सुधरे और मैं तुम्हें सारी

बातें खोल कर बता सकूँ। माँ कहती थीं कि शीघ्र ही हम लोगों का 'इंगेजमेंट' हो जायगा। तुम खुश हुई हो लीला?

इतनी देर बाद लीला के मुँह से आवाज़ निकली—वह कहने लगी—यदि खुश हो पाती तो भगवान् जाने इससे बढ़ कर मेरे लिए सुख की और कोई बात ही नहीं हो सकती थी दीदी!

वीणा का मुँह सूख गया। वह व्यग्र स्वर से कहने लगी—क्यों लीला, ऐसी बात क्यों कहती हो भाई? तुम खुश क्यों नहीं हो सकी हो?

लीला ने कहा—मुझे बहुत-सी बातें कहनी हैं दीदी! परन्तु किस तरह कहूँ, यही तब से सोच रही हूँ। मैं तुम्हारे हृदय को अत्यधिक व्यथित करने के ही लिए आई हूँ भाई!

यह बात सुनकर वीणा शंकित हो उठी। उसका चेहरा उतर गया। वह उत्सुकता की दृष्टि से लीला की ओर ताकने लगी।

लीला अपने मलिन मुख से फिर कहने लगी—परन्तु मुझे यह बात कहनी ही पड़ेगी दीदी! तुम बड़े धोखे में पड़ी हो? कुमार बिलकुल ही अच्छा आदमी नहीं है। वह चरित्रहीन है, लम्पट है, शराबी है। वह तुमसे मिलने-जुलने के लायक नहीं है।

वीणा ने भर्राई हुई आवाज़ से कहा—ऐसी बात मत कहो लीला! कुमार! ओह! यह हो नहीं सकता, कभी नहीं हो सकता। तुम उन्हें जानती नहीं हो, इसी लिए तुम्हारे मुँह से ऐसी बात निकल सकी है। उनके सम्बन्ध में तुम्हें ये सब झूठी बातें किसने रटा दी हैं?

"इसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है दीदी, सब सच है। इन बातों की पूरी-पूरी जाँच किये और प्रत्यक्ष प्रमाण पाये बिना क्या तुम्हारे सामने कभी मुँह से निकाल सकती हूँ? मैंने खूब अच्छी तरह जाँच कर ली है। उनके अत्याचारों से ऊब जाने के कारण उनकी स्त्री ने विष खाकर आत्महत्या कर ली थी!

वीणा ने आश्चर्य्य में आकर कहा—उनकी स्त्री ने? तो क्या कुमार का विवाह हो चुका है?

लीला ने कहा—केवल विवाह ही नहीं हुआ है, उन्होंने और भी कितने प्रकार से कीर्ति उपलब्ध की है, इसका कोई ठिकाना नहीं है। आज से तुम उनसे मुलाकात न करना! वे जब आवेंगे तब जो कुछ कहना है, मैं ही उनसे कह दूँगी। किसी भी सभ्य समाज में सम्मिलित होने के योग्य वे नहीं हैं। उन्हें अपमानित करके निकाल देने में ही भलाई है।

उन्मादिनी की तरह व्याकुल होकर वीणा बोल उठी—नहीं लीला, नहीं। देखना, इस तरह उन्हें मेरे हाथ से छीन न लेना। यदि ऐसा करोगी तो मेरा जीवित रहना कठिन हो जायगा। मैं सचमुच मर जाऊँगी। इस सम्बन्ध में मैं स्वयं उनसे पूछूँगी। मैं इन सब बातों पर विश्वास नहीं कर पाती हूँ। ऐसा भी कहीं हो सकता है? इधर दो मास से मैं उन्हें बराबर देखती आ रही हूँ लीला, उनमें कहीं जरा भी कोई बुराई नहीं मालूम पड़ती। अवश्य किसी ने तुम्हारे हृदय में भ्रम उत्पन्न कर दिया है। वे कभी इस तरह की नीचता नहीं कर सकते।

लीला का मुँह गम्भीर हो उठा। उसने कहा—मेरी यह धारणा यदि मिथ्या सिद्ध होती तो मुझे इतनी प्रसन्नता होती कि तुम उसकी कल्पना तक न कर सकतीं। मुझे भी तो कुमार बहुत ही अच्छे आदमी मालूम पड़ते थे। परन्तु बात ऐसी नहीं है। अभी हाल में ही उन्होंने एक नवयुवती का सर्वनाश कर डाला है। उसका हाल यदि तुम सुनो—।

लीला ज्योत्सना का सारा हाल कह गई। बाद को बामा यहाँ आकर किस तरह उन्हें पहचान गई, और क्षान्त से उसने कुमार के सम्बन्ध में क्या कहा, यह सब बतलाकर वह कहने लगी—क्या अब भी अविश्वास का कोई कारण है? बामा उनके घर

घर पर रह कर रोज़ देखती है कि कुमार आधी रात तक शराब के नशे में ही अनाप-शनाप बकते रहते हैं। इससे बढ़कर और क्या प्रमाण चाहती हो? यदि तुम्हें न विश्वास पड़े तो क्षान्त की बहन को बुला कर तुम्हारे सामने सब पूछ दूँ।

यह सब सुन कर वीणा का चेहरा काला पड़ गया। मानो उसे काले सर्प ने काट लिया हो और उसके विष से अभिभूत होकर वह मूर्च्छित हो गई हो।

लीला कहने लगी—पहले-पहल मैंने जब यह बात सुनी थी तभी सोच लिया था कि इस घटना से तुम्हारे हृदय पर कितना आघात पहुँचेगा। इसी लिए मैंने कोई बात प्रकट नहीं की, बड़ी सावधानी के साथ इस सम्बन्ध में जाँच करती रही। तुमसे मैंने जो कुछ बतलाया है उसमें एक अक्षर भी मिथ्या नहीं है। अब कुमार के साथ तुम्हारा किसी तरह का सम्बन्ध नहीं रह सकता। कल साँझ को तुम बैठक में न जाना। कम से कम उनके आने के समय अपने ही कमरे में रहना। मैं नीचे रह कर उनकी प्रतीक्षा करूँगी। आने पर जो कुछ कहना है, मैं ही कह कर उनका झंझट एक दम तोड़ दूँगी। मैं चाहती हूँ कि अब तुम्हारे साथ उनकी मुलाकात न हो।

वीणा फिर अधीर हो उठी। लीला के इस प्रस्ताव पर वह किसी तरह भी सहमत नहीं हो पाती थी। उसने कहा—ऐसा कभी नहीं हो सकता लीला! यदि ये सब बातें उनसे कहनी हैं तो मैं ही कहूँगी। उनसे ऐसी बातें कहने का केवल मुझे ही अधिकार है। इस विषय में तुम जरा भी हस्तक्षेप न करो। तुम्हारा स्वभाव क्रोधी है, बात ही बात में न जाने क्या कह डालो, और वे इधर आना ही छोड़ दें। ये सब बातें यदि सच भी हों तो मेरा सम्बन्ध हो जाने पर उन सब मार्गों पर वे पैर न रख सकेंगे, इस बात का मुझे विश्वास है। वे मुझे सचमुच बहुत चाहते हैं। तुम्हें

तो मालूम है लीला कि मनुष्य जब प्रेम के पाश में बँध जाता है तब उसमें कितने बड़े बड़े परिवर्तन हो जाते हैं। तब भला उनके स्वभाव में परिवर्तन न होगा, यह क्या कभी संभव है?

लीला ने उत्तर दिया—उन्होंने तुम्हारी ही तरह की और भी कई नवयुवतियों से प्रेम किया है और अभी बहुतों से करेंगे भी। इसके लिए तुम कोई चिन्ता न करो। इस समय तुमसे मैं जो कुछ कह रही हूँ वही तुम्हारे लिए सबसे अधिक श्रेयस्कर है। इस तरह न तो कोई झंझट खड़ा होगा और न तुम्हारी मर्यादा में ही किसी तरह की हानि होगी। क्योंकि मैं जहाँ तक समझती हूँ, मेरे मुँह से किसी बात का आभास पाते ही वे अपनी सम्मान-रक्षा के लिए शंकित होकर यहाँ से खिसक जायँगे। वे एक बाहरी आदमी हैं। उनके इस तरह चले जाने पर किसी को किसी तरह का सन्देह भी न होगा। बात बिलकुल दबी ही रह जायगी। मूर्ख की-सी बातें मत करो। ज़रा ध्यान से सोचो तो सारी बातें तुम्हारी समझ में स्वयं आ जायँगी।

परन्तु वीणा ने लीला की कोई भी युक्ति न सुनी। उसके हृदय में यह भी नहीं आया कि इस सम्बन्ध में सोचने-विचारने की कौन-सी बात है। वह अधीर होकर रोने भर लगी। उसने कहा—लीला, तुम बड़ी निष्ठुर हो। तुम्हारे हृदय में ज़रा भी माया-ममता नहीं है। मैं तुमसे बिलकुल अपने हृदय की बात कह रही हूँ, कुमार को मैं किसी तरह भी नहीं त्याग सकती हूँ। उन्हें यदि त्यागना पड़ा तो फिर मैं जीवित न रह सकूँगी। तुमने तो किसी दिन किसी से प्रेम किया नहीं। तुम मेरी अवस्था को कैसे हृदयंगम कर सकोगी? संसार में अच्छे-बुरे सभी तरह के आदमी रहते हैं; क्या सब लोगों का चरित्र देवता का-सा ही होता है या सब लोग साधु होकर ही पृथ्वी पर जन्म लेते हैं? उनमें यदि कुछ दोष भी होंगे तो उन्हें वे अवश्य ही सुधार लेंगे। कल ही मैं उनसे ये सारी बातें कहूँगी।

लीला ने कहा—अच्छी बात है। तुम्हारी जो इच्छा हो, वही करो, परन्तु यह खूब अच्छी तरह समझ रखना कि मेरी शक्ति भर तुम्हारा यह पागलपन किसी तरह न चलने पावेगा। तुम्हें यदि जरा भी बुद्धि होती तो तुम स्वयं इस बात को भली-भाँति समझ लेतीं। तुम्हारी भलाई के लिए ही मैंने तुम्हें सावधान कर दिया है, कुमार के चरित्र के प्रत्यक्ष प्रमाण और उनकी सारी बुराइयाँ तुम्हारी दृष्टि के सामने रख दी हैं, तिस पर भी तुम्हारी आँखें नहीं खुलती हैं? वह शराबी, लम्पट, बदमाश—चाहे कुछ भी हो, उसके बिना तुमसे रहा न जायगा? बलिहारी है इस मनोवृत्ति की! आज वह तुम्हें लेकर अपना मनोविनोद करे, और अन्त में ज्योत्सना की ही तरह तुम्हें भी निकाल कर बाहर कर दे, या नई उमंग में आकर तुम्हारे साथ विवाह कर ले और तुम्हें घर में बन्द करके चारों ओर स्वेच्छाचार करता फिरे, तुम्हें किसी भी बात में आपत्ति नहीं है! उसके साथ विवाह हो जाने भर में ही तुम्हें सन्तोष है! धन्यवाद है तुम्हें और तुम्हारे प्रेम को! परन्तु मैं कल ही कुमार का सारा हाल पिताजी से कहूँगी।

वीणा पिता से बहुत डरती थी। अतएव लीला के क्रोध और पिता से बतला देने की धमकी से उसकी सारी उत्तेजना जाती रही। उसने कहा—तुम्हें जरा-सी बात में ही क्रोध आ जाता है लीला! एकाएक ये सब बातें पिताजी से कह कर झंझट खड़ा करना क्या कोई अच्छी बात है? कुछ भी हो, कुमार प्रतिष्ठित हैं, आदरणीय हैं, उनके सम्बन्ध में किसी तरह की निन्दाजनक बात कहना, चारों तरफ़ उनकी अपकीर्ति फैलाना, कोई अच्छी बात तो है नहीं। हम लोगों की अपनी भी तो कुछ मान-प्रतिष्ठा है!—

वीणा को बीच ही में रोक कर लीला ने कहा—परन्तु तुम उसे समझती कहाँ हो? हम लोगों के या कुमार के सम्बन्ध में किसी के हृदय में किसी तरह का सन्देह न उत्पन्न होने पावे, इसी

लिए तो मैं तुम्हें उनसे मिलने के लिए रोक रही हूँ। आज यदि पिताजी के कान तक यह बात पहुँच जाय और वे उन्हें अपमानित करके यहाँ से खदेड़ दें तो समाज में इस सम्बन्ध में क्या चर्चा नहीं हो सकती है? इधर दो महीने से उनके साथ जिस तरह तुम मिलती-जुलती हो, या उन्हें घर पर बुला-बुलाकर जिस तरह घनिष्ठता बढ़ा रही हो, वह सब क्या कोई देखता नहीं है? इस तरह का हेल-मेल बढ़ाकर एकाएक उन्हें निकाल देने पर लोग तुम्हारे और उनके सम्बन्ध में क्या सोचेंगे और घर-घर तुम्हारा और उनका नाम लेकर लोग किस तरह की चर्चा करेंगे, इसे जरा सोचो तो? किन्तु तुम्हारी यदि ऐसी ही इच्छा है तो यही सही।

वीणा छुटपन से ही समाज की ओर ध्यान देती आई थी। इन सब घटनाओं की आलोचना-प्रत्यालोचना का मूल्य वह भली भाँति समझती थी, इसी लिए लीला की बातों का वह एकाएक कोई भी उत्तर न दे सकी।

वीणा को चिन्तित देखकर लीला ने फिर कहा—देखती नहीं हो, अभी उस दिन अरुण के ही कारण कैसी-कैसी बातें हुई हैं! इतने पर भी तुम्हें ज्ञान नहीं हुआ? सभी के घर में हमारी-तुम्हारी-जैसी लड़कियाँ हैं, परन्तु और किसी के सम्बन्ध में तो कभी कोई बात सुनने में नहीं आती। हमीं लोगों की आलोचना करने का अवसर लोगों को कैसे मिल जाता है? अस्तु, अब तुमने क्या निर्णय किया? बतलाओ, कल ही मैं इस मामले का निपटारा कर देना चाहती हूँ।

आँसू पोंछ कर वीणा ने कहा—इस तरह घड़ी के काँटे की तरह तो मुझसे न चला जायगा। सभी बातों में तुम्हें उतावली पड़ी रहती है। आज रात भर मुझे अच्छी तरह सोचने दो। जो कुछ होना होगा, वह कल सवेरे होगा।

( ३३ )

दूसरे दिन साँझ को चार-पाँच बजे लीला अकेली ही बैठक में बैठी हुई कुमार के आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी। उस दिन मिसेज़ राय वीणा को लेकर अपने एक मित्र के यहाँ चाय-पार्टी में गई थीं। लीला ने बहुत समझा-बुझा कर और धमकियाँ देकर अन्त में किसी तरह वीणा को घर से जाने के लिए राज़ी कर लिया था।

फाटक के बाहर मोटर का 'हार्न' बज उठा। क्षण भर के बाद कुमार गुणेन्द्रभूषण ने कमरे में प्रवेश किया और मुस्कराते हुए लीला को नमस्कार करके कहने लगे—आज आप यहाँ अकेली ही क्यों बैठी हैं मिस राय? वे लोग कहाँ गये हैं?

कुमार को नमस्कार का उत्तर देकर लीला ने संक्षेप में ही कहा—मा दीदी को लेकर मिसेज़ पालित के यहाँ चाय-पार्टी में गई हैं। घर पर आज मैं अकेली ही हूँ।

वीणा दूसरी जगह चली गई है, यह सुन कर कुमार का मुँह सूख गया। उन्होंने एक रूखी हँसी हँस कर कहा—उन लोगों के लौटने में शायद अधिक विलम्ब न होगा। चाय का ही तो निमन्त्रण है। उसके लिए तो कुछ विशेष समय की आवश्यकता है नहीं। तो क्या मैं तब तक यहाँ बैठ कर प्रतीक्षा कर सकता हूँ?

लीला अभी तक यह सोच रही थी कि वह अपनी बातें किस तरह आरम्भ करे, अतएव उसने कुमार की बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

उसके उत्तर की प्रतीक्षा न करके कुमार फिर कहने लगे—क्या आज आप घूमने न जायँगी? किरण बाबू कहाँ हैं? क्या वे अभी तक आये नहीं?

इस बार लीला बोली—आज मैंने उन्हें आने को रोक दिया है। मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं, इसी लिए घूमने न जाकर अभी तक आप की ही प्रतीक्षा में बैठी थी।

कुमार बहुत ही विस्मित होकर लीला की ओर ताकने लगे। उन्होंने कहा—मुझसे बातें करनी है! कहिए, क्या आज्ञा है?

लीला कुछ क्षण तक चुपचाप बैठी रही। थोड़ी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद कुमार ने बहुत ही नम्र और कोमल शब्दों में कहा—ऐसी कौन-सी बात है, मिस राय, जिसके कहने में आपको इतना संकोच मालूम पड़ रहा है?

लीला ने ज़रा-सा मस्तक ऊँचा करके कहा—आपने बिलकुल ठीक समझ लिया है कुमार! उस बात के कहने में मेरी शिष्टता पर आघात पहुँचता है। अभी तक हम लोग आपको अपने विश्वास-पात्र मित्र के रूप में ही समझते आये हैं, कुमार! परन्तु मेरे इस रूखेपन के लिए क्षमा कीजिएगा, अब हम लोग आपसे मित्रता रखने मे असमर्थ हैं। हम लोगों की इच्छा है कि हमारी और आपकी मित्रता का अब अन्त हो जाय!

कुमार का प्रसन्नता और हँसी से खिला हुआ मुँह सूख गया। थोड़ी देर तक अवाक होकर लीला की ओर ताकने के बाद विह्वल भाव से उन्होंने कहा—कहीं मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ? आप क्या कह रही है मिस राय? जरा फिर तो कहिए!

लीला ने अविचलित भाव से कहा—दुर्भाग्यवश यह स्वप्न नहीं है। मैं जो कुछ कह रही हूँ वह बिलकुल सच है। आपके साथ अब हमारी मित्रता नहीं रह सकेगी।

क्रोध और अपमान के मारे कुमार का मुँह लाल हो गया। क्षण भर चुप रहकर वे बोल उठे—आप घर पर आये हुए अतिथि का सम्मान करना खूब जानती हैं! परन्तु मुझे इस तरह क्यों अपमानित किया है, इसका कोई कारण तो मैंने सुना नहीं। आपके इस व्यवहार का कारण जानने का मुझे अधिकार है। मैं कोई गली का कुत्ता तो हूँ नही कि दुतकार कर भगा दोगी और मैं चला जाऊंगा?

अपनी अवज्ञापूर्ण दृष्टि कुमार के मुँह पर स्थिर करके लीला ने कहा—ऐसी बात आपसे कहने के लिए मैं क्यों विवश हुई हूँ, इसके बहुत से कारण हैं। क्या आप अपने उन सब कारनामों को सुनना चाहते हैं? आपके विरुद्ध कई बहुत बड़ी-बड़ी बातें मुझे मालूम हुई हैं। यदि आप हमारे परिवार से एक साधारण मित्र का-सा ही सम्बन्ध रखना चाहते तो कदाचित आपसे ऐसी बात कहने की मुझे कोई आवश्यकता न पड़ती। परन्तु मैं देख रही हूँ कि वीणा के साथ आप दिन-दिन घनिष्ठता बढ़ाते जा रहे हैं। आपके सम्बन्ध में मैंने जो तरह-तरह की बातें सुनी हैं उनके कारण अब आप उससे किसी प्रकार की भी घनिष्ठता नहीं रख सकेंगे। इससे मुझे यह बात कहनी ही पड़ी है।

लीला की इन बातों से कुमार का भाव बहुत कुछ परिवर्तित हो गया। उनकी बातों में भी पहले की अपेक्षा बहुत कुछ नम्रता आ गई। उन्होंने कहा—आपकी बातें मैं ठीक-ठीक समझ नहीं सका मिस राय? वीणा से मैं कुछ अधिक घनिष्ठता के साथ अवश्य मिला करता हूँ, परन्तु उसमें छिपाने की कोई बात नहीं है। मिसेज़ राय यह सब जानती हैं। मेरे और वीणा के इस प्रकार के सम्बन्ध से उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। मेरे मार्ग में बाधा डालने की चेष्टा उन्होंने किसी दिन भी नहीं की। मुझे आप सभी लोग जानते हैं, मेरे सम्बन्ध की कोई भी ऐसी बात नहीं है जो आप लोगों से छिपी हो। परन्तु न जाने कहाँ से उड़ी-पड़ी बातें सुनकर आपने मुझे इस तरह अपमानित किया है? यह सचमुच बड़े दुःख की बात है।

कुमार को और कुछ भी कहने का अवसर न देकर लीला ने कहा—आप यदि यह समझते हों कि यों ही बे-सिर पैर की बातें सुनकर एकाएक आप-जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति के साथ ऐसा व्यवहार कर बैठी हूँ तो मेरे प्रति अन्याय होगा। वीणा के साथ

आपका कोई भी सम्बन्ध क्यों न रह सकेगा, इसका प्रत्यक्ष कारण इस समय भी आपके घर में वर्त्तमान है । मेरा तात्पर्य आपने अवश्य समझ लिया होगा । यहाँ मेरा संकेत ज्योत्सना की ओर है । क्या इतने पर भी आपको कुछ कहना है ?

बहुत ही चकित होकर कुमार लीला की ओर ताकने लगे, उसकी दृष्टि से दृष्टि मिलते ही उनका मुँह नीचा हो गया ।

कुमार को चुप देखकर लीला ने कहा——इन सब बातों को बढ़ा कर हम समाज में आपकी अपकीर्ति नहीं करना चाहतीं, इसलिए एक मित्र के रूप में आपको सावधान कर देना ही मुझे अधिक अच्छा मालूम पड़ा। आप यदि मेरी सलाह मानेंगे तो और कोई भी झमेला नहीं खड़ा हो सकेगा । सारा मामला यहाँ का यहीं रह जायगा ।

कुमार ने बहुत ही हताश भाव से कहा——नहीं, नहीं, यह नहीं होगा, मिस राय । इतनी ज़रा-सी बात में मैं वीणा की आशा नहीं छोड़ सकता । आपने जो-जो बातें कहीं हैं उनके सम्बन्ध में मुझे जो कुछ कहना है वह वीणा से ही कहूँगा । इस विषय में आपसे कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं है । ज़रा सोच कर देखें तो आपको मालूम होगा कि भूल-चूक मनुष्य के जीवन में होती ही रहती है । उसके लिए——

कुर्सी से उठ कर लीला खड़ी हो गई । दरवाज़े के पास जाकर उसने कहा——बेहरा, कुमार साहब की गाड़ी 'स्टार्ट' करने को कहो——

बाद को उसने गम्भीर भाव से बहुत ही दृढ़ता के साथ कहा——किन्तु इस तरह की भूल-चूक जिसके जीवन में प्रतिदिन ही होती रहती है उसके साथ और चाहे कुछ भी हो, किन्तु किसी भी सभ्य महिला का सम्बन्ध नहीं हो सकता । मैं आपके साथ किसी प्रकार का अशिष्टता का व्यवहार नहीं करना चाहती । आप यदि मेरी

बातें मान लेंगे तो समाज में किसी दिन भी कोई बात प्रकट न होने पावेगी। इस सम्बन्ध में किसी से भी मैं चर्चा न करूँगी। परन्तु इसके बाद भी यदि आप वीणा से मुलाकात करने या उससे पत्र-व्यवहार करने का कोई प्रयत्न करेंगे तो निश्चय जान रखिए कि मैं किसी दिन भी आपको क्षमा न करूँगी। मा आपकी कीर्त्ति से सर्वथा अनभिज्ञ हैं, इसी लिए आप इतनी घनिष्ठता कर सके हैं। मैं यदि बीमार न होती तो शायद ऐसा कभी न हो पाता।

बेहरा ने आकर सूचना दी कि कुमार साहब की गाड़ी तैयार है। विवशता के कारण आसन छोड़कर कुमार को उठ कर खड़ा ही होना पड़ा। उन्होंने कहा—आज आपने एक ज़रा-सी बात पर मेरे साथ इस तरह का अनुचित व्यवहार किया है। इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा, यह मैं आपसे कहे देता हूँ। मैं एक बात और कहता हूँ मिस राय, परिस्थिति पर एक बार और भी विचार कीजिएगा। मैं वीणा से ही—

उनकी बात काट कर लीला ने बड़ी अवज्ञा के साथ कहा—मैं अभी आपसे कह चुकी हूँ कि यदि वीणा से बातें करने का प्रयत्न करेंगे तो आपको बहुत ही अपमानित होना पड़ेगा। इतने पर भी आप किस साहस से वीणा का नाम मुँह से निकाल रहे हैं? आपको लज्जा भी नहीं आती? जाइए, आपकी गाड़ी तैयार है। नमस्कार।

लीला की उज्ज्वल दृष्टि के सामने मस्तक नीचा करके बेंत की चोट खाये हुए कुत्ते की तरह कुमार बेहरा के साथ कमरे से निकल गये।

× × ×

दूसरे दिन सवेरे किरण की बैठक में अरुण अकेला ही एक मेज के पास बैठा था। आकाश निर्मेघ और निर्मल था। अरुण की सुनहरी किरणें क्रमशः तरुण होकर चारों ओर फैल चुकी थीं।

बगीचे में आम की घनी पत्तियों में अपने को छिपाकर एक कोयल रह-रह कर कुहू-कुहू कर रही थी।

किरण चाय पीकर कुछ काम से बाहर चला गया था। जाते समय वह अरुण से कह गया था कि आज वीणा तुमसे मिलने के लिए आवेगी। इसी लिए अरुण अकेला ही बैठे-बैठे अधीर उत्सुकता के साथ कान लगाये हुए प्रतीक्षा कर रहा था। सामने टेबिल पर उसकी पुस्तक की पाण्डुलिपि बिखरी पड़ी थी। आज उस ओर वह ध्यान नहीं दे पाता था।

दो मास से अधिक हुआ, अपनी वीणा से वह मुलाकात नहीं कर सका, उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं सुन पाया। उसका हृदय प्यास से व्याकुल चातक की तरह लीला की आशा से सदा ही उन्मुख रहता। किरण अपना सारा काम-काज भूल कर अधिकांश समय उसी के पास बैठे-बैठे काट देता। वह अरुण को पुस्तकें पढ़कर सुनाता, उसकी रचना का संशोधन करने में सहायता देता, तरह-तरह की बातचीत करके और उसके साथ-साथ रहकर उसका दिल बहलाये रखने का प्रयत्न किया करता। परन्तु अरुण के हृदय को किसी तरह भी शान्ति न मिलती। बात-बात में वह वीणा का ही प्रसंग उठाता। किसी न किसी व्याज से सदा वीणा की ही चर्चा छेड़ कर और उसके सम्बन्ध की तरह-तरह की बातें सुनकर भी उसे तृप्ति न होती। शहर से किरण का यदि कोई मित्र उससे मिलने आता और वह घर पर न होता तो उससे भी अरुण प्रायः जज साहब की लड़कियों के ही सम्बन्ध में बातचीत किया करता। वीणा की स्मृति ने, वीणा की चाह ने, अरुण के समस्त हृदय को ओत-प्रोत कर रक्खा था। उसके अन्तःकरण में और किसी भी चिन्ता को स्थान नहीं था।

एकाएक सड़क पर से घोड़े की टाप सुनाई पड़ी। टाप के इस शब्द से वह परिचित था। अतएव अपनी विचार-धारा को स्थगित

करके उसने उसी ओर अपना कान लगाया। जरा देर के बाद ही उसकी सदा की परिचित बहुत ही मन्द और कोमल पैरों की आहट मिली और उसके समीप आकर वह रुक गई।

पुलक के आवेग से अरुण कुर्सी छोड़ कर नाच उठा। अनुमान के आधार पर लीला की ओर हाथ बढ़ा कर वह पुकारने लगा—बीणा, क्या इतने दिन के बाद तुम सचमुच आज आई हो? आओ, मेरे पास आओ, यदि आ ही गई हो तो दूर क्यों खड़ी हो?

उसका फैलाया हुआ हाथ दोनों हाथों में पकड़ कर लीला ने कहा—हाँ अरुण, मैं आई हूँ। इतने दिनों तक हम लोगों पर विपत्ति का कैसा तूफ़ान चल रहा था, तुमने सब सुना तो होगा। जरा-सा दम मिलते ही दौड़ी आई हूँ तुम्हारे पास। क्या बहुत दिन हो गये?

खींच कर लीला को समीप लाने का प्रयत्न करते हुए अरुण ने कहा—तुम्हारी इस बात का मैं क्या उत्तर दूँ बीणा? जिस व्यक्ति के पास से हटने पर एक क्षण भी मुझे युग-सा प्रतीत होता है, उसे लगातार दो मास तक के लिए गँवा कर मुझे दिन काटने पड़े हैं! इससे अधिक मैं और क्या कहूँ? परन्तु बीणा, तुम आज इतनी दूर क्यों खड़ी हो, मेरे पास क्यों नहीं आती हो?

लीला ने कहा—आज मुझे तुमसे बहुत सी बातें कहनी हैं, अरुण! पहले मैं वे सब बातें कह देना चाहती हूँ। उन्हें सुनकर भी यदि तुम मुझे अपने पास बुलाओगे तो तुम्हारे पास आऊँगी।

अरुण का चेहरा फीका पड़ गया। उसने कहा—ठहरो बीणा, पहले मैं ही तुमसे एक बात पूछ लूँ। सच बताओ बीणा, इस अन्धे की सेवा करते-करते क्या तुम थक गई हो? इसी लिए यदि तुम्हें कुछ कहना हो तो—

अरुण को बीच में ही रोक कर लीला ने कहा—यह सब कुछ नहीं है अरुण! तुम्हें तो मालूम है कि मैंने अपनी इच्छा

से ही तुम्हारा साथ पकड़ लिया है। उसके लिए किसी दिन भी मेरे हृदय को पश्चात्ताप नहीं हुआ। आज मैं तुमसे जो कुछ कहना चाहती हूँ वह बिलकुल दूसरी ही बात है। इतने दिन से मैं तुम्हें प्रतारित करती आ रही हूँ अरुण! मुझे तुम जो कुछ समझते हो, मैं वास्तव में वह नहीं हूँ। इस बात को स्वीकार करने का दिन आज आ गया है।

अरुण के मुख की मलिनता जाती रही। प्रसन्नता से विकसित होकर उसने कहा—इसके लिए चिन्ता करने की तुम्हें आवश्यकता नहीं है लीला! यह बात तो मुझे बहुत पहले से ही मालूम है। तुमने कभी कुछ कहा नहीं, इसलिए मुझे भी इस बात की चर्चा छेड़ने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम पड़ी। चर्चा करने की आवश्यकता ही क्या थी? जिसे मैं अपने सर्वस्व के रूप में समझता हूँ, वह बिलकुल मेरे हाथ में आगया इसी से मेरी आत्मा सन्तुष्ट हो गई है। यही मेरे लिए यथेष्ट है लीला!

बहुत ही विस्मित होकर लीला क्षण भर चुपचाप ताकती रही। इतने दिन से वह जो कुछ छल करती आ रही थी वह सब अरुण को मालूम है? लज्जा और धिक्कार के मारे पहले तो लीला पृथ्वी में गड़ जाना चाहती थी। किन्तु क्षण भर के बाद ही किरण की याद आने पर उसके नेत्रों को फोड़-फोड़ कर आँसू गिरने लगे। अब उसे कोई आशा ही न रह गई!

लीला की लज्जा और उसके मौन भाव का अनुभव करके अरुण ने उसे खींच कर अपने पास बैठाया। वह उसके माथे पर, उसके मुँह पर, हाथ फेर-फेर कर उसे शान्त करने की चेष्टा करने लगा, किन्तु एकाएक ही वह विस्मित हो उठा। उसने कहा—यह क्या लीला, क्या हुआ है? तुम रोती क्यों हो?

लीला अपने को सँभालने के लिए बहुत ही प्रयत्न कर रही थी। रूमाल से आँखें पोंछ कर उसने कहा—मैंने सोचा था कि

सारा हाल जब तुम्हें मालूम हो जायगा तब तुम मुझे दुतकार दोगे !

"तुम्हें दुतकार दूँगा ? इतने दिनों से तुम मुझे देखती आ रही हो, मेरे स्वभाव से खूब परिचित हो गई हो, फिर भी ऐसी कल्पना कर सकी हो लीला ? तुम्हें दुतकार देने पर मेरे पास रह ही क्या जायगा, जिसके सहारे पर मैं जीवित रहूँगा, जरा, बताओ तो !"

अरुण ने ये बातें बहुत ही विस्मय और क्षोभ के साथ कही थीं।

लीला ने उत्तर दिया--मैंने बड़ा अन्याय किया है अरुण ! तुम्हारे साथ छल करके इतने दिनों तक गोरखधन्धे में डाल रखना क्या साधारण अपराध है ?

उत्तेजित भाव से अरुण ने उत्तर दिया--हाँ, अपराध है ! किन्तु यह अपराध तुमने किया था किसके लिए लीला ? मैं क्या तुम्हारा हूँ ? आत्मीयता या मित्रता तो बहुत बड़ी बात है, जिसे कभी आँख से देखा तक नहीं, उसकी दुर्दशा देखकर दयार्द्र हृदय से उसकी रक्षा करने के लिए, उसे सुखी करने के लिए तुम अनायास ही दौड़ पड़ी हो ! मैं तो मर ही चला था, संसार की सारी आशाओं, सारे आनन्दों, सारे सुखों से वञ्चित होकर मुझे विरक्ति सी आगई थी। इसी प्रकार यदि कुछ दिन तक और रहना पड़ता तो कदाचित् आत्महत्या करके मुझे समस्त ज्वालाओं का अवसान कर देना पड़ता। मेरे शरीर में फिर से नव-जीवन का सञ्चार करके, नवीन आशा-आकांक्षा जाग्रत करके, अन्धकार के खोह से निकाल कर आलोकमय मार्ग में मुझे कौन ले आया है ? अपने इस जीवन में मैं जो कुछ फिर से प्राप्त कर सका हूँ, उस सबका आदिकारण तुम्हीं तो हो लीला ! तुम चाहे लीला होओ, या वीणा होओ, इससे मुझे हानि-लाभ नहीं है। तुम मेरी हो, इस सुख से ही मेरा निरर्थक जीवन धन्य हो गया है !

लीला अरुण की बातें सुनती जाती थी और साथ ही साथ चित्त को एकाग्र करके यह भी सोचती जाती थी कि चाहे जो भी हो अब मेरे जीवन का एक मार्ग निर्दिष्ट हो गया, यह अच्छा ही हुआ। जो भाग्य-लिपि मैंने स्वयं अपने हाथों से ही बना कर तैयार की है, उसी के आधार पर अपने जीवन को उत्सर्ग करके सारी चिन्तायें भूल जाऊँगी और एकाग्र हृदय से अरुण की विश्वस्त पत्नी बन कर ही अपना यह समस्त जीवन व्यतीत कर दूँगी। अब द्विविधा में पड़ कर उद्वेग और अशान्ति की ताड़ना से मुझे पीड़ित न होना पड़ेगा।

अरुण की बातें समाप्त होने पर उसने कहा—आज मेरे हृदय पर से एक बहुत बड़ा भार उतर गया। इतने दिन तक यह बात तुमसे बतला नहीं सकी थी, इसलिए मेरे हृदय को इतना क्लेश हो रहा था, यह मैं तुम्हें किस तरह बतलाऊं। अच्छा, यह मामला यहाँ तक कैसे पहुँचा, अब इसका भी हाल सुनो। जिस दिन पहले-पहल वीणा के पास तुम्हारी वह चिट्ठी आई, घंटे दो घंटे मा को और वीणा को बड़ा दुःख रहा। बहुत कुछ रोने-धोने और विलाप करने के बाद उन लोगों ने यह निर्णय किया कि तुम्हारे साथ वीणा के विवाह का प्रस्ताव भंग कर देना ही अच्छा है। वीणा ने उसी समय तुम्हारे नाम एक चिट्ठी लिख डाली। किन्तु उसने जो कुछ लिखा उसे मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकती थी। ऐसे समय, जब तुम्हारे जीवन में अधिक प्रेम और अधिक सेवायत्न की आवश्यकता थी, तुम्हारी वाक्दत्ता पत्नी ने तुम्हें एक ही बात में इस तरह धता बता दिया, यह मुझे जरा भी पसन्द नहीं आया। मा को और वीणा को मैंने इतना समझाया, किन्तु कोई फल न हुआ। मेरा चित्त शोकाकुल हो उठा। उसके बाद किरण ने एक दिन बतलाया कि अरुण मेरे ही घर पर हैं। किरण से कह कर एक दिन तुमसे मुलाकात करने का मैंने निश्चय किया। मैं चाहती थी कि तुम्हारे

साथ जान-पहचान हो जाने पर मैं कभी-कभी आया करूँगी, थोड़ी देर तक बातचीत करूँगी, जिससे यह अकेलापन तुम्हें खलेगा नहीं, और बहुत कुछ तुम्हारा मनोविनोद हो जायगा। परन्तु जब काम का समय आया तब सारा मामला ही उलटा हो गया। मेरे मुँह से एक शब्द सुनते ही तुम भूल से मुझे वीणा समझ बैठे। इसी से यह सब झंझट खड़ा हो गया।

लीला का हाथ पकड़ कर अरुण ने हँस कर कहा—सौभाग्य से ही मैंने यह भूल की थी। उसी का फल है कि मैं तुम्हें प्राप्त कर सका हूँ। अन्यथा मुझे कहीं खड़ा होने को स्थान न मिलता।

लीला कहने लगी—मुझे वीणा समझ कर तुम्हारे मुँह पर आनन्द की जो आभा झलक पड़ी थी, उसे देखकर मुझे न जाने कैसी दुर्बलता आने लगी। कितने बार मैंने मन ही मन सोचा कि यह काम अनुचित हो रहा है, अपना परिचय देकर मैं तुम्हारा भ्रम दूर कर दूँ, किन्तु किसी तरह वैसा कर न सकी। तब मन में आया कि कुछ दिन इसी तरह बीतने दो। बीच-बीच में आते-जाते जब हमारी-तुम्हारी मित्रता हो जायगी, साथ ही तुम्हारा चित्त भी कुछ शान्त हो जायगा तब मैं सारी बातें तुम्हें सिलसिले से बता दूँगी। किन्तु कुछ ही दिनों के बाद मैं बीमार पड़ गई। इसी लिए मैंने जो सोच रक्खा था, वह कुछ भी न हो पाया।

लीला ने अपने सीने के पास से एक पत्र निकाल कर अरुण के हाथ पर रख दिया। वह कहने लगी—वीणा ने यही चिट्ठी मुझे तुम्हारे पास भेजने को दी थी। मैंने सोचा था कि उपयुक्त अवसर पाकर मैं अपने हाथ से ही इसे तुम्हें दूँगी। परन्तु संयोगवश आज तक इसे देने का अवसर ही नहीं मिला। यह चिट्ठी दुष्कृति का प्रमाण-स्वरूप मेरे पास रह कर मेरे जीवन को अशान्तिमय बना रही थी।

उस चिट्ठी को लेकर ज़रा-सा उलटने-पलटने के बाद अरुण

ने लीला को दे दिया और कहा—अब इस चिट्ठी की आवश्यकता ही क्या है? परन्तु कम से कम इसे एक बार पढ़ कर तुम सुना दो। देखें, क्या लिखा है?

लीला वीणा की चिट्ठी पढ़ने लगी। अरुण चुपचाप उसे सुनता रहा। अन्त में लीला के हाथ से लेकर उसने उस चिट्ठी को फाड़ कर फेंक दिया और कहने लगा कि वीणा के लिए जो कुछ उचित था वही उसने किया, परन्तु इसके लिए मैं उसका आजन्म कृतज्ञ रहूँगा लीला! आज के मेरे इस सौभाग्य का आदिकारण वही है। वह यदि मुझे कोरा जवाब न दे देती तो शायद मैं तुम्हें जान भी न पाता। कोई दूसरा ही आकर तुम्हें ले जाता।

इस बात को दबाकर लीला ने कहा—किन्तु अरुण, तुमने मुझे पहचाना किस तरह था? यह तो मुझे इतना आश्चर्य मालूम पड़ता है! मैंने कभी भूल कर भी यह रहस्य प्रकट नहीं होने दिया। साथ ही मुझे सन्देह भी नहीं हुआ कि तुम मुझे पहचान गये हो। किरण से मैंने इस बात को छिपाये रखने का विशेष रूप से अनुरोध किया था। उन्होंने कभी बतलाया भी न होगा यह निश्चय है। तब तुम कैसे जान पाये हो?

अरुण ने हँसकर कहा—इस बात को जान लेना क्या इतना कठिन था लीला? भूल-चूक आदमी एक ही दिन करता है। वह सदा ही भूल क्यों करता जायगा? खास कर वीणा में और तुममें जो अन्तर है उसे छिपा कर तुम कितने दिन रख सकती हो? तुम्हारी बात-चीत सुन कर, तुम्हारी चाल-ढाल देखकर, दो ही एक दिन में मुझे सन्देह होने लगा था। क्या मैं वीणा को जानता नहीं था? उसके हाव-भाव, उसकी बात-चीत और उसकी असार प्रकृति से मैं तो बहुत ही अच्छी तरह से परिचित था। इसी लिए हृदय में सन्देह का बीज उत्पन्न होते ही बातचीत में किरण से मैं तुम्हारी चर्चा करने लगा। किरण के घर पर न

रहने पर उसके मिलने-जुलनेवाले भी जो आकर मेरे पास बैठते, उनसे तुम्हारी ही चर्चा छेड़ देता, तुम्हारे सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना चाहता। बाद को तुम जब मेरे पास आतीं तब उन सब लोगों के बतलाये हुए चित्र से तुम्हारी बातचीत, हँसी-गान, आदि को मिला कर देखा करता। इतना प्रयत्न करने पर भी क्या तुम्हें पहचानना कठिन था? परन्तु तुम इस सम्बन्ध में कुछ बतलाती क्यों नहीं थी, यही बात मेरे लिए कभी-कभी विस्मयजनक-सी हो जाती थी। इस सम्बन्ध में तुम्हारा मनोभाव जानने के लिए मुझे कोई विशेष कौतूहल नहीं था। मैं तो तुम्हें पाकर ही सुखी था। तुम क्या सोचती होगी, कभी-कभी मैं इसी चिन्ता में पड़ जाया करता था। आज तुम्हारी बातें सुनने के बाद परिस्थिति स्पष्ट हो गई।

अन्त में अरुण कहने लगा—अब ये सब बातें जाने दो लीला! हम दोनों के बीच में जो बातें अभी तक अस्पष्ट थीं वे सभी अब स्पष्ट हो गई हैं। अब उन सब बातों की जरूरत नहीं। अब यह बताओ कि इस तरह मैं और कब तक पड़ा रहूँगा? तुम्हें छोड़ कर अकेले अब मेरे दिन किसी तरह भी नहीं कटना चाहते। यही दो महीने मैंने कितने क्लेश से काटे हैं, यह तुम न समझ सकोगी। अब मुझसे रहा नहीं जाता! तुम मुझे कब अपने पास ले चलोगी लीला!

लीला ने स्नेहपूर्वक कहा—अब तो अधिक विलम्ब न होगा अरुण! इतने दिनों तक मेरे और तुम्हारे बीच में यह जो व्यवधान था उसे दूर किये बिना घर में तो मैं कुछ कह नहीं सकती थी। इसी लिए इतना विलम्ब हुआ है। आज सारी बातें स्पष्ट हो गई हैं। इसलिए आज ही घर जाकर मैं अपने माता-पिता से कहूँगी। तब फिर विलम्ब ही कितना होगा?

अरुण ने उदास होकर कहा—परन्तु यह बात कान में जाते

ही मेरा हृदय न जाने क्यों दुखी हो रहा है। केवल यही बात दिल में आती है कि वे लोग, विशेषतः तुम्हारी मा, क्या इससे सन्तुष्ट होंगी? सम्भव है कि वे एतराज करें। तब भला मेरी क्या दशा होगी?

लीला ने हँस कर कहा—तुम इस ज़रा-सी बात को सोचकर अपना मन क्यों खराब कर रहे हो? मैं तो तुमसे कितने बार कह चुकी हूँ कि मैं स्वयं अपनी ही इच्छा के अनुसार चला करती हूँ। यह सारा का सारा मेरे ही जीवन का काम है। तुम्हें लेकर यदि मैं सुखी होऊँ तो इसमें उन्हें क्या आपत्ति हो सकती है? इसके अतिरिक्त यदि वे आपत्ति करेंगे भी तो मैं सुनने ही क्यों लगी? परन्तु यह बात जरूर है कि मा पहले-पहल थोड़ा-सा झंझट डालेंगी ही। परन्तु अन्त तक मेरी ही बात रहेगी, इसके लिए तुम चिन्ता न करो, निश्चिन्त रहो।

इस बात से अरुण को बड़ी तृप्ति मिली। उसने कहा—यही सही लीला! जहाँ तक हो सके, मुझे शीघ्र ही यहाँ से अपने पास ले चलने का प्रबन्ध करो। मैं अधीर हो उठा हूँ।

( ३४ )

उस दिन सवेरे से ही किरण के हृदय की उत्सुकता और अशान्ति बहुत बढ़ गई थी। आज लीला अरुण के पास गुप्त रहस्य प्रकट करने के लिए आनेवाली थी। वह किरण की भाग्य-परीक्षा का दिन था। किरण घर पर किसी तरह भी रह नहीं सका। जल्दी-जल्दी किसी तरह चाय पीकर व्यग्र और अशान्त हृदय से वह निकल पड़ा। उसने सोचा कि विलम्ब करने से लीला कहीं आ न पहुँचे। अरुण और लीला को एक स्थान पर देखना उसके लिए असह्य था। उन दोनों का साथ उसे फूटी आँखों भी नहीं सुहाता था।

घर मे चले आने पर किरण का चित्त ठिकाने न हुआ। जो कुछ होना था वह तो उसे मालूम ही था—उस बात के याद आते ही वह पागल हो उठता था। एक निर्जन बगीचे में जाकर मस्तक पर दोनों हाथ रख कर वह सोचने लगा।

मनुष्य के शरीर में जब तक प्राण रहते हैं तब तक घोर निराशा में भी वह आशा की क्षीण रेखा तक को हाथ से जाने नहीं देता। रह-रह कर किरण के हृदय में भी एक अनिश्चित आशा का प्रकाश जगमगा उठता। वह सोचता कि सारी बातें सुन कर अरुण यदि लीला को उसकी प्रतिज्ञा से मुक्त कर दे! किरण के पक्ष में जो जो युक्तियाँ थीं उन्हीं के आधार पर वह अपने हृदय को समझाने की चेष्टा कर रहा था कि अरुण ऐसा ही करेगा, ऐसा ही करना उसके लिए उचित भी है। जिससे वह प्रेम करता है उसे त्याग कर और किसी के साथ वह क्यों विवाह करने लगा? मैं ही लीला से प्रेम करता हूँ तो क्या किसी विशेष अवस्था में पड़ जाने के कारण लीला के स्थान पर किसी और स्त्री के साथ विवाह कर सकूँगा? दूसरी स्त्री से जान-पहचान हो सकती है, मित्रता हो सकती है, किन्तु विवाह! यह तो सर्वथा असम्भव है।

लीला के विलायत से लौट कर आने पर पहले-पहल किरण से जिस दिन उसकी मुलाकात हुई थी, उस दिन से आज तक की सारी घटनायें किरण के हृदय में उदित होने लगीं। उस दिन का जीवन कितना आनन्दमय था, कितना निश्चिन्त था। उस समय लीला बिलकुल उसी के हाथ में थी, किरण अनायास ही उसे अपनी बना सकता था। लीला या उसके माता-पिता को कोई आपत्ति ही न होती। वैसा न करके केवल लड़कपन के फेर में पड़ कर खेल-कूद और मनोविनोद में ही उसने वह अवसर गँवा दिया। मनुष्य को जीवन में अच्छे अवसर भी संयोगवश ही मिला करते हैं। उस समय यदि उनसे लाभ न उठाया जा

सका तो पछता-पछता कर ही सारा जीवन व्यतीत करना पड़ता है!

इस सम्बन्ध में उद्योग न करके किरण ने जो मूर्खता की थी उसके लिए उसे अपने ऊपर बड़ा क्रोध आया। वह सोचने लगा कि यदि सचमुच पूछा जाय तो मैंने अपने आप ही लीला को अरुण के हाथों में सौंप दिया है। अब इस समय उसके लिए पश्चात्ताप करके यदि रोता फिरूँ तो उसमें लाभ क्या है?

उस स्थान पर बैठे-बैठे लगभग बारह बज गये। मस्तक पर सूर्य्य का उत्ताप बहुत ही प्रखर हो उठा। अब वहाँ पर बैठा रहना किरण के लिए असम्भव हो रहा था। अतएव अपने थके हुए शिथिल शरीर को किसी तरह घसीट लाकर सूखा मुँह लिये वह घर लौटा।

अरुण बहुत ही खुश होकर बाहर के कमरे में किरण की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके पैरों की आहट पाते ही उसने पुकार कर कहा—किरण, आओ भाई, इस कमरे में आओ। तुमसे बहुत-सी बातें कहनी हैं। मैं कब से तुम्हारे लिए बैठा हूँ! आज तुमने बहुत देरी कर दी।

कमरे में आकर अरुण के पास किरण एक कुर्सी पर बैठ गया। अरुण का आनन्द से खिला हुआ मुँह देखकर परिस्थिति को हृदयङ्गम करने में उसे विलम्ब नहीं हुआ।

अरुण कहने लगा—किरण, आज हम दोनों में सारी बातें साफ़-साफ़ हो गई। लीला आज आई थी। आज वह मुझे सभी बातें बतला गई, यद्यपि अनुमान से बहुत पहले ही मैं यह जान गया था। तुम लोग उसके सम्बन्ध में जो-जो बातें कहा करते थे उन्हीं के आधार पर मैंने सब कुछ मालूम कर लिया था। परन्तु तुमने यह जो रहस्य छिपा रक्खा था, इसके लिए मैं कुछ कहना नहीं चाहता। लीला का अनुरोध भी कितने महत्त्व का है।

क्या अभी तक मैं यह समझ नहीं पाया हूँ ? वह कह गई है कि आज ही घर जाकर मैं अपने माता-पिता को यह बात सूचित कर दूँगी। तब फिर हम लोगों का विवाह होने में अधिक विलम्ब न लगेगा।

निष्पन्द शरीर से किरण कुर्सी पर उढ़क गया। अरुण की बातों का उत्तर देने या इस शुभ संवाद के लिए आनन्द प्रकट करने की शक्ति उसमें नहीं थी। किरण आज तक यह सोच रहा था कि अनिष्ट का तीक्ष्ण खड्ग सदा ही मुझ पर उठा रहता है, न जाने कब वह मेरे मस्तक पर छूट पड़ेगा। इस बात की उसे बहुत ही आशङ्का थी। इसके कारण वह बहुत ही उद्विग्न रहा करता था। आज उसकी आशङ्का ठीक निकली। उस खड्ग ने किरण के शरीर पर वज्र का-सा प्रहार किया। आज से अब उसे अशान्ति और उत्कण्ठा की ज्वाला से जलने की आवश्यकता न रही। इतने दिनों तक जो कुछ अनिश्चित था, अब वह सर्वथा निश्चित हो गया। आज उसका सर्वस्व जाता रहा। आशा, आनन्द और सुख उसके जीवन से सदा के लिए बिदा हो गये। तब फिर उसके पीछे खींचातानी क्यों करे ?

किरण के इस भावपरिवर्त्तन की ओर ध्यान देने का अवसर अरुण को नहीं था। अपने ही आनन्द में विह्वल होकर वह कहने लगा—परिस्थिति को देखते हुए यह मालूम पड़ता है कि मेरा विवाह होते-होते गर्मी पड़ने लगेगी। इससे मैं सोचता हूँ कि विवाह के बाद ही लीला को लेकर यहाँ से मसूरी या नैनीताल चला जाऊँ। वहीं गर्मी बिता कर तब देश को लौटूँगा। इस बीच में तुम्हें बहुत-सा काम करना होगा भाई ! अभी तक मैंने लीला को कुछ दिया तो है नहीं। विवाह के समय वे लोग जो कुछ देंगे वह तो देंगे ही। उस दिन तुम मेरी ओर से अपनी रुचि के अनुसार उसे सजा देना। तुम सुरुचि-पूर्ण आदमी हो, साथ

ही बहुत दिनों से उसे देखने आये हो। इससे तुम्हीं इस बात को अच्छी तरह से समझ सकोगे कि कौन-कौन से कपड़े और कौन-कौन से गहने उसके शरीर पर ज्यादा खिलेंगे। मेरे तो आँखें हैं नहीं कि मैं यह सब समझ सकूँगा? इसके अतिरिक्त तुम्हें छोड़कर मेरे और है ही कौन जिससे ये सब बातें कहूँ? इसी लिए तुमसे कहता हूँ किरण, रुपयों की ओर ध्यान न देना। तुम इतना करना कि उस दिन तुम मेरी ओर से मेरी लीला को जी भर कर सजा देना।

यह कहते-कहते अरुण के गले का स्वर भारी हो गया। कुछ देर तक चुपचाप रह कर उसने कहा—सचमुच किरण, यह बहुत ही आश्चर्य-सा मालूम पड़ता है कि मनुष्य की आशा-आकांक्षा का मानो अन्त ही नहीं है। मुझे ही देख लो। मेरी जो दुर्दशा हुई थी उसके कारण मेरे इस जीवन की सभी आशाओं और सभी सुखों का अन्त हो चुका था। जो कुछ पाकर अपने मन को स्थिर करके फिर रोक सका हूँ उसे भी पा जाने की कोई आशा मुझे नहीं थी। देखो, इतने पर भी आज किसी तरह मैं चित्त को नहीं रोक पाता हूँ। मेरे हृदय को केवल दुख ही हो रहा है—यदि एक बार क्षण भर के लिए भी अपनी दृष्टि-शक्ति लौटाल पाता! अपनी लीला का प्यारा और सुन्दर मुँह मैं जीवन में कभी देख न पाऊँगा। उस दिन यदि एक क्षण भी मैं उसे देख पाता और दृष्टि फिर नष्ट हो जाती, तो सच कहता हूँ, उसके लिए मुझे फिर कभी दुख न होता।

इसके बाद अपने आप को सान्त्वना देकर वह स्वयं कहने लगा—जाने दो, जो होना नहीं है उसके सम्बन्ध में सोच-विचार करने से क्या लाभ होगा? फिर भी आज यहीं सोचकर मेरी आत्मा को शान्ति मिल रही है कि मेरे पास बहुत-सा रुपया है। मैंने जिससे प्रेम किया है, मेरे प्रेम में जीवन भर के लिए इतना बड़ा

त्याग करके मेरे पास आकर जो खड़ी हुई है, उसे मैं जैसे चाहूँगा, वैसे ही शौक़ भर सजा सकूँगा, सुख से रख सकूंगा, रुपयों के लिए हृदय की वेदना हृदय में ही दबाकर न रह जाना पड़ेगा। मेरे पास रुपये हैं, इसका सुख मुझे आज तक कभी नहीं मिला। कभी इस बात की भी आशा नहीं कर सका कि अपने ऐश्वर्य का मैं इस प्रकार भी सदुपयोग कर सकूँगा। किन्तु किरण, तुम तो कुछ बोलते ही नहीं हो!

इतनी देर के बाद अरुण को चेतना हुई कि किरण अभी तक कुछ बोला नहीं। तब उसने अभिमान से क्षुब्ध स्वर में कहा—किरण, आज तुम्हें क्या हो गया है? मेरे इतने बड़े आनन्द और सौभाग्य का समाचार पाकर तुमने मुझे न तो बधाई दी और न आनन्द प्रकट किया। यह मुझे बहुत ही बेसुरा मालूम पड़ रहा है। तुम्हें छोड़ कर मेरा कोई वास्तविक आत्मीय या मित्र तो है नहीं! आशा थी कि मुझे सब से पहले तुम्हीं से बधाई मिलेगी। आज तुम इस तरह चुपचाप क्यों हो भाई?

कुर्सी पर से झुक कर किरण का हाथ पकड़ने के लिए जैसे ही वह लपका, एकाएक हक्का-बक्का हो गया। उसका हाथ बर्फ़ की तरह ठंडा हो गया था, वह हिलता-डोलता भी नहीं था, नाड़ी की गति प्रायः बन्द-सी हो गई थी।

उस समय एकाएक बिजली की तरङ्ग की तरह संशय की धुँधली रेखा अरुण के भी हृदय में उत्पन्न हुई, जिसके कारण वह भी बिलकुल ही निष्पन्द हो गया। किरण के व्यवहार और उसकी बातचीत से कितने दिन, कितने बार उसे सन्देह हुआ था कि शायद किरण लीला को चाहता है। परन्तु इस बात पर उसने हृदय से कभी विश्वास नहीं किया था। इसके सम्बन्ध में सोच-विचार करने का उसे कभी समय या अवसर भी नहीं था? उस समय वह अपनी ही कल्पना में, अपने ही सुख में मग्न था।

आज अरुण के मन में यह बात आई कि मेरे बार-बार के अनुरोध और आग्रह पर भी किरण कभी मेरी और लीला की बातचीत में सम्मिलित नहीं हुआ है। लीला के आने से पहले ही वह घर से इतनी उतावली के साथ भागता था, मानो यहाँ उसे भूतों ने सता रक्खा हो। लीला के लौट जाने पर कुछ देरी हुए बिना वह लौट कर आता भी नहीं था। वह स्वयं कभी अपनी इच्छा से लीला का नाम मुँह पर नहीं आने देता था। परन्तु मेरे बार बार पूछने पर जब उसका प्रसंग छेड़ता तब उस दिन उसकी जबान ही थक जाती। लीला की प्रशंसा करते-करते आनन्द के आवेग में मानो वह अपने आपको भूल जाता। उसकी प्रशंसा करके वह कभी तृप्त न होता था। मैं सचमुच अन्धा हूँ। इस बात को समझ कर भी मैंने कभी नहीं समझा।

इस अप्रिय और असंगत घटना में पड़ कर अरुण की सारी हँसी, सारी प्रसन्नता, जहाँ की तहाँ हो गई। कुछ क्षण तक निस्तब्ध रह कर अन्त में उसने पुकारा---किरण!

वेदना के उमड़ आने पर आँसुओं से रुँधे हुए अरुण के उस कण्ठ-स्वर ने किरण के शरीर में मानो चेतना उत्पन्न कर दी। वह चौंक कर उठ बैठा और कहने लगा---कहो अरुण, क्या कहते हो भाई!

"मैंने सभी बातें समझ ली हैं किरण! मुझे और पहले ही समझ लेना चाहिए था, मैं बड़ा ही मूर्ख हूँ, इसी लिए...। किन्तु किरण, मैं तो बहुत विलम्ब से आया हूँ भाई! तुम बहुत पहले से उसे जानते थे, पहले से ही तुमने उसे क्यों नहीं अपना लिया? यदि ऐसा कर सके होते तो आज यह घटना ही न हो पाती।

जो वेदना इतनी देर तक पत्थर के भार की तरह किरण के हृदय पर रुकी रह कर उसके श्वास को रोके हुए थी, उसी ने अब

अरुण की कोमल और सहानुभूतिपूर्ण बातों से गल कर आँसू के रूप में किरण के नेत्रों को भिगो दिया।

रूमाल से आँखें पोंछ कर हँसने का प्रयत्न करता हुआ किरण स्वाभाविक स्वर में कहने लगा—इसके लिए व्यर्थ में चिन्ता करने की अब कौन सी आवश्यकता है अरुण? ईसप की कहानियोंवाले खरगोश की तरह बहुत दिन सोते-सोते मैंने काट दिये हैं। अब नींद खुलने पर पछताने से क्या लाभ होगा? तुम दोनों परस्पर एक दूसरे से प्रेम करके सुखी होओ, तुम लोगों का जीवन एक दूसरे के प्रेम में बँध कर आनन्दमय तथा कृतकृत्य हो जाय, मैं तुम दोनों का ही मित्र हूँ, तुम्हारे सुखमय जीवन को देखकर मैं भी सुखी हो सकूँ, अब यही मेरी आन्तरिक कामना है।

अरुण ने उत्तर दिया—परन्तु इससे मुझे शान्ति नहीं मिलती है भाई! तुम्हारे इस अभिनन्दन का मुझे कितना मूल्य देना पड़ा है, यह तो मुझे ही मालूम है। मैं बड़ा ही हतभाग्य हूँ। मैं जहाँ कहीं भी जाऊँगा, दुख और वेदना मेरे साथी होकर, मेरे संसर्ग में जो लोग रहेंगे, उन तक को गला-गला कर मार डालेंगे। तुम सदा से मेरी जो सहायता करते आ रहे हो, मेरे प्रति तुमने जितना स्नेह और आदर किया है, उसका बहुत अच्छा प्रत्युपकार तुम्हें मुझसे मिला है! यह क्या होगया किरण! मैंने यह क्या कर डाला है?

अरुण की भावुक प्रकृति से किरण बहुत ही अच्छी तरह परिचित था। अपनी व्यथा को भुला कर अरुण को शान्त करने के लिए वह व्यग्र हो उठा।

अरुण की पीठ ठोंक कर उसने हँसकर कहा—यह कहाँ का पागलपन आकर सवार हो गया, जरा बताओ तो? एक बार कोई बात दिमाग़ में घुस गई बस। उससे फिर छुटकारा मिलना कठिन है। उसी के पीछे कुछ दिन तक हाय-हत्या मची रहती है।

मेरे लिए इतनी चिन्ता करने की ही क्या आवश्यकता है? पहले-पहल आघात लगने पर जरा देर के लिए चित्त दुखी हो जाता है जरूर, लेकिन भला उस बात को भी कहीं हृदय में सदा बनाये रख सकूँगा? आज मुझे जरा-सा अनमना हो जाते देखकर ही तुम इतनी चिन्ता कर रहे हो। शायद दो महीने बाद यह देखने में आवे कि मैंने विवाह करके एक सुन्दर-सी दुलहिन लाकर गृहस्थी जमा ली है।

अरुण ने कहा—यदि ऐसा हो पाता तो चिन्ता करने की कोई बात ही न रहती। तुम ऐसी ही प्रकृति के आदमी हो न? शायद मै तुम्हारे स्वभाव को जानता ही नहीं हूँ, जो इस बात पर विश्वास कर लूँगा।

किरण ने कहा—अच्छा, तुम यदि मेरे स्वभाव से अच्छी तरह परिचित हो तो बतलाओ मुझमें कभी तुमने उस तरह का स्वभाव देखा है? मै सदा ही कर्तव्य-परायण होकर रहा हूँ। काम-काज करता हूँ, खेलता-कूदता हूँ और आनन्द से घूमता हूँ, इतना ही मेरा काम है। मृग-तृष्णा के फेर में पड़कर अशान्त होकर दौड़ते फिरना मेरा काम नहीं है। तुम तो स्वयं समझ रहे हो कि उस ओर यदि मेरी विशेष इच्छा होती तो अब तक कभी ही मेरा विवाह हो गया होता। तुम इस फेर मे पड़कर व्यर्थ में अपने हृदय को दुखी मत करो। समय अधिक हो गया है। मैं स्नान-भोजन से निवृत्त हो आऊँ, तब तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध में परामर्श किया जाय।

× × ×

उस दिन घर लौटने पर दोपहर को भोजन करने के बाद लीला ने मिसेज राय के कमरे में जाकर देखा तो वे बिस्तरे पर लेटी हुई थीं। बीणा उनके पास बैठी थी। वह एक उपन्यास पढ़कर माँ को सुना रही थी।

किसी तरह की भूमिका न बाँध कर स्वाभाविक रूप से लीला

ने कहा——माँ, मैं तुमसे एक बात कहने आई हूँ। अरुण के साथ विवाह करने की मेरी इच्छा है। आज मैं उससे इस बात का पक्का वादा कर आई हूँ।

यह बात सुनकर वीणा चौंक उठी, और तीक्ष्ण दृष्टि से वह लीला की ओर ताकने लगी, कुछ बोली नहीं।

मिसेज़ राय पहले तो कुछ देर तक हतबुद्धि-सी होकर ताकती रह गई, मानो वे इस बात पर विश्वास ही नहीं कर पाती थीं, बाद को उन्होंने कहा——बीमारी से उठने पर इस लड़की का दिमाग़ ख़राब हो गया है न? क्या कहती हो, ज़रा फिर तो कहो?

लीला ने फिर कहा——मैं अरुण के साथ विवाह करना चाहती हूँ। आज सबेरे उससे इस बात का पक्का वादा कर आई हूँ।

मिसेज़ राय ने आश्चर्य में आकर कहा——कौन अरुण? अरुण घोषाल? उससे तुम्हारी मुलाक़ात कहाँ हुई? कहीं कोई बातचीत नहीं थी, हम लोग न कुछ जान पाये, न कुछ सुन पाये। इधर तुम एकाएक पक्का वादा कैसे कर आई हो?

लीला ने कहा——उसके सम्बन्ध में अब नये सिरे से जानने की कौन-सी बात है? अरुण के सम्बन्ध की तो सभी बातें तुम्हें अच्छी तरह मालूम हैं। उसके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करने में तुम्हें कोई आपत्ति भी नहीं थी। जिस बात से तुम लोग घबरा उठे थे, उसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। मैंने तो उसी समय तुम लोगों से कह दिया था कि उसके अन्धे हो जाने के कारण विवाह भंग कर देना अच्छा नहीं है।

मिसेज़ राय खीझ कर बोल उठीं——अब वे सब बातें जाने दो। मैं जो कुछ पूछ रही हूँ, पहले उसी का उत्तर चाहती हूँ। अरुण इस समय है कहाँ और उसके साथ तुम्हारी इस तरह की घनिष्ठता कब और कैसे हुई?

लीला ने इस बार ज़रा कुछ झुँझलाहट के साथ कहा——वह

आजकल वसन्तपुर में किरण के घर पर रहता है, यह तो तुम सभी को मालूम है। मैं सवेरे जब घूमने जाया करती थी तब कभी-कभी उससे भी मुलाक़ात कर लिया करती थी।

लीला के इस दुस्साहस का हाल सुनकर वीणा लज्जा के मारे लाल हो उठी। किरण के घर पर? जहाँ एक भी स्त्री का सम्पर्क नहीं है, वहीं केवल अरुण और किरण से मुलाक़ात करने के लिए लीला आया-जाया करती थी? छि: छि:, कैसी लज्जा और घृणा की बात है!

पहले तो मिसेज राय को बड़ा आश्चर्य हुआ, साथ ही उनके क्रोध का भी ठिकाना न रहा। वे मुँह से कुछ कह न सकीं, आँखें लाल-लाल करके लीला की ओर ताकती भर रहीं। क्या कह रही है यह लड़की? उनके घर पर उनकी कन्या के द्वारा ये सब लज्जा और कलंक के काम होने लगे हैं! यह बात यदि प्रकट हो जाय तो समाज में वे मुँह कैसे दिखलावेंगी?

पहली उत्तेजना के दो एक क्षण व्यतीत हो जाने पर वे वेग से उठकर बिस्तरे पर बैठ गईं। उन्होंने कहा—तू आज यह सब क्या बक रही है, मेरी तो समझ में ही कुछ नहीं आ रहा है। तुम—तुम अकेली ही किरण के घर पर अरुण से मिलने के लिए वसन्तपुर जाया करती थीं, यह बात भी किस तरह सम्भव हो सकती है, यह तो मेरे दिमाग़ में ही नहीं आता।

लीला ने कहा—असम्भव कैसे हो सकती है, यह मैं भी तो नहीं समझ पाती हूँ? तुम लोगों ने जब से यह सुना है तब से ऐसा भाव प्रकट कर रही हो, मानो कोई बहुत ही अद्भुत घटना हो गई है। तुम लोगों का ढंग देखकर अच्छे-भले आदमी का भी दिमाग़ ख़राब हो जाता है!

मिसेज राय ने कर्कश स्वर में कहा—ऐसा खोटा कर्म करके भी उसके सम्बन्ध में विवाद करने में तुम्हें लज्जा नहीं आती?

ऐसी अवारा और बेहया लड़की है यह ! समाज में इसने मेरा मुँह सदा के लिए नीचा कर दिया। किरण का घर, जहाँ केवल थोड़े-से पुरुष जमे रहते हैं ! वह तो एक तरह का अड्डा है ! भला वहाँ जाकर कभी कोई भले घर की लड़की खड़ी हो सकती है ? अपनी मान-प्रतिष्ठा का भी तो थोड़ा-सा ज्ञान नहीं है ? इसी लिए इधर कुछ दिनों से मैं जहाँ कहीं भी जाती हूँ, वहीं यह देखने में आता है, मानो स्त्रियाँ किसी बात पर कानाफूसी करके सबकी सब हँसती हैं। परन्तु मेरी ओर दृष्टि जाते ही एक दूसरे की ओर आँखों का इशारा करके वे सब चुप हो जाती हैं। मैं क्या जानती कि कौन-सी बात है।! मुझे यह तो मालूम था नहीं कि ये लोग मेरी ही गुणवती कन्या की कीर्ति की पताका उड़ा रही हैं। कैसी घृणा की बात है ! छिः छिः, मेरी तो यह बात मन में आते ही धरती में गड़ जाने की इच्छा होती है।

एक ही साँस में इतनी बातें कह कर मिसेज़ राय हाँफने लगीं। क्रोध और लज्जा की अधिकता के कारण उन्हें मूर्छा आ ही रही थी कि उन्होंने उतावली के साथ टेबिल पर से स्मेलिङ्ग सेन्ट की शीशी उठाई और उसे नाक के पास लगाकर जोर से खींचा। बाद को रूमाल से पसीने से भीगा हुआ मुँह और माथा पोंछ कर ज़रा-सा तबीअत को सम्भालने का प्रयत्न करने लगीं। एक पंखी लेकर वीणा मा को हवा करने लगी।

यह देखकर लीला बहुत ही खीझ रही थी। क्रोध की अधिकता से निस्तब्ध होकर वह मन-ही-मन उबल रही थी। क्षण भर के बाद उसकी ओर ताक कर मिसेज़ राय फिर कहने लगीं---देखती नहीं हो, इस घर में एक लड़की और भी तो है ! इसके विरुद्ध भी कभी कोई बात सुनने में आई है ? समाज में और भी दस लड़कियाँ हैं, परन्तु इतनी अधिक चंचल और उद्दण्ड लड़की तो मैंने कभी देखी ही नहीं ! मिसेज़ दत्त आज-कल कलकत्ते में हैं, इसी

लिए मेरे कानों तक तुम्हारी कीर्ति आज तक नहीं पहुँची थी। वे चार जगह आती-जाती हैं, इससे सब बातें उन्हें पहले ही मालूम हो जाती हैं। अब तो यह बात सारे शहर में फैल गई है और बच्चा-बच्चा इसके सम्बन्ध में चर्चा करने लगा है। मैं किसका मुँह दाब रक्खूँगी, जरा बताओ तो? मैं बहुत दिनों से यह बात जानती हूँ कि इस लड़की के ही कारण हमें किसी दिन घर-द्वार छोड़ने पड़ेंगे। अन्त में हुआ भी वही। वीणा, अपने बाप को बुला लाओ, मैं इसी समय उनसे यह सब कहती हूँ। इसका यदि वे कोई प्रबन्ध करते हैं तो अच्छा है, नहीं तो मैं आज ही यह घर छोड़ कर चली जाऊँगी। अपनी दुलारी लड़की को लेकर वे ही रहेंगे। अपने घर में मेरी एक भी बात नहीं चलती! घर में जैसे चार नौकर-नौकरानियाँ हैं, वैसे ही मैं भी पड़ी हूँ। परन्तु बाहर के लोग इस बात को क्या समझेंगे? उन सब के सामने तो इन करतूतों के लिए मुझे ही लज्जित होना पड़ेगा। लोगों की अपमानजनक बातें सुनकर भी मुझे मस्तक नीचा कर लेना पड़ेगा।

वीणा को मिस्टर राय के बुलाने के लिए जाने की जरूरत न पड़ी। पत्नी का पंचम स्वर और उनकी बकझक सुनकर वे स्वयं कमरे में आ गए। मिसेज़ राय के सामने लीला को उस तरह खड़ी देखकर मामले को समझने में उन्हें अधिक विलम्ब नहीं हुआ। उन्होंने कहा—इतनी बकझक किस लिए मची है? लीला बेटी, क्या तुमने आज फिर कोई उपद्रव खड़ा करा दिया है?

मिस्टर राय को मुस्करा कर बातें करते देखकर मिसेज़ राय की जलती हुई आग में घी की आहुति-सी पड़ी। उन्होंने कर्कश स्वर में कहा—अपनी लीला बेटी को लेकर तुम रहो, अपनी लड़की को लेकर मैं निकली जा रही हूँ। मेरे-जैसे नीच आदमी की तो यहाँ कोई जरूरत नहीं है। आये हैं यहाँ तमाशा करने! ऐसी बेअदबी मुझसे न सही जायगी। इसी तरह तो इसका दिमाग़ ही इतना चढ़ गया है।

मिसेज राय उठने का उपक्रम कर ही रही थीं कि उन्हें रोककर मिस्टर राय ने कहा——जाती कहाँ हो भाई ? पहले यह तो बतलाओ कि हुआ क्या है ?

मिसेज राय ने कहा——तुम्हारी शिष्ट और शान्त कन्या अरुण घोषाल के साथ विवाह करेगी, उनसे वादा कर आई है ! अब हम लोग तो इनके कोई हैं नहीं, इसी लिए आज तक हम लोगों से कुछ पूछने या बतलाने की जरूरत इन्होंने नहीं समझी। अरुण बसन्तपुर में किरण के घर पर रहता है। ये रोज वहीं घोड़ा दौड़ा कर उसके साथ अड्डा जमाने जाती थीं। तुम्हारी दृष्टि में तो इसमें कोई हानि है नहीं, परन्तु समाज के लोग भी तो इसी तरह उदार और विद्वान् नहीं हैं ! इसलिए इस सम्बन्ध में बड़ी चर्चा होने लगी है, यह चर्चा अभी और भी बढ़ेगी। तुम किसका-किसका मुँह बन्द करते फिरोगे ? जज की लड़की समझ कर कोई चुप तो रह न जायगा !

ये बातें सुनकर मिस्टर राय चकित दृष्टि से लीला का मुँह ताकने लगे। यह क्या बात है ! उन्हें विश्वास था कि मेरी दुलारी लीला के हृदय में जितना भी स्नेह और माया-ममता है, वह एक-मात्र किरण को ही अपना आधार बनाकर ब९ रहा है।

"यह बात क्या सच है लीला ?"——मिस्टर राय ने बहुत ही गम्भीरभाव से लीला की ओर दृष्टि फेर कर पूछा।

लीला ने केवल इतना ही उत्तर दिया——मा सच्ची ही बात कह रही हैं।

"अच्छी बात है। तुम मेरे साथ लाइब्रेरीवाले कमरे में चलो। वहीं सब बातें होंगी।"

× × ×

पिता-पुत्री लाइब्रेरी के कमरे में आकर बैठे। मिस्टर राय ने दरवाजा बन्द कर दिया। तब उन्होंने कहा कि इस सम्बन्ध

की आदि से अन्त तक की सारी बातें मुझे विस्तारपूर्वक बतलाओ। यह मामला मेरी समझ में नहीं आ रहा है।

इतनी देर में लीला कुछ शान्त हो गई थी। अतएव वह एक-एक करके सारी बातें कह चली। जिस समय उसने कहा कि अरुण का भ्रम न दूर करके मैं वीणा के ही रूप में उससे बातें करने लगी उस समय मिस्टर राय उत्तेजित होकर बोल उठे--यही तुमने बहुत बड़ी भूल की है लीला! यह काम किसी तरह भी तुम्हारे अनुकूल नहीं हुआ। खैर, तब क्या हुआ?

लीला ने अपनी कथा फिर आरम्भ की। उसके चुप होने पर मिस्टर राय ने कहा--अच्छी बात है, जिसका अन्त अच्छा हो, वह अच्छा ही है। परन्तु इसके लिए तुम्हारे मन में कभी विरक्ति और खिन्नता तो न उत्पन्न होगी? यह तुमने ख़ूब अच्छी तरह से सोच लिया है न?

लीला ने कहा--मैं तो कह ही चुकी हूँ कि वह अन्धा और असहाय है, इसीलिए उसे त्यागना मेरे लिए असम्भव-सा मालूम पड़ रहा है। इसके लिए मुझे कोई दुःख न होगा।

मिस्टर राय ने कहा--अच्छी बात है। तुम यदि इतनी दृढ़ हो तो इसमें हम लोगों को आपत्ति करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हारी मा को समझा कर मैं शान्त कर दूँगा। परन्तु तुम अब वहाँ इस तरह मत आया-जाया करो। समाज में लोगों को निन्दा करने का अवसर देना और मा के हृदय को दुखी करना क्या कोई अच्छी बात है? तुम्हें अब इन सब बातों को ख़ूब सोच-विचार कर काम करना चाहिए।

लीला ने कहा--बाबू, तुम जानते नहीं हो कि वहाँ जाने में यदि दो-एक दिन की देरी हो जाती है तो वह कितना व्याकुल हो उठता है, इसी लिए--

बात काट कर मिस्टर राय ने कहा--कोई चिन्ता मत करो, मैं सारा प्रबन्ध कर दूँगा।

उसी दिन साँझ को मिस्टर राय वसन्तपुर गये और अरुण को बड़े आदर से लाकर अपने घर में रक्खा। उसके बाद किरण को पटना-नगर में फिर कोई भी नहीं देख पाया।

( ३५ )

गम्भीर रात्रि थी। चारों ओर अन्धकार का ही साम्राज्य था। मिस्टर घोष के बँगले से थोड़ी दूर पर आम का एक बग़ीचा था। निर्मला अँधेरे में ही अपने कमरे में बैठी हुई खिड़की की राह से उस बग़ीचे की ओर टकटकी लगाए ताक रही थी। चारों ओर का प्रगाढ़ अन्धकार मानो पुंजीभूत होकर उस बग़ीचे पर ही जम गया था और वहीं उसने डेरा डाल दिया था। बीच-बीच में उसी घोर अन्धकार के मस्तक पर सैकड़ों जुगुनुओं का प्रकाश चमचमा उठता था। आकाश पर उस दिन चन्द्रमा नहीं थे। केवल थोड़े-से तारे बहुत दूरी से अलसाए हुए और स्तम्भित नेत्रों से इस रहस्यमय धरित्री की ओर ताक रहे थे। उन सबकी दृष्टि कौतूहलपूर्ण थी।

निर्मला की आँखों में उस दिन किसी तरह भी नींद नहीं आ रही थी। बड़ी देर तक वह सोने का असफल प्रयत्न करती रही। अन्त में ऊब कर खिड़की के पास आकर बैठ गई। चिन्ता और घबराहट के मारे इधर कुछ दिनों से उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति उत्तरोत्तर क्षीण होती जा रही थी।

भूख और थकावट के मारे शिथिल होकर जब असित निर्मला के यहाँ आया था और उसके पिता का नाम सुनते ही उसका घर त्याग कर वह वैसे का वैसा ही चला गया, तब से निर्मला ने कुछ दिन निष्पन्द और जड़प्राय होकर ही काट दिए थे। उसकी बुद्धि, कल्पना और विचारशीलता प्रायः मूर्छित और स्तब्ध हो गई थी। कुछ दिनों तक वह कोई भी बात अच्छी तरह सोच या समझ नहीं सकी

थी। कोई बात पूछने पर वह चुपचाप प्रश्नकर्त्ता का मुँह भर ताकने लगती थी। मिस्टर घोष अपनी चिन्ता में ही व्यग्र थे और बुआ जी को घर-गृहस्थी के झंझट से साँस लेने को फुर्सत नहीं मिलती थी, अतएव निर्मला की इस परिवर्त्तित अवस्था को कोई विशेष रूप से समझ न सका।

अचानक इतना कड़ा आघात लगने के कारण उसके शरीर की स्नायुमंडली कुछ दिनों तक इसी तरह अवसादग्रस्त और मूर्च्छित रही। बाद को धीरे-धीरे फिर उसमें क्रियाशीलता आने लगी। निर्मला जिस दिन उस दिन की घटना का स्पष्ट रूप से स्मरण कर सकी, उस दिन उसे ऐसा जान पड़ा, मानो संसार में उसके लिए सभी कुछ सूना है। यहाँ वह अब किसी की नहीं है, उसका भी कहीं कोई नहीं है। उसके चारों ओर के सारे बन्धन मानो एक क्षण में ही सब ओर से टूट गए हैं। उसके लिए वर्त्तमान निर्जीव है, भविष्यत् अन्धकारमय और शुष्क है, आशा, आकांक्षा सभी लुप्त है। इस असीम शून्यता के बीच में अपने जीवन के निरर्थक भार को घसीट-घसीट कर वह क्यों भटक रही है, यह बात वह स्वयं भी किसी तरह न समझ सकी।

असित की याद आने पर अत्यधिक वेदना के कारण निर्मला व्याकुल हो गई और हृदय को फाड़-फाड़ कर वह रोने लगी। अब यह बात उसकी समझ में अच्छी तरह आ गई कि चाहे किसी भी कारण से हो, असित के साथ उसके पिता की मर्मान्तिक शत्रुता है। इसी कारण वह उसके घर पर कभी नहीं आया, भविष्य में भी कभी न आवेगा। अनजान में संयोगवश वह एक दिन आ पड़ा था, और परिचय पाते ही घृणा के मारे उसे और उसका आतिथ्य त्याग कर उसी दम चला गया। यहाँ तक निर्मला अच्छी तरह समझ गई। परन्तु असित जो भोजन किये विना ही चला गया, इस साधारण-सी घटना के ही कारण उसका जीवन इस तरह

शुष्क क्यों हो उठा है, यह बात अब भी वह स्पष्टरूप से नहीं समझ सकी। यदि उसका अनुमान सत्य होगा, यदि सचमुच असित के साथ उसके पिता की किसी प्रकार की शत्रुता होगी तो उसके साथ वह कभी किसी तरह भी सम्बन्ध नहीं रक्खेगा, यह दृढ़ निश्चय है। परन्तु वह यदि उसके यहाँ नहीं ही आवेगा या उससे किसी तरह का सम्बन्ध ही नहीं रक्खेगा तो इससे उसे क्या हानि-लाभ है? वह उसका कौन है? घटनाचक्र से एक बार दो घंटे के लिए असित के साथ निर्मला की मुलाक़ात हुई थी, केवल इतना ही उससे उसका परिचय था। इतने ही परिचय से निर्मला के जीवन में उसने इतना स्थान किस तरह कर लिया? वह रहे या जाय, निर्मला को इस सम्बन्ध में सोच-विचार करने की कौन-सी बात थी?

असित की चिन्ता अपने हृदय से निर्मूल कर देने के लिए निर्मला इन सब बातों को हृदयङ्गम करने का प्रयत्न किया करती। परन्तु उसके असित को भूलने की इच्छा करने पर भी उसकी अन्तरात्मा इन सब युक्तियों की दोहाई नहीं मानना चाहती थी। उसे जैसे ही इस बात की याद आती कि असित से फिर कभी मुलाक़ात न होगी, उसके अन्तस्तल को ठेल कर एक नीरव हाहाकार निकलता और उसे व्याकुल कर देता। उसके नेत्रों की जल-धारा बाँध तोड़ कर प्रबल वेग से बहने लगती। उसे ऐसा जान पड़ता, मानो उसके इस जीवन में अभिलाषा के योग्य जो एक-मात्र वस्तु थी —संसार में जो उसे सबसे अधिक प्रिय थी, उससे मानो किसी ने सदा के लिए उसे पृथक् कर दिया है। उसकी जो वस्तु खो गई है, उसे वह अब और कभी न पा सकेगी।

असित के साथ पहले-पहल जिस दिन निर्मला की मुलाक़ात हुई थी, उस दिन की आदि से अन्त तक की सारी घटनाओं पर कभी-कभी वह उलट-पुलट कर विचार किया करती थी। उसने यह दृढ़ रूप से समझ लिया था कि असित या मिस्टर

घोष कोई भी परस्पर एक-दूसरे के पूर्व-परिचित नहीं थे। उन दोनों ही व्यक्तियों ने पहले-पहल बहुत ही प्रसन्नभाव से बात-चीत की थी। अन्त में जब वह गाड़ी में बैठ चुकी थी तब भी मिस्टर घोष हँस-हँस कर अपना नाम और पता बतलाते ए असित से अपने घर पर आने का अनुरोध कर रहे थे, यह भी उसने सुना था। बाद को ज़रा-सा अन्यमनस्क होकर वह दूसरी ओर ताकने लगी थी, अतएव अन्त की और कोई भी बात उसे नहीं याद पड़ती थी। परन्तु बार-बार एक ही विषय को गम्भीर भाव से सोचते-सोचते उसने यह बात भी खब अच्छी तरह समझ ली थी कि वहाँ से लौटते ही मिस्टर घोष का भाव बदल गया है। उसके बाद फिर कभी उन्होंने असित या परेश का नाम नहीं लिया। निर्मला ने दो-एक बार उन लोगों की याद दिलाने की कोशिश भी की थी, किन्तु मिस्टर घोष ने उसे रोक दिया था। उसके बाद से ही उनका सदा शंकित भाव से रहना, हर समय अपने कमरे में अकेले ही बैठा रहना, निद्रावस्था में ही भयभीत हो जाना, रात में उठ कर अचेत भाव से इधर-उधर घमना, ये सब रोग के लक्षण प्रकट होने लगे थे। इससे निर्मला ने समझ लिया था कि पिताजी से असित का कोई बहुत बड़ा अपकार अवश्य हुआ है। उस दिन उन्होंने जब अपना परिचय दिया था, तभी वे दोनों परस्पर एक दूसरे को पहचान पाए हे। परन्तु दो-एक बातें ठीक तौर से निर्मला की समझ में नहीं आती थीं। वह सोचती कि पिताजी रात मे जब अपने आप बड़बड़ाने लगते हे तब रामगोविन्द का नाम लिया करते हैं। तो ये रामगोविन्द कौन है? निर्मला मन ही मन इन सब विषयों की आलोचना करके बहुत-सी बातों को मिला पाती और बहुत-सी बातें उसे अप्रकट रहस्य की भांति छाया से ढकी हुई-सी जान पड़ती।

कभी-कभी निर्मला के मन में यह बात आती कि जो व्यक्ति

उसके पिता का मर्मान्तिक शत्रु है, जिसके कारण उसके वृद्ध पिता आतंक और उद्वेग के कारण सारी सुख-शान्ति खोकर जीवित अवस्था में भी मृत के ही समान अपने दिन काट रहे हैं, वह कौन-सा मुँह लेकर उनके उसी प्रबल शत्रु का रात-दिन ध्यान किया करती है? मिस्टर घोष का तन्द्रा से अभिभूत मृतवत् मुख याद आकर लज्जा और धिक्कार से उसे ज़मीन में गड़ा देना चाहता था। उस समय निर्मला असित को भूलने के लिए अपने हृदय में असित के प्रति विरुद्ध भाव लाने के लिए अपनी अन्तरात्मा के साथ प्राणपण से युद्ध करके अपने को क्लान्त और क्षत-विक्षत कर डालती। किन्तु यह सारा प्रयत्न व्यर्थ होता। वह किसके लिए रोवे? किसकी चिन्ता करे? उत्पीड़क और उत्पीड़ित दोनों के लिए ही उसका हृदय वेदना और दुख से उच्छ्वसित हो उठता है। किसे छोड़ कर वह किसकी चिन्ता करे? निर्मला को किसी दिशा में कोई भी उपाय न सूझ पड़ा। दिन पर दिन इस अनिश्चित अवस्था तथा मानसिक चिन्ता में पड़े रहने के कारण उसके जीवन में एक उदास भाव आ गया, जिसने उसे बिलकुल ही मुह्यमान कर दिया। संसार की कोई भी चिन्ता, कोई भी विषय अब उसके चित्त में सुख-दुख की तरंग नहीं उत्पन्न कर सकता था। उसकी उदास दृष्टि के सामने घर में सब लोगों का चलना-फिरना, काम-काज, बात-चीत और हँसी-ठट्ठा आदि सिनेमे की तस्वीरों का नाच-सा मालूम पड़ता था। एक दल आता, दूसरा दल लौट जाता, निर्मला लक्ष्यहीन दृष्टि से देखती रहती। रसोई के सम्बन्ध में मिसिर महराज के साथ बुआजी का झगड़ा कभी-कभी पहले की ही तरह बहुत उग्ररूप धारण कर लेता। बुआजी के भाषा-सम्बन्धी अपार ज्ञान की बदौलत बिहारी बाज़ार के सिहाव या और किसी काम-काज में पहले की ही तरह कुछ-न-कुछ गड़बड़ करके बीच-बीच में लोगों के समक्ष अपना गँवारूपन प्रमाणित कर दिया करता।

परन्तु ये सब बातें और किसी दिन उसके हृदय में जरा भी कौतुक-स्पृहा नहीं जाग्रत कर सकी थीं।

रात के अँधेरे में अकेली ही बैठी-बैठी निर्मला असित की बातें अपने मन में सोच रही थी। असित अब किसी दिन भी उसके यहाँ नहीं आवेगा, उसके साथ किसी तरह का भी सम्बन्ध नहीं रक्खेगा, यह बात उसके उस दिन के व्यवहार से निर्मला अच्छी तरह समझ गई थी। तो भी मनुष्य जीते जी एक-दम आशा नहीं त्याग सकता। निर्मला के अन्तःकरण में किसी अत्यन्त एकान्त प्रदेश के एक कोने में एक बहुत ही क्षीण आशा की रेखा भी बीच-बीच में उदित हो आती, शायद वह फिर किसी दिन आ जाय। वह क्यों आवेगा—या किसके लिए आवेगा, यह सब वह कुछ भी नहीं सोचती थी। इस सम्बन्ध में उसे कुछ मालूम भी नहीं था। फिर भी न जानें क्यों निर्मला को विश्वास था कि असित यहाँ आये बिना नहीं रह सकता और सारी चिन्ताओं का अन्त करके केवल असित की ही चिन्ता क्रमशः उसके ध्यान का एकमात्र विषय बन बैठी। निर्मला रह-रहकर यही सोचा करती थी कि असित उसे किस भाव से देखता है। पहले-पहल उसने उसे एक प्रतिष्ठित कुल की महिला के ही रूप में देखा था और उसी तरह का शिष्ट व्यवहार भी उसने किया था। उसने कितने प्रेम से, कितनी सावधानी के साथ उसके चोटीले और खून से भीगे हुए हाथ की सेवा की थी। उसके यन्त्रणा के क्लेश से कातर मुँह की ओर कितनी कोमल सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से ताकता हुआ वह बैठा था—यह सब निर्मला के हृदय पर उस समय भी उज्ज्वल अक्षरों में लिखा था। निर्मला को अपने हाथ पर असित के उस मृदु, कोमल स्पर्श की जब याद आती तब उस समय भी उसका स्पन्दहीन और निस्तब्ध चित्त चंचल हो जाता और एक पुलक का कम्पन बिजली की रेखा की तरह दौड़ जाता। परन्तु उसके बाद ? जिस समय उसके मन में यह बात आई कि यह

उसके परम शत्रु की कन्या है, उस समय से व्यवहार भी बदल गया। उसने उसके हाथ में लाई हुई सेवा की सामग्रियों का स्पर्श न करके उन्हें त्याग दिया। उसके कातर अनुरोध की ओर ध्यान न देकर अवज्ञापूर्वक उसका घर त्याग कर चला गया। अब शायद वह अवश्य ही निर्मला से घृणा करता होगा।

इस चिन्ता से निर्मला की अन्तरात्मा पर बड़ा आघात पहुँचा। इधर कई मास से एकाग्र मन से जिसका वह अपने सर्वस्व के रूप में ध्यान करती आई है, उसके बदले में केवल उसकी घृणा का ही पात्र बन कर जीवन का दुर्वह भार वहन करना पड़ेगा? उसके भाग्य में ऐसी अनहोनी किसके दोष से आ पड़ी? इन सब बातों पर विचार करते-करते उसके नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। वह सोचने लगी——इस संसार में उसी की जैसी और भी कितनी नवयुवतियाँ हैं, वे सब अपने प्रेम-पात्रों को पाकर निश्चिन्त भाव से गृहस्थी का सुख भोग रही हैं। उनके जीवन में कहीं किसी प्रकार की बाधा नहीं है, कोई भी विपत्ति उनके जीवन को अशान्त नहीं कर सकती। तब उसी के लिए उसकी वामगति क्यों है? उसके इतने दिन के सरल और स्वच्छन्द जीवन में जो यह जटिलता आ पड़ी है, उसका अन्तिम परिणाम कब, कैसा और क्या होगा, यह कौन कह सकता है?

मस्तक पर से न जाने कौन-सी एक चिड़िया पर फड़फड़ाती हुई चली गई। उस फड़फड़ाहट से चौंक कर निर्मला ने जैसे ही आँख खोली, उसे एकाएक एक बात याद आ गई, जिसके कारण उसकी पहले की चिन्ता जहाँ की तहाँ हो गई।

अतिथि के सम्बन्ध में किसी प्रकार की जानकारी के बिना ही उसकी आवभगत के लिए निर्मला जब बिहारी के साथ आई थी—तब उसे अचानक वहाँ देखकर असित के मुखमंडल पर जिस हर्ष और बिस्मय की रेखा उदित हुई थी, निर्मला उस समय उसी के सम्बन्ध

में विचार करने लगी। उसने सोचा कि जो सचमुच उससे घृणा करता है, क्या वह उसे देखकर कभी इस तरह प्रसन्न हो सकता है? इसके अतिरिक्त वह उसे घृणा ही क्यों करेगा? यह तो उसे भली भाँति मालूम ही है कि निर्मला ने किसी प्रकार का अपराध नहीं किया है! इन बातों को सोच कर उसने किसी प्रकार अपनी अन्तरात्मा में शान्ति का अनुभव किया और वह स्वयं ही अपने आपको सान्त्वना देने का प्रयत्न करने लगी।

उसी समय बरामदे में खट्-खट् की आवाज़ हुई। निर्मला ने ताक कर देखा—मिस्टर घोष उन्मत्त भाषा में बड़बड़ाते हुए अर्द्ध सुप्तावस्था में ही अपने कमरे से निकल कर खड़े थे। उनके हाथ में एक मुड़ा हुआ काग़ज़ था। निर्मला अपनी चिन्ता भूल कर बहुत ही सावधानी के साथ उठ कर उनके पास गई।

( ३६ )

अरुण मिस्टर राय के यहाँ अतिथि-रूप से आकर बहुत ही सुखी हुआ। उसकी सारी चिन्ताएँ जाती रहीं। अब उसे लीला से बहुत दूर रह कर उसके आगमन की प्रतीक्षा में राह देख-देखकर दिन काटने की जरूरत नहीं रह गई। अब वह प्रायः लीला को अपने साथ ही पाया करता। मिस्टर राय सचमुच उसे बहुत चाहते थे। मिसेज़ राय और बीणा ने अरुण के प्रति जो व्यवहार किया था, उसे याद करके वे कुछ कुंठित अवश्य होती थीं, किन्तु उसकी मधुर प्रकृति के कारण वे लोग भी अब उसे दूर नहीं रख सकती थीं। मिस्टर राय के बहुत प्रयत्न करने पर लीला के ऊपर से मिसेज राय का असन्तोष धीरे-धीरे जाता रहा और उन्होंने भी अरुण के साथ उसके विवाह की सम्मति दे दी। समाज में अब सभी लोगों को मालूम हो गया कि लेफ्टिनेंट घोषाल के साथ मिस्टर राय की द्वितीय कन्या का विवाह निश्चित हो गया है।

लीला अपने समस्त दिन के निर्दिष्ट काम-काज के बीच में भी अरुण के साथ-साथ फिरा करती थी। साँझ को किसी-किसी दिन वह अपनी मा और वीणा के साथ क्लब में जाती या घर पर रह कर अरुण को लिखने में सहायता दिया करती। चित्त प्रसन्न होने के कारण अरुण की पुस्तक बड़ी शीघ्रता से समाप्त होती जा रही थी। इधर दो ही एक सप्ताह में उसके शरीर और मन की इतनी उन्नति हुई कि कभी-कभी तो उसे यहाँ तक आशा होती कि उसकी दृष्टि-शक्ति फिर लौट आवेगी। उसके सुन्दर और मनोहर रूप की छटा, उज्ज्वल और गौरवर्ण की दीप्ति मानो दिन-दिन निखरती आ रही थी। अरुण के इस परिवर्त्तन से लीला को अत्यधिक सन्तोष हुआ था, तो भी उसका हृदय शान्त नहीं था। समस्त दिन सब लोगों के साथ तरह-तरह के काम-काज में संलग्न रह कर वह अपनी अन्तरात्मा की ज्वाला बुझाने का प्रयत्न किया करती, परन्तु जब दिन के साथ-ही-साथ सारे काम-काज का भी अवसान हो जाता, जब रजनी के नीरव अन्धकार में घर के सभी लोग अपने-अपने कमरे में गम्भीर निद्रा से अचेत हो जाते, तब लीला अपने एकान्त कमरे में बैठ कर आँसुओं की झड़ी लगा देती।

गम्भीर मनोवेदना और अभिमान के कारण जो मनुष्य मर्माहत हृदय से देश-त्याग कर इस विपुल धरित्री के किसी एकान्त कोने में अपने को छिपाये हुए है, क्या वह फिर किसी दिन लौट कर लीला के पास आवेगा ? लीला के सारे अन्तःकरण मानो उसी के लिए आकुलतापूर्ण आग्रह से सदा उन्मुख रहा करते थे। किरण की वह प्रशान्त दृष्टि—जो दृष्टि लीला की दृष्टि में मिलते ही उसे यह हृदयङ्गम करा देती थी कि वह उसी की प्रतीक्षा में बैठा है—उस नीरव दृष्टि का मर्म रह-रह कर लीला की अन्तरात्मा में साफ़ और चटकीले फ़ोटो के समान उदित हो आया करता। उसकी एक-एक दिन की एक-एक बात—"मुझे कुछ कहना नहीं

है लीला, जीवन-मरण में मैं केवल तुम्हारा ही हूँ, यह बात तुम्हें सूचित करके ही मैं निश्चिन्त हो गया। तुम्हें पाऊँ या न पाऊँ, मैं तुम्हारा ही हूँ।" लीला के अन्तःकरण में यही सब बातें उलट-पलट कर सैकड़ों बार तरह-तरह से उदित होकर उसे आकुल कर दिया करतीं। हाय, मुहूर्त्त भर की दुर्बलता के कारण वह यह क्या कर बैठी? अपनी बुद्धि के ही दोष से अपने प्रियतम को इस तरह की वेदना और दुःख देकर उसने किस अगाध सागर में उसे फेंक दिया? किरण की स्मृति ने उसके समस्त शरीर और आत्मा को आच्छन्न किया है, आज वह किस तरह किस शक्ति से उस स्मृति का मूलोच्छेद करके उसे भूलने का प्रयत्न करेगी!

× × ×

कुमार गुणेन्द्रभूषण उस दिन से फिर कभी मिस्टर राय के यहाँ नहीं गये। उन्होंने क्लब में जाना भी बन्द कर दिया। तब से वीणा भी अपना अधिकांश समय घर पर रहकर प्रायः अपने कमरे में ही व्यतीत किया करती थी। किसी विशेष आवश्यकता के बिना वह लीला से बात-चीत नहीं करती थी। दिन ढलते समय एक बार वह मा के साथ क्लब में आती, सो भी बहुत ही गम्भीर और निर्लिप्त-भाव से। इतने पर भी लीला कुछ दिनों तक उसके ऊपर बहुत ही तीव्र दृष्टि रक्खे थी, जिससे वह कुमार से पत्र-व्यवहार या भेंट-मुलाक़ात न कर सके। धीरे-धीरे उसे भी विश्वास हो गया कि अब झंझट दूर हो गया।

एक सप्ताह के बाद साँझ को मिसेज़ राय ने क्लब में लीला को बुलाकर कहा कि अब घर चलने का समय हो गया है, मालूम नहीं, वीणा किधर चली गई है। उसे ज़रा पुकार तो लाओ।

यह बात सुनते ही लीला के हृदय में सन्देह का आविर्भाव हुआ। उसने सोचा कि अभी ज़रा ही देर पहले वीणा को उसने 'हाल' में देखा था। इतनी ही देर में अब वह कहाँ अलक्षित हो गई?

माँ से कुछ भी न कह कर बड़ी उतावली के साथ वह सारे कमरों और बरामदों के कोने-कोने में घूम आई, पर कहीं भी वीणा का पता न चला। तब बहुत ही उद्विग्न भाव से बरामदे में खड़ी होकर वह ध्यान से ताकने लगी। उस समय तक प्रायः सभी चले गये थे, वहाँ कोई भी नहीं था, केवल उसकी माँ 'हाल' में बैठी दो-एक अधेड़ स्त्रियों के साथ बातचीत कर रही थी। एकाएक लीला के मन में यह बात आई कि वीणा कहीं बग़ीचे की ओर तो नहीं चली गई है? यह बात मन में आते ही वह बग़ीचे की ओर दौड़ी। बग़ीचा बहुत बड़ा था अतएव उसके हर एक स्थान पर खोजते-खोजते वह क्लान्त हो गई। उसे इस तरह घूमती देख कर एक खानसामा आया और उसने उसकी परेशानी का कारण पूछा। लीला ने उससे पूछा---क्या तुम ने कहीं वीणा को देखा है?

ख़ानसामा ने कहा---वे बग़ीचे में तो नहीं आईं। साँझ होने से पहले एक बार मैंने उन्हें छत पर देखा था।

ख़ानसामा की बात सुनकर लीला के चित्त को थोड़ा-सा आश्वासन मिला। उतावली के साथ वह छत पर गई। छत बहुत बड़ी थी। सन्ध्या के अन्धकार में वह सारी की सारी एक स्थान पर से अच्छी तरह नहीं दिखाई पड़ रही थी। थोड़ी देर तक तो लीला असफल ही घूमती रही। अन्त में उसे छत के अन्तिम भाग की ओर कोने में कोई बैठा हुआ-सा मालूम पड़ा।

लीला तुरन्त ही उस ओर वेग से चली। वहाँ पहुँचते ही उसे ऐसा दृश्य दिखाई पड़ा कि वह दंग रह गई। उसका अनुमान बिलकुल ठीक निकला। एक बेंच पर कुमार गुणेन्द्रभूषण बैठे थे, और उनके कन्धे पर मस्तक रक्खे वीणा रो रही थी।

खण्ड चन्द्रमा की किरणों का उजाला आ-आकर उन दोनों के मुँह पर पड़ रहा था। लीला की छाया पड़ते ही दोनों ने चौंक कर

अपना-अपना मुँह फेर लिया। जैसे ही उन दोनों ने लीला को देखा, वैसे ही वे दोनों बहुत व्यग्र भाव से उठकर खड़े हो गये।

यह दृश्य देखकर लीला क्रोध से अचेत हो गई। कितनी घृणा और लज्जा की यह बात थी? उसकी एक कोख की बहन और उसका ऐसा काम! कुछ क्षण तक मुँह से वह कोई भी बात न निकाल सकी। केवल लाल-लाल आँखों से दोनों की ओर ताकती रह गई।

वैसी अवस्था में उस पर लीला की दृष्टि पड़ जाने के कारण वीणा डर के मारे सूख गई थी, उसका सारा शरीर थरथर काँप रहा था।

विद्यार्थी जब कोई बहुत बड़ा अपराध कर डालता है और अध्यापक उसका पता लगा लेता है तब दण्ड पाने के भय से उसके सामने वह जिस भाव से खड़ा होता है, ठीक उसी भाव से लीला के सामने कुमार भी खड़े थे। बहुत ही संकुचित और भयभीत होकर सीने पर दोनों हाथ बाँधे हुए खड़े होकर वे इधर-उधर ताक रहे थे।

थोड़ी देर के बाद अपने को बहुत कुछ सँभाल कर लीला ने वीणा से कहा—तुम नीचे जाओ। मा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं। मैं इस आदमी से जरा बातचीत कर लूँ, तब आती हूँ।

बहुत ही भयभीत होकर कातर-स्वर में वीणा ने कहा—मैं अभी मा के पास जा रही हूँ, किन्तु लीला, सच कहती हूँ, इसमें उनका कोई अपराध नहीं है। उनसे तुम कुछ कहना मत। आज एक बात कहने के लिए मैं ही आग्रह-पूर्वक उन्हें यहाँ बुला लाई थी।

क्रोध के मारे तड़पकर लीला ने कहा—मैं तुमसे कह रही हूँ न कि अभी नीचे जाओ! तुम्हारी करतूत देखकर मैं अवाक् हो गई हूँ। तिस पर भी बहस करने में लज्जा नहीं आती? जाओ,

नीचे उतर जाओ। एक मिनट की भी देरी मत करो। अभी जाओ।

लीला की आँखों से आग निकल रही थी। वीणा ने और कुछ भी कहने का साहस न करके नेत्रों में आँसू भर कर करुण-दृष्टि से एक बार दोनों की ओर ताका और शीघ्र ही नीचे उतर गई।

वीणा जब चली गई तब लीला ने खूब अकड़ कर कुमार के सामने खड़ी हुई और अपनी ज्वलन्त दृष्टि कुमार के मुँह पर स्थिर रखकर बहुत ही उद्धत स्वर में कहा——ऐसे एकान्त स्थान में वीणा से मुलाक़ात करने का अधिकार आपको किसने दिया है? उस दिन बार-बार ताकीद करने पर भी आपने किस साहस से मेरी बात की उपेक्षा कर दी?

लीला के मुँह की ओर एक बार ताक कर ही कुमार ने अपनी शंका-पूर्ण दृष्टि लौटा ली। उन्होंने बहुत ही नम्र स्वर से कहा——इसके लिए मुझे अपराधी न ठहराइए मिस राय। आपकी बहन की अनुपम सुन्दरता तथा उसका लावण्य ही इसका मुख्य कारण है। मैंने भी तो उस दिन आपसे कह दिया था कि मैं इतनी आसानी से वीणा की आशा नहीं त्याग सकता।

''बेअदब, गँवार कहीं के! भले आदमी की तरह बात-चीत करने तक का भी जिसे ढंग नहीं मालूम है उसकी आशा और स्पर्धा सर्वथा अक्षम्य है। इस तरह के आदमी के साथ भले आदमी का-सा व्यवहार करके मैंने ही अनुचित किया है। खैर, मैंने जो वादा किया था, आज की इस घटना के बाद उसे पूरा करते रहने की जरूरत नहीं रह गई। तुम्हारे-जैसे कुत्ते को दुरुस्त करने के लिए जिस तरह का व्यवहार करना चाहिए, अब उसी तरह का व्यवहार किया जायगा।

लीला के नीचे उतरने के लिए मुँह फेरते ही कुमार ने कहा——

परन्तु आप यह बड़ा अन्याय कर रही हैं। यद्यपि आप-जैसी सुन्दरी की गालियाँ सुनना भी मैं अपने लिए सौभाग्य की ही बात मानता हूँ, तो भी बाध्य होकर यह कहना ही पड़ रहा है कि आपकी बातें क्रमशः बहुत ही कड़ी होती जा रही हैं। इसमें मेरा क्या अपराध है ?

क्रोध और उत्तेजना की अधिकता से लीला की मूर्त्ति क्रमशः भयंकर होती जा रही थी। एक बार अग्निमय दृष्टि से चारों ओर ताक कर उसने देखा। उस समय लीला की पहुँच में मारने लायक़ यदि कोई वस्तु होती तो उससे वह कुमार को ज़रूर मार बैठती। परन्तु ऐसी कोई भी चीज न पाकर उसने कहा—केवल बातों का तुम पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? हाथ में यदि चाबुक होता तो समझा देती कि क्या अपराध था ?

कुछ देर तक प्रशंसापूर्ण दृष्टि से लीला के लाल-लाल मुँह की ओर ताक कर कुमार ने कहा—वाह, मानो यह एकदम आग से भरा है ! मैं आपका कितना बड़ा मुग्ध भक्त हूँ, इसे आप समझती ही नहीं ! इससे मुझे इतना दुःख होता है !

और कोई भी बात न कह कर लीला बड़ी तेज़ी के साथ सीढ़ी से उतरने लगी। उसे देरी करते देखकर शायद मिसेज़ राय घबरा उठी होंगी।

लीला के पीछे ही पीछे कुमार भी उतरने लगे, साथ ही वे कहने लगे—इतनी घबराहट किस बात की है ? धीरे-धीरे क्यों नहीं उतरतीं ? क्या मैं इतना अशिष्ट हूँ कि मेरे पास ज़रा-सा खड़ी रहने में भी आपकी हानि होगी ? आप मुझ पर इतना रुष्ट ही क्यों हैं ? यह भी तो कुछ समझ में नहीं आता !

कुमार की बातों पर ध्यान न देकर लीला चुपचाप नीचे उतरती जा रही थी। वे दोनों जब सबसे नीचे की सीढ़ी पर पहुँच गये तब कुमार ने कहा—मिस राय, ज़रा-सा ठहर जाइए, इतना घबरा क्यों रही हैं ? मैं सच कह रहा हूँ, मुझे आपसे कुछ निवेदन करना है।

लीला ने उत्तर दिया—इस सम्बन्ध में मैं और कोई भी बात नहीं सुनना चाहती। मुझे आपसे अब कुछ कहना भी नहीं है। अब तो जो कुछ करना उचित है, उसी का प्रबन्ध किया जायगा।

कुमार ने कहा—मैं फिर कह रहा हूँ, क्षण भर ठहर कर मेरी बात सुन लीजिए। सम्भव है कि आप कल सब लोगों के सामने मेरे सारे कलङ्क की बात प्रकट कर दें। शायद मिस्टर राय मुझे अपमानित करके मुझे निकाल दें। परन्तु इससे क्या आपकी बहन की प्रतिष्ठा बची रहेगी? यह बात निश्चय है कि उस समय मैं चुप न रह सकूँगा, विशेषतः आज की घटना के बाद। आपने स्वयं देखा है कि मेरे साथ वे कितनी घनिष्ठता से मिलती हैं। इसके अतिरिक्त मैं जो कुछ काम करता हूँ, उसके लिए सारा तिकड़म पहले से ही सोच रखता हूँ, यह मेरा स्वभाव है। आज जिस समय से छत पर आया हूँ, उस समय दो खान-सामों को बुलाकर लेमनेड और बर्फ़ पियी है। इस एकान्त छत पर आकर वे लोग हम दोनों को पिला गये हैं, और बहुत-सा इनाम भी ले गये हैं। आवश्यकता पड़ने पर वे सारी बातें सबके सामने कह सकेंगे। अब जरा सोचकर देखिए कि आप मेरे साथ यह झगड़ा जारी रक्खेंगी या किसी शर्त पर इसको तय करेंगी।

कुमार की बात सुनकर लीला ठमक कर खड़ी हो गई। दाँत पीसते हुए निष्फल आक्रोश से अस्फुट स्वर में उसने कहा—कायर, शैतान! बाद को वहीं खड़ी होकर वह सोचने लगी कि अब हमें क्या करना चाहिए।

लीला को उस अवस्था में देखकर व्यङ्गच की हँसी हँसते हुए उसने कहा—अहा, इतनी देर के बाद अब दिमाग़ कुछ ठंडा हुआ है! तो मुझे जो कुछ कहना है उसे अब कह डालूँ। देखिए, आप प्रयत्न करने पर प्रकटरूप से मुझे यहाँ से खदेड़ सकती हैं, यह मैं स्वीकार करता हूँ, परन्तु इसका अन्तिम परिणाम अच्छा

नहीं होगा। जब तक मैं यह समझता रहूँगा, कि मेरे ऊपर वीणा का अनुराग समान भाव से ही बना है तब तक उसकी इच्छा के विरुद्ध आप किसी तरह भी मुझे उससे पृथक् नहीं कर सकेंगी। उसके ऊपर मेरा प्रभाव कितना है, यह आप अभी जानती नहीं। मैं उसे जिस ओर घुमाऊँगा, वह ठीक उसी ओर घूमेगी। परन्तु वह स्वयं यदि मुझसे कह दे कि आपके प्रति मेरा अब वह भाव नहीं है या पत्र लिखकर ही इस बात की सूचना दे दे कि मैं अब आपको नहीं चाहती, तो मैं उससे किसी तरह का सम्बन्ध नहीं रक्खूँगा। वह जहाँ रहेगी, उसकी सीमा तक में पैर नहीं रक्खूँगा। केवल इसी एक शर्त पर उसके ऊपर से मैं अपना सारा अधिकार छोड़ने को तैयार हूँ। और मैं, रास्ते का कुत्ता, कायर, नीच, चाहे कुछ भी होऊँ, अपनी बात पर कितना दृढ़ रहता हूँ, इस बात का आप हर तरह से विश्वास कर सकती हैं या परीक्षा ले सकती हैं।

इतना कह कर कुमार ने बड़े आदर से लीला को नमस्कार किया और वे वहाँ से नीचे उतर गये। वहाँ से घर आकर लीला रात भर यही सोचती रही कि वीणा ने कैसे भयङ्कर दुष्ट और धूर्त के चंगुल में अपने आप को इतने असहाय भाव से फंसा दिया है। कुमार ने जो कुछ कहा है, वैसा करना उसके लिए असम्भव नहीं है। वीणा की प्रकृति बहुत ही दुर्बल होने के कारण उसके ऊपर कुमार का प्रभाव कितना प्रबल है, यह भी अब उसने समझ लिया। वीणा से पत्र लिखवा देने के अतिरिक्त अब और कोई उपाय नहीं रह गया।

परन्तु वीणा से इस आशय का पत्र लिखवा लेना कोई आसान काम नहीं था। वह इस बात पर किसी तरह भी सहमत होना नहीं चाहती थी। वह केवल यही बात कहने लगी कि मैंने उनसे सब बातें कही थीं। उन्होंने भी अपनी सारी भूलें स्वीकार कर

ली है। वे उस स्त्री के लिए खूब अच्छा प्रबन्ध कर देंगे, साथ ही मेरे लिए अपनी आदतें सुधारने की भी कोशिश करेंगे। इस समय यदि उनके साथ मेरे सारे सम्बन्ध का अन्त हो जायगा तब वे फिर कभी अच्छे मार्ग पर लौट कर न आ सकेंगे। इसी से मैं इस तरह की चिट्ठी न लिख सकूँगी। लीला, तुम भी ज़रा सोच कर देख लो। क्या एक बार की भूल के कारण किसी के साथ ऐसी कठोरता का बर्ताव करना उचित है? अच्छा तो यह होगा कि उन्हें थोड़े दिन का समय दिया जाय। देखो, वे अपनी बात पर दृढ़ रहते हैं या नहीं। यदि वे दृढ़ न रह सके तो ऐसी चिट्ठी लिख दी जायगी।

लीला ने उसकी सारी युक्तियों, प्रार्थनाओं तथा रोने-धोने की ज़रा भी परवा नहीं की। उसे डाँट-फटकार कर और धमकियाँ देकर खड़े-खड़े उसने उससे अपने इच्छानुसार चिट्ठी लिखवा ली। वह स्वयं जाकर उसी समय उसे लेटर-बक्स में डाल भी आई।

यह सब कर चुकने पर उसने सोचा कि शायद अब झंझट दूर हो गया, परन्तु उसका चित्त स्थिर न हुआ, क्योंकि बीणा के ऊपर उसकी कोई आस्था नहीं थी। उसके ऊपर कड़ी दृष्टि रख कर ही वह चला करती थी।

## ( ३७ )

उस दिन सवेरे अरुण ने जब आँख खोली तब इतने दिनों की शून्यता के स्थान पर अपने पूर्वपरिचित दृश्यों को देखकर वह हक्का-बक्का हो गया। उसकी क्षीण दृष्टि के सामने दीवार पर तसवीरें लटकी हुई थीं।

अरुण का हृदय बड़े वेग से स्पन्दित होने लगा। वह सोचने लगा—कहीं नींद में पड़ा-पड़ा मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ? डरते-डरते दोनों हाथों से आँखें पोंछ कर वह फिर देखने लगा—

यह तो सचमुच दीवार पर टँगी हुई तसवीरें हैं ! यह कैसी आश्चर्य-जनक घटना है !

अत्यधिक उत्तेजना के कारण अरुण अधीर हो उठा। क्या यह सच है कि वह फिर देख पाता है ? अपने सन्देह को दूर करने के लिए उसने अपना हाथ आँख के कोटर में रक्खा। ठीक तो है, देखो न, हाथ की पाँचों उंगलियाँ साफ़ साफ़ दिखाई पड़ रही हैं।

सन्देह और विश्वास के बीच में भरभराते हुए कमरे के चारों ओर ध्यानपूर्वक देख-देखकर वह वहाँ की सारी चीज़ों से परि-चित होने लगा।' यह तो कुर्सी है, इसके पास ही खूँटियों पर कपड़े सजाये हुए हैं, पलँग पर साफ़-सुथरा बिस्तर बिछा है, उसी पर वह अब भी सोया है। यह ड्रेसिंग टेबिल पर लगा हुआ बहुत बड़ा आइना है। टेबिल के ऊपर शृङ्गार की सभी सामग्रियाँ सजी हुई हैं, वे सब स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ रही हैं !

अत्यधिक आनन्द और विस्मय के कारण वह खिड़की के सींकचे गिनने लगा। उसका उस समय का आनन्द और उत्साह वर्णन से परे था।

अरुण ने मन ही मन भक्ति से विनम्र होकर भगवान् के प्रति बार-बार प्रणाम किया। हे भगवान्, तुम धन्य हो, जिस तरह अचानक तुमने मेरी दृष्टि अपहरण कर ली थी, उसी तरह फिर अयाचित भाव से ही उसे लौटा दिया।

अत्यधिक उत्तेजना के कारण अरुण के माथे की नसें ठनक रही थीं। तो भी वह अपनी तुरन्त की मिली हुई दृष्टि को कमरे में चारों ओर बार-बार घुमाकर परीक्षा करने लगा।

आज कपड़े पहनते समय सहायता के लिए उसने किसी भी नौकर को नहीं बुलाया। अपने आप ही उठकर उसने पोशाक पहनी। जब तक लीला को न मालूम हो जाय तब तक वह यह बात किसी से बतलाना नहीं चाहता था।

अपना काला चश्मा आँखों पर लगा कर वह अपने आप ही बगीचे में टहलने लगा। इतने दिनों तक अरुण जो दृश्य कल्पना से देखता था, आज वह अपने चश्मे के भीतर से उस मैदान के सभी दृश्य देख रहा था।

मैदान के एक ओर क़तार के क़तार फूलों के पौधे लगे हैं। बड़े-बड़े और लम्बे पेड़ों पर सघनता के साथ पत्तियाँ शोभायमान हैं। गुलाब की क्यारी में सुन्दर-सुन्दर फूल खिले हैं और वे अपनी स्वर्गीय सुषमा से बगीचे की शोभा को द्विगुणित कर रहे हैं। यह वही चम्पा के नीचे का चबूतरा है, जहाँ वह साँझ को लीला तथा घर के और सब लोगों के क्लब में चले जाने पर आकर बैठता है।

तार के दूसरी ओर टेनिस-कोर्ट दिखाई पड़ रहा है, जहाँ वह बहुत—बहुत दिन पहले सदा खेलने आता था। यद्यपि गिनने में अधिक दिन नहीं हुए, तो भी उसे ऐसा जान पड़ता था, मानो बहुत दिन बीत चुके हैं।

अरुण मन के आनन्द में एक सिगरेट जलाकर पीने लगा। आज उसे छड़ी से टटोल-टटोल कर रास्ता न पहचानना पड़ेगा। उसके मार्ग में कब कौन-सी बाधा आ पड़ेगी, इस आशंका से शंकित न रहना पड़ेगा। आज मुक्ति का यह कैसा विपुल आनन्द है!

कुछ दूर पर एक माली गुलाब के पेड़ के नीचे की ज़मीन को गोड़ रहा था। अरुण को इतने तड़के बगीचे में अकेले घूमते देखकर वह विस्मय से ताकता रह गया। मिस्टर राय का अरदली अरुण के पास से होकर ही जा रहा था। उसे अन्धा समझ कर उससे सलाम किये बिना ही वह सदा की भाँति चला गया।

कुछ क्षण के बाद अरुण उठकर लीला के कमरे की ओर चला। लीला टेबिल पर फूल सजा रही थी। अरुण ने चश्मा उतार कर उसे पुकारा—लीला!

सदा की भाँति उसे अन्धा समझ कर लीला ने मुँह उठाये बिना

ही उसने बड़े आदर से बैठने को कहा। वह कहने लगी---वाह, आज तो खूब सवेरे उठ गये हो ! रोज इसी तरह सवेरे ही उठ जाया करो तो बड़ा अच्छा हो।

अरुण के चित्त में बीणा की स्मृति जाग्रत् हो उठी। जहाँ उसका मुँह कठपुतली का-सा सुन्दर और भावहीन था, वहीं लीला के मुख की आभा कितनी सजीव तथा बुद्धि और प्रतिभा से उज्ज्वल थी ! अरुण लीला की सुडौल, सरल और एक ढंग में ढली हुई आकृति की ओर ताकने लगा। उसका मुख चाहे अनिन्द्य सुन्दर न भी हो, तो भी वह प्रेम करने के उपयुक्त था। इसके अतिरिक्त स्वयं अरुण के लिए तो पृथिवी पर वह एकमात्र कामना की वस्तु था !

अरुण का चित्त अदम्य आनन्द से अधीर होता जा रहा था। लीला जो अपने रूप-गुण की बदौलत संसार का एक ऐसा दुर्लभ रत्न है, वह एकमात्र उसी की है। भावों के आवेग में उच्छ्वसित होकर उसने फिर पुकारा---लीला !

लीला ने हँसकर इस बार अपना मुँह उठाया। उसने कहा---क्या है अरुण ?

अरुण की ओर दृष्टि डालते ही लीला अवाक् हो गई। अरुण के चेहरे पर यह कैसे असीम आनन्द का उच्छ्वास था ! आज वह टटोले बिना ही सीधे लीला के पास पहुँच गया, उसके हाथ से फूल लेकर उसे खींचकर अपने कंधे पर ले गया और जोर से पकड़ लिया। और कुछ कहने की आवश्यकता ही न रह गई।

अरुण के परिष्कृत नेत्रों की ओर ताककर लीला ने सारा मामला समझ लिया। आज तो वह कोई और ही मुँह देख रही थी। क्या यह वही उसका चिरपरिचित मुख था ? जो नेत्र आज तक दृष्टिहीन थे, जिन नेत्रों के सामने विषाद का पर्दा पड़ा था, आज वही नेत्र भाषा और भाव से पूर्ण होकर उसी का मुँह ताक रहे थे।

"तो अब तुम्हें दिखाई पड़ने लगा अरुण ?"

केवल इतना कहकर ही लीला अप्रत्याशित आनन्द और सुख से रो पड़ी।

अरुण धीरे-धीरे लीला के मस्तक पर हाथ फेर रहा था। उसने कहा——आज के-से दिन क्यों रो रही हो लीला? आज तो हम दोनों की शुभ-दृष्टि* है।

अरुण की आरोग्यता का समाचार घर में फैलते ही चारों ओर आनन्द का कलरव मच गया। लीला के आनन्द से सभी लोग आनन्दित थे।

मिस्टर राय ने जब यह बात सुनी तब वे टेबिल के पास बैठकर चाय पीने जा रहे थे। वे तुरन्त ही वहाँ से उठ कर आये और बड़े स्नेह से अरुण को छाती से लगा लिया। उनकी अन्तरात्मा का विपुल आनन्द उस नीरव आलिङ्गन से ही प्रकाशित हो रहा था।

मिसेज़ राय निर्वाक् होकर क्षण भर तक मुग्ध दृष्टि से अरुण की दृष्टि की ज्योति से उद्भासित उसके सुन्दर मुख की ओर ताकती रहीं। उसके प्रति उन्होंने जो दुर्व्यवहार किया था उसे स्मरण करके लज्जा और पश्चात्ताप के मारे उनका हृदय व्यग्र हो उठा। उनके चरणों पर मस्तक टेक कर अरुण ने जब प्रणाम किया तब अपने बहुत दिन पहले के अरुण को ठीक पहले की ही तरह फिर से पाकर उनका चित्त सुख और तृप्ति के आनन्द से उच्छ्वसित हो उठा और नेत्रों में आँसू भर आये।

घर के नौकरों ने आकर प्रसन्नतापूर्वक अरुण का अभिनन्दन किया। परन्तु सबसे अधिक झंझट था वीणा को। एक बार जिससे प्रेम करके वह उसके साथ विवाह करने की प्रतिज्ञा कर चुकी थी, आज इतना सब हो जाने के बाद उसके सामने जाकर वह फिर कैसे स्वाभाविक रूप से खड़ी होगी, इस संकोच और लज्जा ने उसे

* विवाह के समय की वह रस्म जब वर-वधू पहले-पहल एक दूसरे का मुँह देखते हैं।

विचलित कर दिया। उसके कुण्ठित भाव का अनुभव करके अरुण अपने आप ही वीणा के पास गया और उससे बातचीत करके उसने उसका सङ्कोच दूर कर दिया।

साँझ को अरुण लीला के साथ क्लब में गया। उस दिन उसके पुराने बन्धुबान्धवों ने इतना आनन्द प्रकट किया और इतनी बधाइयाँ दीं कि वह दिन उसके लिए चिरस्मरणीय हो उठा।

अरुण के नेत्रों में जो नई दृष्टि लौट आई थी उसके सम्बन्ध में विशेषज्ञ चिकित्सकों की राय लेने के लिए वह दूसरे ही दिन कलकत्ता चला गया।

( ३८ )

अरुण की डायरी से—

"अमावस्या की रात के गम्भीर सूची-भेद्य अन्धकार के बाद शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा जिस तरह अपनी किरणों की सुधाधारा से पृथिवी को परिप्लुत कर देता है, ठीक वैसे ही मेरे जीवनरूपी आकाश में अमावस्या की रात के घोर काले परदे को फाड़ करके एक उज्ज्वल नक्षत्र के समान लीला उदित हो आई और उसने अपने प्रेम और हँसी की किरणों से इस हताश मरुमय जीवन को फिर से वर्ण, गन्ध और सङ्गीत से परिपूर्ण कर दिया। जिसे पाने की कभी आकाङ्क्षा नहीं थी उसे पाकर तीव्र सुख से परिपूर्ण हो उठा मैं। अन्धे का सदा का दुःख उस सुख की बाढ़ में बह गया। नित्य नये-नये उत्सव से नये जीवन का वरण कर देने के आग्रह से बाह्य जगत् मानो विस्मृति के अगाध सागर में डूब गया था। हाय, उस समय तो मुझे यह मालूम नहीं था कि सुख के भीतर दुःख और हँसी के भीतर आँसू विधाता के विधान में अनवरत काल से चले आ रहे हैं! क्या इसी कारण मेरा वह

जागता हुआ स्वप्न माया के खेल की तरह मुहूर्त भर में ही शून्य में मिल गया ?

"कलकत्ते में आकर मैंने नेत्रों के सम्बन्ध में विशेषज्ञ और प्रवीण चिकित्सकों की सलाह ली। उन्होंने कहा—अपनी जानकारी में इस तरह नेत्रों का आरोग्य होते मैंने बहुत कम देखा है या यों कहिए कि देखा ही नहीं। खैर, अब आपको जो यह देखने की नई शक्ति मिली है उसकी बहुत ही सावधानी से रक्षा करनी चाहिए। नेत्रों से अधिक परिश्रम लेने, किसी प्रकार की उत्तेजना या दुःख का भाव आने पर—अर्थात किसी प्रकार के भी शारीरिक या मानसिक क्लेश के कारण, यह नष्ट हो सकती है। जहाँ तक हो सके, आपको इन बातों से बचते रहना चाहिए। यदि आप शरीर को स्वस्थ तथा चित्त को प्रसन्न रक्खेंगे, साथ ही पौष्टिक भोजन भी करते जायेंगे, तो चश्मे की सहायता से आपकी यह दृष्टिशक्ति आजन्म बनी रह सकती है। चलते समय भी उन्होंने बड़े आग्रह के साथ मुझे बार-बार सावधान किया था। सोचा था कि वहाँ दो एक-दिन और रह कर जरा घूम-फिर लूंगा, परन्तु मन न लगा। न जाने कौन-सी ऐसी बात थी कि लीला को छोड़ कर एक क्षण भी अकेले रहना मुझे असह्य-सा मालूम पड़ रहा था। मानो वह दिन-दिन मेरे जीवन के साथ बिलकुल मिली जा रही थी।

"काम-काज से अवकाश मिलते ही पटना लौटने के लिए हावड़ा स्टेशन पर गया। गाड़ी छूटने में देरी थी। प्लेटफ़ार्म पर टहल रहा था, एकाएक किरण से मुलाक़ात हो गई। हाथ में एक सूटकेस लिये हुए वह तेजी से चला आ रहा था। शायद गाड़ी पर ही सवार होना चाहता था। मेरी ओर दृष्टि पड़ते ही हक्का-बक्का-सा होकर वह जहाँ-का-तहाँ खड़ा रह गया। हावड़ा स्टेशन के प्लेटफार्म पर मैं स्वाधीन भाव से टहल रहा हूँ, यह घटना मानो उसे सत्य सी नहीं मालूम पड़ रही थी।

"कुछ क्षण तक विस्मित रहने के बाद किरण ने मेरे सामने आकर मेरा हाथ पकड़ लिया। मेरे सौभाग्य के सम्बन्ध में अपनी आन्तरिक प्रसन्नता प्रकट करके उसने मुझे बधाई दी। परन्तु मैं उसे देखकर सुखी न हो सका। उसके व्यवहार में पहले के उस आन्तरिक सौन्दर्य का लेश भी न था। जहाँ उसका मुखमण्डल सदा ही प्रफुल्ल और आनन्दमय रहा करता था, वहाँ उस पर एक विषम कठोरता की छाया थी। वैसी छाया जीवन में उसके चेहरे पर मैंने और कभी नहीं देखी थी।

"मेरे अनजान में ही मेरे सीने को ठेल कर एक गम्भीर और लम्बी साँस निकली और वह धीरे-धीरे विलीन हो गई। हम दोनों ही एक ही स्त्री को चाहते थे न! उस चाह ने ही हम दोनों के बीच में एक दीवार खड़ी करके हमारी मित्रता का अन्त कर दिया था! उस मुहूर्त में ही मैंने यह समझ लिया कि दृष्टिहीन होने से पहले तक अपनी और किरण की जिस मित्रता का हम दोनों ही गर्व करते थे, अन्धा हो जाने पर जब सारे संसार से मेरा सम्बन्ध टूट गया था तब भी जिस मित्रता के अगाध स्नेह की शीतल छाया में आश्रय पाकर मैंने अपनी आत्मा को शीतल किया था, वह सहोदर भाई से भी अधिक स्नेह, वह मित्रता, इस जीवन में फिर कभी न लौट सकेगी।

"किरण की बातचीत से मैंने यह समझ लिया कि इतने दिनों तक वह ब्रह्मदेश तथा भारत के अन्यान्य भागों में शान्ति तथा विराम से हीन प्रेत की भाँति अपने अशान्त चित्त का विक्षोभ लेकर घूमता रहा, अब जमींदारी के किसी बहुत जरूरी काम से घर लौट रहा है।

"मेरा इतने दिनों का सारा हाल उसने चुपचाप सुन लिया, परन्तु अपने मुँह पर लीला का नाम तक नहीं ले आया। मैं दो-एक बार उसकी चर्चा छेड़ने जा रहा था, किन्तु और बात

उठाकर उसने मुझे रोक दिया। उसका वह अभूतपूर्व कठिन और गम्भीर मुँह देखकर मैं स्वयं उसके सम्बन्ध की कोई भी बात नहीं पूछ सका।

"हम दोनों ही एक डिब्बे में बैठे। व्यक्तिगत चर्चा समाप्त होने पर सामयिक प्रसङ्ग तथा युद्ध-सम्बन्धी बातों में ही रात प्रायः समाप्त हो चली।

"मुझे लेने के लिए लीला मोटर लिये हुए स्टेशन पर खड़ी थी। मुझे गाड़ी पर से उतरते देखकर मुस्कराती हुई चंचला हरिणी की तरह वह मेरी ओर दौड़ी आ रही थी। एकाएक मेरे पीछे ही किरण को भी उतरते देखकर उसी दम बीच रास्ते में ही वह स्तब्ध तथा मूर्च्छितप्राय हो गई! उसके चेहरे का सारा खून उतर गया और उसके ऊपर एक बहुत ही अजीब ढंग की सफ़ेदी छा गई। उसका सारा शरीर इतने जोर से काँप रहा था कि उसके कम्पन को दूर से भी मैं अच्छी तरह से देख रहा था। वह दृश्य देखते ही मुझे ऐसा जान पड़ने लगा, मानो चारों दिशाएँ अन्धकार से आच्छादित होती जा रही हैं और मेरे भी हृत्पिंड की क्रिया धीरे-धीरे बन्द हुई जा रही है।

"मेरा इतने दिनों का सजाया हुआ ताश का प्रासाद एक फुफकार में ही छिन्न-भिन्न हो गया। आज मैंने सभी कुछ समझ लिया। सभी कुछ अपनी आँखों से देख लिया। भगवान्, क्या यह दृश्य देखने के ही लिए मेरी इतने दिनों की खोई हुई दृष्टि फिर लौटा दी है? ओह, कैसा धोखा खाया है मैंने! जो नारी रात-दिन मन-ही-मन दूसरे पुरुष का ध्यान किया करती है, क्या मैं उसी के लिए—। हाय, यह दृश्य देखने से पहिले मैं फिर क्यों न अन्धा हो गया?

"हृदय के ऊपर एक बहुत गहरी ठेस लगी थी। मैं स्वयं भी मूर्छित व्यक्ति के ही समान अचेत हो उठा था। किरण के गले

की आवाज़ से मेरी चेतना फिर वापस आ गई। उस समय वह लीला के काँपते हुए हाथ को पकड़ कर उसे मोटर पर बैठाने जा रहा था। पुकारने पर मैं भी चुपचाप उसके पीछे पीछे-चला। लीला का वह पहले का ही भाव था। उसके मुँह से कोई बात नहीं निकल रही थी। किन्तु किरण ने मानो अकस्मात् वातर्चात आरम्भ करके और इधर-उधर की गप छेड़ कर अपने मौन भाव को दूर कर दिया।

"किरण की यह चालाकी आज मैं खूब अच्छी तरह से समझ गया। उसकी उपस्थिति ने लीला को किस तरह विचलित कर दिया है, यह बात उसने समझ ली थी। लीला को सचेत हो जाने का समय भी मिल जाय और मैं उन दोनों के भावान्तर को समझ न पाऊँ, इसी लिए वह ऐसा प्रयत्न कर रहा था।

"किरण को लेने के लिए उसकी मोटर बाहर खड़ी थी। हमारी मोटर पर हम दोनों को बैठा कर वह स्वयं अपनी मोटर पर बैठा और अपनी राह ली।

"जान पड़ता है कि लीला मेरे इस भाव को ताड़ गई थी। ज़रा-सा सँभलते ही मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर बड़े स्नेह से उसने मेरी आँखों का हाल पूछा।

"फिर आँखें! आँखों का मुझे उस समय ध्यान भी न था। अत्यधिक अभिमान से मेरी आँखें जल से भर गई। बड़े क्लेश से गले को साफ़ करके उसके दोनों हाथों को पकड़े हुए मैंने कहा —लीला! सच बतलाओ, क्या तुम्हें इस समय भी यह इच्छा है कि मै तुम्हारा हाथ पकड़ूँ?

"अवश्य! किन्तु यह बात तुम क्यों पूछ रहे हो अरुण?" लीला ने इतने स्वाभाविक और अकुंठित भाव से यह बात कही कि उस समय मैं और कोई भी बात मुँह से न निकाल सका। केवल अपनी सारी शक्ति लगाकर उसके दोनों हाथों को दबाकर

इतने जोर से पकड़ा, मानो उसे कोई जीवन भर के लिए मुझसे छीने लिये जा रहा है।

"उस दिन से मेरे हृदय की सारी सुख-शान्ति जाती रही और सदा मानो विष की-सी एक प्रकार की ज्वाला बनी रहने लगी। जिस समय मुझे यह मालूम हुआ था कि किरण लीला को चाहता है, उस समय उसके ऊपर मुझे न तो किसी प्रकार का क्रोध आया और न उससे ईर्ष्या ही हुई। परन्तु स्टेशन पर लीला की वह दशा देखते ही मेरी यह धारणा हो गई कि लीला भी किरण को चाहती है। उसका चाहना स्वाभाविक भी है। बात यह है कि वे दोनों ही बहुत दिनों से एक दूसरे के मित्र हैं, और हर एक दृष्टि से वे परस्पर एक दूसरे के उपयुक्त हैं। अब रही बात यह कि किरण यदि लीला का है और लीला किरण की है, तो ऐसी अवस्था में इन दोनों के बीच में मेरा क्या स्थान है? तब मैं कहाँ खड़ा होऊँ?

"रह-रह कर मुझे ऐसा लगता कि शायद ये दोनों ही मेरे लिए क्लेश सह रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में मेरा यह कर्तव्य है कि मैं स्वयं पृथक् होकर लीला को उसकी प्रतिज्ञा से मुक्त कर दूँ। इस संकल्प के अनुसार यदि मैं कार्य कर पाता तो क्या ही अच्छी बात थी। परन्तु मेरे हृदय की ईर्ष्या इतनी प्रबल थी कि उसके सामने यह उदारता अधिक समय तक टिक न पाती। लीला को किरण के हाथ में सौंप देने का विचार मन में आते ही मेरा सारा पौरुष गरज उठता! अपनी इच्छा से आकर लीला ने मुझे आत्म-समर्पण किया है, वह मेरी वाग्दत्ता पत्नी है, उस पर हर तरह मेरा ही अधिकार अधिक प्रबल है। मुझे क्या पड़ी है कि मैं उसे दूसरे के हाथ में दे दूँ?

"घर आकर मैंने उस दिन लीला से कहा—किरण को देखकर तुम्हारी जो दशा हुई थी उसके कारण मेरे हृदय पर कितना आघात पहुँचा है, यह बात तुमसे न बतलाना ही अच्छा है। एक व्यक्ति

की वाग्दत्ता पत्नी यदि किसी और के प्रति अपने हृदय में ऐसा भाव रखती है तो उसके कारण उसके भावी पति की आत्मा को कितनी व्यथा होती है, इस बात का मैंने ही अनुभव किया है। मैं तुम्हें कोई कड़ी बात नहीं कहना चाहता लीला, परन्तु उस दिन मेरे मन में यह बात आई थी कि यदि मैं फिर अन्धा हो जाऊँ तो अच्छा ही होगा।

"उसके मुख पर तीव्र वेदना की रेखा उदित हो आई। उसने सहम कर कहा—छि: अरुण, ऐसी बात और कभी मुँह पर मत लाना। बाद को उसने बहुत ही सरल भाव से कहा—उस दिन उसे सचमुच अचानक देखकर मैं न जाने क्यों अस्वस्थ हो पड़ी, यह स्वयं मैं भी नहीं समझ पाती हूँ। किन्तु अरुण, मेरे ऊपर क्या तुम्हारा इतना भी विश्वास नहीं है? इस जरा-सी ही बात को लेकर तुमने ये सब अनहोनी बातें कैसे समझ ली?

"आश्चर्य है! जिस समय लीला मेरे पास रहती है, उस समय उसका मुँह देखकर और उसकी बातें सुनकर मेरा मन साफ़ हो जाता है। उस समय मुझे विश्वास हो जाता है कि वह मेरी ही है। मैं ईर्ष्या से अधीर होकर उसके सम्बन्ध में अनुचित बातें दिल में जमाये रहता हूँ।

"उसी समय लज्जित और अनुतप्त होकर मैंने कहा—क्षमा करो लीला, कदाचित् मैं बड़ा अकृतज्ञ हूँ। यह सब कदाचित मेरे कुत्सापूर्ण मन का प्रतिबिम्ब है! किन्तु पहले मैं ऐसा नहीं था। इस समय जो ज़रा-सी बात पर ही मेरे हृदय पर आघात पहुँचता है, उसका कारण केवल यही है कि मैं तुम्हें बहुत अधिक चाहता हूँ, तुम्हें मुझसे और कोई छीन ले जायगा, इस बात की कल्पना तक मुझे पागल कर देती है!

"लीला ने कहा—तुम्हारे हाथ से मुझे कोई न छीन सकेगा अरुण, इसके लिए तुम निश्चिन्त रहो।

"लीला मुँह से चाहे जो कहती किन्तु मैंने उसे खूब अच्छी तरह से देखा कि किरण जिस दिन आया है, उस दिन से ही वह सूखकर मुरझाई-सी जा रही थी। इतने दिनों तक वह सदा मेरे ही पास रहा करती, मुझे पुस्तकें पढ़कर सुनाती और हँसी-खुशी में ही दिन काट दिया करती। उस दिन से उसकी वह आभा देखने में नहीं आई। वह सदा ही न जाने कैसे मन मारे रहती, उसके चेहरे पर न जाने कैसा घबराहट का भाव बना रहता!

"मेरी दृष्टि पर एक बात प्रायः और पड़ा करती थी। लीला किसी तरह भी किरण से मिलना या उसे देखना नहीं चाहती थी। कहीं वह एकाएक मेरी दृष्टि में न पड़ जाय, इसके लिए वह सदा ही बहुत सावधान होकर चलती थी। कदाचित् वह मेरे ही लिए इतनी सावधान रहा करती हो, कदाचित् वह सोचती हो कि किरण के साथ मुझे देखकर फिर इनके हृदय में ईर्ष्या का संचार होगा, इस आशंका से ही वह उससे सदा दूर-दूर रहा करती हो, किन्तु वह जानती नहीं कि उसका इस तरह का सावधान रहना ही मेरी अन्त-रात्मा में निरन्तर भूसी की-सी आग धधकाये रहता है! यही सन्देह और ईर्ष्या मुझे रात-दिन पागल किये रहती है! मेरा लिखना-पढ़ना, मेरी रचना, मेरे हृदय की शान्ति, सभी कुछ इस सर्वग्रासी आग में पड़कर जलकर खाक हो गया!

"सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि मुझे स्वयं यह नहीं मालूम था कि लीला किरण के साथ कैसा व्यवहार करे, जिससे मैं सुखी होऊँ। जिस समय उसका साथ छोड़ कर वह उससे दूर रहती, उस समय उसे देखकर मेरे शरीर में आग लग जाती। मैं सोचने लगता कि लीला जिस तरह अपने और पुरुष-मित्रों से मिलती-जुलती है, उनके साथ खेलती-कूदती और उनसे बातचीत करती है, उसी तरह सरल भाव से किरण से मिलने में उसका क्या बिगड़ता है? क्या मैंने उससे उस तरह मिलने से रोक दिया है, जो सदा

उससे दूर-दूर रहा करती है ? उसके प्रति लीला जो इस तरह का व्यवहार करती है, इसी से जान पड़ता है कि किरण के साथ उसका और लोगों का-सा ही साधारण मित्रता का सम्बन्ध नहीं है। निस्संदेह वह किरण को और लोगों की अपेक्षा कुछ विशेष भाव से देखती है, अन्यथा उसके साथ वह स्वाभाविक रूप से मिलती क्यों नहीं ?

"इसके विरुद्ध जब कभी संयोगवश वे दोनों मुझे पास-पास दिखाई पड़ते, यदि वे बहुत साधारण भाव से ही बातचीत करते होते या किसी बात पर हँसते हुए देख पड़ते, तो उसी दम मेरे शरीर का सारा खून खौल जाता और माथा ठनकने लगता। मेरे हृदय में एक भयङ्कर ईर्ष्या तथा प्रचंड आक्रोश का भाव उदित होता और चित्त में इस बात की बड़ी प्रबल इच्छा होती कि किरण की धज्जी-धज्जी उड़ा दूँ ! हृदय का यह भाव मुझे उस समय विवेकहीन पागल-सा बना दिया करता। किरण से मेरी इतने दिनों की मित्रता, उसके प्रति मेरी इतनी स्नेह-ममता, उस समय मेरे हृदय से दूर हो जाती, केवल भीषण प्रतिहिंसा तथा क्रोध के कारण मैं रक्त के प्यासे दानव से भी अधिक भयानक और दुर्दान्त हो जाता। यह क्या हुआ, मेरी ऐसी भयानक अवस्था क्यों हो गई, यह किसी तरह भी मैं नहीं समझ पाता था।

लीला की सेवा-शुश्रूषा तथा उसके प्रेम में भूल कर जब मैं फिर अपनी स्वाभाविक दशा में आता तब अपने हृदय का परिचय पाकर भय और चिन्ता के मारे उद्विग्न हो जाता। क्या मैं अन्त में आकर इतना स्वार्थी निकला ? मनुष्य के रूप में घोर हिंसक राक्षस के रूप में परिणत हो गया ? मेरी इतने दिनों की इतनी उच्च शिक्षा, साधना, संयम, शिष्टता—अन्त में चलकर क्या इन सबका यही सबसे उत्तम फल फला ? मेरे अन्दर ऐसी दानवीय प्रकृति, इतनी हिंसा, इतने दिन तक कैसे सोई थी ?

"लीला का मेरे पास का आना-जाना और मेरे पास का

रहना, दिन-दिन कम होता जा रहा था। पहले वह दिन का अधिकांश समय प्रायः मेरे ही पास रहकर व्यतीत करती थी। परन्तु अब? अब तो कभी-कभी दिन बीत जाने पर भी उसका दर्शन दुर्लभ हो जाता। कभी आती भी तो जरा-सा बैठकर फिर घबराई हुई-सी उठकर चली जाती।

"जीवन में सुख और शान्ति का अनुभव करना मेरे भाग्य में नहीं लिखा है, यह बात अब मैं अच्छी तरह से समझ गया। परन्तु मेरी अवस्था ऐसी हो उठी थी कि लीला की आशा छोड़ देना भी मेरे लिए असम्भव हो गया। मेरे मन में केवल यही बात आती कि लीला के साथ यदि मेरा विवाह हो जाता तो उसे लेकर एक बार मैं इन लोगों के सम्पर्क से दूर चला जाता। बस, सारा झंझट टूट जाता। मुझे अच्छी तरह से विश्वास है कि जब वह कुछ दिनों तक केवल मेरे ही साथ रहेगी तब इन सबको भूल कर फिर वैसी ही प्रसन्नता के साथ रहने लगेगी।

"उस दिन दूसरे वक्त बैठे-बैठे मैं यही बात सोच रहा था। टेबिल पर मेरे उपन्यास की पांडु-लिपि पड़ी थी, उसे आगे लिखने को जी नहीं चाहता था। लीला का साथ न होने के कारण आज-कल मेरा कोई भी काम नहीं होता था। आज-कल वह इन सब कामों में मन नहीं लगाती थी, इसलिए मेरा भी उत्साह कम हो गया था।

"लीला मेरे पास आकर बैठ गई। उसके व्यवहार के सम्बन्ध में कई दिनों तक मैंने उससे कुछ कहा नहीं। मेरा साथ यदि उसे अच्छा नहीं लगता तो उसके ऊपर जोर डालने में क्या लाभ होगा? परन्तु उसकी इस उपेक्षा से आज मेरे हृदय पर बड़ी ठेस लगी थी। मुझसे और न रहा गया, उससे बोल उठा—आज-कल तुम प्रायः मुझसे दूर-दूर रहा करती हो, इसके लिए मैं तुमसे कुछ कहना नहीं चाहता हूँ। तुम सुखी हो, यह जान कर ही

मैं सन्तुष्ट रहता हूँ। परन्तु कभी-कभी मेरे दिल में यह बात आती है कि शायद अब मैं तुम्हारी पसन्द का नहीं हूँ।

"लीला का चेहरा उतर गया। उसने कहा—तुम ये सब बातें कैसे सोचा करते हो अरुण? तुम्हारे साथ मेरा जीवन-मरण का सम्बन्ध है। यह कोई लड़कों का खेल तो है नहीं कि दो दिन पसन्द आये, तीसरे दिन फिर मन फीका पड़ गया और एक दूसरे से पृथक् हो गये? देखो न, ये सब निरर्थक बातें सोचते-सोचते इन्हीं कुछ दिनों में तुम कितने दुबले हो गये हो!

"लीला ने खींचकर मेरा मस्तक अपनी गोद में रख लिया और वह धीरे-धीरे मेरे मस्तक पर हाथ फेरने लगी। उसके स्पर्श में न जाने कैसा जादू भरा था? मेरे अन्तःकरण में उसके प्रति कितना अधिक सन्देह था, मेरे हृदय में कितनी दुर्निवार ज्वाला धधक रही थी, वह सब उस मधुर स्पर्श और आदर के कारण शीतल हो गई!

"लीला जिस समय मेरे पास रहती है, उस समय मानो मैं एक बिलकुल नया ही आदमी हो जाता हूँ। परन्तु उसके पास से हटते ही मेरे दिमाग में तरह-तरह की अनहोनी बातें आने लगती हैं और चिन्ता के मारे मेरा मन व्याकुल हो जाता है। मेरे मन की इस सहज भाषा को यदि वह इसी तरह समझ लेती!

"ज़रा देर तक चुप रह कर लीला ने कहा—इधर कई दिनों से मेरा भी चित्त ठिकाने पर नहीं है अरुण! वीणा एक बहुत नीच प्रकृति के आदमी से घनिष्ठता बढ़ा रही है, उसके चंगुल से उसे निकालने की चिन्ता से आज-कल मैं बहुत व्यग्र रहती हूँ, इसी लिए मुझे तुम्हारे पास रहने का समय नहीं मिलता। उस आदमी की दृष्टि में स्त्रियाँ केवल क्रीड़ा की सामग्री हैं। वीणा बड़ी दुर्बल है, इसी से उसके लिए मुझे बड़ा भय रहता है।

"मैंने कहा—वीणा जिस प्रकृति की स्त्री है और वह जिस भाव से चला करती है, उसके कारण किसी झंझट में पड़ जाने

उसके लिए आश्चर्य की बात नहीं है। परन्तु यहाँ तो तुम्हें छोड़कर मुझसे रहा नहीं जाता। तुम चारों ओर के झंझट में फँसी रहती हो और यहाँ अकेले बैठे-बैठे मेरा मन खराब होता रहता है। कितनी आश्चर्यजनक और अनहोनी बातें दिमाग़ में आया करती हैं। तुम और तुम्हारी चिन्ता, दोनों मिलकर मुझे सदा जाग्रत-स्वप्न में डाले रहती हो। मैं केवल एक आशा और चिन्ता के आधार पर जीवित हूँ—वह यह है कि कौन-सा ऐसा शुभ मुहूर्त होगा जब मैं तुम्हे यहाँ से और यहाँ के सब लोगों के बीच से अपनी पत्नी के रूप में आग्रहपूर्वक घर ले जा सकूँगा।

"एक लम्बी साँस लेकर लीला ने कहा—वह दिन आ जाता तो इन सब झंझटों से मेरी भी रक्षा हो जाती। मेरा शरीर और दिमाग़ धीरे-धीरे बहुत थक गया है, तो भी मेरा ऐसा स्वभाव है कि हाथ में काम रहने पर स्थिर होकर मुझसे रहा ही नहीं जाता। अच्छी बात है, कल सवेरे मैं तुम्हारे साथ टहलने चलूँगी अरुण! कल मुझे जरा यहाँ के जनाना-मिशन की अध्यक्ष मिस नेल्सन के पास जाना है।

"कल सवेरे से ही लीला फिर कहीं जाने का बन्दोबस्त कर रही है? बात अच्छी न लगी। मैंने कहा—क्यों उनसे क्या काम है?

"इसके उत्तर में लीला ने मुझे एक बहुत ही अद्भुत कथा सुनाई और कहा—ज्योत्सना की दुर्दशा ने मुझे बहुत ही अधीर कर रक्खा है। वहाँ से उसका उद्धार करके यदि किसी प्रकार मिशन के आश्रम में उसे रख आती तो उसकी ओर से मैं निश्चिन्त हो जाती। यही सब निश्चय करने के लिए मैं कल मिस नेल्सन के पास जाऊँगी।

"कुछ और न कह कर मैं चुपचाप बैठा रहा। संसार का सारा भार, सारा बोझा, सम्भालने का काम क्या अकेली लीला के

मस्तक पर है? कुछ भी हो, यह अद्भुत स्त्री है! जब यह दुनिया भर के लोगों की बातें ले-लेकर रात-दिन अपने दिमाग़ को परेशान करती रहती है तब इसके हृदय में मेरे लिए कितना स्थान है? या यों कहो कि मेरी चिन्ता करने का अवसर ही इसे कब मिलता है?

"आज जिस तरह ज्योत्सना का हाल सुनकर बिना उसकी प्रार्थना के ही उसके मंगल के लिए यह अधीरभाव से प्रयत्न कर रही है, ठीक उसी तरह पहले-पहल मेरा हाल सुनकर भी केवल यही देखने के लिए मेरे पास गई थी कि मैं इसकी कितनी भलाई कर सकती हूँ। आज मैंने अच्छी तरह समझ लिया कि हमारे-इसके बीच में हृदय का सम्बन्ध कभी नहीं था और भविष्य में रहेगा भी नहीं। मेरे एकान्त आग्रह से और मुझे सर्वथा असहाय देखकर केवल कृपा करके ही यह इस विवाह पर सहमत हुई है। इसके हृदय का वास्तविक आकर्षण किस ओर है, यह जानना क्या अभी तक मुझे बाक़ी है?

"सारी रात अच्छी तरह से नींद नहीं आई। लेटे-लेटे केवल यही सोच रहा था—व्यर्थ की एक तरंग में पड़कर मेरे साथ यह मिथ्या अभिनय करने की लीला को क्या कोई आवश्यकता थी? मैं तो संसार के साथ सारा सौदा समाप्त करके निश्चिन्त हो चुका था! उस समय मेरे अन्तःकरण की सारी आशायें मर चुकी थीं, मेरा चित्त उदासीन था, उसमें किसी प्रकार की वासना का लक्षण तो था नहीं! भाग्य ने भविष्य के लिए मेरा जीवन जिस प्रकार का निर्दिष्ट कर दिया था, उस तरह से अपने आपको अभ्यस्त कर लेने के लिए प्राणपण से साधना करके प्रायः सफल हो ही चुका था। इतने में ही लीला आकर मेरे हृदय में नवीन सुख, नवीन आदर्श जाग्रत् करके संसार के मार्ग में मुझे खींच ले आई। मैं तो उसे जानता नहीं था! मैंने तो कभी उससे याचना नहीं की

थी! आज मैं जिस मर्मवेदना और ईर्ष्या की ताड़ना से अधीर हो उठा हूं, इसका मन्न कारण तो वह स्वयं ही है। उस समय तो एक तरंग में आकर मुझे इतनी आशा देकर वह लौटा ले आई और आज मेरे साथ मनमाना व्यवहार करने लगी! वह अच्छी तरह समझ गई है कि अब मैं पूर्णरूप से उसके अधिकार में हूं, चाहे मैं कितना ही क्रुद्ध होऊं, कितना ही कुछ करूं उसे छोड़कर जाना मेरी शक्ति के बाहर है। हे ईश्वर, इस नारी-जाति में कौन-सी वस्तु डालकर तूने इसकी सृष्टि की है! इसके शरीर में माया-ममता नाम की, हृदय नाम की, कोई वस्तु क्या नहीं है? मनुष्य का जीवन, मनुष्य का सुख-दुख, इसके लिए क्या केवल क्रीड़ा का उपकरण है?

"सोचते-सोचते उस रात को नींद नहीं आई। इससे मस्तक में और आंखों में बड़ी पीड़ा हो रही थी। मस्तक की सारी नसें ठनक रही थीं। रात का अवसान होते-होते जैसे ही जरा ठंडी-ठंडी हवा चलने लगी, वैसे ही मैं उठ बैठा। हाथ-मुंह धोकर कपड़े बदले और टहलने के लिए निकल पड़ा। घर में बैठे-बैठे करना ही क्या था? अकेले बैठे-बैठे कितनी ही निरर्थक चिन्तायें भर आतीं, कोई काम-काज तो था नहीं? व्यर्थ में यहां पड़े-पड़े मिस्टर राय का अन्न ही क्यों बरबाद कर रहा हूं, यह भी समझ में न आया।

"अकेला ही टहलते-टहलते बड़ी दूर तक चला गया, सबेरे की ठंडी हवा में घूमने से तबीअत बहुत-कुछ हल्की-सी होगई, जरा-सी धूप चढ़ते ही घर लौटने के लिए जी उकताने लगा। सोचा कि अब तक लीला भी घर लौट आई होगी। इतनी दुर्गति हो रही है, तो भी रात-दिन लीला ही चित्त पर चढ़ी रहती है।

"घर के इर्द-गिर्द आकर एकाएक ठमक कर मैं खड़ा हो गया। सड़क के किनारे मोड़ पर से होकर लीला और किरण पास ही पास घोड़ा हांकते हुए बातचीत करते-करते आ रहे थे। वे दोनों मुझे

नहीं देख पाए, दिमाग में न जाने कैसा चक्कर आगया। चित्त को ज़रा-सा शान्त करने के लिए मैंने पीछे की ओर लौट कर एक वृक्ष से सिर टेक दिया। वे दोनों ही वृक्ष के पास से होकर दुलकी चाल से घोड़ा हांकते चले गये।

"पहले तो मैं बिलकुल ही हक्का-बक्का हो गया था! मेरी वाग्दत्ता पत्नी और मेरा इतने दिन का विश्वस्त मित्र—इनका यह काम! इसी लिए इसने मुझे भुलावा दे रक्खा था और दूसरी जगह जाने का बहाना करके ये दोनों पहले के वादे के अनुसार यहां आकर मिले हैं! जिस लीला के सम्बन्ध में आज तक मेरी धारणा थी कि यह स्वर्ग की देवी है वह भी यदि बहुत ही चंचल प्रकृति की साधारण स्त्री के समान उस तरह के कुत्सापूर्ण छल और प्रवंचना के खेल खेल सकती है तो अब मेरे जीने में क्या लाभ है?

"इस तरह के पापमय संसार में रहकर रात-दिन चतुरता और मिथ्या का आवरण लपेटे हुए ऐसा वीभत्स अभिनय करने के लिए जीवित रहने की अपेक्षा तो मर जाना सौ गुना अच्छा है! उस पेड़ के ही नीचे अचेत-सा होकर मैं बैठ गया। लौट कर घर जाने को जी नहीं चाहता था। जाने से लाभ ही क्या है? उससे मुलाक़ात होते ही किसी न किसी बहाने से यह बात मैं कह बैठूंगा और वह तुरन्त ही मेरी पीठ पर हाथ फेर कर प्यार से भरी हुई दो-चार बातों में ही भुला देगी। यही होगा न? यह सब तो इतने दिनों तक बहुत हो चुका है। अब इसकी क्या आवश्यकता है?

"धीरे-धीरे मेरे क्लान्त और दुःखित हृदय में उस पहले के-से ही उदास भाव की छाया प्रगाढ़ होती जा रही है! बहुत दिनों का बहुत बड़ा भार, बहुत बड़ा झंझट, मेरे जीवन से उलझ गया है, मेरा हृदय उससे चुटीला होकर रक्त से भीग गया है, क्षत-विक्षत हो गया है! भगवान, अब मुझे शक्ति दो, इस निरर्थक जीवन का भार अब मुझसे नहीं ढोया जाता!

"संसार में मनुष्य सुख की आशा से आता है, परन्तु केवल तृषित अन्तरात्मा की व्याकुलतामय पिपासा के कारण मरीचिका के पीछे-पीछे पागल-सा होकर दौड़ता रहता है, उसकी तृष्णा कभी मिटती नहीं। मिटे भी कैसे? यहाँ पाने योग्य वस्तु ही कौन-सी है, जिसे वह प्राप्त करेगा? स्नेह, दया, माया-ममता, यह सब कहने के लिए है। माता का स्नेह, मित्र का विश्वासपूर्ण अनुराग, स्त्री का निस्वार्थ प्रेम, ये सब वस्तुयें बड़ी-बड़ी कथाओं-काव्यों में और साहित्य में ही अच्छी लगती हैं। इन सब पर रंग चढ़ा कर बहुत-से शब्दों का जाल बुन-बुन कर एक बहुत ही सुन्दर और मनोरंजक रचना की जा सकती है। परन्तु वास्तविक जगत् में इन सब का मल्य ही कितना है? प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में कम या अधिक मात्रा में इस बात की सत्यता का थोड़ा-बहुत अनुभव किया ही करता है। तो भी मनुष्य का न जाने कैसा स्वभाव है कि इन बड़ी-बड़ी बातों की चर्चा किये बिना उससे रहा ही नहीं जाता। परन्तु मुझे तो इसमे आदि से अन्त तक इन्द्रजाल का ही आभास मिलता है। जीवन के प्रभातकाल में जिस तृष्णा से हृदय में दाह आरम्भ हुआ था, उसकी ज्वाला कभी शान्त तो न हुई। किसी दिन कोई भी वस्तु मैं पा तो नहीं सका हूँ!

"परन्तु क्या किसी दिन भी नहीं पाया? शायद एक बार कुछ पा गया था, लेकिन उसकी मर्यादा की रक्षा तो की नहीं! शायद उसी का फल है, जो आज मेरी यह दशा हो रही है! लिजी की याद आते ही मुझे ऐसा लगता, मानो वह उस बिदाई के दिन की ही तरह साँझ की ओस से धुले हुए कमल के समान आँसुओं से भीगी हुई दृष्टि से उस सुदूर समुद्र पार से मेरी ओर ताक रही है। परन्तु आज उसको याद करने से क्या लाभ होगा?

"इतनी देर में शायद वे लोग घर पहुँच गये होंगे। पता नहीं, मुझे इतनी देर करते देखकर लीला क्या सोचती होगी।

मेरे प्रति उसके सच्चे हृदय का भाव क्या है, यह यदि एक बार निश्चित रूप से जान पाता! कितने दिन, कितने बार मैं उससे पूछ चुका, कभी कोई भी स्पष्ट उत्तर मिला नहीं। वह केवल यह कह कर कि मैं तुम्हें चाहती हूँ, लीला मुझे भुला रखना चाहती है। साथ ही किरण को इस समय भी भूल नहीं सकी, मन ही मन वह सदा उसी के प्रति अनुरक्त रहती है, यह बात पद-पद पर मालूम होती है।

"हृदय का यह द्वन्द्व लिये हुए सदा संशय की ज्वाला में सारे सुख-शान्ति को विसर्जित करके संसार से चिपटा पड़ा रहना अब अच्छा नहीं लग रहा है। अपने भाग्य का फल स्वयं अपने को ही चुपचाप सह लेना उचित है। इन सब बातों के पीछे किसी प्रकार का विवाद खड़ा करके मैं दूसरे की भी शान्ति नहीं नष्ट करना चाहता हूँ। × × ×

"इस नूतन प्रभात में हताश और उदास चित्त से यह सब बातें सोचते-सोचते मेरे अभिमान से क्षुब्ध हृदय में बार-बार केवल एक ही बात उदित होने लगी कि आज के इस मधुर प्रभात में इस निर्जनता में, इसी समय मेरे इस निरर्थक जीवन का अन्त हो जाय।"

( ३९ )

लीला ने वीणा पर दबाव डाल कर कुमार गुणेन्द्रभूषण के नाम जब वह पत्र लिखवा लिया तब से वीणा उसके पास नहीं जाया करती थी। साँझ को क्लब में जाना या टेनिस खेलना भी उसने प्रायः छोड़ दिया था। वह सदा अपने कमरे में बैठ कर पढ़ने-लिखने में ही अपने को फँसाये रखती थी। परन्तु लीला उसका ज़रा भी विश्वास नहीं करती थी। उसे सन्देह होता कि वीणा प्रत्यक्ष रूप से तो कुमार से कोई सम्बन्ध नहीं रखती,

शायद छिप-छिपाकर उससे पत्र-व्यवहार किया करती हो। परन्तु उसके कमरे में जाकर उसकी चिट्ठी-पत्री देखने का तो लीला को अधिकार था नहीं, अतएव उसके ऊपर कड़ी दृष्टि रखकर ही सन्तुष्ट रह जाने के अतिरिक्त उसके लिए और कोई मार्ग नहीं था।

कुमार को इतने दिनों तक न देख सकने के कारण मिसेज राय कभी-कभी चंचल हो उठती थीं। लीला ने उन्हें समझा दिया था कि कुमार कुछ विशेष कार्यवश कलकत्ते गये हैं, शीघ्र ही लौट आवेंगे।

स्वयं लीला को सबसे अधिक झंझट था अरुण के कारण। किरण जब फिर से लौट कर घर आ गया तब से अरुण को लीला के प्रति बहुत सन्देह होने लगा। ईर्ष्या के मारे वह पागल-सा हुआ जा रहा था। अरुण के हृदय की यह दुर्बलता लीला को भी मालूम थी, साथ ही वह यह भी जानती थी कि अरुण की यह ईर्ष्या अकारण नहीं है। इसलिए पहले दिन से ही वह अपनी शक्ति भर किरण से बच कर चला करती थी। परन्तु तरह-तरह के प्रयत्न करके भी वह अरुण को सुखी न कर पाती थी। लीला को ज़रा भी आने में देरी होती कि वह मारे क्रोध और अभिमान के अनर्थ खड़ा कर देता। वीणा के लिए वह चिन्तित रहा करती और उसके ऊपर उसे सदा दृष्टि रखनी पड़ती थी, इससे वह झंझट में रहा करती। यही कारण था कि पहले की तरह वह सदा अरुण के पास जम कर नहीं रह पाती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि अत्यधिक अभिमान से अभि-भूत होकर अरुण मन-ही-मन तरह-तरह की अनहोनी बातें सोचा करता, किसी समय भी उसका चित्त चिन्ता से मुक्त न रहता। इस प्रकार वह व्यर्थ में ही अपने और लीला के बीच में एक बहुत बड़ी अशान्ति पैदा कर लिया करती। इस मानसिक व्याधि

के कारण इन्हीं थोड़े दिनों में उसके स्वास्थ्य बहुत कुछ क्षीण हो चला था।

लीला को भय था कि इस तरह के चित्त को दुखी करनेवाले विचारों को हृदय में लाने के कारण कहीं अरुण की आँखें फिर न खराब हो जायँ, इसलिए अरुण को प्यार करके उसे समझाने के लिए वह अपनी समस्त शक्ति से प्रयत्न किया करती थी। परन्तु अरुण उससे सदा ही बहुत विरक्त रहा करता और उसकी ईर्ष्या जरा भी कम न होती। इससे लीला का भी चित्त बहुत दुखी हो जाता।

अरुण के इस स्वार्थमय प्रेम की तुलना में किरण का, जिसे वह भूलने का रातदिन जी-जान से प्रयत्न कर रही थी, निःस्वार्थप्रेम कितना उच्च है, इस बात का वह मन-ही-मन अनुभव करती और उसी का नाम उसके अन्तःकरण में जाग्रत रहता।

उस दिन मिस नेल्सन से मिल कर ज्योत्स्ना के सम्बन्ध में सब ठीक-ठाक करके लीला जब घर की ओर लौटी आ रही थी तब सड़क की मोड़ पर किरण से उसकी भेंट हुई थी। लीला ने दूर से ही किरण को देख लिया था और वह दूसरे रास्ते से भागना चाहती थी, किन्तु किरण ने बड़े जोर से घोड़ा दौड़ाया और तुरन्त ही उसके पास आ पहुँचा। तब और कोई उपाय न देखकर लीला ने हँसकर उसकी अभ्यर्थना की।

किरण ने स्वाभाविक ढंग से उससे कहा कि मैं इस सप्ताह में बच्चों के एक उत्सव का आयोजन कर रहा हूँ। इस सिलसिले में क्लबघर को सजाने, रोशनी का प्रबन्ध करने तथा भोज आदि का आयोजन करने के लिए मुझे तुम्हारी सहायता की बड़ी आवश्यकता है। यह बात कहने के लिए तुम्हें मैं आज दो दिन से खोज रहा हूँ।

शहर के छोटे-छोटे लड़कों को किरण बहुत चाहता था।

प्रतिवर्ष दिवाली पर उनके लिए वह एक बहुत बड़े उत्सव का आयोजन किया करता था। उस उत्सव में रोशनी होती, आतिशबाजी छूटती, तरह-तरह के खेल होते, बैंड बजता, साथ ही खाने-पीने तथा और तरह-तरह की मनोरंजक बातों का प्रबन्ध रहा करता था। इस बार दिवाली पर किरण बाहर गया था, इससे वह उत्सव नहीं हो सका। परन्तु अब जब वह लौट कर आ गया तब बच्चों को उत्सव के आनन्द से क्यों वंचित करे? दिवाली बीत जाने पर भी वे लोग क्लब घर में ठीक उसी तरह का सुखदायी उत्सव मनाने जा रहे थे।

किरण जिस समय बातें कर रहा था, लीला ने उसी समय उसकी वास्तविक अवस्था का अच्छी तरह अनुभव कर लिया। उसके मुँह पर जिस आन्तरिक वेदना की छाया थी वह फिर आरोग्य होने को नहीं थी। पहले की अपेक्षा वह कितना दुर्बल हो गया था! उसके ऊँचे और प्रसन्न ललाट पर चिन्ता और विषाद की गम्भीर रेखा थी। सूखे हुए मुँह और होठों की ओर दृष्टि डालने पर जान पड़ता था कि हँसी और आनन्द इस मुख पर से मानो सदा के लिए विदा हो गये हैं। तो भी यह मुख लीला को कितना प्रिय था! भू-मंडल भर में सबसे अधिक इस मुख को ही उसने हृदय से प्यार किया था। किन्तु आज? आज प्यार करना तो दूर रहा, अपने चिर दिन के विश्वस्त मित्र के साथ पहले की तरह स्वाधीन भाव से वह बातचीत भी नहीं कर सकती! आज वह दूसरे की वाग्दत्ता पत्नी है। बाद को दूसरी बार जब किरण से मुलाक़ात होगी तब शायद वह दूसरे की विवाहिता पत्नी हो चुकी रहेगी।

लीला की आँखों से फूट-फूट कर जल निकल रहा था। अपना काँपता हुआ अधरोष्ठ दाँतों से दबा कर वह अपने को सँभालने का प्रयत्न कर रही थी।

किरण उसके साथ साधारण मित्र की ही तरह बातचीत

कर रहा था। जो बाधा उन दोनों के बीच में अन्तराय उपस्थित करके खड़ी थी उसे अतिक्रमण करने का उद्योग करना अपमान-जनक था, परन्तु स्मृति उसके हृदय में पहले की बातों को प्रति-क्षण ही जाग्रत् किये रहती थी।

किरण की बाते जब समाप्त हो गईं तब उसके प्रस्ताव पर सहमत होकर लीला ने कहा—अच्छा ही हुआ! एक दिन सब लोग मिल कर बनायें-खायेंगे, घर सजायेंगे और बाँट-बाँट कर सारा काम-काज करेंगे। इससे वह दिन बड़े आनन्द से कटेगा। तो किस समय आना होगा?

किरण ने कहा—थोड़ा जल्दी ही आने का प्रयत्न करना। उस दिन मैं तो सवेरे से ही वहाँ रहूँगा।

"तो अरुण को भी ले आऊँगी न?"

लीला की यह बात सुनकर किरण कुछ समय तक चुप रहा। बाद को उसने कहा—हाँ, उसे भी ले आना।

यह प्रसंग समाप्त हो जाने पर वे दोनों अपने-अपने घर की ओर अलग-अलग रास्ते से चले गये। लीला के मन में यह बात आती कि एक बार उसका हाथ पकड़कर पहले की ही तरह किरण कह कर पुकारूँ। अब उसके साथ इतना दब-दब कर नहीं चला जाता। तो भी हृदय के आवेग को हृदय में दाब कर ही वह रह गई, थोड़ी-सी घनिष्ठता प्रकट करने का भी साहस उसे नहीं हुआ।

घर आकर लीला ने जब देखा तब अरुण उस समय भी टहल कर नहीं लौटा था। धीरे-धीरे दिन चढ़ता गया और धूप तेज़ हो गई। तब भी अरुण लौट कर नहीं आया। इससे लीला की व्या-कुलता उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही थी। वह सोचने लगी कि अरुण आज अकेला ही कहाँ किस ओर चला गया? इतनी देरी तो उसे और कभी नहीं होती थी। लीला यह सोच ही रही थी कि इतने में क्षान्त ने आकर उससे कहा कि वामा आज शहर

से आई थी। वह कह गई है कि वह आदमी रोज़ रुपये देकर मुझे ज्योत्सना को अपने घर से हटा ले जाने को कहा करता है। भला तुम्हीं बताओ बिटिया रानी, हज़ार हो, ज्योत्सना एक भले घर की लड़की है, भले घर की बहू है, उसे लेकर मेरी बहन रास्ते में कहाँ खड़ी होगी, जरा बताओ तो? उस मुँहजले की समझ में यह बात तो आती नहीं, केवल 'ले जाओ, ले जाओ' की ही रटन लगाये रहता है। तुम तो कहती रही हो न कि उस लौंडी के लिए कुछ प्रबन्ध कर दूँगी। यदि कुछ कर सकती हो तो एक बार प्रयत्न करके देख लो। बेचारी रोते-रोते मरने पर हो गई है।

लीला ठीक उसी समय ज्योत्सना के लिए सब कुछ ठीक-ठाक करके आई थी। उसने क्षान्त से कहा—मैंने सारा प्रबन्ध कर लिया है, दो ही चार दिन में ठीक किये देती हूँ। तू अपनी बहन से कह देना कि ज्योत्सना के लिए अब वह कोई चिन्ता न करे।

क्षान्त मन-ही-मन प्रसन्न होकर चली गई। कुमार के इस पैशाचिक स्वभाव तथा निष्ठुर व्यवहार को सोच-सोच कर लीला काँप उठी। उसके चंगुल से वीणा को यदि वह नहीं छुड़ा पाती तो उसकी भी ऐसी ही दशा होना अनिवार्य्य है।

अरुण उस दिन बहुत विलम्ब से लौट कर आया। उसका शरीर बहुत ही श्रान्त तथा अप्रसन्न हो गया था। अतएव अपने कमरे में जाकर वह सो गया। तरह-तरह के उपाय करके भी लीला उसका मन प्रसन्न करके उसे शान्त और स्वस्थ न कर सकी। उसका दिल बहलाने के लिए लीला ने किरण के उत्सव की चर्चा की और कहा कि आज उससे मुलाक़ात हुई थी, उसने हम दोनों को उस उत्सव में योग देने के लिए निमन्त्रित किया है।

अरुण ने लीला की कोई भी बात ध्यान से नहीं सुनी। उसने केवल इतना ही कहा कि मुझे सब मालूम है। तुम दोनों

जब बातचीत कर रहे थे तब मैंने देखा था। जिससे तुम लोग सुखी हो सको वही करो, मैं किसी के सुख का बाधक नहीं होना चाहता।

अरुण का मुँह देखते ही लीला उसके मन का भाव ताड़ गई थी। उसने कहा था कि मिशन में मैं अकेली ही जाऊँगी। किन्तु अरुण ने जब रास्ते में उसे देखा था तब उसके साथ किरण भी था। इसीलिए अरुण के मन में मलिनता आ गई थी।

अत्यधिक क्रोध और अपमान के कारण लीला निस्तब्ध हो गई। वह सोचने लगी कि मेरे ऊपर यदि अरुण का साधारण-सी बात के लिये भी विश्वास नहीं है, वह यदि मुझे एक बहुत ही चञ्चल रमणी के समान असार-सी समझता है, तो हम दोनों का विवाह-बन्धन विच्छिन्न हो जाना ही उचित है।

और कभी अरुण को जब अभिमान होता तब लीला उसका मनोरञ्जन करके उसे शान्त करने की चेष्टा किया करती थी। परन्तु इस बार ऐसा न करके वह चुपचाप बैठी रही। उसके इस बदले हुए भाव को देखकर अरुण की खिन्नता और भी बढ़ गई। तीन-चार मिनट तक निस्तब्ध भाव से काट कर बाद को जब वह फिर लीला से बातचीत करने लगा तब वह कहने लगी—अरुण, तुम मन में दुखी न होओ, मैंने बाध्य होकर ही कदाचित् दो-एक कड़ी बातें कह डाली हैं। तुम्हारे साथ मेरा जो सम्बन्ध है उसे ध्यान में रखते हुए मेरे प्रति तुम यदि साधारण-सी भी बात का विश्वास न कर सको तो इस बन्धन में निरर्थक पड़े रहने की क्या आवश्यकता है, यह बात मैं नहीं समझ सकती हूँ। जो लोग इतनी ईर्ष्या करते हैं वे इसके कारण अपनी कितनी हानि करते हैं, जीवन की सारी सुख-शान्ति नष्ट करके कैसा अभिशाप-ग्रस्त जीवन वहन करते हैं, यह बात यदि एक बार भी वे लोग समझ पाते तो कदाचित् ऐसी पागलपन्थी कभी न करते।

लीला की इस बात से अरुण को बड़ा अनुताप हुआ। उसने लज्जित होकर कहा—सम्भव है कि यह एक प्रकार का पागलपन या मानसिक रोग ही हो लीला, परन्तु इस संशय से मैं किसी प्रकार भी अपने को मुक्त नहीं कर पाता हूँ। तुम जब मेरे पास रहती हो तब ऐसी कोई भी बात मेरे मन में नहीं आती, परन्तु तुम्हें उसके पास देखते ही मेरा सारा मन डाँवाडोल हो जाता है। उस समय मेरे हृदय में ईर्ष्या का ऐसा प्रबल भाव जाग्रत् होता है कि उसके कारण मैं पागल-सा हो उठता हूँ। कभी-कभी तो चित्त में इतनी खिन्नता आजाती है कि आत्महत्या करके मर जाने को जी चाहता है। सम्भव है कि यह मेरे ही मन का दोष हो, किन्तु इसका मूल-कारण केवल तुम्हारे ऊपर मेरी प्रबल आसक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि कुछ दिनों तक यदि और यही हाल रहा तो मैं या तो पागल हो जाऊँगा या आत्महत्या करके मर जाऊँगा।

अरुण का उतरा हुआ चेहरा देखकर और ईर्ष्या का ऐसा भयङ्कर परिणाम सोचकर आतङ्क के मारे लीला की अन्तरात्मा काँप उठी। उस समय अरुण की अवस्था ऐसी थी कि इस तरह की कोई बात कर डालना उसके लिए असम्भव नहीं था।

अरुण के दुख से लीला का करुण और स्नेह-प्रवण हृदय कातर हो उठा। उससे अब वह रूठ कर न रह सकी। पहले की ही तरह अब वह फिर उसे बड़े आदर और यत्न से शान्त करने का प्रयत्न करने लगी। लगातार तीन-चार दिन तक वह रात-दिन अरुण के ही पास डटी रही। कभी वह उससे बातचीत करती, कभी कोई पुस्तक पढ़ कर सुनाती और कभी उसके उपन्यास का संशोधन करती। इस प्रकार अरुण वे सब बात भूल गया।

बड़े दिन की छुट्टियों में एक दिन सब लोग मिल कर शिकार के लिए जानेवाले थे। लीला ने निश्चय कर लिया कि मैं इस

दल में न सम्मिलित होऊँगी। किरण जब यहाँ है तब वह अवश्य इन लोगों के साथ रहेगा। उसके साथ यदि कहीं मेरी मुलाक़ात होगई तो अरुण कहीं फिर न कोई झंझट खड़ा कर दे। इससे वहाँ न जाना ही अच्छा है।

परन्तु वीणा की बातों को सोच कर उसके चित्त को शान्ति नहीं मिल रही थी। कुमार सम्भवतः यहीं है। उस दल में मिल कर शिकार के लिए जाने पर वीणा से उसकी मुलाक़ात हो सकती है, यह उसे मालूम था। इससे वह सोचती थी कि वह इस सुअवसर को हाथ से न जाने देगा। लीला का जी नहीं चाहता था कि दिन भर एकान्त में बातचीत करने का अवसर उन लोगों को फिर मिल सके।

इस शिकार का आनन्द लूटने के लिए अरुण अत्यधिक उत्सुक हो उठा था। किरण ने अपने अस्तबल से चुन कर उसके लिए एक बहुत अच्छा घोड़ा ला दिया था। वह जानता था कि लीला भी उन लोगों के साथ में जायगी। किन्तु जब चलने का समय आया, उससे ज़रा देर पहले लीला ने कहा कि जाते समय तुम वीणा के साथ ही साथ रहना। कुमार अच्छा आदमी नहीं है। मैं यह बिलकुल नहीं पसन्द करती कि वीणा उसके साथ घनिष्ठता स्थापित करे। आज मेरा घर पर ही रहने का विचार है, तबीअत कुछ कम अच्छी है।

अरुण ने जब यह सुना कि लीला नहीं जा रही है तब उसका उत्साह जाता रहा। दुखी भाव से उसने कहा—तब मैं भी न जाऊँगा। तुम्हें छोड़कर कहीं अकेले जाने में मुझे किसी प्रकार का सुख या तृप्ति नहीं मिलती।

लीला ने कहा—नहीं, नहीं, तुम जाओ, अच्छा है। ज़रा-सा मन बहल जायगा। कितने दिन से तुम्हारा यह सब खेलना छूट गया है।

अरुण ने कहा—तुम न चलोगी तो मैं भी न जाऊँगा। इस समय यदि न चलो तो थोड़ी देर में आकर भी तो हम लोगों से मिल सकती हो। आओगी न ?

लीला ने कहा—नहीं, मेरा शरीर अच्छा नहीं है। आज मैं बाहर कहीं न जाऊँगी। परन्तु तुम जाओ। सब लोग जा रहे हैं। तुम न जाकर घर में बैठे-बैठे क्या करोगे ? मुझे जब यह मालूम रहेगा कि वीणा के साथ-साथ तुम हो तब मैं घर पर निश्चिन्त भाव से बैठी रह सकूँगी।

अरुण ने कहा—अच्छी बात है। तुम जो कह रही हो वही करूँगा। परन्तु मैं यह कह रहा था कि उसके साथ मुझे अकेले छोड़ देने में तुम्हें ज़रा-भी आशङ्का नहीं होती ? वह यदि मेरे ऊपर अपनी मोहिनी-शक्ति का प्रभाव बढ़ावे ?

अरुण समझता था कि मेरे और वीणा के प्राचीन सम्बन्ध के विषय में लीला के हृदय में सन्देह की रेखा उदित होती होगी, किन्तु लीला के हृदय में किसी दिन भी ये सब बातें नहीं आती थीं।

अरुण के इस परिहास से लीला हँस पड़ी। उसने कौतुक से कहा—तो यदि तुम उसकी शरण लेना चाहो तो मैं तुरन्त ही तुम्हारे ऊपर से अपना सारा अधिकार उठा लूँगी। किसी दूसरे के प्रेम में भाग लेनेवाली मैं नहीं हूँ। इसके अतिरिक्त जो मेरा विवाह करेंगे वे किसी दिन मेरी ईर्ष्या का उद्रेक नहीं कर सकेंगे, इस बात का मुझे यथेष्ट विश्वास है।

"तुम बहुत ही साहसशीला हो ! यदि कोई और स्त्री होती तो ऐसा साहस न कर सकती।" यह कह कर अरुण हँसता हुआ वीणा की खोज में चला गया।

शिकार में जानेवालों का दल जब चला गया तब लीला ने शान्ति की साँस ली। उसके विवाह का दिन समीप आ रहा है। वही दिन

व्यतीत हो जाने पर किरण के साथ उसके सारे सम्बन्ध का अन्त हो जायगा। उसके बाद मे सारे उद्वेगों का भी अन्त हो जायगा। फिर उसे इस तरह से डर-डर कर छिपती न रहना पड़ेगा। यह जीवन मानो असह्य हो उठा है।

अकेली टहलते-टहलते लीला को ज्योत्स्ना की याद आई। उसने सोचा कि इस अवसर पर उससे एक बार मिल आने में कोई हानि नहीं है। खूब तेजी से घोड़ा दौड़ा कर यदि जाऊँ तो शिकारियों से बहुत पहले ही लौट कर घर आ सकूँगी।

लीला ने अपना घोड़ा तैयार करने की आज्ञा दी। वीणा के साथ घनिष्ठता होने के कारण कुमार अब ज्योत्स्ना की ओर ध्यान नहीं देता। उसके इस दुख और निराश्रित अवस्था का हाल सुनकर चुप रह जाना लीला के लिए असम्भव था।

लीला ने एक बार अपने इस विषम साहस के सम्बन्ध में मन-ही-मन विचार करके देखा। उसकी-जैसी अविवाहिता लड़की का एक पुरुष के घर पर जाना और वैसी कुत्सित घटना के सम्बन्ध में इस प्रकार प्रयत्न करना समाज की दृष्टि में कैसा जँचेगा? और अरुण? यह सब सुन कर अरुण ही उसे क्या कहेगा?

परन्तु इन सारी बातों को लीला ने एक किनारे ठेल दिया। उसने सोचा कि मेरा उद्देश जब अच्छा है तब संसार चाहे कुछ भी कहे, मै सभी बातों की ओर अपना पैर बढ़ाऊँगी।

धान के खेतों और बंसवारी के बीच की पतली गली से घोड़ा दौड़ाती हुई लीला वेग से बढ़ी। बीच-बीच में बड़े-बड़े आम के बगीचे थे। उनकी छाया से वह ठण्डी पगडण्डी लीला से अपरिचित नहीं थी। कितने ही बार वह घोड़े पर सवार होकर किरण के साथ इस रास्ते से आई-गई थी। वे दोनों कितने ही बार कुमार की जमींदारी में पिकनिक कर आये थे। उसे प्रतिदिन के प्रत्येक काम में केवल किरण की बराबर याद आती थी। ऊँचे-ऊँचे वृक्षों

की क़तार की ग्राड़ में कुमार की ऊँची ग्रट्टालिका की चूड़ा दिखाई पड़ रही थी। ग्रागे बढ़कर लीला ने देखा कि ईंट का एक बड़ा मकान है। चौड़ा-सा बरामदा है, जिसमें दोहरे खम्भे लगे हैं और ऊपर छत पड़ी है। हाते में एक ग्रोर नौकरों के रहने के लिए कोठरियों की क़तार ग्रौर ग्रस्तबल दिखाई पड़ रही थी।

फाटक के भीतर प्रवेश करके लीला ने जैसे ही रास खींची, वैसे ही नौकर दौड़ पड़े। लीला ने उन लोगों से कहा कि यहाँ जो एक स्त्री रहती है उससे मैं मिलना चाहती हूँ। यह ग्रद्भुत बात सुनकर वे नीरवभाव से लीला का मुँह ताकते रह गये। वह तो इतने दिन से इस घर में रहती है, ग्रौर कभी तो कोई नहीं उससे मिलने ग्राया !

नौकरों की भावभङ्गी देखकर लीला शान्त नहीं हुई। घोड़े पर से वह उतर पड़ी ग्रौर एक नौकर से घोड़े को ग्रस्तबल में ले जाने को उसने कहा। तब दूसरे नौकर से उसने कहा कि तुम उस स्त्री के पास मुझे ले चलो, उससे मेरा कुछ काम है।

वामा उस समय घर में झाड़ दे रही थी। बिस्तरे पर एक सुन्दर स्त्री बैठी थी। क्षान्त ने ज्योत्स्ना के सम्बन्ध में जो कुछ कहा था उसके ग्राधार पर उसे पहचान लेने में लीला को ग्रधिक क्लेश नहीं हुग्रा। उसकी भौंरे की तरह काली-काली दोनों बड़ी-बड़ी ग्राँखें कोटर में गड़ गई थीं, दुर्बल ग्रौर पीले मुख का हाड़ निकल ग्राया था। काले-काले बाल रूखे ग्रौर बेतरतीब से बंधे होने के कारण उलझ गये थे, खिले हुए गुलाब की तरह का सरस ग्रौर सुन्दर मुँह सूख कर मलिन ग्रौर विवर्ण हो गया था! इतनी ही ज़रा-सी ग्रवस्था में मानों वह जीवन का सारा ग्रानन्द, ग्राशा ग्रौर सुख खो कर बैठी हुई मृत्यु की प्रतीक्षा कर रही थी।

लीला सीधे उसके पास जाकर बैठ गई। उसने कहा—तुम्हारा नाम ज्योत्स्ना है न ?

लीला को देखते ही अवाक् होकर ज्योत्सना उसकी ओर ताक रही थी। उसने कहा—मैं ही ज्योत्स्ना हूँ, किन्तु मैं तो आपको पहचान नहीं पाती हूँ!

लीला ने कहा—तुम्हारा अभी लड़कपन है। तुम पहचानती ही किसे हो? मैं यहाँ पास में ही रहती हूँ। सुना है कि तुम बड़े क्लेश में हो, इससे आई हूँ कि शायद मैं तुम्हारी कुछ भलाई कर सकूँ?

"मेरी भलाई? क्या अब भी मेरी किसी प्रकार की भलाई हो सकती है दीदी?" यह कह कर ज्योत्स्ना दोनों हाथों से मुँह ढक कर रोने लगी।

दासी ने कहा—लो, फिर शुरू हो गया। खाना-पीना बन्द है, नींद नहीं आती, चौबीस घंटे रोना ही रोना रहता है। इस तरह भी मनुष्य कहीं जीवित रह सकता है?

लीला ने कहा—ऐसा क्यों करती हो ज्योत्स्ना?

ज्योत्स्ना का कण्ठ आँसुओं से रुँधा था, अतएव उसके मुँह से कोई आवाज़ न निकली।

वामा ने अपने ललाट पर दो उँगलियाँ ठोंक कर कहा—कर्म में जो लिखा था वही हुआ। और क्या कहूँ बच्ची? घर में कितने आदर से रहती थी यह! मौज से खाती-पीती और खेलती-कूदती थी। आज इसकी यह दशा? इसके स्वामी को ही देखो, विलायत से एक मेम लेकर लौटा है। उसको भी कोई कुछ कहेगा? इधर इस नादान लड़की को देखो। एक मुँहजले ने बलात्कार से घर से घसीट लाकर बीच रास्ते में छोड़ दिया। बस, अब इसका अपराध अक्षम्य है! आत्मीय-स्वजन सब खोकर बेचारी रोते-रोते मरणासन्न हो उठी है! कितने बड़े घर में इसने जन्म लिया है और कितने बड़े घर की यह बहू है। आज इसका यह हाल कि कहीं खड़े होने को भी जगह नहीं है! और वह पापी

मुझसे बार-बार यही कहता है कि तुम इसे ले जाओ, जैसे भी हो सके, इसे यहाँ से दूर करो। तुम्हीं बतलाओ बच्ची, मैं इसे कहाँ ले जाऊँ? बड़े यत्न से पाल-पोस कर मैंने इसे इतनी बड़ी किया है, इसे मैं छोड़ नहीं सकती हूँ, इसी लिए यहाँ पड़ी हूँ। परन्तु मेरे पास कौन-सी ऐसी जगह है, जहाँ इसे ले जाऊँ?

लीला ने कहा—ज्योत्स्ना, तुम्हें बुलाने के लिए यदि कोई आदमी भेजूँ तो तुम आओगी?

ज्योत्स्ना ने पूछा—कहाँ?

लीला ने उत्तर दिया—अच्छी जगह। वहाँ सभी लोग तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करेंगे।

ज्योत्स्ना ने कहा—मेरे आत्मीय-स्वजन तो अब मुझे अपने यहाँ रहने न देंगे। किन्तु मेरी इच्छा केवल अपने ही घर जाने की है। मुझे और कहीं सुख न मिलेगा। दीदी, क्या तुम एक बार उन लोगों से मेरे सम्बन्ध की बातचीत करोगी? मैं स्वयं अपनी इच्छा से तो यहाँ आई नहीं। मुझे वे लोग क्यों अपराधी ठहराते हैं? यह घर और यह संगति मुझे विष-सी मालूम पड़ रही है। या तो मुझे मृत्यु की कोई ओषधि दे दो या ऐसा कोई उपाय कर दो दीदी, जिससे अपने घर में मैं फिर से स्थान प्राप्त कर सकूं। मुझसे अब और इस तरह नहीं रहा जाता।

ज्योत्स्ना फिर रोने लगी। उसने कहा—मेरी एक चिड़िया थी, वह मुझसे कितनी हिली थी। वह उड़कर मेरे हाथ पर बैठ जाती और खाना खाने लगती थी। मेरा छोटा भाई शायद अब बहुत बड़ा हो गया होगा। अब तो वह चलने भी लगा होगा। अब वह बातें भी करने लगा होगा। इन सब की याद आने पर एक क्षण भी स्थिर होकर मैं यहाँ नहीं रह पाती हूँ। दीदी, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, तुम कोई उपाय कर दो जिससे मुझे घर जाने का अधिकार मिल जाय।

ज्योत्स्ना के मर्मभेदी क्रदन से स्वयं लीला भी रोकर व्याकुल हो उठी। दासी ने दुखी भाव से मस्तक हिलाकर कहा—व्यर्थ ही में रो-रोकर प्राण देती हो बच्ची! यदि तुम सचमुच माथा पीट-पीटकर मर जाओ, तो भी उस घर में लौटकर अब नहीं जा सकती हो। चाहे कितना भी रोओ, सब व्यर्थ है।

लीला ने आँखें पोंछ कर कहा—ज्योत्स्ना, सुनो। अब तुम अपने पिता के यहाँ नहीं जा सकती हो। मैं कहूँ भी तो उसका कोई प्रभाव न पड़ेगा। परन्तु किसी और घर में मैं तुम्हारा प्रबन्ध कर सकती हूँ। वहाँ तुम अच्छी दशा में रहोगी। तुम्हारी ही जैसी और भी बहुत-सी स्त्रियाँ वहाँ रहती हैं। उनके साथ तुम्हें कोई क्लेश न होगा।

दासी ने कहा—तो वहीं ठीक कर दो बच्ची! इसका जब कुछ ठीक हो जाता तब मेरे जी में जी आता। मारे चिन्ता के मैं तो पागल हुई जा रही हूँ।

लीला ने कहा—कल दोपहर को मैं पालकी भेजूँगी, तुम इसे लेकर चली आना। कहाँ रहना होगा और क्या करना होगा, यह सब मैं ठीक कर रक्खूँगी, तुम लोगों को कोई चिन्ता न करनी पड़ेगी। ज्योत्स्ना, तो आज मैं चलती हूँ, तुम रोओ मत, चित्त स्थिर करके रहो, तुम्हें अब यहाँ न रहना पड़ेगा। जहाँ तुम्हें कर दूँगी, वहाँ तुम बड़े सुख से रहोगी। कभी-कभी आकर तुमसे मुलाक़ात भी कर लिया करूँगी। ठीक है न?

बात ही बात में बहुत देरी हो गई, किन्तु लीला यह न जान सकी। ज्योत्स्ना के कमरे से निकल कर जैसे ही वह बरामदे में आई, कुमार गुणेन्द्रभूषण से मुलाक़ात हो गई। ठीक उसी समय कुमार लौटकर घर आये थे।

लीला को देखते ही पहले तो अत्यधिक विस्मय के कारण वे हतबुद्धि हो गये थे, किन्तु क्षण भर में ही अपना वह भाव दबा

कर आगे बढ़े और बहुत ही विनीत भाव से लीला को नमस्कार किया। अन्त में उन्होंने लीला से कहा—अकस्मात् आपका दर्शन प्राप्त करने का जो गौरव मुझे मिला है उसके कारण मैं धन्य हो गया हूँ। किन्तु किस लिए इस सम्मान का अधिकारी हुआ हूँ, क्या मैं यह पूछ सकता हूँ ?

उसकी काली-काली आँखों और अधरों में परिहास की एक कोमल हँसी उदित हो आई। लीला को ऐसा जान पड़ा, मानो यह कोई सुन्दर नृशंस जन्तु है।

कुमार लीला के मुखमण्डल की ओर अपने उज्ज्वल और ज्योतिर्मय नेत्रों की तीव्र दृष्टि से टकटकी लगाकर ताक रहे थे। जिस दृष्टि के समक्ष मोहाविष्ट होकर वीणा आत्मसमर्पण करने को तैयार हो जाया करती थी, लीला ने उसी मोहमयी दृष्टिकी ओर बड़ी तेजस्विता के साथ अवज्ञापूर्ण दृष्टि से ताका, कोई उत्तर नहीं दिया।

उन दोनों के चारों ओर घर के नौकर-चाकर एकत्र होकर पत्थर की मूर्त्ति-से खड़े होकर ताक रहे थे। सभी के चेहरे पर आशंका तथा उद्वेग की रेखा थी, मानो अभी ही कोई बहुत बड़ा अनर्थ होना चाहता है।

लीला बगल काट कर जाने को उद्यत हुई, किन्तु कुमार ने आकर उसका मार्ग रोक लिया। लीला की ओर ताक कर बहुत ही निर्लज्ज भाव से उन्होंने कहा—आज्ञा दीजिए मिस राय, आपके जल-पान आदि का कुछ प्रबन्ध हो जाय, यहाँ थोड़ा-सा विश्राम करके तब जाइएगा। बहुत दिन से ऐसे आदरणीय अतिथि का आगमन मेरे घर पर नहीं हुआ। आज की इस मुलाक़ात के कारण बहुत सम्भव है कि हम दोनों में मित्रता भी हो जाय।

लीला ने बहुत ही गम्भीर भाव से कहा—आप रास्ता छोड़कर अलग खड़े होइए, मैं अभी यहाँ से जाना चाहती हूँ।

"आप पागल तो नहीं हो गई है ? जज साहब की लड़की है, अच्छी तरह से आदर-सत्कार किये बिना इतनी जल्दी यदि छोड़ दूँ तो वे ही अपने मन में क्या कहेंगे ?"

लीला ने कहा--आपके आदर-सत्कार की आवश्यकता मुझे नहीं है। आप मेरे रास्ते से अलग खड़े होइए।

"यह असम्भव है, मिस राय ! यह नहीं हो सकता। सात-आठ मील की दूरी से थकी-माँदी होकर आई हो, ज़रा-सा जल-पान कराये बिना मैं कभी छोड़ सकता हूँ ! मेरा हृदय लोहे का तो बना नहीं है ! इसके अतिरिक्त आप ऐसी-वैसी अतिथि भी नहीं है, जज साहब की कन्या हैं !"

लीला के नेत्रों में आग जल उठी। उसने कहा--किसी से मेरा घोड़ा लाने को कहिएगा या मैं यों ही चली जाऊँ ? यहाँ मैं अब एक मिनट भी न रुकूँगी।

लीला के उत्तेजनापूर्ण मुँह की ओर ताककर कुमार ने कहा--वाह, कैसी सुन्दरता है ! क्रोध आने पर आपकी सुन्दरता कितनी खिल जाती है ! आप ने मुझे समझा नहीं मिस राय, यही बड़ा दुख रह गया।

और कुछ न कहकर दूसरी ओर से लीला बरामदे से नीचे उतर आई। कुमार भी बड़ी उतावली के साथ नीचे आकर फिर उसका रास्ता रोककर खड़े हो गये। उन्होंने कहा--कोशिश करना बेकार है मिस राय, आप जब तक यहाँ आने का कारण न बतलावेंगी तब तक मैं आपको किसी तरह भी नहीं छोड़ूँगा। इसके अतिरिक्त इतनी उतावली ही किस बात की है ? यहाँ आने का समाचार तो चारों ओर फैल ही चुका है। अब चाहे इस समय जाइए या दो घण्टा बाद जाइए, दोनों एक ही बात है। बतलाइए, यहाँ क्यों आई थीं ?

लीला ने घोड़े का चाबुक बड़े जोर से मुट्ठी में दबाकर पकड़ा।

उसने कहा—मैं तुमसे इस बात पर बहस नहीं करना चाहती। तुम मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे यहाँ रोक रखने का साहस करते हो? क्रोध से उसके माथे की नसें फूल आईं।

"मैं बहुत ही दुस्साहसिक कार्य करने का भी साहस करता हूँ! जिस समय आपने यहाँ पैर रक्खा था, उसी समय अपने इस कार्य के गुरुत्व के सम्बन्ध में आपको सोच-विचार लेना चाहिए था। बतलाइए, क्या सोचकर आप यहाँ आई हैं?"

अग्निमय नेत्रों से कुमार की ओर ताक कर लीला ने कहा—कभी न बतलाऊँगी। देखती हूँ, आप में कितनी ताक़त है?

कुमार ने धूर्तता की हँसी हँसकर कहा—आहा, बतलावेंगी क्यों नहीं? भला इतना क्रोध क्यों कर रही हैं, आप नहीं बतलातीं तो मैं ही बतलाये देता हूँ। शायद मेरे घर का कोई भेद-भाव लेने के लिए ही आप यहाँ आई हैं, नहीं तो मैं यह आशा तो कर नहीं सकता कि आप मुझसे मिलने के ही लिए यहाँ आई हों?

लीला के कोई भी उत्तर न देने पर कुमार ने फिर कहा—यदि आप कुछ कहना ही नहीं चाहतीं तो थोड़ी देर तक ठहरिएगा तो अवश्य ही। मैं तो आपका पहले का व्यवहार भूल ही गया हूँ। आइए, उन सारी बातों को भूल कर थोड़ी देर मौज उड़ाई जाय। उसके बाद भी यदि लेफ्टिनेंट साहब पसन्द करेंगे तो न होगा तो आप उनके हवाले कर ही दी जायँगी।

"तो आप की यही इच्छा है? अच्छी बात है, पहले कुछ पुरस्कार भी ले लीजिए।" यह बात समाप्त होते ही लीला ने बिजली की-सी तेजी के साथ कुमार के मुँह पर बड़े जोर से घोड़े का चाबुक जमा दिया। आँख की पलक से लेकर गाल तक का चमड़ा कट गया और रक्त की धारा बहने लगी।

यातना से अधीर हो कर कुमार ने दोनों हाथों से अपनी आँखें जैसे ही ढाँकीं, लीला ने एक धक्का देकर उन्हें रास्ते से

अलग कर दिया और अपना घोड़ा खोल कर एक छलांग में ही उस पर सवार होगई। लीला का घोड़ा खूब सिखाया हुआ था, एक चाबुक जमाते ही वह वायु के-से वेग से चला और क्षण भर में ही अदृश्य हो गया।

कुमार की हथेलियों के नीचे से होकर रक्त बह रहा था। हाथों से नेत्रों को दबाये हुए गरज कर उन्होंने कहा---पकड़ो, पकड़ो, इस दुष्टा को। सालो, तुम लोग मुँह बाकर ताकते क्या हो ? दौड़ो, पकड़ो।

परन्तु नौकरों में से कोई एक तिल भी आगे नहीं बढ़ा। लीला को सभी पहचानते थे। उसे पकड़ने की चेष्टा करके जज साहब के क्रोध का पात्र बनने का साहस कौन कर सकता था ?

( ४० )

मनुष्य जहाँ अत्यधिक आशा करता है वहाँ उसे बहुधा निराश ही होना पड़ता है। लीला के भाग्य में भी यही बात घटी। सप्ताह भर वह प्रतिदिन ही इस बात की एकान्त आशा करती रही है कि किरण के उत्सववाले दिन का वह आदि से अन्त तक पूर्णरूप से उपभोग करेगी। उस दिन सवेरे से रात तक किरण के पास रह कर वह उसके सारे कामों में सहायता देगी---ठीक बहुत दिन पहले की तरह। जिससे वह थोड़े दिनों में सदा के लिए पृथक् हो जायगी, विदाई से पहले एक दिन ठीक पहले की ही तरह उसके साथ मित्रभाव से व्यतीत करने की आशा होने के कारण उसे जो आनन्द हुआ था उससे वह प्रफुल्लित हो उठी थी। लीला ने सोचा था कि अरुण भी वहाँ उपस्थित रहने पर सहमत है। इससे सब लोग मिल कर बनायें-खायँगे, क्लबघर सजावेंगे। इन सब कामों में वह दिन बड़ी मौज से कटेगा।

परन्तु उस खास दिन को ही अरुण को जाड़ा देकर बुखार

आ गया, मस्तक में बहुत पीड़ा होने लगी। तो भी उसने लीला से वहाँ जाने के लिए अनुरोध किया। अरुण उसका मनोरञ्जन और आनन्द नष्ट नहीं करना चाहता था। उसका जो काम-काज होगा वह नौकर-चाकर कर देंगे, और मिसेज़ राय देख-रेख करती रहेंगी, इतना ही उसके लिए काफ़ी होगा। परन्तु लीला ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया। अरुण उसका बिलकुल अपना आदमी है। वह बीमारी के कारण बिस्तरे पर पड़ा कराहता रहेगा और लीला उसे छोड़ कर निश्चिन्त हृदय से मनोरञ्जन करने जायगी! ऐसा कभी नहीं हो सकता। इससे स्वभावतः वीणा को अकेली ही जाना पड़ा। लीला ने बड़े आग्रह से वीणा से कहा कि तुम किरण को मेरी अनुपस्थिति का कारण अच्छी तरह समझा देना।

अरुण ने कहा—मेरे कारण आज का तुम्हारा आनन्द मिट्टी में मिल गया, इसके लिए मुझे बड़ा दुख हो रहा है।

"क्या मनोरञ्जन ही इतनी बड़ी चीज़ है अरुण? तुम रोग की यातना से बिस्तरे पर पड़े-पड़े छटपटा रहे हो, यह जानते हुए भी भला क्या मैं वहाँ जाकर स्थिर हृदय से मनोरञ्जन कर सकूँगी?

अरुण ने कहा—यह बात तो ठीक है। चली जातीं तो मेरी यह पीड़ा दूनी बढ़ जाती। तुम जब मेरे पास हो तब बहुत दिन तक बिस्तरे पर पड़ा रह कर भी मैं अधीर नहीं हो सकता हूँ।

उस दिन सवेरे से साँझ तक लीला ने अरुण के ही कमरे में बैठे-बैठे काट दिया। कभी वह अपने कोमल और शीतल हाथ से अरुण का माथा दबाती, कभी उसे कोई पुस्तक पढ़ कर सुनाती, कभी गप-शप करती और बीच-बीच में उसे कुछ खाने को भी देती। इसी तरह सारा दिन बीत गया।

चार-पाँच बजे तक अरुण का ज्वर उतर गया और उसकी तबीअत कुछ ठिकाने पर आई। उस समय फिर अरुण ने लीला

से उत्सव में जाने का अनुरोध किया। इस बार और कोई आपत्ति न करके लीला अपने माता-पिता के साथ क्लब में गई। बहुत दिन के बाद फिर से इस उत्सव-गृह के आनन्द-कोलाहल में आकर लीला का इतने दिनों का एकत्र विषाद का भार मानो कहीं अन्तर्हित हो गया था।

छोटे-छोटे बच्चों से भरे हुए एक 'हाल' में खड़ी होकर लीला ने फिर अपने को उन लोगों के ही समान एक छोटा-सा बच्चा समझ लिया। उन लोगों के आनन्द और उत्सव में उसने भी ठीक बच्चों की ही तरह सरल और प्रफुल्ल हृदय से सहयोग किया।

हाल में खड़ी होते ही एक बार किरण से उसकी मुलाक़ात हुई। उस समय किरण बहुत व्यस्त था। लीला के पास खड़े होने या उससे बातचीत करने का समय उसे नहीं था। उसने एक बार उस उच्च कोलाहल से मुखरित गृह में लीला के प्रसन्न मुख और खिले हुए स्नेहमय नेत्रों की ओर प्रेम से देखा और मन ही मन तृप्त और प्रसन्न होकर बग़ल से चला गया।

क्लब के कमरे कमरे में बिजली की बत्तियाँ क़तार की क़तार जल रही थीं। उनके प्रकाश से सारा क्लब धवलित हो उठा था। हर एक कमरे में बच्चों के मनोरञ्जन के लिए तरह-तरह के खेल-तमाशों का प्रवन्ध था। मैजिक, वायस्कोप, बेंड और खेल आदि के समाप्त हो जाने पर भोज आरम्भ हुआ।

भोज आदि समाप्त हो जाने पर वीणा चौधरी तथा अपने अन्यान्य मित्रों से बातचीत कर रही थी, इतने ही में कुमार गुणेन्द्र-भूषण कमरे में प्रविष्ट हुए और धीरे-धीरे वीणा की ओर बढ़े।

कुमार को दूर से ही देखकर लीला का हृदय काँप उठा। उसने स्वयं अपने हाथ से कुमार के ऊपर जो आघात किया था उसके कारण उनके गोरे मुँह का चमड़ा कट गया था और वहाँ गहरे काले रंग की एक लम्बी-सी रेखा बन गई थी।

कुमार वीणा के पास आकर ऐसे भाव से बातचीत करने लगे, मानो अभी जरा देर पहले ही वे दोनों एक दूसरे से पृथक् हुए हैं। उनकी घनिष्ठता देखकर चौधरी का चेहरा उतर गया और वह गम्भीर भाव से वहाँ से दूर हट कर जा खड़ा हुआ। वीणा के दूसरे मित्रों के भी वहाँ से अन्यत्र चले जाने पर कुमार और वीणा वहीं अकेले में बैठे रहे।

लीला को ऐसा जान पड़ा, मानो कुमार वीणा से दृढ़ भाव से कोई बात कह रहे हैं और वीणा उसका प्रतिवाद कर रही है।

लीला उसी समय वीणा को बुला लाने के लिए उठ कर खड़ी हुई। ठीक उसी समय जरा-सा अवसर पाकर किरण उसके पास आया और बैठ गया। उसने कहा—जरा-सा ठहरो लीला, साँझ से लेकर इस समय तक एक बार भी तुमसे बातचीत करने का अवसर नहीं मिला। यहीं बैठो, दो-चार बातें की जायें। कहाँ जाती थीं तुम ? क्या कोई काम है ?

लीला ने कहा—किरण, वीणा के साथ कुमार का इस तरह मिलना-जुलना मुझसे बिलकुल ही सहा नहीं जाता। तुम जरा-सा बैठो, मैं उसके पास से वीणा को बुलाये लाती हूँ।

लीला का हाथ पकड़ कर किरण ने उसे अपने पास बैठा लिया। उसने कहा—रहने दो। यहाँ वह वीणा की कोई हानि नहीं कर सकता। तुम फिर आवश्यकता से अधिक सन्देहशील हो गई हो।

लीला ने फिर कहा—मैं उस आदमी का रत्ती भर भी विश्वास नहीं करती। जैसा यह आवारा है वैसी ही अशिष्टतापूर्ण इसकी बातचीत और व्यवहार है!

इस सम्बन्ध में किरण को कोई आग्रह नहीं था। वीणा से वह मन ही मन घृणा करता था और कुमार तो बातचीत करने के लायक़ भी नहीं थे। वह केवल लीला को चाहता था, लीला

के ही साथ बातचीत करने के लिए उत्सुक था। उस समय सभी लोग अपने-अपने मामले में व्यस्त थे, एकान्त में बातचीत करने का अवसर इससे बढ़कर और कोई नहीं मिल सकता था। इसलिए किरण ने लीला को जाने न दिया और कहा कि यहीं से उन दोनों के ऊपर दृष्टि रक्खो। तुम आज दिन भर आई नहीं हो, इससे आज का सारा उत्सव ही मिट्टी हो गया।

"बतलाओ, भला मैं कैसे आऊँ? अरुण को इतना ज्वर हुआ था, मस्तक में इतनी पीड़ा थी, उसे अकेला छोड़ कर मैं कैसे आ सकती थी? परन्तु वीणा तो कहती थी कि आज का दिन बड़े आनन्द से कटा है। फिर उत्सव कैसे मिट्टी हो गया?"

"वीणा की बात छोड़ दो। मेरी दृष्टि में उसकी किसी भी बात का कोई मूल्य नहीं है। मेरा उत्सव क्यों नष्ट हुआ, यह भी क्या तुम्हें बतलाना होगा? ऐसा कह कर किरण ने गम्भीर दृष्टि से लीला के मुँह की ओर देखा।"

किरण की उस दृष्टि से बहुत ही अस्वस्थ भाव का अनुभव करके लीला ने अपना मुँह नीचा कर लिया और कहने लगी—आज समस्त दिन तुम्हें अकेले ही बहुत परिश्रम करना पड़ा है.... न? स्त्रियों ने आकर क्या तुम्हारी कोई सहायता नहीं की?

किरण ने कहा—लीला, व्यर्थ की बातों में समय न नष्ट करो। मुझे तुमसे बहुत-सी बातें कहनी हैं। आज कई दिनों से मेरे मन में एक नई बात उदय हुई है। तुमसे कहने का अवसर मुझे नहीं मिलता। तुम बड़े अनुचित मार्ग का अनुसरण कर रही हो लीला!

लीला ने इस बार अपनी विस्मयपूर्ण दृष्टि उठाकर किरण की ओर देखा।

किरण ने कहा—मेरी समझ में नहीं आता कि तुम मेरे साथ ऐसा व्यवहार क्यों कर रही हो? क्या तुम मेरी बातें समझ नहीं

पाती हो ? मैं तुमसे फिर कहता हूँ......तुम अपने जीवन के मार्ग में बहुत बड़ी भूल कर रही हो !

अपना मुँह फेर कर गम्भीर भाव से लीला ने कहा—हम लोगों का इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का वाद-विवाद न करना ही अच्छा है किरण !

"नहीं, यह ठीक नहीं है। इस विषय पर बहुत ही सोच-समझ कर विचार करना चाहिए। यह तुच्छ समझकर उड़ा देने की बात नहीं है लीला !"

बोलते-बोलते किरण उत्तरोत्तर उत्तेजित होता गया। उसने कहा—तुम्हें यह खूब अच्छी तरह सोच-समझ लेना चाहिए कि तुम क्या करने जा रही हो। यदि दूसरे दृष्टिकोण से तुम इस विषय पर विचार करो तो क्या तुम इस समय भी अरुण को बराबर प्रतारित नहीं करती जा रही हो ?

लीला ने इस बार बहुत ही रुखाई से उसकी ओर ताका। उसने कहा—किरण !

किरण ने कहा—तुम कहा करती हो न कि मैं सदा न्याय और सत्य के मार्ग पर चला करती हूँ। और यह क्या कर रही हो ? तुम अरुण से कहती हो कि मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ और वह यही विश्वास करके आनन्द में मग्न है। इधर तुम्हारे हृदय की सच्ची बात क्या है ? जिससे तुम प्रेम करती हो वह अरुण नहीं है। वह—

लीला का मस्तक उसके सीने पर लुढ़क पड़ा। दोनों हाथों से कान मूँद कर वह मुर्दा-सी निस्पन्द होकर पड़ी रही। किरण के मुँह से उन अवशिष्ट शब्दों को सुनने भर का साहस या धैर्य उसमें नहीं रह गया था। यह बात तो सारी की सारी सच थी, उसे मिथ्या कहकर अस्वीकार कर देने का उपाय तो नहीं था। परन्तु वह कर ही क्या सकती थी ?

· कुछ क्षण तक नीरव रहकर किरण ने फिर कहा—तुम ऐसा क्यों कर रही हो लीला ? सोच-समझ कर देखती क्यों नहीं हो ? एक आदमी के लिए दो-दो आदमियों का जीवन नष्ट करना कोई अच्छे गुण का परिचायक नहीं है। अरुण आदमी की ही तरह अपनी इस निराशा को सहन कर लेगा। अब वह अपनी दृष्टि फिर लौटाल पाया है। जिस समय वह अन्धा था, उस समय उसकी यातना और अभाव का मैंने खूब अच्छी तरह अनुभव किया था। उसे तुम्हारी कितनी आवश्यकता थी, यह बात मैंने तुम्हारी ही तरह समझा था......लीला ? उस समय यदि उससे ईर्ष्या करने की प्रवृत्ति मेरे हृदय में होती तो मैं अपने को गोली मार देने में भी संकल्प-विकल्प न करता। परन्तु आज तो अब वह दिन नहीं है ? अब हम दोनों आदमी उसके लिए इतना क्यों सहन करेंगे......बताओ तो ?

हृदय के प्रबल और द्रुत स्पन्दन से मानो लीला का कण्ठ रुँधा जा रहा था। इन सब अनुचित बातों को वह बन्द कर दे, यह शक्ति भी उसमें नहीं थी। किरण का प्रस्ताव तथा लीला की ओर की निराशा अरुण न सह सकेगा, यह लीला को खूब मालूम था। वह समझती कि अरुण सैनिक है, वीर है, किन्तु इस दिशा में वह स्त्री से भी कोमल है और यह आघात सहन करना उसके लिए असम्भव है।

बड़ी देरी के बाद ज़रा-सा अपने को सँभाल कर लीला ने मस्तक उठाया। उसने कहा—किरण, क्या तुम चाहते हो कि मैं अपना सम्मान नष्ट कर दूँ ?

किरण ने कहा—नहीं लीला, मैं चाहता हूँ कि तुम अपने नारीत्व के सम्मान की रक्षा करती रहो। मेरी बात तुम ठीक-ठीक नहीं समझ रही हो।

लीला ने दृढ़ स्वर से कहा—मैंने समझ लिया है, किन्तु मेरी

अवस्था को तुम भी समझ लो किरण ! मेरा विश्वास है कि आदमी जब एक बार किसी को कोई वचन दे देता है तो वह सर्वथा अपरिवर्त्तनीय हो जाता है। उस समय वह अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य होता है, संयोगवश उसका परिणाम चाहे कैसा भी हो। अब मैं उसे वचन दे चुकी हूँ। जब वह अन्धा था तब स्वयं अपनी इच्छा से ही उसे सुखी करने के लिए गई थी, उसके लिए अरुण की ओर से किसी प्रकार का भी प्रयत्न नहीं था। मेरा वह कार्य सार्थक हो गया है। मैंने जितनी आशा की थी, उससे कहीं अधिक वह सुखी हो गया है। उसकी दृष्टिशक्ति जो फिर से लौट आई है वह भी उसके मानसिक सुख के ही कारण लौटी है। इसके अतिरिक्त मैं यह जानती हूँ कि अपनी आँखों से देखकर भी वह मुझे कितना प्यार करता है। उसे यदि मैं निराश कर दूँ तो उसके हृदय पर कितना आघात पहुँचेगा और मेरे ऐसा करने पर उसे कितनी हानि पहुँचने की सम्भावना है। यह जानते हुए भी उसे छोड़कर मैं भला क्या और किसी भी अवस्था में सुखी हो सकती हूँ? तुम्हीं बतलाओ !

किरण ने कहा—लीला, मैं फिर कहता हूँ, मेरी बात तुम खूब समझ लो। जिसके साथ विवाह करने का तुमने सङ्कल्प किया है, अपने सम्पूर्ण अन्तःकरण से उसे प्यार करके उसी के साथ विवाह करो, यही तुम्हारा धर्म है। उसे वञ्चित करना तुम्हें उचित नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम इस दिशा में अपने आत्मबल पर निर्भर रह कर चलो। उसे सारी बातें खोल कर बता दो। क्या उसे इस सम्बन्ध की सारी बातें जान लेना उचित नहीं है? संसार में ऐसा कौन-सा आदमी है जो किसी स्त्री से यह कह देने पर भी कि मैं अमुक व्यक्ति से प्रेम करती हूँ, उससे विवाह करना चाहेगा, उस स्त्री के प्रति उसका प्रेम चाहे कितना ही क्यों न हो?

लीला ने फिर दोनों हाथों से अपना मुँह ढँक लिया। उसके

हृदय का बल उत्तरोत्तर कम ही होता जा रहा था। किरण के पास रहकर और उसकी यह सन एकान्त अनुराग की बात सुनकर अपने धैर्य की रक्षा करना लीला की शक्ति से परे हो गया।

लीला को नीरव देखकर किरण ने निराशा के स्वर में कहा—मैं देखता हूँ कि तुम जान-बूझ कर दिन-दिन मुझे भूलती जा रही हो। तुम्हारे ऊपर अरुण का कोई अधिकार नहीं है, तुम्हारे ऊपर पूर्ण अधिकार मेरा है। एक-मात्र प्रेम ही यह अधिकार दे सकता है! लीला, तुम सुनती क्या हो? मैं किसी तरह भी तुम्हें उसके हाथ में न छोड़ सकूँगा। मैं क्लान्त हो गया हूँ। निरन्तर यह संग्राम करते-करते हृदय मेरा क्षत-विक्षत हो गया है। अब मुझमें सामर्थ्य नहीं है? किन्तु तुम सदा केवल अरुण की ही दशा पर क्यों विचार किया करती हो? मेरी ओर, जिससे तुम प्रेम करती हो, एक बार भी क्यों नहीं ध्यान देती हो? क्या तुम मुझसे प्रेम करने की बात कभी अस्वीकार कर सकती हो? लीला, मुँह ऊपर करो, मेरी ओर घूम कर ताको?

लीला ने मुँह ऊपर करने का साहस नहीं किया। उसे हाथ से ढक कर जड़भाव से वह वैसी की वैसी ही बैठी रही। पीछे खिड़की से आकर मन्द-मन्द वायु उसका कुन्तल-जाल अपने साथ उड़ा रहा था। उस क्षण उसके दृष्टि-पथ से वीणा, कुमार, जनता तथा उत्सव के सभी चित्र तिरोहित हो गये। और सब प्रकार के शब्दों को विलीन करके केवल किरण के प्रेम से लबालब भरे हुए शब्द उसके कान में मधुर से मधुर स्वर में गूँजने लगे। अरुण का उसके प्रति अन्धानुराग, उसका कोमल हृदय और उसके फिर से दृष्टिहीन हो जाने की सम्भावना आदि सब भूलने-सा लगा। इस दुस्तर विपत्ति के मुँख में पड़कर लीला बहुत ही दीनभाव से अपना साहस और शक्ति प्राप्त करने के लिए मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी। उसने मुँह नहीं उठाया। किरण की किसी भी बात का उत्तर नहीं दिया।

ज़रा देर तक प्रतीक्षा करके किरण ने फिर कहा---लीला, मुँह ऊपर करो, मेरी बातें सुनो। जिस दिन पहले-पहल तुमसे मेरी मुलाक़ात हुई थी, उस दिन से लेकर आज तक की प्रत्यक घटना मेरे अन्तस्तल पर लिखी है। उन सब बातों को मैं किसी दिन भी भूल न सकूँगा। जिस दिन कल्याणपुर के राजभवन में ज्वर से तुम अचेत हो पड़ी थीं, उस दिन की बात? उस दिन मैंने तुम्हें एकान्त-भाव से अपनी ही समझा था, मेरे हृदय में यह बात कभी नहीं आ पाई कि एकाएक कोई और ही आकर तुम्हें मेरे हाथ से छीन लेगा। लीला, सच-सच बतलाओ, कौन-सी ऐसी बात है जिससे अरुण के कारण हम-तुम दोनों को ही आजन्म के लिए इतना बड़ा त्याग करना पड़ेगा? मैं तुम्हें प्यार करता हूँ अपने समस्त अन्तःकरण से। समझ जाओ, भूल मत करो, मेरी ओर देखो!

किरण लीला के नेत्रों से उसके हृदय का भाव समझने की चेष्टा कर रहा था। लीला ने कुछ क्षण तक जोर देकर अपने मन को दबाये रक्खा, किन्तु बाद को किरण की प्रबल आकर्षण-शक्ति के सामने उसे हार माननी पड़ी। उसने मुँह उठाया और अत्यधिक अनुनयपूर्ण दृष्टि से किरण के मुँह की ओर ताकने लगी।

लड़के उछल-कूद कर खेल रहे थे। हर ओर उनका आनन्द-पूर्ण तथा उच्च कंठस्वर सुनाई पड़ रहा था। हाल में पियानो बज रहा था और कोई आदमी ऊँचे स्वर से गा रहा था।

लीला कुछ कहने ही जा रही थी, इतने ही में संगीत और बच्चों के आनन्द-कल्लोल को दबाकर किसी रमणी के कंठ से निकली हुई बड़े ज़ोर की चीख़ सुनाई पड़ी। उस चीख़ से सारा क्लब काँप उठा।

अपनी सारी बातें भूल कर लीला और किरण एक साँस में उस ओर दौड़े। और सब भी जो जहाँ थे, वहीं से दौड़ पड़े। वहाँ पर उन सबने जो दृश्य देखा, उसके कारण उनका कलेजा

काँप उठा। चारों ओर आग की लपटें प्रबल वेग से फैल रही थीं, उनके बीच में एक स्त्री पागल सी इस ओर से उस ओर और उस ओर से इस ओर दौड़ रही थी, उसके शरीर पर के सभी वस्त्रों में आग लग गई थी।

चारों ओर हाहाकार मच गया। भीड़ को ठेल कर लोग आगे बढ़ने लगे। बच्चे उठा-उठा कर निरापद स्थान पर फेंके जा रहे थे, क्योंकि आग की लपटें क्रमश: द्वार के पास तक बढ़ी आ रही थीं।

आग से जली हुई स्त्री आतंक से विमूढ़ होकर पागल की तरह जितना ही चारों ओर दौड़ती, वायु में उसके वस्त्रों की आग उतने ही अधिक वेग से जल कर दूनी फैल रही थी। बिजली का उज्ज्वल प्रकाश जब उसके मुख पर पड़ा तब लीला ने देखा कि यह वीणा है। उसे देखते ही वह काँप उठी।

किरण की दृष्टि जैसे ही उस पर पड़ी, वैसे ही वह कूद कर आगे बढ़ा। द्वार पर का पर्दा जल्दी से फाड़ कर उसने बड़े ज़ोर से वीणा को पकड़ा। वैसे ही और भी बहुत से लोग उतावली के साथ अपने कपड़े उतारने लगे। किरण ने उसे उन्हीं सब कपड़ों से ढँक कर जोर देकर वहीं फ़र्श पर लिटा दिया। स्वयं उसका हाथ भी आग से जल कर झुलसा जा रहा था। परन्तु वीणा उसके हाथ से छूट कर भागने के लिए अपनी समस्त शक्ति से उद्योग कर रही थी। जरा देर तक छटपटाने के बाद उसका बल जाता रहा और वह अचेत होकर निर्जीव-सी फ़र्श पर पड़ गई।

वीणा की पोशाक जल गई थी। उसका मुँह इतनी भयंकरता से जल गया था कि वह किसी तरह पहचाना ही नहीं जाता था। उस बीभत्स दृष्टि की ओर ताकने की शक्ति किसी में भी नहीं थी।

लीला के नेत्रों से आँसुओं का जो उच्छ्वास निकल रहा

था, उसके आवेग से दृष्टिहीन-सी होकर वह वीणा के पास बैठ गई और उसका नाम लेकर बार-बार पुकारने लगी।

कोलाहल सुनकर मिसेज राय वहाँ दौड़ी आईं। अपनी प्रियतमा कन्या की यह दशा देखकर वे मूर्छित हो गईं।

मिस्टर राय दूसरे कमरे में ब्रिज के खेल में मग्न थे। इस घटना का हाल सुनकर अपने दल के साथ वे दौड़े आये। जिले के सिविल सार्जन भी उन्हीं के साथ खेल रहे थे। वे तुरन्त ही वीणा की चिकित्सा में निरत हो गये। किरण लीला को खींच कर बरामदे में लिए आ रहा था। लीला अधीर होकर रो रही थी। वीणा की सारी चंचलता वह भूल गई थी। उसे रह-रहकर यही बात यदि आती कि मैं सदा से उसे कितनी कठोर बातें कहती आई हूँ, उससे कितना अप्रिय व्यवहार करती रही हूँ। वीणा की इतनी निर्बुद्धिता तथा उसके सैकड़ों दोष होने पर भी लीला उसे बहुत प्यार करती थी।

"वीणा क्या बचेगी नहीं किरण ?" आँसुओं से नेत्रों को भिगोकर लीला ने कहा—"इस तरह जल कर भी क्या कोई जीवित रह सकता है ?"

किरण ने गम्भीर मुख से कहा—पहले-पहल अनिष्ट ही क्यों सोचती हो लीला ? जब तक जीवन का एक कण भी शेष रह जाता है तब तक आशा भी की जाती है।

"मैं कितनी क्रोधी और असहनशील हूँ किरण ! उसको मैंने कितना डाँटा है, उसके प्रति कितना अन्याय किया है ! यह सब तुम्हें किस तरह बताऊँ ? वह यदि न बच सकी तो मैं किसी दिन भी अपने को क्षमा न कर सकूँगी" उसके नेत्रों का जल फिर दुगुने वेग से बहने लगा।

"रोती क्यों हो लीला ? इसमें तो तुम्हारा कोई अपराध नहीं है। किसी प्रकार का भी दोष देखने पर सभी आत्मीयस्वजन डाँटा

करते हैं।" यह बात किरण ने बहुत ही शान्त भाव से कही थी। उससे पहले का सारा प्रेमपूर्ण आचरण और बातचीत सभी परिवर्तित हो गया था। दुख के दिन इस परिवार के चिरदिन के मित्र के ही रूप में वह लीला की बगल में खड़ा था।

डाक्टर ने वीणा के माता-पिता को छोड़ कर और सभी को उस कमरे से हटा दिया था। आस-पास खड़े होकर सभी लोग चुपके-चुपके बातचीत कर रहे थे। एक दूसरे के मुँह से निकलते-निकलते यह बात फैलने लगी—"रोशनी के एक गिलास के नीचे खड़ी वीणा कुमार से बातचीत कर रही थी। एकाएक एक जलती हुई मोमबत्ती गिरकर उसके कपड़े पर पड़ गई, इसी से यह दुर्घटना हुई है।"

"नहीं, नहीं, ऐसी बात नहीं है। अन्यमनस्क भाव से बातें करते-करते एक जलती हुई मोमबत्ती पर आकर वह गिर पड़ी थी। आग ने साड़ी पकड़ ली थी, तो भी उस ओर उसका ध्यान नहीं गया। दूसरे के बताने पर वह जान सकी है।"

"आग ज़रा-सा साड़ी का कोना ही पकड़ पाई थी। कुमार चाहते तो आसानी से उसे बुझा सकते थे। वीणा केवल भय के ही कारण इधर-उधर भागने लगी, इससे हवा पाकर आग तेज़ हो गई।"

"अरे, रहने भी दो कुमार को! क्या उनकी भी कायरता का कोई ठिकाना है? इतनी बड़ी दुर्घटना हो गई, और वे पुरुष होकर वीणा के पास खड़े-खड़े देखते रहे! आग बुझाने का प्रयत्न करना तो दूर रहा, इस घटना से वे स्वयं ही भय से विह्वल हो उठे। मैं बिलियर्ड रूम के दरवाज़े पर खड़ी अपने स्वामी की प्रतीक्षा कर रही थी। इतने में देखा तो कुमार दौड़ते हुए हाल से निकले आ रहे थे! किरण यदि न पहुँच जाते तो और भी न जाने क्या दशा होती?"

डाक्टर ने दवा लगाकर जब वीणा के शरीर में पट्टी आदि बाँध दी तब उसके अचेत शरीर को गाड़ी पर रखकर मिस्टर राय बहुत ही धीरे-धीरे उसे घर ले गये। उनके बहुत-से मित्र भी गाड़ी के साथ-साथ चले।

इस गड़बड़ में कुमार न जाने कहाँ जाकर अन्तर्हित हो गये, उन्हें फिर किसी ने भी नहीं देख पाया।

( ४१ )

खिड़की के रास्ते से सवेरे का उँजाला कमरे में पहुँचते ही मिस्टर घोष ने अपनी नींद से थकी हुई दोनों आँखें खोलकर देखा। कमरे के चारों ओर दृष्टि दौड़ा कर उन्होंने क्षीण स्वर से पुकारा—निर्मला!

वहाँ से कुछ ही दूरी पर एक टेबिल के पास खड़ी निर्मला अनार का रस तैयार कर रही थी। पिता की आवाज़ सुनते ही वह उतावली के साथ कमरे में आई और बोली—क्या है बाबू? क्या इस समय तुम्हारा शरीर कुछ अच्छा मालूम पड़ रहा है? कैसी तबीअत है?

मिस्टर घोष ने ज़रा-सा विस्मित भाव से पुत्री की ओर देखा और फिर कहने लगे—मुझे क्या हुआ है बच्ची, बताओ तो? मुझे तो कुछ याद पड़ता नहीं। क्या मेरी तबीअत कुछ ख़राब है?

निर्मला बिस्तरे पर बैठ गई और पिता का हाथ उसने अपने हाथ में ले लिया। फिर उसे धीरे-धीरे सुहलाते-सुहलाते उसने कहा—तुम्हें आज चार दिन से बड़े ज़ोर का बुख़ार आया था बाबू! इन चार दिनों में एक बार भी तुमने न आँख खोलकर देखा था और न मुझे पुकारा ही था। आज इस समय बुख़ार उतर रहा है। क्या तबीअत कुछ हल्की मालूम पड़ रही है?

मिस्टर घोष ने फिर आँखें मूँद लीं। उन्होंने बहुत ही धीमे स्वर से कहा—पता नहीं, मैं कुछ नहीं समझ पाता हूँ। शायद

बुखार आगया है। ओह, इसीलिए शरीर में इतनी निर्बलता मालूम पड़ रही है! आँख से देखा नहीं जाता!

निर्मला ने व्यग्र भाव से कहा—तुमने इतनी देर से कुछ खाया भी तो नहीं बाबू। कुल्ला करके अनार का थोड़ा-सा रस पी लो, तब फिर सो जाओ। अभी कुछ अधिक दिन तो चढ़ा नहीं है। बाद को भी उठकर दातून वग़ैरह करने में कोई हानि नहीं है।

मिस्टर घोष और कुछ नहीं बोले। बोलने की शक्ति भी उनमें नहीं थी। अत्यधिक शिथिलता और पीड़ा के कारण उनका सारा शरीर अशक्त हो गया था। निर्मला ने धीरे-धीरे उन्हें अनार का रस पिला दिया और वे तुरन्त ही फिर सो गये।

पिता के मस्तक के पास बैठी हुई निर्मला एक दृष्टि से उनके उदास और सूखे हुए मुँह की ओर ताकती रही। इस संसार में उसके जीवन के जो एकमात्र आश्रय हैं, शायद उन्हें वह इस जन्म के लिए खो बैठी है!

चार दिन की बात है। अपराह्न में मिस्टर घोष को पहले थोड़ा-सा ज्वर हुआ था। वही ज्वर रात को उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। अन्त में वे अचेत हो गये। उनके गृह-चिकित्सक अनिल बाब ने सवेरे उनके स्वास्थ्य की परीक्षा करके कहा—इनका रोग बढ़ गया है, जीवन की आशंका है। इन्हें बहुत सावधानी के साथ रखना।

निर्मला को चारों ओर अँधेरा दिखाई पड़ने लगा। वह चक्कर खाकर गिरने को हुई कि एकाएक दीवार पकड़ कर उसने अपने को सँभाल लिया। उसके बाद ही उसके नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई।

निर्मला के असहाय और कातर मुँह की ओर ताक कर प्रवीण चिकित्सक ने व्यथित हृदय से कहा—देखिए, आपके घर में जब

दूसरा कोई आदमी नहीं है तब आपको ही सारी बातों पर ध्यान रख कर चलना होगा। इसलिए स्वभावतः आपको सारी बातें जान रखनी आवश्यक हैं। मिस्टर घोष के हृदय की अवस्था बहुत ही खराब है। इनके शरीर में अब कुछ बल भी नहीं रह गया है। इधर पिछले कई महीनों की अत्यधिक मानसिक उत्तेजना तथा दुश्चिन्ता के कारण इनकी जीवन-शक्ति बिलकुल ही नष्ट हो गई है। इस समय अवसाद और क्लान्ति के कारण इनके शरीर में जो शिथिलता और अचेतना आगई है उसे दूर कर इन्हें आरोग्य करना बहुत कठिन है और इसके लिए बहुत समय की आवश्यकता है। इन्हें सदा बहुत ही सावधानी से रखिएगा। उठना-बैठना तो बिलकुल ही बन्द रखना चाहिए। बल्कि अभी कुछ दिनों तक बिस्तरे पर भी इन्हें बैठने-उठने न दीजिएगा। ये सदा लेटे ही रहा करें। इसके अतिरिक्त जिस समय ये जो कुछ कहें उसके विपरीत एक रत्ती भी कोई बात न होने पावे, जिससे इनका चित्त सदा प्रसन्न रहा करे। इस समय इनके मन की ज़रा भी उत्तेजना इनका बड़ा अनिष्ट कर सकती है। घबराहट, क्रोध, उत्सुकता या और ही कोई उत्तेजना का कारण उपस्थित हो जाने पर एकाएक कोई हानि हो जानी असम्भव नहीं है।

इतना कह कर डाक्टर साहब फिर कहने लगे—यह सब सुनकर आप बिलकुल निराश न हो जाइएगा। आपसे ये सारी बातें इसलिए कह रहा हूँ कि आपको उचित परिचर्या का ज्ञान हो जाय। ज्वर तो चार ही छः दिन में उतर सकता है। उसके बाद सावधानी के साथ यदि चिकित्सा और सेवा होती रही तो अभी ये धीरे-धीरे अच्छे हो जायँगे। आप डरिएगा नहीं, मैं दोनों समय आकर देख जाया करूँगा। बीच में भी जब आवश्यकता होगी तब बुला लिया कीजिएगा।

डाक्टर की ये आश्वासन से भरी हुई बातें निर्मला के मुह्यमान

हृदय में कुछ विशेष आशा का संचार नहीं कर सकीं। अनिश्चित आशंका और उद्वेग के कारण उसकी व्याकुलता बढ़ने लगी। रह-रहकर उसके मन में यही बात आती कि पिताजी अब यह रोग-शय्या छोड़ कर शायद फिर न उठेंगे।

चार-पाँच दिन के बाद मिस्टर घोष का ज्वर उतर गया। शरीर निर्बल हो गया था, तो भी उन्हें कुछ हलकापन मालूम हो रहा था।

दोपहर को निर्मला भोजन-आदि से निवृत्त होकर पिता के पास आकर बैठी। तब उन्होंने अपना काँपता हुआ निर्बल हाथ उठाकर निर्मला की गोद में रख दिया। कुछ क्षण तक उसके मुँह की ओर ताकते-ताकते मिस्टर घोष ने कहा—आज-कल तू बहुत दुबली होकर सूख-सी गई है निर्मला! इधर कई दिनों तक तूने शायद मेरे पास बैठे ही बैठे बिता दिया है! यही बात है न? मेरी बीमारी देखकर तू बहुत ही घबरा गई थी न बेटी?

निर्मला ने मुँह फेर कर गम्भीर स्वर से कहा—यह कुछ नहीं है बाबू! मैं तो अच्छी ही हूँ, तुम अपनी तबीअत का हाल बतलाओ। क्या आज कुछ अच्छे हो?

"हाँ बेटी, आज मेरा शरीर कुछ हलका-सा मालूम पड़ रहा है। ज्वर उतर गया है न! जो निर्बलता है वह तो धीरे-धीरे ही दूर होगी। परन्तु निर्मला, केवल शरीर के हलके होने से ही कुछ होने का नहीं है। भीतर से यदि चित्त भी इसी तरह शान्त और प्रसन्न हो उठता तो फिर सब ठीक हो जाता। तुझे तो वे सारी बातें मालूम नहीं हैं बेटी! इतने दिनों से एक बहुत बड़ा भार हृदय पर रक्खे आया हूँ। अब वह मेरे सँभाले नहीं सँभलता, मेरी साँस रोक कर मेरी हत्या कर डालना चाहता है। आज मेरे हृदय पर से यदि वह भार उतर जाता तो मेरा मन हलका होकर प्रसन्न हो जाता। इतने दिन के बाद भी यदि मैं क्षमा पा जाता

तो मेरा हृदय इतने धैर्य, इतनी शान्ति से पूर्ण हो जाता कि मैं वह तुमसे नहीं बतला सकता निर्मला ! तब तो मानो आज मेरा उद्धार हो जाता !"

एक साँस में इतनी बातें कह जाने के कारण मिस्टर घोष श्रान्त हो गये। एक वह भी दिन था जब इन सब बातों के जानने के लिए निर्मला के कौतूहल और आग्रह का अन्त नहीं था, किन्तु आज वह इस बात से बहुत ही भयभीत होकर उद्विग्न हो उठी। उसने सोचा कि कहीं कोई ऐसी बात न आ जाय जिसके कारण कोई अनर्थ हो जाय।

निर्मला ने कहा—वे सब बातें जाने दो बाबू ! तुम्हारा शरीर निर्बल है, ऐसी अवस्था में अधिक बोलने से तबीअत खराब हो जायगी। डाक्टर साहब बोलने से रोक गये हैं, तुम चुपचाप सो जाओ।

अविश्वास की हँसी हँस कर मिस्टर घोष ने कहा—डाक्टर तो सभी बातें जानते हैं। थोड़ी-सी बँधी हुई बातें याद किए रहते हैं, चारों ओर उन्हीं की आवृत्ति करते-फिरते हैं। मेरे मन के भीतर क्या हो रहा है, और क्या नहीं हो रहा है, इसे वे कहाँ से जान पावेंगे ! मुझे सारी बातें कहने दे निर्मला ! मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ, उसे यदि आदि से अन्त तक कह पाता तो मेरा स्वास्थ्य कुछ और भी सुधर जाता।

निर्मला इस बार उन्हें रोकने का साहस नहीं कर सकी। उसे भय था कि कहीं और कुछ कहने पर वे रुष्ट न हो जायँ।

कुछ क्षण तक नीरव रहकर मिस्टर घोष कहने लगे—अच्छा निर्मला, तुझे अपने पिता के ऊपर बहुत विश्वास और श्रद्धा है—है न ? तूने तो यही जान रक्खा है कि मैं बिलकुल देवता-सा हूँ !

निर्मला ने झुक कर अपना मुँह मिस्टर घोष के सूखे हुए गाल पर रख दिया और प्यार के स्वर में कहने लगी—क्या यह झूठी

बात है बाबू ! मेरे पिता जी के समान उच्च आत्मा के व्यक्ति इस नगर में हैं, कितने ज़रा बताओ तो ?

मिस्टर घोष ने कहा—यही तो ! यही बहुत बड़ी भूल रह गई है बेटी ! केवल तुम्हारे ही क्या, इस भूल ने कितने ही लोगों के हृदय में अपनी जड़ जमा ली है। किन्तु एक दिन मैंने कितनी बड़ी भूल की थी, वह यदि तुझे मालूम होती निर्मला !

एक लम्बी साँस लेकर मिस्टर घोष कुछ सोचने-सा लगे। उनकी इन बातों से निर्मला के हृदय पर बड़ी गहरी चोट लगी। उसने कहा—उन सब बातों को क्यों सोचते हो बाबू ? अपनी आँख से देखकर भी मैं इस बात का विश्वास नहीं कर सकती कि तुमने कोई अनुचित कार्य किया है।

"किन्तु मैंने सचमुच बहुत ही अनुचित कार्य किया है बेटी ! जन्म भर प्रायश्चित्त करके भी उसका कोई प्रतीकार नहीं कर सका। मनुष्य का इतना अधिक विश्वास मत करना निर्मला ! गुण-दोष सब मिला कर मनुष्य मनुष्य ही रहता है, वह देवता नहीं है। उससे पद-पद पर भूल-चूक होती रहती है।

बाद को ज़रा देर तक फिर चुप रह कर मिस्टर घोष कहने लगे—किन्तु मैंने स्वयं कोई न्याय-विरुद्ध कार्य नहीं किया। वह सब काम मेरे नाम पर मेरे ही समान एक दूसरे व्यक्ति ने किया है, अतएव सब लोगों के समक्ष स्वभावतः मैं ही उसका उत्तरदायी हूँ। मेरी बुद्धि के दोष से एक निरपराध व्यक्ति गृहहीन और निराश्रय होकर गली-गली मारा-मारा फिरता रहा, उसका दुख, उसके हृदय की वेदना, क्या एक दिन के लिए भी मैं भूल सका हूँ ?

आँख मूँद कर मिस्टर घोष मन ही मन फिर कहने लगे—जब तक अवस्था कम थी तब तक पश्चात्ताप रहने पर भी ये सब बातें इतने तीव्रभाव से हृदय में नहीं उदित होती थीं। परन्तु जिस दिन से तेरी मा को घर में ले आया और जिस दिन से

तुझे अपनी गोद में प्राप्त कर सका, उसी दिन से इस बात का अनुभव कर सका हूँ कि अपने हृदय में किस प्रकार की ज्वाला लेकर रामगोविन्द देशत्यागी हो गये। दुधमुहे बच्चे असित को लेकर......

निर्मला अभी तक पत्थर की मूर्ति-सी बैठी थी, असित का नाम सुनते ही वह चौंक पड़ी। उसका सारा शरीर थरथर काँपने लगा। इतने दिनों तक सन्देह की जो धुँधली छाया उसके हृदय में निरन्तर ही अशान्ति जाग्रत् किये रहती थी, आज मुहूर्त भर में ही वह सारी अशान्ति जहाँ की तहाँ हो गई और परिस्थिति को उसने स्पष्टरूप से हृदयङ्गम कर लिया।

निर्मला के उस प्रबल प्रकम्पन का ही अनुभव करके मिस्टर घोष ने आँखे खोलकर देखा। उन्होंने कहा—शायद तू असित का नाम सुनकर चौक पड़ी है निर्मला! वही असित है, वही, जिसने पटना के जंगल में तेरे हाथ में पट्टी बाँधी थी। आह, किस तरह मै तुझे सारी बाते बतलाऊँ?

मिस्टर घोष ने फिर आँखें मूँद लीं। कुछ क्षण तक निस्तब्ध रह कर अपनी धुन में वे धीरे-धीरे कहने लगे—नहीं, नहीं कहा जाता। वे सब बातें मुँह से इस तरह नहीं निकाली जातीं। इसी लिए तो मैंने सब लिख रक्खा है। मेरे टेबिल की बाईं ओरवाली दराज में....समझ लिया बेटी! थोड़ा-सा मुड़ा हुआ कागज रक्खा है, उसे देखते ही समझ जाओगी।

मिस्टर घोष का धीमा स्वर क्रमशः और भी धीमा होने लगा। धीरे-धीरे स्पष्ट स्वर में वे न जाने और क्या-क्या बकते गये। निर्मला रामगोविन्द और असित, इन दो नामों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं समझ सकी।

हक्की-बक्की होकर निर्मला पिता के सिरहाने बैठी रही। मिस्टर घोष के लिखे हुए कागज में कौन-सा ऐसा भयङ्कर रहस्य

भरा हुआ है, जिसका जानना निर्मला के लिए नितान्त आवश्यक है! यह अनिश्चित उद्वेग तो इस तरह निरन्तर सहा नहीं जाता! इस तरह और कितने दिन चलेगा?

निर्मला के अन्तःकरण में धीरे-धीरे फिर असित की चिन्ता जाग्रत् हो रही थी। उसके पिता ने असित को कितनी हानि पहुँचाई थी, यह उसे कुछ भी नहीं मालूम था। किन्तु उसके लिए इन्होंने यह जो जीवन भर इतना अधिक पश्चात्ताप किया है, इतनी घोर मानसिक अशान्ति का अनुभव किया है, इससे क्या पिताजी के उस अपराध का प्रायश्चित्त नहीं हो गया? असित तो इन्हें अपना परम शत्रु समझता है और उसके हृदय में आज भी इनसे बदला लेने की प्रबल इच्छा बनी हुई है। पिताजी के हृदय में उसके प्रति जो वास्तविक भाव है उसे यदि वह एक बार भी जान पाता तो फिर सब ठीक हो जाता। क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे एक बार फिर उससे मेरी मुलाक़ात हो जाय?

निर्मला यह सब सोच ही रही थी कि इतने में बुआजी ने कमरे में प्रवेश किया। उन्होंने कहा—सारे दिन इसी तरह सन्न होकर बैठी रहोगी? भैया तो आज अच्छे है। जरा-सा सो लेती तो अच्छा था। पाँच दिन और पाँच रातें इसी तरह एकदम बैठे-बैठे बीत गई हैं, जरा-सा आराम किए बिना क्या आदमी का शरीर रह सकता है? उठो तो, उस कमरे में जाकर थोड़ा सो जाओ। तब तक मैं यहाँ बैठती हूँ।

घड़ी की ओर ताक कर निर्मला ने कहा—अब सोऊँगी नहीं बुआजी! तीन बज गये हैं। जाड़े के दिन हैं, असमय में सोने से तबीअत खराब हो जायगी। बल्कि तुम्हीं जाकर थोड़ा-सा लेट जाओ। सबेरे से इतने काम करके चली आ रही हो।

बुआजी ने कहा—मेरे लिए चिन्ता करने की तुम्हें आवश्यकता नहीं है बच्ची! तुम जरा अपना शरीर तो सम्भालो। यदि सोना

नहीं चाहती हो तो जाओ, बगीचे की ओर खुली हवा में थोड़ा घूम आओ। रातदिन सोये बिना एक बन्द कमरे में बैठ कर सोचते-सोचते आँख और मुँह सूख कर बिलकुल बैठ गये हैं। इसी तरह यदि तुम भी पड़ जाओगी तो फिर रोगी की देख-रेख कौन करेगा? उठो, मैं बैठती हूँ यहाँ।

इस बार निर्मला ने और कोई आपत्ति नहीं की। उस समय उसके हृदय की ऐसी अवस्था थी...वह चाहती थी कि कहीं एकान्त में बैठकर थोड़ी देर तक रोऊँ।

मिस्टर घोष उस समय सो रहे थे। उनके मुँह की ओर एक बार ताक कर वह उठ खड़ी हुई और बोली—बाबूजी की नींद खुलते ही मुझे बुला लेना बुआजी।

"यह तुम्हें कहने की आवश्यकता नहीं है" कहकर निर्मला जिस स्थान से उठी थी उसके समीप ही बुआजी बैठ गईं।

मिस्टर घोष शान्तिपूर्वक सो रहे थे। पास की खिड़की से धूप की एक चिट्टी आकर उनके मुँह पर पड़ रही थी, अतएव उतावली के साथ उठकर बुआजी ने उसे बन्द कर दिया और दुशाले को खींचकर मिस्टर घोष के पैरों को अच्छी तरह से ढँकते-ढँकते कहने लगीं—इन लोगों का कैसा स्वभाव है? कहने पर कोई बात तो सुनते नहीं! बीमार आदमी को कहीं उत्तर की तरफ़ सिर करके सुलाया जाता है? जो कुछ होता है, सभी अनाचार! बिलकुल ईसाईपन! यह सब अलक्षण के काम देख कर मुझे तो बड़ी आशंका हो रही है!

कुछ क्षण तो बुआजी बैठी रहीं, बाद को उन्हें नींद आने लगी, और उनका मस्तक आगे की ओर झुक पड़ा। परन्तु तुरन्त ही वे फिर सजग हो उठीं और चकितभाव से देखने लगीं। बाद को उन्होंने मन्द-मन्द स्वर में कहा—पापी पेट में ज़रा-सा अन्न पड़ते ही दुनिया भर का आलस्य आकर घेर लेता है।

अब विशेष सावधान होकर उन्होंने दोनों हाथों से आँखें पोछीं और फिर सीधी होकर बैठीं। किन्तु उनका प्रयत्न व्यर्थ हुआ। कुछ क्षण में ही गहरी नींद के कारण उनके नेत्रों के पलक मुँद गये।

मिस्टर घोष के कमरे से निकल कर निर्मला बग़ीचे में आई और एक बेंच पर बैठ गई। कुछ क्षण तक तो वह दुःखमय नेत्रों से ताक कर सोचती रही—इस समय वह कहाँ है? कौन जाने? सम्भव है कि वह मेरे आस-पास ही कहीं रहता हो। इस आकाश के ही नीचे शायद एक ही नगर में पास ही पास एक दूसरे के बिलकुल समीप, हम दोनों रहते हों, तो भी कितने दूर हैं!

भाग्य ने हम दोनों के बीच में कितना अन्तर पैदा कर दिया है? उस अन्तर को दूर करके हम दोनों जीवन में कभी पास-पास खड़े तो हो नहीं सकते, यह निश्चित है, तो भी एक बार यदि वह आ जाता! यही, एक बार असित से मुलाक़ात करने की आशा उसके हृदय से किसी प्रकार भी नहीं दूर हो पाती थी। निर्मला किसी भी काम में लगी रहती, कोई भी बात सोचती रहती, उसके हृदय में प्रतिक्षण यही एक आशा जाग्रत रहकर उसे उद्विग्न किए रहती। जो बात होने की नहीं है उसके लिए इतनी चिन्ता करके क्यों मरे!

परन्तु यदि सच ही ऐसा हो, यदि सचमुच किसी दिन वह आवे, तो उससे वह क्या कहेगी? उसे उससे कहना ही क्या है? आँखें पोंछ कर निर्मला ने सोचा—इस बार यदि किसी दिन असित से मेरी मुलाक़ात हो तो मैं पिताजी की सारी बातें उससे कहूँगी और उनके लिए क्षमा माँगूँगी। पिताजी असह्य अशान्ति की ज्वाला से जलते-जलते आज मृत्युशय्या पर पड़े हैं, इस समय भी वह चिन्ता, वह व्यथा, उनके हृदय से दूर नहीं हुई। आज यही अन्तिम समय है। यदि सचमुच उनके जीवन की

अवधि समाप्त हो आई है, तो क्या आज भी वे यही वेदना, अनुताप की यही ज्वाला, हृदय में लेकर अन्तिम साँस लेंगे? जीवन के अन्तकाल में भी मैं उनके हृदय को जरा-सा सुख, जरा-सी शान्ति नहीं दे सकूँगी? मुझे अपने मान-अपमान का कोई ध्यान नहीं है, स्वयं अपने लिए मैं कोई बात नहीं कहना चाहती, कभी कहूँगी भी नहीं। परन्तु पिता के लिए, जिस तरह भी हो, यह काम करना ही पड़ेगा। किन्तु हाय, असित आज है कहाँ?

पेड़ों की पत्तियों को हिलाती हुई हवा सनसना कर बड़े जोरों से चली गई। उसके बाद ही सूखी हुई पत्तियों की मर-मराहट सुनाई पड़ी। उसका शब्द कान में पहुँचते ही निर्मला ने मुँह फेर कर देखा—उसके सामने असित था।

निर्मला के हृदय का स्पन्दन मानो एकाएक रुक गया। क्या वह जाग्रत अवस्था में भी स्वप्न देख रही थी या उसकी एकाग्र चिन्ता की वस्तु मूर्तिमान होकर उसकी चिन्ता-शक्ति के आकर्षण से उसके सामने आकर खड़ी हो गई है। यह है क्या! निर्मला मुँह से कोई भी बात न निकाल सकी; केवल हक्की-बक्की सी होकर ताकती रही।

असित भी दो एक मुहूर्त निस्तब्ध होकर खड़ा रहा। बाद को उसने जरा-सा हँसकर कहा—मुझे यहाँ एकाएक देखकर शायद आप आश्चर्य में पड़ गई हैं। परन्तु इसमें मेरा कोई अपराध नहीं है। मैं बाहर ही खड़ा था, और आपको सूचना देने के लिए आपके नौकर से कह रहा था, वह मुझे यहाँ लाकर छोड़ गया है।

निर्मला तो भी कोई बात नहीं कह सकी। उसका कंठ और हृदय सूख गया था।

जरा देर प्रतीक्षा करके असित ने फिर कहा—आज मैं एक विशेष कार्यवश आपके पास आया हूँ। परन्तु और कोई बात कहने से पहले मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ। इससे पहलेवाले दिन आपके

साथ अशिष्टता और पशुता का जो व्यवहार कर गया हूँ, उसके लिए मैं क्षमा माँग रहा हूँ। उसके लिए जब तक आप मुझे क्षमा नहीं कर देंगी तब तक मैं आपसे कोई बात न कह सकूँगा।

अभी तक निर्मला नीरव होकर एक दृष्टि से असित की ओर ताकती रही। दबी हुई वेदना और अभिमान के कारण उसकी आँखें जल रही थीं और उनमें जल आ रहा था। अपने को सँभालने के लिए मस्तक झुका कर निर्मला पृथ्वी की ओर ताकने लगी।

निर्मला के इस भाव को असित समझ नहीं सका। उसके दिल में यही बात आई कि मेरे उस दिन के व्यवहार से अपने को अपमानित समझकर ही यह इस तरह चुप है।

उसने कहा—उस दिन जब मैं यहाँ से गया हूँ तब से आज तक एक दिन भी मैं सुस्थिर नहीं हो सका। मेरे इस तरह असभ्यतापूर्ण व्यवहार करने का क्या कारण है, यह आपसे न बतलाना ही अच्छा है। आप जब कुछ जानती नहीं हैं तब बहुत-सी निरर्थक बातें बतलाकर कष्ट देने में क्या लाभ है? परन्तु चाहे किसी भी कारण से हो, आपके साथ इस तरह का व्यवहार करके मैंने बड़ा अन्याय किया है। तो भी आपको क्लेश देकर मैंने इधर कई दिन किस तरह व्यतीत किये हैं, यह यदि आप जानतीं!

असित के विषादपूर्ण और गंभीर कंठस्वर में उसके हृदय की दुर्निवार वेदना प्रवाहित हो उठी। अत्यधिक आघात पाकर निर्मला ने एक बार असित के विषादपूर्ण और गम्भीर मुँह की ओर ताका। उस समय वह किसी प्रकार भी अपने कर्तव्य का निश्चय नहीं कर पाई। उस दिन उसके आतिथ्य को अस्वीकार कर असित क्यों बड़े रोष के भाव से चला गया था, और आज वह फिर अपनी इच्छा से ही आकर इस तरह दीनतापूर्वक क्षमा क्यों माँग रहा है, यह कोई बात भी तो उसकी समझ में आती नहीं थी! जिस कारण से

असित ने उस दिन वैसा व्यवहार किया था वह तो आज भी ज्यों का त्यों बना है !

असित उस समय भी निर्मला को चुप देखकर बहुत क्षुब्ध हुआ। उसने कहा—शायद इस समय भी आप उस मामले को भूल नहीं सकीं। क्यों; कुछ बोलती क्यों नहीं? मैंने अपराध किया है, किन्तु लौट कर जब उस अपराध को स्वीकार कर रहा हूँ, क्या तब भी मुझे क्षमा न करेंगी?

अब निर्मला से और न रहा गया। मस्तक उठाकर उसने कहा—आपको क्षमा करने का मुझे कोई अधिकार नहीं है असित बाबू! बल्कि हमीं लोग आपके निकट अपराधी हैं, हमीं आपसे क्षमा के लिए प्रार्थी हैं। परन्तु आपसे इस बात को किस तरह छेड़ूँ यही बात अभी तक धीरे-धीरे सोच रही थी।

निर्मला एक बार इधर-उधर ताक कर ज़रा-सा रुक गई और फिर अपना अंचल खींच कर सीधा करते-करते उसने मुँह नीचा करके कहा—कुछ दिन पहले मुझे यह मालूम हुआ है कि पिताजी ने किसी समय आप लोगों के प्रति कोई विशेष अन्याय किया था। उनके द्वारा आपको कितनी क्षति हुई है, यह भी मैं कुछ नहीं जानती। उनकी ओर से इस तरह आपसे बातचीत करने का मुझे अधिकार है या नहीं, यह भी मुझे मालूम नहीं है। आज कई महीने से वे जो अशान्ति और यातना भोग रहे हैं, केवल वही देखते-देखते मुझे असह्य होता जा रहा है। उन्होंने यदि सच-मुच कोई अपराध किया है तो उसका तो अब यथेष्ट प्रायश्चित्त हो चुका है। क्या आप उन्हें क्षमा नहीं कर सकेंगे?

ये बातें कहते-कहते निर्मला की आँखें जल से भर गईं। आँसुओं से भरे हुए अपने दोनों नेत्रों को असित की ओर स्थिर रखकर उसने फिर कहना आरम्भ किया—जिस दिन पटना के उस जंगल में पहले-पहल आपसे हम लोगों की मुलाक़ात हुई थी,

में खूब ध्यान से देखती आ रही हूँ, उसके बाद से ही उनके मानसिक रोग का सूत्रपात हुआ है। आरम्भ में मैं यह कुछ समझ नहीं पाती थी। उनका प्रतिक्षण का शंकित भाव, मन का उद्वेग, और चंचलता, दिन-दिन बढ़ने लगी। उस अशान्ति के ही कारण उन्होंने आज चारपाई ले ली है। फिर कभी उठकर खड़े हो सकेंगे या नहीं, इसका कोई ठीक नहीं है। आज इस भयङ्कर रोग की दशा में भी उनके हृदय में वे ही सब बातें जाग्रत हैं। इस अवस्था में भी किसी तरह उनकी आत्मा को जरा-सी शान्ति दे सकूँ, ऐसा कोई उपाय नहीं सूझता। शायद इसी तरह किसी दिन अचानक उनके प्राण निकल जायँगे।

निर्मला के नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। उसके आँसुओं से भीगे हुए मुँह की ओर असित ताकता हुआ निस्तब्धभाव से खड़ा रह गया।

कुछ क्षण के बाद आँखें पोंछ कर निर्मला ने फिर कहा—उनकी बातचीत से मुझे ऐसा लगता है कि उसमें कुछ रहस्य है। आप लोग उन्हें जितना अपराधी समझते हैं, शायद उतने अपराधी वे नहीं हैं। इसके अतिरिक्त यदि उन्होंने सचमुच ही कोई अपराध किया है तो उसके लिए उन्होंने बहुत-सा दुख भी भोग किया है। आज वे अनुतप्त हैं, वृद्ध हैं, असहाय हैं, रोगशय्या पर पड़े हैं। आज वे आपकी प्रतिहिंसा के पात्र नहीं हैं असित बाबू! आज आप उन्हें क्षमा कर दीजिए। वे जब सुनेंगे कि आपने उन्हें क्षमा कर दिया है तब उनका अवशिष्ट जीवन बहुत ही शान्तिमय हो उठेगा।

निर्मला की ये बातें समाप्त होने पर असित कुछ क्षण तक एक दृष्टि से उसकी ओर ताकता रहा। बाद को उसने कहा—क्षमा करने के लिए क्या अभी कुछ और है निर्मला? उन्हें यदि हृदय से क्षमा न कर पाता तो क्या आज इस तरह तुम्हारे सामने आकर खड़ा हो सकता था?

असित के मुँह से अपने नाम का उच्चारण होते ही निर्मला चौंक पड़ी और उसने एक बार उसकी ओर ताका। बाद को ही वह दोनों हाथों से मुँह ढंक कर गम्भीर सुख तथा वेदना के कारण फूल-फूल कर रोने लगी। आज मानो उसके इतने दिनों के सारे संशय, सारी व्यथा और चिन्ता का अवसान हो गया। उसके इतने दिनों के जले हुए और क्षत-विक्षत हृदय पर मानो किसी ने अमृत छिड़क कर उसकी सारी ज्वाला शान्त कर दी है। आज उसे अगाध सागर में भी तटभूमि मिल गई है!

उमड़ती हुई रुलाई के आवेग से निर्मला का शरीर काँप-काँप उठता था। असित ने उसकी ओर देखते हुए कहा—मिस्टर घोष का अपराध कितना गुरुतर है, यह तुम कुछ नहीं जानती हो निर्मला! जानने की आवश्यकता भी नहीं है। क्योंकि अत्यधिक प्रयत्न करके भी उनके प्रति प्रतिहिंसा का भाव मैं जाग्रत नहीं रख सका। तुम्हें जिस दिन देखा है उस दिन से मेरी इतने दिनों की सारी धारणा, सारा विश्वास, बिलकुल बदल गया। फिर भी अपने कर्तव्य की रक्षा के लिए कुछ दिनों तक तुमसे दूर रहने का ही निश्चय किया था। इसके लिए मैंने अपनी आत्मा के साथ बहुत युद्ध किया है, बहुत प्रयत्न किया है। आज से कुछ दिनों पहले तक अपने चित्त को स्थिर नहीं कर सका था, यह तो तुम्हें मालूम ही है। इतना जरूर है कि अन्त तक मेरी ही पराजय होती रही। उचित या अनुचित कुछ भी हो, तुम लोगों से व्यवधान रखकर चलना अब मेरे लिए असम्भव हो गया है।

निर्मला उस समय भी पहले की ही तरह चुपचाप रो रही थी। असित के मन में यह आता था कि उसका मुँह उठाकर उसके आँसुओं से भीगे हुए नेत्रों को सावधानी से पोंछ दूँ, परन्तु वह पहले की ही तरह चुपचाप दूर खड़ा रहा।

बड़ी देर तक रोने के बाद हृदय का भार जब हलका हो गया

तब निर्मला ने आँखें पोंछ लीं और उसने मुँह ऊपर करके ताका। इस घटना के बाद उन दोनों के लिए परस्पर एक दूसरे का मनोभाव जरा भी अप्रकट नहीं रह गया।

निर्मला ने कहा—तुम जरा पिताजी के पास चलो, तुम्हें पाकर और तुम्हारी बातें सुनकर उनकी आत्मा को बहुत शान्ति मिलेगी और वे शीघ्र ही नीरोग हो जायँगे।

असित ने कहा—आज अब समय नहीं है। बात ही बात में बहुत विलम्ब हो गया है। इस समय मेरे हाथ में कितने गुरुतर कार्य का भार है, यह तुम्हें मालूम नहीं है। मेरे सम्बन्ध में तो कोई बात तुम्हें मालूम है नहीं, यदि समय मिला तो फिर कभी आकर बता जाऊँगा। इस समय जिस काम के लिए आया हूँ उसी की बातें छेड़नी चाहिए। आज से दो दिन के बाद यहाँ एक विद्रोह आरम्भ होगा। यह विद्रोह देशव्यापी भी हो सकता है। परन्तु विद्रोह का क्या रूप होगा, और यह कब तक जारी रहेगा, यह कुछ अभी हम लोग निश्चय नहीं कर सके हैं। इसी लिए हम लोगों ने नगर के ऐसे लोगों के लिए, जो हमारे विरोधी नहीं हैं, विशेषतः बच्चों, स्त्रियों और वृद्धों के लिए, एक निरापद स्थान की भी व्यवस्था कर दी है। इसी लिए मैं तुमसे कहने आया हूँ कि यदि इस प्रकार का कोई उपद्रव हुआ तो जो आदमी आकर तुम्हें ठीक इसी तरह की अँगूठी दिखावे उसका विश्वास करके उसी के साथ चली जाना। वह हमारे ही दल का विश्वासपात्र आदमी है, वह तुम लोगों को अच्छी जगह ले जाकर तुम्हारे रहने का प्रबन्ध कर देगा।

असित ने अपने हाथ से एक अँगूठी निकाल कर निर्मला के सामने रख दी।

निर्मला क्षण भर तक सशङ्क दृष्टि से अँगूठी की ओर ताकती रही। असित की सारी बातें सुनकर भय से उसके ओंठ सूख गये

थे। उसने कहा—ये सारी बातें जो तुम कह रहे हो, मैं तो बिलकुल समझ ही नहीं पाती हूँ। क्या फिर ग़दर होगा ? तो उस समय तुम कहाँ रहोगे ?

असित ने मुस्कराकर कहा—यह बात मैं इस समय ठीक-ठीक नहीं बतला सकता। कहाँ रहूँगा और क्या करूँगा, ये सभी बातें अभी अनिश्चित हैं। परन्तु यह सारा आयोजन हमी लोगों ने किया है, हमारे ही हाथ में सारा भार है, इससे स्वभावतः हम लोगों को ही प्रत्येक दिशा में ध्यान रखना पड़ेगा। तो आज मैं जाता हूँ। यह सब झंझट दूर हो जाने पर भी यदि जीवित रहा तो फिर मुलाक़ात करूँगा। तब तक तुम मिस्टर घोष से मेरी चर्चा कर रखना। मेरे द्वारा उन्हें कभी किसी प्रकार की हानि न पहुँचेगी, इस बात का विश्वास वे रख सकते हैं।

निर्मला डर के मारे हक्की-बक्की होकर ताकती रही। इतने दिनों के बाद सारी शत्रुता भूल कर असित जब उसके पास आया तब फिर यह सब पहेली आरम्भ होगई ? उसके भाग्य में क्या सदा के ही लिए इसी तरह का कोई न कोई झंझट बदा है ?

असित ने फिर कहा—मिस्टर घोष से मुझे भी बहुत-सी बातें कहनी हैं निर्मला ! उनसे मुझे पूछनी भी बहुत-सी बातें हैं। किन्तु अभी उसके लिए अवसर नहीं है। ऐसी अवस्था में जब फिर एक देशव्यापी घटना होने जा रही है, व्यक्तिगत जीवन की छोटी-मोटी बातों या ज़िम्मेदारियों का ध्यान नहीं रक्खा जा सकता। यह सब भविष्य के लिए ही रख छोड़ना चाहिए। उस दिन तुम्हारे साथ जो असभ्यतापूर्ण व्यवहार कर गया था उसके कारण हृदय में शान्ति नहीं थी, साथ ही इस बात की सूचना भी देनी थी, इसी लिए मुझे दौड़कर आना पड़ा। अब मैं जाता हूँ, बहुत देरी होगई है।

असित और नहीं रुका। उसके साथ ही निर्मला भी उठी।

उन दोनों ने बग़ीचे से घर जानेवाले मार्ग में पैर रखते ही देखा कि मिस्टर घोष सामने के बरामदे में खड़े हैं। प्रबल ज्वर के कारण उनका चेहरा लाल होगया है। ज्वर के आवेग में वे कमरे से किसी समय निकल पड़े।

उन्हें ऐसी अवस्था में देखकर असित और निर्मला एकाएक ठिठक कर खड़े होगये। यह क्या मामला है?

असित की ओर दृष्टि जाते ही एकाएक मिस्टर घोष के मुख-मण्डल पर विस्मय और आतङ्क की रेखा उदित हो आई। व्याकुलता-मय स्वर में वे बोल उठे—यह क्या! तुम? तुम यहाँ आये हो? किसी प्रकार की उत्तेजना के कारण उनका शरीर थर-थर काँपने लगा।

मिस्टर घोष को लड़खड़ा कर गिरते देखकर असित उतावली के साथ उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ा जा रहा था।

उसे अपनी ओर दौड़ते देखकर मिस्टर घोष भय से व्याकुल हो उठे और चिल्लाकर उन्होंने कहा—निर्मला, निर्मला, पकड़ो, पकड़ो, मुझे पकड़ो। यह कहते-कहते उनका चेहरा बदल गया और वे कटे हुए वृक्ष की तरह असित के चरणों के पास गिर पड़े। उसी क्षण उनके प्राण निकल गये।

( ४२ )

वीणा कई दिनों तक जीवन-मरण के बीच की अवस्था में मुर्दा-सी होकर अचेत भाव से पड़ी रही, उसे किसी बात का ज्ञान नहीं था। डाक्टरों ने ओषधि का प्रयोग करके उसकी ऐसी अवस्था कर दी थी, जिससे असह्य यन्त्रणा के कारण उसे बहुत ज्यादा न छटपटाना पड़े।

इस आकस्मिक विपत्ति के कारण मिसेज़ राय शोक और दुख से अत्यधिक विह्वल होकर पागल-सी हो उठी थीं, वीणा की सेवा

करने या उसकी अवस्था समझने की शक्ति उनमें नहीं रह गई थी। बीच-बीच में उतावली के साथ उसके कमरे में जाकर चीखने और विलाप करने के अतिरिक्त उनसे और कुछ भी नहीं होता था। इसी लिए नर्सें उन्हें ठेल कर कमरे से बाहर कर दिया करती थीं।

वीणा के कमरे से निकाल दिये जाने पर मिसेज राय बाहर आकर केवल लीला का तिरस्कार करती थीं। उस समय वे स्वयं भी क्लब में उपस्थित थीं और अन्य दिनों के ही समान उस दिन भी व्यर्थ की बातचीत में ही अपना समय काट रही थीं, यह बात उनके मन में एक बार भी न आती थी। वे केवल लीला को ही झिड़ककर कहतीं—उस समय तू कहाँ थी और कौन-से ऐसे काम में व्यग्र थी कि इतनी बड़ी घटना हो गई और तेरे कान पर जूँ तक न रेंगी? यह तो मालूम ही है कि तू अपने सुख में कितना मग्न रहनेवाली और स्वार्थपरायण लड़की है। चौबीस घंटे अपने ही मनोरञ्जन और सुख की चिन्ता में पड़ी रहती है। उस दिन भी उसी तरह अपने आनन्द के नशे में ही चूर थी। उसे देखने का तुझे अवसर ही कहाँ था? तू यदि उसके साथ-साथ रहती तो भला यह दशा हो सकती थी?

लीला सचमुच उस दिन अपनी ही चिन्ता में मग्न थी, अतएव अपने पक्ष का समर्थन करने के लिए वह कुछ कह ही नहीं सकती थी। वह बेचारी मिसेज राय की यह अनुचित फटकार रात-दिन चुपचाप सहती रहती।

"हाय, मेरी सोने की प्रतिमा, उसे जीवन भर यह कष्ट भोगना पड़ा! यह व्यथा मैं कैसे सह सकूँगी! मेरे हृदय को विदीर्ण करके केवल रुलाई ही रुलाई आती है। सभी डाक्टरों का कहना है कि ये दाग कभी न मिटेंगे। शहर भर की इतनी लड़कियाँ वहाँ थीं, और किसी को तो कहीं कुछ न हुआ। विधाता का जितना दुर्विपाक था, वह सब मेरे ही फूटे हुए कर्म में पड़ा!

मेरी उस तरह की घर को चमका देनेवाली लड़की थी, उसकी यह दशा म कैसे देखूगी ? किस तरह सहन कर सकूँगी ?"

रोते-रोते मिसेज राय व्याकुल हो उठती। इस असाध्य दृश्य के कारण लीला को अत्यधिक आघात मिला था, तो भी वह मा को समझाती कि इतने सङ्कट से जो उसके प्राण बच गय है, इसी को बडे सौभाग्य की बात समझना चाहिए मा। किन्तु मिसेज राय इस बात पर कर्णपात नही करती थी। इन दागो ने आजन्म के लिए उसका चेहरा बिगाड डाला, अब कौन उसके साथ विवाह करेगा ? इस अवस्था म यदि सदा के लिए कौमार्य ग्रहण करना पडा तो वीणा कभी न सुखी हो सकेगी। उस तरह तो जीवित रहना भी उसके लिए मृत्यु के समान है।

उस चिन्ता के कारण मिसेज राय के नेत्रो का जल सूखना ही नहीं चाहता था। स्वय लीला भी यह बात सोचकर बहुत व्यथित हुआ करती थी। वही वीणा, जो एक दिन अपने सौन्दर्य्य के लिए बडा अभिमान करती थी, हृदयहीन विधाता की इस लाञ्छना को कैसे सहन कर सकेगी ? पता नहीं, उसका अवशिष्ट जीवन किस तरह व्यतीत हो सकेगा ?

इन सब झझटो के कारण अरुण का चित्त दिन-दिन खिन्न होता जाता और उसे अपने जीवन से विरक्ति-सी होने लगती। लीला अब प्राय वीणा के ही पास रहा करती, अरुण के पास आकर उसे कभी-कभी देख भर जाती, इसके अतिरिक्त अरुण के लिए वह और कुछ न कर पाती। घर मे ऐसी विपत्ति पडी थी कि अरुण को स्पष्ट रूप से कुछ कहने का भी साहस न होता था, किन्तु भीतर ही भीतर वह चञ्चल हो उठा करता था।

वीणा का समाचार लेने के लिए किरण प्रायः आया करता और यह भी आशा किया करता कि शायद किसी दिन लीला स एकान्त मे मुलाकात हो जाय। परन्तु जिस समय वह आता,

उस समय लीला अपने को इस तरह भिन्न-भिन्न कार्यों में संलग्न रखती कि उसे किरण से अकेले में मिलने का अवसर ही न मिलता।

इन सब दिशाओं में अरुण सदा ही सतर्क रहा करता था। इसमें सन्देह नहीं कि किरण को वह कभी लीला के पास नहीं देख पाता था, तो भी अरुण ने यह धारणा बद्धमूल कर ली थी कि किरण लीला से मुलाक़ात करने का ही अवसर खोजा करता है, वीणा का हाल जानना उसके आने-जाने का बहाना भर है। इस धारणा के ही कारण ईर्ष्या और द्वेष से अरुण का हृदय जला जा रहा था। वह सोचता कि मेरा विवाह भर हो जाता तो सारे झंझटों से छुट्टी मिल जाती। फिर मैं लीला को एक दिन भी इन लोगों के संसर्ग में न रहने देता।

आज-कल अरुण को सदा अकेला ही रहना पड़ता। साथ ही ईर्ष्या-द्वेष के कारण उसका चित्त भी ठिकाने पर न रहता। अतएव वह प्राय: पुस्तक लिखने के लिए बैठा करता। अधिक परिश्रम करने के कारण आँख में दर्द होने लगता, तो भी वह आसानी से न उठना चाहता। दिन का अधिकांश समय पुस्तक लिखने और उसका संशोधन करने में ही वह व्यतीत किया करता।

वीणा जिस दिन होश में आई और अपनी अवस्था हृदयङ्गम कर सकी, उसने पहले ही नर्स को बुलाकर पूछा कि मेरे सम्बन्ध में डाक्टरों की क्या राय है? उसके मुँह, कन्धे और बाहों पर उस समय भी पट्टी बँधी थी, उसके अधजले मांस में उस समय भी असह्य वेदना हो रही थी। इन सब बातों से तो यह स्पष्ट जान पड़ता था कि वीणा की अवस्था शोचनीय है। फिर भी नर्स ने संक्षेप में दो-एक आशाप्रद बातें बताकर ही समझा दिया।

वीणा इससे सन्तुष्ट न हुई। उसने कहा—मुझसे कोई बात छिपाने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में मेरी जैसी अवस्था हो, वही मैं जानना चाहती हूँ।

नर्स ने उत्तर दिया—मैं सच ही सच बतला रही हूँ। जलने के कारण जो घाव हो गये थे वे बड़ी शीघ्रता से भर रहे हैं, इसे बहुत अच्छा लक्षण समझना चाहिए।

वीणा ने अधीर होकर कहा—लीला को बुलाओ। मैंने अपने घाव के लक्षण जानने के लिए तुम्हें नहीं बुलाया। आह, बड़ी यन्त्रणा है!

लीला के आकर खड़ी होते ही वीणा ने कहा—लीला, डाक्टर लोग मेरे सम्बन्ध में क्या कहते हैं? मैं असली बात जानना चाहती हूँ।

लीला ने कहा—अच्छा ही कहते हैं। तुम तो बहुत थोड़े समय में ही प्रायः आरोग्य हो गई हो।

"आह, तुम लोग न जाने क्यों ऐसे ढंग से उत्तर देती हो, मानो मेरी बातों को समझती ही नहीं हो। मैं अपने जलने के दाग़ों के सम्बन्ध में पूछती हूँ।

लीला ने शान्त भाव से ही कहा—दाग़ अवश्य एक-दम नहीं मिटेंगे। किन्तु ज़रा सोच कर देखो कि और भी कितनी बुरी घटना हो सकती थी। तुम्हारे प्राण तक जाने की आशङ्का थी, किन्तु ईश्वर की कृपा से ऐसा नहीं हुआ। तुम्हारी आँखें भी जा सकती थीं, उस दशा में तुम्हें आजन्म अन्धी होकर रहना पड़ता। इन सब दुर्घटनाओं से तो तुम बच गई हो दीदी! इतनी आशङ्का-जनक अवस्था होगई थी, उसे देखते हुए दो-एक दाग़ रह ही गये तो कौन बहुत बड़ी बात है?

वीणा ने कहा—क्या डाक्टर लोग कहते हैं कि मेरी आँखें फूट जाने की सम्भावना थी?

"और नहीं तो क्या? फूटते-फूटते न जाने किस तरह तुम्हारी आँखें बच गईं, यह देखकर डाक्टर लोग आश्चर्य में पड़ गये हैं। बिलकुल ज़रा-सा ही घाव यदि और बढ़ गया होता तो तुम्हारी

आँखें किसी तरह भी नहीं बच सकती थीं। तुम्हारे दृष्टिहीन या अङ्गभङ्ग हो जाने की आशङ्का बहुत अधिक थी।"

वीणा भय से काँप उठी। उसने कहा—ओह, दृष्टिहीन होकर जीवित रहना कितना भयङ्कर है, इस बात की मैं कल्पना तक नहीं कर सकती हूँ। तब तो मैं भी ठीक अरुण की ही तरह असहाय होकर रहती। ठीक उसी समय की तरह, जिस समय कि मैंने उसे छोड़ दिया था। तब तो मैं खूब बच गई!

शान्ति और कृतज्ञतापूर्ण हृदय से वीणा ने लीला के हाथों के बीच में अपना मुँह छिपाया। उसके नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई।

बड़े स्नेह के साथ बहन के मस्तक पर हाथ फेरते-फेरते लीला ने कहा—रोती क्यों हो भाई? सङ्कट तो कट गया। अब रोने की क्या आवश्यकता है?

वीणा ने कहा—ओह, मैंने कैसा जानवर का-सा व्यवहार किया था लीला! मुझे यह दंड बिलकुल मेरे कर्म के अनुसार ही मिला है।

लीला के नेत्र आँसुओं से भीग गये। उसने मुँह नीचा करके बहन का मस्तक चूम लिया और कहा—इन सब बातों को सोचकर अब दुखी मत होओ। सब की बुद्धि समान तो होती नहीं। तुम चाहे विचारशील न भी होओ, किन्तु तुम्हारा स्वभाव बुरा नहीं है। मैं अब उन सब बातों पर विचार नहीं करती। उस विपत्ति के मुख से तुम्हें लौटाल पाई हूँ, यही मेरे लिए बहुत बड़ी बात है।

वीणा फूट-फूटकर रोने लगी। उसने कहा—तुम जानती नहीं हो लीला, मैंने कितना बड़ा अन्याय किया है! तुमने मेरी कितनी सेवा की है, मुझे कितना प्यार किया है, परन्तु मैं इसके लायक़ नहीं हूँ। तुम विवाहित होकर चली जाओगी, इससे मैं बहुत प्रसन्न होऊँगी। उस दशा में तुम्हें यहाँ के सारे झंझटों से फ़ुर्सत मिल जायगी। बताओ तो, क्या तुमने मुझे क्षमा कर दिया है!

लीला ने कहा—अवश्य, यह बात मुझसे फिर पूछती हो! सम्भव है, समय आने पर मै भी कभी किसी ऐसे ही प्रलोभन में पड़ जाऊँ। इसमें आश्चर्य की बात नहीं है। इसे सोच कर तुम क्यों व्याकुल हो रही हो भाई?

दोनों बहनों ने परस्पर एक दूसरे का हाथ पकड़ लिया, और हृदय के आवेग से कुछ क्षण तक दोनों ही निस्तब्ध रहीं।

वीणा को जब फिर बोलने की शक्ति आई तब उसने एक लम्बी साँस ले कर कहा—एक बार मैं तुमसे सारी बातें खोलकर कह देना चाहती हूं लीला, अन्यथा मेरी आत्मा को शान्ति न मिलेगी। तुमसे बता देने के बाद जीवन में मैं फिर कभी उन बातों को हृदय में न आने दूँगी। बाद को जरा-सा रुककर वीणा ने कहा—जिस रात को में जली थी, वे मेरे साथ ही थे। किसके सम्बन्ध में कह रही हूँ, समझती हो न?

लीला ने कहा—हाँ, कुमार तुम्हारे साथ था, यह मुझे मालूम है।

"उस रात को वे मुझसे कह रहे थे कि सब ठीक हो गया है! तुम कल रात को बारह बजे दरवाजे के बाहर प्रतीक्षा करती रहना, मैं आकर तुम्हें ले चलूँगा। उसी दिन पिछली रातवाली गाड़ी से हम लोग कलकत्ते चलेंगे और बाद को फिर भारत की सीमा ही छोड़ देंगे। दूसरे देश में पहुँचने पर हम दोनों का विवाह हो जायगा।

"ओह वीणा," आश्चर्य और आतङ्क के कारण लीला का गला रुंध गया। उसने कहा—मामला इतनी दूर तक बढ़ गया है, यह मै स्वप्न में भी नहीं सोच सकी थी!

वीणा ने कहा—इतने अधिक साहस और प्रतारणा का कार्य करने पर मैं किसी तरह भी नहीं सहमत हुई। वे केवल दबाव डालकर मुझे सहमत करने का प्रयत्न कर रहे थे। अन्यमनस्क

भाव से मैं किस समय जलती हुई वत्ती के पास जाकर खड़ी हुई, इस ओर मेरा ध्यान ही नहीं गया।

क्षण भर तक निस्तब्ध रहकर लीला ने कहा--तुम्हारी इस विपत्ति ने इससे भी गुरुतर विपत्ति से तुम्हें बचा लिया, यह मैं नहीं जानती थी। यदि तुम उसके साथ जातीं तो तुम्हारी दुर्दशा की सीमा न रहती। उसका जैसा बदमाश क्या कभी किसी स्त्री से प्रेम कर सकता है? वह तुम्हें आजन्म के लिए नष्ट भर करना चाहता था!

नेत्रों में जल भरकर वीणा ने कहा--किन्तु मैं उसे सचमुच चाहती थी भाई! उसके स्वभाव को परखकर तुम मुझे कितना ही सावधान करती रही हो, मुझे कितना समझाया है, किन्तु उस समय उससे मुझे न जाने कैसा मोह हो गया था कि मैं उसे छोड़ नहीं पाती थी। तुमसे छिप-छिपकर मैं उसे पत्र लिखा करती थी और मा की दासी को रुपये दे-देकर उसके द्वारा उसके पास भेजा करती थी। कितने दिन तो गहरी रात में सब लोगों के सो जाने पर बग़ीचे में आ-आकर वह मुझसे मिला करता था।

वीणा की चतुरता और साहस का हाल सुनकर लीला अवाक् होगई। वीणा के साथ तुलना करके उसे गालियाँ देना मिसेज़ राय का प्रायः नित्यकर्म होगया था, किन्तु वीणा ने जिन अपराधों को स्वयं अपने मुँह से स्वीकार किया है उन्हें यदि वे एक बार सुनतीं--

पूर्णरूप से आरोग्य होकर वीणा ने जिस दिन अपने शरीर की अवस्था को देखा, उस दिन शोक और निराशा के कारण वह मृत-प्राय होगई।

डाक्टर ने जब वीणा की पट्टियाँ खोल दीं तब उसे देख कर मिसेज़ राय उसी स्थान पर मूर्छित होगईं। उस दिन वे लगातार रोती और विलाप ही करती रहीं, जिसके कारण सभी लोग परेशान होगये।

"लोग जब मेरी ओर ताकने लगेंगे तब मैं उनकी उस दृष्टि को कैसे सहन कर सकूँगी?" रोते-रोते अधीर होकर वीणा ने लीला से कहा—अब मैं किसी के सामने न निकलूँगी, किसी को अपना मुँह न दिखलाऊँगी।

लीला ने कहा—तुम फिर हर मामले में निरर्थक चिन्तायें करने लगी हो। स्थिर होओ, चित्त प्रसन्न करो, वास्तविक प्रेम इतनी तुच्छ वस्तु नहीं है कि शरीर पर दो-चार दाग़ देखकर ही दूर हो जायगा।

"अब मुझसे और कोई नहीं प्रेम कर सकेगा। मोह में पड़कर वास्तविक प्रेम मैंने खो दिया है।"

चौधरी के निस्स्वार्थ प्रेम और उसके प्रति किये गये अपने व्यवहार को स्मरण करके वीणा पश्चात्ताप से जल रही थी। उसने रोकर कहा—मैंने वास्तविक प्रेम के प्रति श्रद्धा करना नहीं सीखा। सुन्दरता के गर्व और अभिमान से मेरी दृष्टि पर पर्दा पड़ गया था। जिन्हें मैं आसानी से अपना कर सकती थी, अब वे सभी मुझसे दूर हो चुके हैं। अब जीवन भर केवल रोना और पछतावा ही मेरे साथी बनकर रहेंगे!

बहन का मुँह पोंछकर लीला ने कहा—इतनी निराश मत होओ भाई! मुझे ही देखो। अब मैं तुम्हें पहले की अपेक्षा बहुत अ[ि]क प्यार करती हूँ। मा का और पिता जी का भी अनुराग अब बहुत बढ़ गया है। तुम व्यर्थ में क्यों दुखी हो रही हो? सभी तुमसे प्रेम करेंगे।

इसमें सन्देह नहीं कि वीणा उस समय और ही तरह के प्रेम की चिन्ता में थी। तो भी लीला के इस उच्छ्वास का प्रभाव उसके हृदय पर पड़े बिना नहीं रह सका। उसने कहा—आज से हम दोनों एक दूसरे से प्रेम करेंगी और एक दूसरे को समझने का प्रयत्न करेंगी। पहले से यदि ऐसा करती आई होती तो

कदाचित् इस समय तक मुझमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया होता। उस दशा में यह दुर्दशा न हुई होती।

धीरे-धीरे बीणा आरोग्य हो गई। शरीर की सुन्दरता नष्ट हो जाने के कारण उसे जो शोक हुआ था वह भी क्रमशः पुराना पड़ गया, उसके कारण अब उसे पहले का-सा दुख नहीं होता था। उसके गोरे और दगदगाते हुए शरीर का रंग बिल्कुल ही खराब होगया था। उसके सुन्दर-सुन्दर हाथ जलकर बिलकुल काले पड़ गये थे।

कौतूहल के कारण बहुत-से लोग उसे देखने आया करते। बीणा प्रायः किसी से भी मुलाक़ात नहीं करती थी। वे लोग जज साहब की सुन्दर कन्या के इस तरह के भाग्य-विपर्य्यय की चारों ओर चर्चा करते फिरते। इस दुख में पड़कर लीला ने इस बात का अनुभव किया कि बहुत-से व्यक्तियों के द्वारा घिरी रहने पर भी बीणा के वास्तविक मित्र बहुत थोड़े हैं।

पिछले पहर अरुण को साथ में लेकर लीला बगीचे में टहल रही थी। उसी समय बहुत दिन के बाद चौधरी आकर उन दोनों के पास खड़ा हुआ।

लीला ने देखा, चौधरी बहुत दुबला हो गया है और उसका शरीर पीला पड़ गया है। बहुत दिनों से उसे न देख सकने के कारण लीला प्रायः चौधरी को याद करती थी। उसके लिए लीला को दुख भी हुआ करता था। वह सोचती कि चौधरी तो एक बार भी बीणा की खबर लेने नहीं आया।

उत्सव के दिन कुमार जब बीणा के समीप आया तब वह क्रोध और ईर्ष्या के मारे तुरन्त ही कमरे से निकल गया। बीणा के शरीर में आग लगते उसने नहीं देखा था। उस दिन से वह फिर कभी इधर नहीं आया। बहुत सोच-विचार करने के बाद

लीला ने निश्चय किया कि शायद इतने दिनों में चौधरी वीणा को भूल गया है, इसी लिए वह इधर नहीं आया।

लीला और अरुण से दो-एक बातें करने के बाद चौधरी ने लीला से कहा—मुझे आपसे बहुत-सी बातें करनी हैं, किन्तु वे सब बातें मैं एकान्त में करना चाहता हूँ।

यह सुनकर लीला अरुण के पास से चली आई और चौधरी को लेकर बैठक में जा बैठी। एकान्त में आते ही चौधरी ने बहुत उद्विग्न भाव से कहा—वह—वीणा कैसी है?

इतने दिन की उदासीनता के लिए चौधरी को दण्ड देने के विचार से लीला ने ताना-सा देकर कहा—उस तरह की घटना के बाद जैसी रहना सम्भव है, वैसी ही है। शायद इतने दिनों के बाद तुम्हें उसकी ख़बर लेने का अवसर मिला है?

"मैं तो बहुत बीमार हो गया था लीला! क्या तुमने सुना नहीं? इतने दिनों तक डबल निमोनिया में पड़ा भोग रहा था। सभी लोग तो जानते हैं। उत्सववाले दिन मेरा मन ख़राब होगया था, अतएव मैदान में जाकर एक पेड़ के नीचे बैठ गया था। बाद को वहीं बैठे-बैठे न जाने कब सो गया, इस बात का मुझे ध्यान तक नहीं आता। वहीं सर्दी खा गया और घर पहुँचते-पहुँचते बड़े ज़ोर का ज्वर आगया, साथ ही खाँसी भी आने लगी। इन सबके कारण मैं बिलकुल चारपाई से लग गया। इतने दिन के बाद आज ही पहले-पहल घर से निकल सका हूँ।

लीला का रोष जाता रहा। मन में पश्चात्ताप करती हुई चौधरी के मुँह की ओर ताक कर उसने कहा—इसी से तुम्हारा चेहरा इतना उतर गया है। इस सम्बन्ध में मैंने तो कुछ सुना नहीं। और सुनती भी कैसे? आज दो मास से वीणा के कारण हम लोगों के दिन इस तरह बीत रहे हैं! तो इस बार तुम बड़ी कड़ी बिमारी पागये?

चौधरी ने कहा—मुझे इतनी निर्बलता आगई है लीला कि अब मैं किसी तरह भी नहीं सँभल पाता। इच्छा है कि कुछ दिनों तक किसी पहाड़ पर जाकर रहूँ। यह सब कुछ अब वीणा पर ही निर्भर है। इसी लिए शरीर में उठने की शक्ति आते ही पहल-पहल मैं यहीं दौड़ा आया हूँ।

चौधरी का आशय समझकर भी लीला ने इस प्रकार का भाव प्रदर्शित किया, मानों वह कुछ भी नहीं समझ सकी। उसने कहा—क्यों, वीणा पर क्यों निर्भर है?

"मुझसे अब और प्रतीक्षा नहीं की जाती। जो भी हो, आज मैं यह निश्चित रूप से जानना चाहता हूँ कि मेरे सम्बन्ध में उसका क्या विचार है? वह मेरी होना चाहती है या नहीं। यदि वह सम्मत नहीं होती तो मैंने निश्चय कर लिया है कि विलायत चला जाऊँगा। देखूँगा कि वहाँ जाने पर भी मेरी मानसिक अवस्था में कुछ परिवर्तन होता है या नहीं? इस तरह कब तक चलेगा, तुम्हीं बतलाओ?

लीला ने कहा—किन्तु चौधरी, तुमसे बतलाने में मुझे डर लगता है, तुम्हें कुछ मालूम नहीं है। वह बहुत अधिक जल गई है।

चौधरी ने सरलभाव से ही कहा—मैं सब जानता हूँ। उसका सारा हाल मैंने सुना है। जब से सुना है तब से उसके लिए मेरे हृदय को इतना क्लेश हो रहा है, तुम यह न समझ सकोगी। अहा, बेचारी को कितना क्लेश सहना पड़ा है! क्या मैं इस समय उसे ज़रा-सा देख सकूँगा लीला?

लीला ने सोचा कि शायद चौधरी को यह नहीं मालूम है कि वीणा के चेहरे पर कितना भद्दापन आगया है। यदि यह बात उसे मालूम होती तो शायद उससे मुलाक़ात करने को उसका जी न चाहता। यह सोचकर उसने कहा—आज-कल किसी से मुलाक़ात करने को उसका जी नहीं चाहता। उसका चेहरा बिलकुल ही

खराब होगया है, उसे अब कोई भी इस जन्म में सुन्दरी न कहेगा।

इस बात से ज़रा-भी विचलित न होकर चौधरी ने बहुत ही स्वाभाविक रूप मे कहा—सम्भव है कि यह बात उसके लिए कल्याणकर हो सके। इस असार रूप के गर्व से उसका दिमाग़ बिगड़ता-सा जा रहा था।

लीला ने कहा—चौधरी, जिस समय लीला को अपने रूप का बड़ा गर्व था और वह बड़ी ओछी प्रकृति की थी, उस समय उसे निस्तत्त्व जानकर भी तुम उससे प्रेम करते रहे हो। और आज? आज वह कुरूपा है, दया की पात्र है। क्या यह सब जानते हुए भी उसके प्रति तुम्हारा प्रेम ज्यों का त्यों बना हुआ है?

चौधरी ने लज्जित भाव से कहा—एक वह दिन था, जब उसकी अनुपम सुन्दरता के कारण उसे रूपगर्विता समझकर भी मैं प्रम करता था। और आज उसे कुरूपा जानकर भी मैं उससे पहले से कहीं अधिक प्रेम करता हूँ। इस अवस्था में उसे देखने की कितनी आवश्यकता है, यह बात बहुत ही कम लोग समझ सकेंगे। क्या मैं आज उसे देख सकूँगा?

लीला का चेहरा खिल आया। उसने कहा—अवश्य देख सकोगे। आओ, मेरे साथ चलो।

चौधरी को साथ में लेकर लीला वीणा के कमरे की ओर चली। द्वार के पास जाकर उसने पुकारा—वीणा, तुम्हारे एक मित्र मुलाक़ात करना चाहते हैं।

खिड़की के पास एक आरामकुर्सी पर लेटकर वीणा खिन्न दृष्टि से बाहर की ओर ताक रही थी। गत जीवन के प्रेम और. मधुरता से उस समय उसका अन्तःकरण पूर्ण था। साथ ही यह बात भी उसके मन में आती थी कि इस जीवन के लिए इन सभी बातों का बिलकुल ही अन्त हो चुका है।

लीला की बात सुन कर उसने उत्तर दिया—मैंने तो अभी तक कपड़े तक नहीं बदले लीला। इस समय मैं किसी से कैसे मुलाक़ात कर सकूँगी? कौन आया है?

भीतर जाकर लीला ने कहा—चौधरी।

"चौधरी!" इतने दिन के बाद? वह किस लिए आया है लीला?"

"तुम्हें देखने आये हैं।"

'ओह, नहीं लीला, मैं नहीं सहन कर सकूँगी। उसे लौटा दो।"

"क्यों? लौटा क्यों दूँ? मैं बुलाये लाती हूँ।"

वीणा ने व्याकुल होकर कहा—नहीं लीला, रानी बहन, उसे मत बुलाओ, भाई! ज़रा सोचो तो सही, वह मुझे किस रूप में देख गया था, और आज अपना मुँह उसे कैसे दिखाऊँगी? इसके अतिरिक्त वह आज तक क्यों नहीं आया?

"वह बीमार था।"

उत्सव के दिन वह किस तरह सर्दी खा गया था और बाद को उसकी बीमारी किस तरह बढ़ गई, यह सभी बातें लीला ने वीणा से बतलाई।

चौधरी का हाल सुनकर वीणा के नेत्रों में आँसू आगये। उसने कहा—यह सारा मेरा अपराध है! मैंने उसके साथ कितना अनुचित व्यवहार किया है! उस रात को मेरे कारण उसे कितना क्लेश मिला है! लीला ने कहा—इस समय वह तुमसे मुलाकात करने के लिए बाहर खड़ा है। क्या उसे बुला लाऊँ?

"लीला, लीला, मैं इस तरह का जला हुआ मुंह उसे किस तरह दिखाऊँगी?"

लीला कमरे से निकल गई और उसने चौधरी को वीणा के कमरे में भेज दिया।

चौधरी ने वीणा का एक हाथ पकड़कर धीरे-धीरे कहा—मनुष्य क्या केवल सुन्दरता के ही कारण किसी से प्रेम करता है वीणा? क्या उसका हृदय कुछ भी नहीं है?

चौधरी की गम्भीर दृष्टि के सामने से अपना मुँह छिपाकर वीणा रो पड़ी। भर्राई हुई आवाज से उसने कहा—किन्तु तुम अब मुझसे कभी न प्रेम कर सकोगे चौधरी!

"कर न सकूँगा? तुम्हारी अनुमति भर पा जाऊं, फिर मैं दिखा दूँगा कि मैं आजन्म केवल तुम्हारी पूजा करना चाहता हूं!"

( ४३ )

उस रात को लीला जैसे ही सोने के कमरे में गई, शान्त ने बहुत ही घबराहट के साथ कहा—क्यो जी बिटिया रानी, ये मुँहजले कम्पनी के नौकर-चाकर क्या नाक में सरसों का तेल डाल-कर सो रहे हैं या अन्धे होगये हैं? धीरे-धीरे यह क्या होता जा रहा है? क्या इसके लिए कोई दाव नहीं है? रोक-थाम नहीं है?

एकाएक इस तरह का हमला होने के कारण लीला की समझ में यह बात न आई कि आखिर मामला क्या है। उसने कहा—तुझे फिर क्या होगया है? चिल्ला-चिल्लाकर प्राण क्यों दिये देती है?

"प्राण देती हूं शौक के मारे! अच्छा, तो सुनो, बताती हूँ। आज बहुत दिनों में बाजार गई थी कपड़ा खरीदने के लिए। श्यामा भी साथ में थी। आज-कल वह मिशन में ज्योत्सना के साथ रहती है न! यहाँ जो नीलमणि कपड़ेवाला है वह बहुत ही भला आदमी है। दूकानदार होने से ही क्या होता है? एक तो उसकी अवस्था भी परिपक्व हो चली है, साथ ही धर्म की ओर भी उसका ध्यान रहता है। कभी किसी को ठगता नहीं। इससे

मुझे जब कभी आवश्यकता पड़ती है तब उसी के पास जाती हूँ, और किसी की दूकान पर नहीं जाती। आज क्या हुआ कि कपड़ा खरीदकर जब मैं चली तब उस बुड्ढे का लड़का भी दूकान से बाहर निकल आया और कहने लगा—ओ हो, क्षान्त मौसी हो? यह अच्छा ही हुआ कि तुम से मुलाक़ात हो गई। तुमसे मुझे एक बात कहनी है। क्या तुम उसे अपने मालिकों के कानों तक पहुँचा सकती हो? यह सुनकर बुड्ढे ने कहा—हाँ, हाँ, खूब पहुँचा सकेगी। उसे तू सारी बातें खूब समझा दे जिससे जज साहब को मालूम हो जाय कि नीलमणिदास और उनके लड़के इन सब बेईमानों के दल में नहीं हैं। लेकिन खबरदार बेटा, और किसी के कान में यह बात न पहुँचने पावे, नहीं तो अँधेरी रात में तुम्हारा सिर कटकर अलग हो जायगा और पता तक न चलेगा। और कुछ न होगा तो लोग मेरे घर में आग ही लगा देंगे। हम-जैसे भले-मानुषों के ऊपर इन सब दलों के लोग बहुत रुष्ट रहा करते हैं।

मैंने देखा, वे बाप-बेटे बहुत घबराये हुए थे। वे दोनों ही काँप रहे थे। मैंने कहा—मामला क्या है? तुम लोग इतने चिन्तित क्यों हो?

उन लोगों ने कहा—यदि कम्पनी और कुछ दिनों तक चुपचाप बैठी रही तो उसका सर्वनाश होने में अधिक विलम्ब नहीं है। इस युद्ध के समय चारों ओर तरह-तरह की अफ़वाहें फैल रही हैं, इसी समय बहुत-से बदमाश मिल कर लोगों को कम्पनी के विरुद्ध भड़काते फिरते हैं। सुनने में आता है कि उन लोगों ने सभी छावनियों में जा-जाकर देशी सिपाहियों को उभाड़ रक्खा है, वे लोग जिस दिन निश्चय करेंगे, उसी दिन दल बाँध-बाँधकर निकल पड़ेंगे और उन लोगों के निकलने का समाचार जैसे ही मिलेगा, वैसे ही देशी सिपाही भी हथियार ले लेकर निकल पड़ेंगे।

बस, फिर क्या पूछना है ? चारों ओर मार-काट शुरू हो जायगी। उस समय जितने साहब, मेम और कम्पनी का नमक खानेवाले हैं, एकदम क़त्ल कर डाले जायँगे। उस दशा में कम्पनी से सम्बन्ध रखनेवाले हिन्दुस्तानी भी न बचने पावेंगे बिटिया रानी ? यह कहाँ की आफ़त आ रही है बिटिया रानी ? मैंने तो जब से सुना है तब से रोयाँ-रोयाँ तक काँप रहा है। साहब घर पर हैं नहीं। अब क्या होगा ?

लीला को इस बात पर विश्वास न हुआ। तो भी उसने कहा—पुलिस क्या कर रही है ? क्या वह इन बातों की खबर नहीं रखती ?

क्षान्त ने हाथ और मुँह हिला कर कहा—अहा, पुलिस का हाल मत पूछो। ये लोग खूब चैन से सड़कों पर घूमा-फिरा करते हैं। ग़रीब आदमी के लिए तो ये लोग काल हैं। बड़े आदमियों से ले लेकर माल उड़ाते हैं, और मौज से सोते हैं। ये मुँहजले व्यर्थ ही लाल पगड़ी बाँधकर घूमते फिरते हैं। इनसे कभी कोई काम निकलने का है ? ये जो भीतर ही भीतर सलाह-मसविदे होते रहते हैं, क्या इन्हें कुछ मालूम नहीं है ? ये लोग सब जानते हैं। इन्हें दवा ही ऐसी दी गई है कि इनका मुँह न खुलने पावे। फिर ये बतला ही किसी से कैसे सकते हैं ?

मिस्टर राय उस समय पटना में नहीं थे। लीला ने सोचा, सम्भव है कि कुछ बदमाशों के उभाड़ने से किसी तरह का झगड़ा-फ़साद हो जाय। परन्तु इसके लिए करूँ क्या ?

अरुण से यह बात बतलाने में लीला ने ज़रा भी आनाकानी नहीं की। उसने कहा—देश में जब एक ऐसा भी दल है जिसे वर्त्तमान राजनैतिक परिस्थिति से सन्तोष नहीं है, साथ ही भिन्न भिन्न स्थानों में उपद्रव भी होते रहते हैं, तो यह बात बिलकुल

उड़ा देने की नहीं है। इस सम्बन्ध में मैं पुलिस-सुपरिंटेंडेंट मिस्टर इरान्ट से मिल कर देखूँगी।

इस घटना के कुछ दिन बाद सन्ध्या-समय लीला एक उपन्यास पढ़ रही थी। उसी समय कोई आकर उसके पास खड़ा होगया। लीला ने जब सिर उठा कर देखा तब मालूम हुआ कि ज्योत्सना की दासी वामा है। भय और उद्वेग के कारण उसके चेहरे का रंग बिलकुल उतरा हुआ था। दौड़कर आने के कारण थकावट के मारे वह उस समय हाँफ रही थी।

वामा की अवस्था देखकर लीला ने विस्मित-भाव से पूछा—यह क्या? तुम ऐसे समय में क्यों आई हो? कोई खास बात है?

अधिक समीप आकर वामा ने कहा—बड़ा भयङ्कर हाल है बच्ची रानी! मेम साहब तो यहाँ हैं नहीं, किसी काम से वे इलाहाबाद गई हैं, लौटने में दो दिन की देरी है। इसी लिए तुम्हारे पास दौड़ी आई हूँ। जो हाल मैंने सुना है उसके कारण शरीर का रोयाँ-रोयाँ काँप रहा है। कल सूर्योदय से पहले न जाने क्या हो जायगा! बिलकुल प्रलय मच जायगा।

चञ्चल होकर लीला बोल उठी—हुआ क्या है? पहले वही बतलाओ, और बातें फिर बतलाना।

"हुआ क्या है! साँझ को काम-काज निबटाकर पान लगाने के लिए चूना खरीदने निकली थी। नीलमणि कपड़ेवाले की दूकान के पास ही तमोली की भी दूकान है। वहाँ से चूना लेकर लौट रही थी। जरा ही दूर पर मेरी एक सखी का मकान है, इससे सोचा कि इसी तरफ़ से उसका भी हाल लेती चलूँ। दूकान के पास ही से एक पतली सी गली है। उसी से होकर जा रही थी। चुन्नी अहीर का गाय-भैंस बाँधनेवाला जो घर है उसके पास के ही खंडहर से आदमी के गले की आवाज सुनाई पड़ी, मानो कोई चुपके-चुपके बातचीत कर रहा है। यों तो साँझ को तमाम आदमी

इकट्ठे होकर बैठा ही करते हैं, किन्तु वे तो इस तरह फुसफुस करके बातचीत नहीं करते। इसीलिए उस ओर मेरा ध्यान गया। उन लोगों की जो दो-एक बातें मैंने सुनीं, उसी से मेरे प्राण उड़ गये। फ़ौज, पल्टन, गोरों के बारिक, मार-काट, लूट, यही सब बातें वे लोग कर रहे थे। इस सम्बन्ध में थोड़ी-बहुत अफ़वाह मैंने पहले भी सुनी थी, इसीलिए उन लोगों की बीच-बीच की जो दो-चार बातें मैंने सुनी थीं, उनसे यह अर्थ निकाल सकी कि आज रात को यहाँ कोई हत्याकाण्ड होगा। एक आदमी तो कह रहा था कि पल्टन भी यदि समय पर साथ दे सकी तब तो एक-दम से खून की नदी ही बह चलेगी।

लीला ने बहुत ही उद्विग्न होकर कहा—तुम यह सब क्या कह रही हो वामा? आज रात को यह सब फ़साद होगा? क्या ऐसा भी कभी सम्भव हो सकता है?

वामा ने कहा—कल यदि बातें करने के लिए जीवित रह गई बच्ची रानी, तो पूछना। आज अब और कुछ सोचने का समय नहीं है। यदि कर सको तो कोई उपाय करो।

लीला ने पूछा—तुमने और क्या सुना है?

वामा ने उत्तर दिया—उन लोगों की सारी बातें तो सुन नहीं पाती थी। कोई बात कान तक पहुँचती थी और कोई नहीं पहुँचती थी। शायद एक आदमी कह रहा था कि आज रात को एक बम छोड़ा जायगा, जिसका धड़ाका सुनकर उन लोगों का दल निकल पड़ेगा। काली पल्टन तक! उसके बाद फिर जहाँ जितने साहब, मेम और सरकारी आदमी मिलेंगे, वे सब एक तरफ़ से मार डाले जायँगे। मैंने तो जैसे ही यह बात सुनी है, वैसे ही तुम्हारे पास दौड़ी हुई आई हूँ। बिलकुल जी छोड़ कर दौड़ रही थी। पैर दर्द करने लगे, दम घुटने लगा, तो भी नहीं रुकी। क्या होगा बच्ची रानी?

उद्वेग और आतङ्क से पूर्ण होकर लीला स्तब्ध दृष्टि से ताकती रही। बामा के चेहरे पर भय और शङ्का की गहरी छाप थी, साथ ही उसका सारा शरीर थरथर काँप रहा था। अतएव उसकी दशा ही उसकी बातों की सत्यता प्रमाणित कर रही थी।

अपने को सँभालकर लीला ने बामा को बहुत कुछ ढाढ़स दिया और बाद को उसे बिदा किया। सन्ध्या का समय कब समाप्त हो गया, और वह हत्याकाण्ड कब होगा, यह कुछ मालूम नहीं है। बामा ने यह भी कुछ नहीं सुना था कि वह साङ्केतिक शब्द किस समय होगा। किन्तु अब विलम्ब करना ठीक नहीं है! सोचते-सोचते लीला अरुण की खोज में चली।

अरुण अपने कमरे में बैठा हुआ एकाग्र मन से लिख रहा था। लीला ने जब आवाज़ दी तब उसने पुस्तक पर से मुँह उठाकर उसकी ओर देखा। वह बहुत क्लान्त मालूम पड़ रहा था। उसके नेत्रों की दृष्टि भी मानो निस्तेज और थकी हुई थी।

लीला ने कहा—तुम बहुत अधिक परिश्रम करते हो अरुण! शरीर को किसी प्रकार का क्लेश तो नहीं मालूम पड़ता?

"मस्तक में ज़रा-सी पीड़ा भर है, तो भी मैं अभी एक घंटा परिश्रम कर सकता हूँ।"

"हाँ, यह तो ठीक है, किन्तु तुम्हारी आँखों से अधिक मूल्यवान् तो कोई चीज़ है नहीं! अब यह सब रहने दो। तुम्हारे पास मैं एक काम से आई हूँ। पिताजी इस समय घर पर हैं नहीं। मैंने जो-जो बातें सुनी हैं उनके सम्बन्ध में तुम्हें एक बार मिस्टर डुरांट के पास जाना होगा।

सारी बातें धैर्यपूर्वक सुनने के बाद अरुण ने अपना घोड़ा तैयार करके लाने का आदेश किया। उसके नेत्रों के तारों में यन्त्रणा हो रही थी, किन्तु इस अनिश्चित उद्वेग और आशङ्का से छुटकारा

तो लेना ही था, अतएव लीला को आश्वासन देकर वह बाहर जाने के लिए तैयार हो गया।

लीला ने कहा—तुम बहुत थके हुए से मालूम पड़ रहे हो। इसलिए तुम चाहे घर ही पर रहो, मैं ही जाकर देखूँ कि क्या कर सकती हूँ।

अरुण ने कहा—पागल हो, ऐसे दंगे के समय में तुम कहाँ जाओगी? पहले-पहल मैं छावनी में जाना चाहता हूँ। उस दिन मेजर स्मिथ कह रहे थे कि सिपाहियों का एक दल उद्दण्डता करने लगा है। ये सब बातें निरर्थक नहीं है लीला! यह बहुत अच्छा हुआ जो पहले से खबर मिल गई। इस समय यहाँ कोई ऐसी घटना हो जाना असम्भव नहीं है।

अरुण का घोड़ा जब तैयार होकर आ गया तब लीला ने कहा—किन्तु तुम अधिक विलम्ब न करना। अकेले रहने में मुझे बड़ा भय लगता है।

अरुण ने कहा—भय किस बात का है? मैं दो घंटे में लौटा आरहा हूँ। किन्तु मा या वीणा से इस सम्बन्ध में तुम कुछ मत कहना। चार आदमियों के कान में पहुँचने पर बात फैल जाती है। जब तक मैं लौटकर न आऊँ तब तक तुम खूब सावधानी से रहना।

अरुण जब चला गया तब लीला अपने कुत्ते को लेकर बरामदे में खेलने लगी। इतनी स्वच्छन्दता के साथ वह खेल रही थी मानो ऐसी कोई बात ही नहीं है। किन्तु अपने मानसिक नेत्रों से वह देखने लगी मानों दल के दल आदमी भयङ्कर रूप से चिल्लाते हुए दौड़े आ रहे हैं। चारों ओर लूट-मार, हाय-हाय और चिल्लाहट मची हुई है।

डर के मारे उसका कण्ठ-तालु सूख गया। अरुण यदि असफल हुआ! यदि उसके सूचना देने से पहले ही विद्रोही लोग निकल

पड़े ! कुत्ता ज़रा-सा दूर खड़ा था। उसके मुँह में एक टेनिस 'बाल' था। वही बाल लेकर वह लीला के साथ खेल रहा था।

परन्तु लीला का हृदय क्रमशः अवसन्न और म्रियमाण हुआ जा रहा था। उसने कहा—अब आज और खेल न होगा जिमी, कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। बाल उठा कर रख आओ।

रात बढ़ने लगी, परन्तु अरुण लौट कर नहीं आया। रात के भोजन का समय होगया, तो भी वह न आया, कोई ख़बर भी नहीं भेजी। लीला समझ गई कि मामला कुछ अधिक बढ़ गया है।

मिसेज़ राय समझती थीं कि अरुण अपने किसी मित्र के यहाँ गया है। सारा दिन चौधरी के साथ काटकर वीणा बहुत सुखी थी। उसने भी अरुण की कोई ख़बर नहीं ली। उन दिनों में चौधरी का प्रेम पाकर वीणा की मानसिक अवस्था परिवर्तित हो रही थी। अब उसे अपनी खोई हुई सुन्दरता के लिए भी विशेष दुख नहीं था। इतने दिनों के बाद अब वह स्वयं भी प्रेम करना सीख रही थी। उसी प्रेम के आभास से उसकी अन्तरात्मा सदा आनन्द से पूर्ण रहा करती।

रात का भोजन समाप्त हो गया। लीला ने वीणा से बात-चीत करके अपने मन को बहलाने की बड़ी चेष्टा की, किन्तु हृदय का उद्वेग किसी तरह भी न शान्त हुआ। इतनी देर के बाद भी अरुण न दिखाई पड़ा। उद्विग्न भाव से लीला अपने कमरे में जा रही थी। इतने में उसके साईस ने आकर उसे पुकारा।

बरामदे में आकर लीला ने देखा, साईस भय और उद्वेग के मारे मृतप्राय-सा हुआ खड़ा है। बहुत ही विस्मित होकर लीला ने उससे पूछा—क्या बात है वंशीराम ?

मिस साहब, मेरा भाई वसन्तपुर से एक बड़े ग़ज़ब की ख़बर ले आया है।"

लीला ने उद्विग्न होकर कहा—कौनसी ख़बर है? जल्दी बतलाओ।

"क्या बतलाऊं सरकार, आज रात को वहाँ बड़ा खून-खच्चर होनेवाला है। साहब तो कुछ जानते नहीं, साथ ही जानने का कोई उपाय भी नहीं है। वे अभी तक लौटकर घर तो आये नहीं। अब क्या होगा?"

दस बजे रात का समय था। मिसेज़ राय अपने सोने के कमरे में चली गई थीं। लीला सन्नाटे में आकर खड़ी रही। आज यह सब क्या उपद्रव होने जा रहा है? वह जानती थी कि किरण शहर से तीन मील की दूरी पर निरापद स्थान में रहता है। उचित समय पर यदि उसे सूचना मिल गई तो वह अवश्य ही अपनी रक्षा का उपाय कर सकेगा। किन्तु इस समय विपत्ति उसी के सामने खड़ी है।

किरण के साईस से लीला ने कहा—क्या बात है, मुझे समझा-कर सब बातें साफ़-साफ़ बतलाओ। घर में जितने अर्दली, चपरासी और नौकर चाकर थे, उन सबने वहाँ आकर भीड़ लगा दी।

साईस ने व्यस्त भाव से कहा—सरकार की जमींदारी में एक गाँव है, वह संसार भर के गुंडों और बदमाशों से भरा है। वे लोग प्रायः झगड़ा-झंझट मचाया करते थे। उस गाँव में एक बहुत गहरा तालाब था, जिसमें पुराना पानी भरा रह कर सड़ा करता था। उसका पानी पीते-पीते लोग रोगी होकर मर जाया करते थे। सरकार ने उस तालाब को पटा कर दो पक्के कुएँ बनवा दिये हैं। यही उन लोगों के क्रोध का कारण है। इसके अतिरिक्त उनके बग़ीचे के बीच से एक पतला सा रास्ता निकला था। बरसात में गाँव की ओर आने-जाने में बड़ा क्लेश होता था। सरकार ने उस रास्ते को बन्द करके एक अच्छी सी पक्की सड़क निकलवा दी है। वह सड़क निकलवाने के लिए जिन-जिन लोगों

की जगह ली गई है उन सबको सरकार से उचित मूल्य मिल गया है। तो भी वे लोग सरकार से बहुत चिढ़ गये हैं। उन लोगों का कहना है कि हमारा सात पीढ़ी का डीह खोदकर सड़क बनवाई है। बहुत से बदमाश लूट-मार करना चाहते हैं, इसी लिए उन सब ने सरकार के विरुद्ध लोगों को बहुत भड़का दिया है। आज उन लोगों को इस बात का भी पता चला है कि वसन्तपुर और उसके आस-पास के गाँवों की पुलिस शहर में चली आई है। सुनने में आता है कि आज रात को यहाँ भी कुछ उपद्रव होगा। इसी लिए गाँवों की सारी पुलिस यहाँ चली आई है। इससे उन लोगों को बड़ा अच्छा मौक़ा मिल गया है। शायद आज ही वे लोग सरकार की हत्या करके उनका बँगला लूट लेंगे। इस सप्ताह में लगान का बहुत-सा रुपया आया है। वह सब इस समय भी बँगले में ही रक्खा है। यह बात भी उन लोगों को मालूम है।

लीला ने कहा—ये सब बातें तुम्हें कैसे मालूम हुई? इसके अतिरिक्त तुम्हें यही कैसे मालूम हुआ कि ये सब बातें मिथ्या और निस्सार नहीं हैं?

साईस ने कहा—यह सब सच है मिस साहब! मैंने अपने कान से सुना है। मैं गाँव के भीतर से जा रहा था, तब वे लोग एक स्थान पर एकत्र होकर खूब धीरे-धीरे बातचीत कर रहे थे। मैंने सोचा था कि सरकार यहाँ आये होंगे, इसलिए दौड़ा आया। वे तो यहाँ हैं नहीं। अब उन्हें कहाँ खोजूँ?

लोगों की बात-चीत की आहट पाकर मिसेज़ राय बाहर निकल आईं। बरामदे में इतने लोगों की भीड़ देख कर उन्होंने कहा—यहाँ क्या हो रहा है? मामला क्या है?

एक चपरासी घटना का विवरण उन्हें समझाने लगा। इतनी देर में लीला ने सभी नौकरों से पूछ डाला कि कोई घोड़े पर सवारी करना जानता है या नहीं? परन्तु सभी ने जवाब दे दिया।

लीला व्यग्र होकर सोचने लगी—इस समय साढ़े दस बजे हैं। किरण अब तक लौट कर अपने बँगले में अवश्य आगया होगा। शायद वह भोजन आदि से निवृत्त होकर सोने की तैयारी कर रहा हो। इस समय यदि कोई जाकर उसे इस बात की सूचना दे दे, जिससे वह सावधान होजाय, तभी कुशल है। नहीं तो वह बेचारा अनायास ही विद्रोहियों के हाथ से मार डाला जायगा। परन्तु किसी अच्छे सवार के अतिरिक्त और कौन इतनी शीघ्रता से उसे सूचना दे सकता है?

मिसेज राय ने पूछा—यह आदमी क्या कह रहा है लीला? मिउटिनी होगी यहाँ?

लीला ने कहा—घबराओ मत, उसी प्रकार की एक सूचना पाकर अरुण साँझ से ही कैंटूनमेंट में और पुलिस-सुपरिंटेंडेंट के पास गया है। यहाँ जो कुछ होने को था अब वह रुक जायगा, क्योंकि पुलिस को शायद पहले से ही पता चल गया है। इससे मालूम पड़ता है कि हम लोग संकट से बच गये। किन्तु किरण का क्या होगा? उसे तो कुछ मालूम नहीं है! शायद वह निश्चिन्त होकर सोता रहेगा और आत्मरक्षा के लिए तैयार होने से पहले ही बद-माशों के हाथ से मार डाला जायगा! इसी समय उसके पास एक आदमी का जाना आवश्यक है।

"एक चिट्ठी लिखकर गोपालसिंह के हाथ उसके पास तुरन्त ही भेज दो। किन्तु भयंकर घटना है! तुम्हारे पिता स समय घर में नहीं हैं। उसी समय चारों ओर उपद्रव मचा है। मुझसे पहले क्यों नहीं बतलाया?"

लीला इस प्रश्न को टाल गई। उसने कहा, पैदल जाने में गोपालसिंह को बहुत देरी लगेगी। इसी समय ग्यारह बज रहे हैं!

"तो और क्या किया जा सकता है? मुझे तो इसके अतिरिक्त

और कोई उपाय नहीं सूझ पड़ता। तुम चिन्तित होने के सिवा और क्या कर सकती हो?"

लीला अधीर होकर बरामदे में टहलने लगी। वह सोचने लगी—क्या किया जाय? किस तरह किरण को सूचना दी जा सके? अरुण यदि घर पर होता तो वह घोड़ा दौड़ा कर आध घण्टे में ही उससे सब कुछ कह कर लौट आता। परन्तु अरुण यदि ऐसा कर सकता है तो मैं ही क्यों न कर सकूँगी? मेरा जाना क्या इतना असम्भव है?

मिसेज़ राय ने कहा—तुम अब यहाँ खड़ी-खड़ी क्या करोगी? यह सचमुच बड़े ही दुःख की बात है, किन्तु हमारे सम्बन्ध में वह समझ लेगा कि ये लोग इस सम्बन्ध में सर्वथा निरुपाय थे।

"वह समझेगा क्या? शायद अब तक उसकी हत्या हो गई हो! या यह भी हो सकता है कि डाकू लोग घेर कर उसके बिस्तरे के पास खड़े हों। शायद वह प्राण-रक्षा के लिए डाकुओं से मोर्चा लेने का उद्योग कर रहा हो!"

लीला काँप उठी।

"तो गोपालसिंह को भेजने के अतिरिक्त और तुम्हीं क्या कर सकती हो?"

"ओह असह्य! वहाँ किरण की हत्या हो और यहाँ बैठी-बैठी मैं उसका समाचार सुनूँ? साईस, मेरा घोड़ा लाओ, मैं उसके पास जाऊँगी।"

आश्चर्य में आकर मिसेज़ राय ने कहा—क्या तू सचमुच पागल हो गई है लीला?

"नहीं मा, अभी हुई नहीं, किन्तु कुछ देर तक यदि यहाँ रही तो ज़रूर हो जाऊँगी। मेरे हृदय की कैसी अवस्था है, यह तुम न समझ सकोगी। साईस, जल्दी करो, मेरा घोड़ा इसी समय ले आओ।

मिसेज राय ने शासन के स्वर में कहा—सार्ईस, मिस साहब के इस हुक्म की ओर तुम कभी मत ध्यान देना। नहीं तो साहब के लौट कर आने पर तुम्हें जवाबदिही करनी पड़ेगी, यह याद रखना।

कोलाहल सुनकर वीणा बाहर आई, सब बातें सुनकर वह लीला को जाने से रोकने लगी।

किसी ओर भी ध्यान न देकर लीला ने दृढ़ स्वर से कहा—मैं जाऊँगी ही। वंशीराम, तुम यदि मेरा घोड़ा नहीं लाते हो तो मैं ही जाकर लाऊँगी। मैं जो कुछ करूँगी, पिताजी के समक्ष मैं ही उसके लिए उत्तरदायी होऊँगी, इस सम्बन्ध में तुम लोग कोई भी चिन्ता न करो।

वीणा ने रोकर कहा—लीला, लीला, तू क्या करने जा रही है भाई?

लीला ने ध्यान नहीं दिया, वह अपने कमरे में गई और लबादा पहन कर अस्तबल की ओर चली गई।

उसे पकड़ने के लिए मिसेज राय नौकरों से कह रही थीं, किन्तु किसी को भी हिलने तक का साहस नहीं हुआ। लीला जो कुछ निश्चय करेगी उसे करके ही रहेगी। उसके निश्चय में यदि कोई बाधा डालने का प्रयत्न करेगा तो घोड़े के चाबुक से उसकी खबर लेने में भी वह आनाकानी न करेगी, यह बात वे सब अच्छी तरह जानते थे।

अन्त में निरुपाय होकर मिसेज राय सी बात पर विचार करके हृदय को शान्त करने का यत्न करने ल ीं कि लीला जब लौट कर आवेगी तब उसे किस प्रकार का दण्ड दिया जायगा।

मिसेज राय ने जब देखा कि लीला सचमुच चली जा रही है तब वे आती हुई मूर्छा को रोकने के लिए स्मेलिङ्ग सेंट की शीशी नाक से लगाने लगीं। वीणा की ओर इशारा करके उन्होंने

कहा—अरुण कहाँ गया ? वह यदि होता तो ऐसा उपद्रव न होने पाता। वे लोग यदि सचमुच किरण के ऊपर आक्रमण करने जा रहे हैं तो वहाँ यह क्या करने जा रही है, जरा बतलाओ तो ? लोग उसे कहेंगे क्या ?

लोग क्या कहेंगे, इस ओर ध्यान न देकर वीणा रोती-रोती लीला के पीछे-पीछे चली।

घोड़े पर सवार होने से पहले लीला वीणा के पास आई और उसका मुँह पोंछ कर कहने लगी—रोओ मत, मैं बड़ी सावधानी मे रहूँगी। यदि हो सका तो किरण को लेकर लौट भी आऊँगी। अरुण जब लौट कर आवे तब तुम उसे सारी बातें समझा देना। मैं जाती न, किन्तु किरण इस तरह की विपत्ति के मुख में पड़ा है, यह बात जान कर भी घर में बैठी रहना मेरे लिए असम्भव है। इसी लिए जा रही हूँ। मा को देखना। खूब सावधानी से रहना। मैं अब जा रही हूँ। यह कह कर लीला एक छलाँग में घोड़े पर सवार होगई और फाटक के बाहर जाकर अदृश्य हो गई।

## ( ४४ )

आधी रात का समय था। चारों दिशायें अन्धकार से आच्छादित थीं। उस अन्धकार को बेधती हुई लीला उल्का के समान तीव्र गति से दौड़ी जा रही थी। जिसे वह प्यार करती थी उसका जीवन आज एक छिपी हुई विपत्ति की विकराल छाया के नीचे दबा था। आज उसे अपनी भलाई-बुराई या और किसी विषय पर विचार करने का समय नहीं था। जिस तरह भी हो, उसे किरण के पास तक उसी दम पहुँच जाने में ही शान्ति थी। लीला जितना ही घोड़े को तेज दौड़ाती, उतना ही उसे कम मालूम पड़ता। घोड़े को दौड़ाती हुई वह साँस बाँधे बढ़ी चली जा रही

थी। रह-रह कर घोड़े की टापों से चिनगारियाँ निकलने लगतीं। उस निर्जन मैदान मे केवल घोड़े की टापों का ही शब्द सुनाई पड़ता था।

स्टेशन के सामनेवाली सड़क पार करके लीला को जाना था। तेज रोशनी से सारी सड़क जगमगा रही थी। किन्तु उसके पास ही देहात की पतली-पतली पगडंडियाँ अँधेरे से घिरी थीं चारो ओर की अत्यधिक नीरवता अमंगल की सूचना दे रही थी। मस्तक के ऊपर आकाश में तारे कुहरे के पतले आवरण में छिपे हुए निष्प्रभ भाव से अपना टिमटिमाता हुआ प्रकाश फैला रहे थे। उसी धुँधले अँधेरे में बड़े-बड़े वृक्ष खड़े हो कर मानो एक स्थान पर स्थिर मन से खड़े रहनेवाले प्रहरी के समान खड़े-खड़े मानव जाति के समस्त सुख-दुःख, सारी घटनायें, बहुत ही उदासीन भाव से देख रहे थे। कभी-कभी किसी परिचित शब्द से उस स्थान की गंभीर निस्तब्धता भंग हो जाती थी। स्थान-स्थान पर देहात के लोग ढोल बजा-बजा कर और ताल दे-दे कर गा रहे थे। उनका वह स्वर वायु में मिल कर लीला के कानों से टकरा रहा था। कभी एक सियार बोल देता और उसके बाद ही झुण्ड के झुण्ड मिल कर 'हुआ' 'हुआ' करने लगते। अगणित कीट-पतंगों का दल चिड़ियों की शान्तिमय निद्रा भंग करता हुआ वृक्षों की डालियों पर फड़फड़ा कर उड़ रहा था।

लीला मैदान के ठीक मध्य भाग से हो कर घोड़ा दौड़ाती चली जा रही थी। बीच-बीच में वह उद्विग्न भाव से पीछे बाजार की ओर ताक भी लिया करती थी। आज की रात का एक-एक शब्द उसके कान में पड़ कर आशंका का संचार करता था। लीला यह सोचकर कभी-कभी भयभीत-सी हो जाती थी कि कहीं मैं ही न उन विद्रोहियों के सामने जा पड़ूँ। वे लोग तो तैयार बैठे केवल सांकेतिक शब्द की ही प्रतीक्षा कर रहे थे। परन्तु यह क्या पता था कि वह शब्द कब होगा।

सूखी हुई पत्तियों की मरमराहट और हवा के सन सन शब्द से भी लीला काँपने लगती थी। किन्तु प्राणों की आशंका होने पर भी किरण की चिन्ता एक क्षण के लिए उसके हृदय से दूर नहीं हुई। लीला सोचने लगी—सम्भव है, किरण शान्त भाव से सो रहा हो, कापुरुष हत्याकारियों ने आकर उसे चारों ओर से घेर लिया हो और वह चौंक कर जाग उठा हो। ओह, असह्य! उसकी इस दशा की तो मैं कल्पना तक नहीं कर सकती। मन ही मन इस प्रकार सोचती हुई लीला ने और भी वेग से घोड़े को दौड़ाया।

अन्त में किरण की कोठी लीला की दृष्टि में आई, तब उसने तृप्ति की साँस ली। इतनी देर के बाद उसका चित्त कुछ ठिकाने पर आया। उस समय भी चारों दिशायें शान्त और नीरव थीं। शायद विद्रोहियों का निर्दिष्ट समय आने में उस समय भी विलम्ब था।

किरण के बँगले के इस तरफ़ एक बगीचा था। अँधेरे में बगीचे के ऊँचे-ऊँचे वृक्षों की छाया में वह ढका हुआ था, केवल उसकी सफ़ेद रंग की छत ही आकाश की ओर उठी हुई-सी मालूम पड़ती थी। लीला बँगले के पास पहुँच गई। फाटक बन्द था। किरण के सभी नौकर-चाकर उस समय गहरी नींद में सो रहे थे। सारे बँग्ले में सन्नाटा था, कहीं किसी की कोई भी आहट नहीं मिलती थी। फाटक के पासवाली बत्ती को छोड़ कर और सभी बत्तियाँ बुझ गई थीं। उस समय वहाँ चारों ओर शान्ति देख कर लीला ने सोचा कि यहाँ के विद्रोहियों ने भी शायद शहर-वालों के ही समान समय निर्दिष्ट कर रक्खा है और यह भी निश्चय कर रक्खा है कि समय आते ही सब के सब एक साथ टूट पड़ेंगे।

लीला घोड़े पर से उतर पड़ी। ज़मीन पर पैर रखते ही उसने अनुभव किया कि अत्यधिक उत्तेजना के कारण उसका सारा शरीर काँप रहा है। घोड़े की रास पकड़ कर ज़रा-सा आगे बढ़ते

ही उसे जान पड़ा, मानो यहाँ से बहुत दूर बहुत से लोग मिल कर चिल्ला रहे हैं। किन्तु जब वह ज़रा स्थिर हुई तब उसे मालूम हुआ कि यह वास्तव में उसका भ्रम था। कभी-कभी कल्पना में असत्य बात भी सत्य-सी मालम पड़ती है।

× × ×

बैठक म उस समय भी बत्ती जल रही थी। किरण अभी तक सोने नहीं गया था, लीला के वहां पहुँचने से ज़रा देर पहले वह भी कहीं से लौट कर आया था।

लीला की छाती धड़क रही थी। जिस दिन क्लब में उत्सव था, उसके बाद फिर वह कभी साहस करके किरण से मुलाक़ात नहीं कर सकी थी। परन्तु उस दिन किरण ने उसके हृदय में जो संशय जाग्रत कर दिया था उसे वह क्षण भर के लिए भी नहीं भूल सकी थी। उसका न्यायनिष्ठ चित्त समय-समय पर अत्यन्त व्याकुल और चंचल हो उठा करता था। वह सोचती कि मैं निर्दोष और निरीह अरुण के साथ सचमुच कितने दिनों से प्रवंचना करती आ रही हूँ।

किरण के कमरे में प्रवेश करके उससे सारी बातें साफ़-साफ कह देने का साहस उसे अब नहीं होता था। लज्जा और संकोच के कारण वह मरी जा रही थी। जिस समय वह घोड़ा दौड़ाती हुई तेज़ी के साथ आरही थी, उस समय ये सब बातें उसके हृदय में नहीं उदित हुई थीं। परन्तु जब उसने किरण को शान्त और निरापद अवस्था में देखा तब उसके पास जाने में उसके पैर काँपने लगे। उसका सारा संयम शिथिल पड़ गया।

आँखें मलते-मलते आकर एक नौकर ने उसका घोड़ा पकड़ लिया। जज साहब की कन्या को इतनी रात के समय अकेली आई हुई देख कर उसकी बुद्धि चक्कर में आ गई। वह विस्मित भाव से ताकता रह गया।

लीला ने बहुत लज्जित भाव से पूछा—तुम्हारे साहब बँगले में हैं? नौकर को उत्तर देने की आवश्यकता न पड़ी, लीला के घोड़े की टापों की खटापट सुन कर यह जानने के लिए कि कौन आया है, किरण स्वयं निकल आया।

"किरण!" लीला का सुमधुर स्वर वायु में झंकृत हो उठा। निमेष मात्र में ही किरण लीला के पास आ कर खड़ा हो गया। किरण ने जब देखा कि अतिथि और कोई नहीं, वही लीला है जिसकी चिन्ता उसके हृदय से क्षण भर के लिए भी दूर नहीं होती, तब वह अत्यधिक आश्चर्य में आकर अवाक् हो गया। उसके मुँह से केवल इतना ही निकला—तुम हो!

लीला ने किरण को इतनी रात को अपने आने का कारण समझाने का प्रयत्न किया, किन्तु कदाचित उस समय किरण कोई भी बात नहीं समझ सका। उसकी समझ में इतना भर आया कि लीला मेरे पास आई है। साथ ही उसे चिन्ता भी हुई—ऐसी अँधेरी रात में जब और सब लोग अपने-अपने घरों में गहरी नींद में सो रहे हैं, निर्जन मैदान में घोड़ा दौड़ाकर यह मेरे पास क्यों आई? एकाएक कौन सी ऐसी घटना हुई जिसके कारण उसे यहाँ आना पड़ा? उसने कहा—मामला क्या है लीला?

लीला ने कहा—किरण, आज मैं विशेष आवश्यकतावश तुम्हारे पास आई हूँ।

किरण ने कहा—अच्छा अपनी आवश्यकता प्रकट करने को अभी रहने दो, पहले इस सर्दी से हट कर घर में चलो। ऐसा कह कर लीला का हाथ पकड़े हुए किरण उसे घर में ले गया और उसे जबरदस्ती कुर्सी पर बैठा दिया।

बैठते ही लीला ने फिर कहा—किरण, क्या तुम ने कुछ सुना नहीं? तुम्हारे असामी लोग मिल कर आज तुम्हारा बँगला लूटने-वाले हैं। जरा चुप रहो, सुनो, कहीं से कोलाहल सुनाई पड़ रहा है न?

किरण ने अभी तक इन बातों पर विशेष ध्यान नहीं दिया। वह उदासीन भाव से ही ये सारी बातें सुन रहा था। उस समय भी उसकी विस्मयपूर्ण दृष्टि लीला के ही मुख पर गड़ी हुई थी। वह कहने लगा—यह सब तुम्हें किसने बतलाया है ?

लीला ने फिर से सारी बातें विस्तारपूर्वक कहीं। परन्तु किरण के रंग-ढंग से जान पड़ता था कि यह बातें उसे अधिक तथ्यपूर्ण नहीं मालूम पड़तीं। उस समय उसके मन में एक दूसरी ही चिन्ता वर्तमान थी। वह केवल यह थी कि यही एक बात कहने के लिए लीला आधी रात को अकेली इतनी दूर दौड़ी आई है।

लीला किरण को धक्का दे कर सचेत करती हुई कहने लगी—तुम कुछ सुनते नहीं हो किरण ? इस समय का एक-एक क्षण बहुत मल्यवान् है। इस तरह समय मत नष्ट करो, इसका कोई प्रतीकार करो।

इतनी देर के बाद किरण ने कहा—मुझे इस बातका विश्वास नहीं होता। मैंने ऐसा कौन-सा काम किया है जिसके कारण वे मेरी हत्या करेंगे ? और तुम यही बात कहने के लिए ऐसी अंधेरी रात में अकेली दौड़ी आई हो ? अरुण कहाँ गया ?

लीला ने एक-एक करके सारी बातें बतलाईं। सब कुछ सुन कर किरण ने कहा—इतनी भयङ्कर विपत्ति के दाँतों के बीच से होकर मुझे सावधान करने के लिए तुम यहाँ तक दौड़ी आई हो ? तुम्हें भय नहीं मालूम पड़ा ? यदि उन लोगों के सामने पड़ जातीं ?

अत्यधिक आतङ्क से लीला काँप उठी। किरण के नेत्रों से इस तरह की ज्वाला निकल रही थी कि लीला को फिर उसकी ओर ताकने का साहस नहीं हुआ।

विपत्ति क्रमशः सामने की ओर बढ़ी आ रही थी। किरण ने उस ओर ध्यान नहीं दिया। अरुण के साथ लीला के विवाह की बात पक्की हो गई है, यह बात उसे भूल गई, वह सोचने

लगा—लीला जब मुझसे इतना प्रेम करती है तब क्या इस प्रेम के अधिकार मे वह मेरी नहीं है ? आज रात को जब वह मेरे पास इस तरह दौड़ी आई है तब इस सम्बन्ध में और क्या पूछना है ? अब अरुण को अवश्य ही लीला को मेरे हाथ में वापस कर देना पड़ेगा। उसे समझ लेना चाहिए कि लीला का प्रेम उसके लिए नहीं है। आज की रात के बाद लीला फिर लौट कर अपने पुराने जीवन में नहीं जा सकती।

किरण को चुप देख कर लीला अधीर हो उठी। उसने बहुत ही विनय करके कहा—इसके लिए कोई उपाय करो किरण ? यह क्या दूसरी बातों पर विचार करने का समय है ? वे लोग जब एकाएक आ पहुँचेंगे तब तुम क्या करोगे ?

किरण ने कहा—किन्तु लीला, आज की इस घटना के बाद भी क्या तुम यह कहना चाहती हो कि मैं तुम्हारी नहीं, बल्कि अरुण की हूँ ? क्या तुमने मुझसे केवल प्रेम करने के ही कारण यह सब नहीं किया ? मैंने उस दिन जो-जो तर्क तुम्हारे सामने उपस्थित किये थे उन पर विचार करके देखो। अरुण को इस प्रकार प्रतारित करना और जरा-सी भूल के कारण अपना और हमारा जीवन नष्ट करना उचित नहीं है। आज ही रात को जरा देर बाद में तुम्हें मोटर में बैठा कर अरुण के पास ले चलूँगा और सारी बातें उससे साफ़-साफ़ कह दूँगा। ठीक है न ?

लीला अचेत-सी होकर कुर्सी पर लेट गई और आँखें बन्द करके पड़ी रही। किरण के प्रति उसके हृदय में जो अटल और अनन्त प्रेम था उसे तो अब वह मन ही मन दबा नहीं सकती थी ! जो होने को होगा वह होगा। एक व्यक्ति के प्रेम से जब उसका हृदय इस प्रकार ओत-प्रोत है तब वह दूसरे की पत्नी बन ही कैसे सकती है ? इस द्वन्द्व में उसी की पराजय हुई, अब युद्ध करने की शक्ति लीला में नहीं रह गई।

लीला के सामने किरण खड़ा था। जब उसने देखा कि लीला इतनी देर से नीरव पड़ी है और उसके मुह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा है तब वह धीरे से आकर उसके पास बैठ गया और उसका हाथ पकड़ कर मन्द स्वर से बोला—तो मेरी ही बात ठीक रही न लीला ?

एकाएक कुछ दूरी पर बहुत से लोगों के एक साथ चिल्लाने की आवाज़ सुनाई पड़ी। वह शब्द सुन कर लीला पागल की तरह उछल पड़ी। डर के मारे उसका मुँह सूख गया। उसने कहा—एं! एं!! वे लोग आ रहे हं! वे सब अभी तुम्हारे प्राण ले लेंगे! क्या किया जाय? अब क्या किया जाय?

किरण का कुत्ता गला फाड़-फाड़ कर भौंकने लगा। किरण ने उठ कर चौकीदार को पुकारा, किन्तु उस समय वह फाटक की ओर दौड़ा जा रहा था। किरण के सभी नौकर इकट्ठे हो कर फाटक पर खड़े थे। विद्रोहियों के कोलाहल से उन लोगों की निद्रा भंग हो गई थी और वे सब दौड़ कर फाटक पर आ गये थे।

क्षण भर के बाद ही एक भयङ्कर आशङ्का से शङ्कित होकर वे सब फाटक पर से हट आये और अपने मालिक से कहने लगे कि बहुत-से आदमी मसाल, लाठी और फरसा आदि लिये बहुत जोरों से चिल्लाते हुए इसी ओर दौड़े आ रहे हैं। भौंकते-भौंकते कुत्ता दौड़ कर फाटक की ओर गया। चौकीदार कहने लगा कि यह अच्छा लक्षण नहीं जान पड़ता। डाका डालने के अतिरिक्त उनका और क्या मतलब हो सकता है?

एक साईस जी छोड़ कर दौड़ता हुआ आया और कहने लगा—सरकार, सरकार, हम सब मार डाले जायेंगे। बहुत आदमी हं, अगणित हैं, दल के दल आदमी लाठी लिये हुए हमारे बँगले की ओर दौड़े आ रहे है। इस गाँव की सारी पुलिस आज शहर चली गई है। अब क्या होगा सरकार?

किरण ने सब से पहले घोड़ों को खोल कर अस्तबल से बाहर निकाल देने को कहा,—जिससे आवश्यकता पड़ने पर वे सब भाग सकें। बाद को उसने लीला से कहा कि तुम अब इसी वक़्त घोड़े पर सवार हो जाओ और बंगले के पिछवाड़े बग़ीचे के बीच से जो गुप्त रास्ता है उसी से निकल भागो। मैं थोड़ी दूर तक तुम्हें पहुँचा आऊँगा। उस मार्ग से तुम बड़ी शीघ्रता से घर पहुँच सकोगी। उठो, देर मत करो।

लीला ने दृढ़ भाव से कहा—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। तुम यदि मेरे साथ न चलोगे तो मैं कदापि न जाऊँगी। तुम्हारे यहाँ रहने का अर्थ है जीवन से हाथ धोना।

किरण ने कहा—मैं भला यहाँ से कैसे जा सकता हूँ लीला? मेरी घर-गृहस्थी है, इतना माल-असबाब है, यह सब भी तो इन लोगों के हाथ से बचाना पड़ेगा, इसके अतिरिक्त मेरे आश्रय में इतने नौकर-चाकर हैं, इनकी रक्षा करने का और इन्हें निरापद स्थान में पहुँचाने का भी भार मेरे ही ऊपर है। इन सब को मृत्यु के मुख में छोड़ कर मैं स्वयं कैसे अपने प्राण ले कर भाग सकता हूँ? तुम चलो, ज़रा दूर तक पहुँचा दूँ, तब फिर लौट कर इन बदमाशों की बहादुरी देखूँ।

लीला ने ताक कर देखा—किरण का वही पहले का साहस, पहले की शक्ति और पहले की अविचलित दृष्टि उसके शरीर में फिर आ गई है। वह सोचने लगी कि यह वही मेरा चिरदिन का साथी किरण है, जो मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय है। सुख-दुःख में सदा ही यह समान भाव से रहता है। धैर्य-शक्ति और वीरता में यह अतुलनीय है। यह किरण मेरा ही है। मेरे सुख-दुःख का साथी है। इसके ऊपर एक-मात्र मेरा अधिकार है। इसके साथ मरने में कितना सुख है, कितनी तृप्ति है और कितना आनन्द है! उसी क्षण लीला ने और सब बातें भुला दीं। अरुण का

उसे ध्यान तक नहीं रह गया। वह कितना दुर्बल है, लीला के बिना वह खड़ा तक नहीं हो सकता, यह सब लीला को स्मरण तक न रहा। तात्कालिक विचारों ने अतीत के सारे निश्चयों पर स्याही पोत दी। उसने निश्चय कर लिया कि किरण के पास डटी रह कर मैं उसकी सारी विपत्तियों में भाग लूँगी और यदि आवश्यकता पड़ी तो हम दोनों एक साथ ही प्राण भी दे देंगे।

किरण ने एक बार लीला को समझाने का प्रयत्न किया, किन्तु अब वादविवाद करने का समय नहीं था। विद्रोही लोग खाई नाँघ कर बग़ीचे में आ गये थे और बड़े उत्साह के साथ बाउन्डरी के तार काट रहे थे।

किरण को मन ही मन यह बात सोच कर प्रसन्नता हुई कि आज मैं और लीला दोनों एक साथ एक ही परिस्थिति के सम्मुख आ पड़े हैं। आज की अवस्था चाहे कितनी भी दुःखजनक हो, उसे हम दोनों एक साथ ही स्वीकार करेंगे।

बाहर का चीत्कार उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा था। किरण के कुत्ते का बड़ी तेजी से डाँट-डाँट कर भौंकना अभी तक सुनाई पड़ रहा था, किन्तु लगातार कई लाठियों की चोट खा कर वह सदा के लिए नीरव हो गया।

कुछ दिनों से किरण के बहुत से असामी उसके विरुद्ध षडयन्त्र रच रहे थे। उसका अपराध यह था कि उसने उन लोगों के गिरे-पड़े और उजड़े हुए गन्दे झोपड़ों को गिरवा कर अच्छी-अच्छी बारकें बनवा दी थीं, गाँव में आने-जाने की सुविधा के लिए पक्की सड़क बनवा दी और गन्दे तालाबों को, जिनमें कूड़ा-करकट सड़ा करता था, पटवा कर अच्छे-अच्छे पक्के कुएँ बनवा दिये थे। असामियों की सुख-सुविधा के लिए वह हर तरह का प्रबन्ध कर रहा था, परन्तु उनके बाप-दादों के खँडहरों में हाथ-लगाने के कारण वे लोग बिगड़ रहे थे। उनके साथ कुछ बदमाश-गुण्डे भी मिल गये थे और किरण

के विरुद्ध उन सबको उभाड़ने लगे थे। वे चाहते थे कि ये सब मिलकर यदि विद्रोह कर दें तो हमें लूट-पाट करने का अच्छा अवसर मिल जायगा।

किरण ने अपना पिस्तौल कारतूस भर कर ठीक कर लिया। उसके पच्छाहीं सिपाही लट्ठ ले-लेकर हर एक दरवाजा घेर कर खड़े हो गये। उस भयङ्कर रात में इने-गिने सिपाहियों को छोड़ कर किरण की रक्षा करने वाला और कोई नहीं था।

किरण स्वयं दरवाजे के सामने आ गया और लीला को भी भीतर आड़ में करके चुपके-चुपके कहने लगा कि मेरे कारण ऐसी घोर विपत्ति में तुम क्यों कूद पड़ी हो लीला ?

लीला ने शान्त भाव से उत्तर दिया—अकेली निरापद स्थान में रहने की अपेक्षा तुम्हारे साथ विपत्ति के मुख में रहना मेरे लिए कहीं अच्छा है।

किरण दरवाजे से बाहर निकल गया। उसने चिल्ला कर कहा—सुन लो अब सब लोग ! जो कोई मेरे बरामदे में पैर रक्खेगा, उसे मैं गोली मार दूँगा। कुशल चाहो तो अपने-अपने घर लौट जाओ।

भीड़ में से एक आदमी चिल्ला उठा—अरे, साहब जाग रहा है, साहब जाग रहा है, वह बोल रहा है।

उसी तरह एक दूसरे आदमी ने चिल्लाकर कहा—निकल क्यों नहीं आते ? भीतर क्यों घुसे हो ? कितना कष्ट सहकर हम लोग तुम्हारे लिए आये हैं !

एक साथ बहुत-से लोगों की क्रोधमिश्रित हँसी की ध्वनि गूँज उठी।

लीला को आड़ में करके किरण ने भरा हुआ पिस्तौल हाथ में ले लिया और बरामदे में आक्रमणकारियों के सामने आकर कहने

लगा---इतनी रात को आकर तुम लोग मेरे बँगले पर क्यों उपद्रव मचा रहे हो? तुम लोग क्या चाहते हो?

बहुत-से लोगों ने एक साथ चिल्लाकर कहा---हम लोग सिर चाहते हैं। तुम्हारा सिर! तुम्हारा सिर मिल जाय, हम सब प्रसन्न होकर अपने-अपने घर चले जायँ।

बहुत-से लोग दौड़ते हुए बरामदे में घुसे आ रहे थे। उनमें से जो सबसे आगे था, वह किरण की गोली खाकर धरती पर लोट गया।

एक आदमी भयंकर स्वर से चिल्ला उठा---ख़ून हो गया! ख़ून हो गया! सब लोग खड़े हो जाओ, सारा बँगला घेर लो। देखते हैं इसका बल, जो भीतर घुसा गोली चला रहा है।

एक भयंकर कोलाहल और चीत्कार वायु में मिल गया।

किरण ने फिर चिल्लाकर कहा---तुम लोग यदि मेरी हत्या करना चाहते हो तो मरने से पहले इसी आदमी की तरह कम से कम ५० आदमियों के प्राण ले लूँगा। इसलिए यदि तुम लोग अपने-अपने प्राणों की रक्षा करना चाहते हो तो इस मामले को अधिक न बढ़ा कर चुपचाप अपने-अपने घर चले जाओ।

किरण की बात का अन्तिम भाग बड़े जोर के कोलाहल में दब गया। आक्रमणकारी लोग चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगे---अरे, भगवानदीन शिकारी कहाँ गया? भगवानदीन को बुलाओ। ओ शिकारी, इधर आओ, इधर! बन्दूक़ लेकर आओ, देखो, वह साहब खड़ा है। मारो गोली, जल्दी करो।

किरण ने देखा कि बरामदे के नीचे खड़ा होकर सचमुच एक आदमी बन्दूक़ लिये हुए निशाना साध रहा है।

किरण का निशाना चूकनेवाला नहीं था। अतएव उसकी गोली खाकर बन्दूक़ सीधी करने से पहले ही भगवानदीन चिल्लाता हुआ धराशायी हो गया। उसके हाथ से बन्दूक़ गिर पड़ी और उसे चलानेवाला उस दल में और कोई न रह गया।

आक्रमणकारियों के दल में से एक आदमी फिर चिल्लाता हुआ कहने लगा---सब लोग एक साथ ठेलकर घुस चलो। दो-एक आदमी चाहे भले ही घायल हो जायें, किन्तु बाद को साहब जरूर पकड़ में आ जायगा। इसके पास बहुत-सा रुपया है। चाहे जिस तरह हो, बँगले में घुसना ही होगा।

परन्तु इस बात पर कोई भी सहमत न हुआ। किरण का इस तरह का पक्का निशाना देखकर उन सब की हिम्मत छूट गई थी। उन में से हर एक आदमी यह सोचने लगा कि आगे बढ़ने पर गोली खाकर प्राण मुझे देने पड़ेंगे, बाद को ख़जाने के रुपये बाँटनेवाले और लोग होंगे।

बँगले के पिछवाड़े एक प्रकार की करकराहट सुनाई पड़ी। किरण समझ गया कि इन कायरों को जब आगे की ओर से सफलता मिलने की आशा नहीं रह गई तब इन लोगों ने पीछे से आक्रमण किया।

लकड़ियों की कड़कड़ाहट के साथ ही साथ बीच-बीच में चिल्लाहट और आर्तनाद भी सुनाई पड़ता, जिससे मालूम पड़ा कि उस ओर किरण के सिपाहियों और आक्रमणकारियों में बड़े ज़ोरों की मारपीट हो रही है ।

लकड़ी की चोट से एक खिड़की टूट गई, साथ ही एक सिपाही का कंठस्वर भी सुनाई पड़ा। सिपाही कह रहा था कि इसी लट्ठ से मैं दो आदमियों को घायल कर चुका हूँ। और भी जिसकी इच्छा हो, वह सामने आ जाय। अब भी कई आदमियों का माथा फोड़ देने भर की शक्ति मुझमें है।

गाँव के भी बहुत से लोग आ गये थे। वे दूर से ही यह भयंकर दृश्य देख-देखकर इस घटना की आलोचना कर रहे थे। उनका कहना था कि किरण ने अपनी ही उद्धतता के कारण यह उपद्रव मोल लिया है। यही बात सबके मुँह में थी।

पिशाच की तरह अट्टहास करता हुआ एक आदमी बरामदे के पास गया और कहने लगा—ज़रा देर चुप रहो बेटा, देखो, अभी थोड़ी ही देर में भीतर से निकलते हो या नहीं। अभी ही तो मजा चखने में आयेगा। यह कह कर उस आदमी ने किसी दूसरे के हाथ से जलता हुआ मसाल ले लिया और फूस से छाये हुए बँगले की छत में आग लगा दी।

आक्रमणकारी लोग आनन्द से चिल्ला उठे। आग जलते-जलते बँगले की छत भर में फैल गई, यह देखकर उन लोगों का आनन्द और उत्तेजना द्विगुणित हो उठी।

किरण पहले तो उन लोगों के अत्यधिक उत्साह और आनन्द-ध्वनि का कोई कारण न समझ सका, शत्रुओं ने उसे चारों ओर से घेर रक्खा था अतएव वह किसी ओर भी विशेष ध्यान नहीं दे पाता था। परन्तु जब चारों ओर से मशाल की अपेक्षा कहीं अधिक रोशनी दिखाई पड़ी और खिड़कियों तथा दरवाजों के टूटने का शब्द सुनाई पड़ने लगा तब वह समझ गया कि अब जो होना था वह सब हो चुका।

अन्त में हताश होकर किरण ने कहा—लीला, अब हम लोगों का अन्तिम समय आ गया है, मैं तुम्हें न बचा पाया।

चारों ओर से आग की ज्वाला बढ़ी आ रही थी। उसी के बीच में लीला और किरण दोनों ही खड़े थे। लीला भी समझ गई कि अब हम लोगों की जीवनरक्षा नहीं हो सकती। किरण का हाथ पकड़ कर उसे उसने बिलकुल समीप खींच लिया।

किरण ने कम्पित स्वर से कहा—अपने जीते जी मैं उन लोगों को तुम्हारे शरीर में हाथ न लगाने दूँगा। किन्तु तुम मुझे क्षमा करना लीला!

"क्षमा करूँगी? क्षमा करने की कौन-सी बात है किरण?"

लीला के मुँह की ओर ताक कर किरण कहने लगा—क्षमा

इसलिए माँगता हूँ कि मैंने तुम्हारा जीवन व्यर्थ में ही नष्ट कर डाला। तुम्हारा यह तरुण जीवन जो सुन्दरता और माधुर्य से परिपूर्ण था, मेरे ही कारण असमय में नष्ट हो गया। लीला, ईर्सा के लिए मैं क्षमा माँगता हूँ। तुम्हारे पास खड़ा रह कर भी मैं कुछ न कर सका, इस विवशता के लिए तुम मुझे क्षमा करना।

इससे अधिक किरण और कुछ नहीं कह सका। वह केवल सजल नेत्रों से लीला के अगाध प्रेम और विश्वास से परिपूर्ण मुँह की ओर ताकता रहा। उसकी उस समय की मानसिक अवस्था शब्दों की सहायता से प्रकाशित करना असम्भव है।

किरण के मुँह की ओर ताक कर लीला ने धीरे से कहा—तुम मेरे लिए इतनी चिन्ता क्यों करते हो? मैं तो तुमसे दूर रहने में असमर्थ होने के कारण अपनी इच्छा से ही विधाता के इस दुर्विपाक का सामना करने दौड़ी आई हूँ। अच्छा तो है। हम तुम दोनों एक साथ ही चलेंगे।

अग्नि का उत्ताप क्रमशः बढ़ता जा रहा था। उसकी भयंकर ज्वाला से बहुत दूर तक उजाला हो उठा था। उस उत्ताप को सहने में असमर्थ होकर वे दोनों ही घर के बीच में जाकर खड़े हुए। लपटें उछल-उछल कर उन दोनों की ओर बढ़ी आ रही थीं।

चारों ओर फट-फट करके छत, कार्निस और दीवारें टूट रही थीं। वायु के प्रबल वेग से काँपती हुई अग्नि-शिखायें कम्पायमान होकर एक के बाद दूसरे कमरे की ओर बढ़ रही थीं। वह दृश्य देखकर विद्रोही लोग इस तरह की आनन्द-ध्वनि कर रहे थे कि उनका उल्लास आकाश तक को विदीर्ण कर देना चाहता था। जलते हुए बँगले के बीच में ये दोनों प्राणी मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे। इनकी मृत्यु अनिवार्य थी, रक्षा का कोई भी साधन नहीं था।

बरामदे को पार करके घर के भीतर पैर रखने का साहस

कोई नहीं कर सका। किरण इस समय भी हाथ में पिस्तौल लिये खड़ा था। पिछवाड़े की ओर कोई रक्षक नहीं था। अग्नि का उत्ताप जब असह्य हो गया और धुएँ के मारे साँस बन्द होने लगी तब सिपाही लोग हटकर सुरक्षित स्थान में चले गये। इस समय भी बहुत-से आदमियों के साथ उनके लट्ठ चल रहे थे। बँगले के बीच से लीला और किरण खटाखट की आवाजें सुन रहे थे।

विद्रोहियों को जब मालूम हुआ कि पिछवाड़े पहरा नहीं है तब उनमें से बहुत से लोग वहीं जाकर इकट्ठे हुए। वे लोग घर जाने के पहले ही लूट करने का उपाय सोचने लगे। लीला और किरण जिस कमरे में खड़े थे, उसकी कड़ियों और बरंगों को जरा ही देर में आग ने पकड़ लिया। अब उत्ताप और धुएँ के मारे उनका दम घुटने लगा।

स्वच्छ वायु के लिए किरण लीला को बरामदे में खींच ले आया। काल मुँह बाये इन दोनों की ओर दौड़ा आ रहा था। ये लोग भी जी कड़ा करके स्थिर भाव से उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लीला का सारा शरीर थर-थर काँपने लगा। चारों ओर आग जल रही थी। उसकी लपटें शरीर के चमड़े को झुलसा रही थीं। धुएँ के मारे दम घुटा जा रहा था। मृत्यु की यह भयंकर ताण्डव-लीला देखकर उसका साहस जाता रहा। शीघ्र ही आनेवाली मृत्यु का इस तरह का उद्वेग सहने की अपेक्षा तो तत्काल मर जाना कितना अच्छा है!

किरण ने देखा कि अब आशा करना व्यर्थ है। किसी ओर से भी परित्राण पाने का अवलम्बन नहीं है, तो फिर लीला को व्यर्थ का क्लेश देने में क्या लाभ है? अब तो अन्तिम उपाय का अवलम्बन करना ही श्रेयस्कर है।

सूर्य के प्रखर उत्ताप से मुरझाई हुई लता के समान लीला

अर्धमूर्च्छित अवस्था में काँप रही थी। उसका मुँह झुक कर सीने पर झूल पड़ा था।

किरण ने कहा—लीला, सीधी होकर खड़ी होओ। अब हम लोगों का अन्त आ गया है।

लीला ने आँख उठाकर देखा, अन्तिम मुहूर्त समीप है, मरने में भी एक प्रकार की शान्ति से उसका अन्तःकरण परिपूर्ण हो उठा। वह सोचने लगी कि जिससे मैं प्रेम करती हूँ आज उसी के साथ मर कर सती-धर्म का पालन करने जा रही हूँ। मेरी इस मृत्यु ने अरुण को भी उसके आजन्म के गुप्त आघात से बचा लिया। इस तरह मेरी यह मृत्यु कल्याणकर ही हुई।

किरण का हाथ काँप उठा। उसने और भी कठोर भाव से इस वियोगान्त चेष्टा के लिए अपने को तैयार करके फिर से हाथ बढ़ाया। ठीक उसी समय, बाहर बड़े जोर का कोलाहल सुनाई पड़ा।

भीड़ तितर-बितर हो रही थी। मार-पीट और रेल-पेल का कोलाहल सुन कर उन दोनों ने देखा कि चहार-दीवारी के उस पार खाकी पोशाक पहने हुए पल्टन के सिपाही मोटर से उतर रहे हैं और विद्रोहियों में जिस किसी को पाते हैं, उसी को पीट चलते हैं।

मुकाबला करने का कोई उपाय नहीं था, क्योंकि एकाएक पुलिस की इतनी अधिकता देखकर उपद्रवी लोग बहुत ही भयभीत हो गये और अपने प्राण लेकर भागने लगे। उस कोलाहल और चीत्कार के बीच में पुलिस और पल्टन के सिपाही उन सब को खदेड़ रहे थे।

किरण इस विपत्ति से मुक्त हो गया। लीला को ले करके वह शीघ्र ही बगीचे की खुली हवा में आगया। बँगले के जले हुए भाग में से उस समय भी अग्नि से रक्तवर्ण की शिखाएँ निकल रही थीं और उसके कारण बँगले के आस-पास का भू-भाग

आलोकमय हो रहा था। आकाश में काला-काला धुआँ स्थान-स्थान पर जमा हुआ था। पुलिस के सिपाहियों के साथ-साथ पल्टन के भी सिपाही आ गये थे, जो अब मिलकर बड़े प्रयत्न से आग बुझा रहे थे। इससे वह धीरे-धीरे शान्त हो रही थी।

पुलिस के एक अधिकारी ने किरण और लीला की ओर संकेत करके कहा—लेफ्टिनेंट घोषाल ने जैसे ही हम लोगों को सूचना दी, वैसे ही हम दौड़ पड़े। इसके अतिरिक्त उसने यह भी कहा—शहर का हत्याकाण्ड बड़ी सफ़ाई से रोक दिया गया। समय पर सूचना मिल गई थी, इससे जिन सिपाहियों के विद्रोह में भाग लेने की सम्भावना थी, आधी रात से पहले उन सबके अस्त्र रखवा लिये गये और वे सब क़ैद कर लिये गये। शहर के भिन्न-भिन्न मुहल्लों में जाँच करके पुलिस विद्रोहियों को भी पकड़ लाई है। उनसे लिखित प्रमाण भी मिला है कि संकेत के लिए रात को बारह बजे बम का एक गोला छोड़ा जायगा और उसके छूटते ही सारे शहर में मार-काट शुरू हो जायगी।

यह बात समाप्त करके उसने किरण से पूछा कि आग लगने से आपकी कुछ विशेष हानि हुई है या नहीं?

किरण ने उत्तर दिया—जो कुछ हानि होने को थी, वह तो हो ही गई, उसके लिए कोई विशेष चिन्ता नहीं है। किसी के जीवन की हानि नहीं हुई, मेरे लिए यही बड़े सौभाग्य की बात है। आप लोग खूब समय से आ गये, इसी से नौकरों और हम दोनों की प्राण-रक्षा हो गई। यह बात कहते-कहते किरण का हृदय काँप उठा। उसके मन में यह बात आई कि मैंने किस तरह पिस्तौल का निशाना लीला की ओर साध रक्खा था, एक ही एक गोली में क्षण भर में हम दोनों ही सदा के लिए सो जाते!

( ४५ )

उसी रात को किरण और लीला दोनों मोटर पर सवार होकर

जब लीला के घर की ओर चले तब रात प्रायः व्यतीत हो रही थी। अपने जले हुए मकान की रक्षा का भार नौकरों पर छोड़ कर किरण लीला के साथ रवाना हो गया। जलते हुए अग्नि-कुंड से वे लोग कोई चीज़ चाहे बचा सकें या न बचा सकें, किरण को इसकी कोई विशेष चिन्ता नहीं थी। मृत्यु के मुख से लीला बच गई, इसी को उसने अपने लिए बहुत बड़ा पुरस्कार समझा।

आज उसने बड़ा क्लेश सहन किया था, साथ ही इसके अतिरिक्त भी एक बहुत बड़ा झंझट उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। वह झंझट था अरुण और लीला के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करना। इसके लिए उपस्थित रहना और मित्र को सान्त्वना देना उसका परम कर्तव्य था। किरण ने निश्चय कर लिया कि आज मैं लीला को लेकर अरुण के सामने खड़ा हो जाऊँगा और जो कुछ होगा, इस मामले को तय कर लूँगा। उसे इस बात का दृढ़ विश्वास था कि अरुण मेरा बहुत पुराना मित्र है, वह मेरे साथ बहुत ही सोच-विचार कर न्याय और सुजनता का ही व्यवहार करेगा।

किरण सोचने लगा कि अरुण अब अपनी दृष्टि लौटाल पाया है। इस समय लीला यदि उससे अपने मन का भाव साफ़-साफ़ बतला दे तो उसे प्रतिज्ञा से मुक्त कर देना उचित ही है। इसमें संदेह नहीं कि ऐसा करने में अरुण को अत्यधिक निराशा सहन करनी पड़ेगी, किन्तु इसके लिए दुःखी होने की कोई बात नहीं है। क्योंकि मनुष्य का जीवन तो अधिकांश में निराशा से पूर्ण ही है।

यह सोचकर कि लीला अब पूर्णरूप से मेरी है, किरण मन ही मन अत्यन्त आनन्द का उपभोग कर रहा था। आज इस तरह की अन्धकारमय अर्द्धनिशा में अपनी इच्छा से आकर लीला ने जो आत्म-समर्पण किया है, उससे किरण कृतार्थ होगया। मन ही मन वह इस बात का अनुभव करने लगा कि आज की यह घटना उसके जीवन में सदा ही श्रद्धापूर्वक स्मरण करने के योग्य होगी। किरण के

मुग्ध चित्त में लीला की प्रकृति की कोमलता उसके सौंदर्य और माधुर्य के साथ उदित हो आई और उसके तथा लीला के भावी जीवन का मनोहर चित्र झलकने लगा। किरण इसी विचार-धारा में तन्मय था, उसने अपने आपको इस विचार-धारा में एकदम से निमग्न कर दिया था।

लीला ने चुपके-चुपके कहा—किरण, जिससे प्रेम करने को जी चाहता है, उसे एकदम से पा जाना कितना सुन्दर है; है न?

उसके हृदय में भावों का जो प्रवाह वेग से आ रहा था उसे हृदयंगम करके किरण ने कहा—मैं तो अब तुम्हें एकदम ही पा गया हूँ!

लीला ने उत्तर दिया—मैं भी ऐसा ही समझती हूँ।

"लीला मेरी अवस्था तुमसे कुछ अधिक मालूम पड़ती है न? सचमुच मैं तुमसे बहुत बड़ा हूँ!"

"तुम यदि और भी अधिक बड़े होते तो इसमें मेरा कोई हानि-लाभ नहीं था। संसार में तुमसे अधिक प्रिय मेरे लिए और कोई वस्तु नहीं है।"

लीला की यह सरल और स्वाभाविक बातें संगीत के समान मधुमय स्वर में किरण के कानों में झंकृत हो रही थीं। वह अपने को धिक्कारने लगा कि इतने दिन तक मैंने लीला को अपनी क्यों नहीं कर लिया था? अरुण जब अन्धा होकर मेरे पास आया था, उससे बहुत पहले भी तो हम दोनों पति-पत्नी हो सकते थे!

घर पर आ पहुँचते ही उन दोनों का स्वप्न भंग हो गया। उन दोनों ने जब सीढ़ी पर पैर रक्खा तब उन्हें अनुभव हुआ कि इस समय हम लोगों को कठोर शक्ति के सम्मुख जाकर उपस्थित होना पड़ेगा।

उन दोनों व्यक्तियों ने सोच रक्खा था कि जब हम लोग घर पहुँचेंगे तब अरुण आगे आकर हम लोगों से मिलेगा और अपने साथ हम लोगों को भी भीतर ले जायगा। परन्तु उसके बदले में

केवल एक नौकर घर से निकला। सारा घर अन्धकारमय था, केवल अरुण के कमरे में बत्ती जल रही थी। अरुण जाग रहा था, तो भी वह लीला की कोई ख़बर लेने नहीं आया।

मिसेज़ राय ने कह रक्खा था कि लीला घर में लौट कर आते ही मेरे कमरे में उपस्थित हो। नौकर ने उसे इस बात की सूचना दे दी।

लीला ने मन ही मन सोचा कि ज़रा-सी ही और देर हो गई होती तो मैं घर लौट ही न पाती। उसने नौकर से कहा—मा क्या इस समय भी जाग रही हैं?

"आज रात भर किसी की आँख नहीं लग सकी हुज़ूर! कितना डर-डर कर आज की रात सब लोगों को काटनी पड़ी है!"

किरण के लिए अब बिलम्ब असह्य हो रहा था। वह कहने लगा कि अरुण यदि जाग रहा है तो इसी समय उससे सारी बातें कह देना अच्छा है।

लीला हृदय में दुःखी होकर कहने लगी—बड़ी सहूलियत के साथ उसे सारी बातें समझाकर बतलाना। वह इतना कोमल है कि ज़रा-सी बात में दुःखी हो जाता है। मैं उसे कितना क्लेश दे रही हूँ! एक तो यों ही उस बेचारे को आज इतना झंझट सहना पड़ा है!

किरण ने उत्तर दिया—मैं ख़ूब समझाकर ही उससे कहूँगा। किन्तु जो बात सच है वह उसे जान लेनी चाहिए, तुम कोई चिन्ता मत करो। इसका सारा भार मेरे ही ऊपर रहने दो।

लीला ने कहा—मैं उसके साथ कितनी पशुता का व्यवहार कर रही हूँ। मुझे छोड़ते समय उसकी कैसी दशा होगी, इसकी मुझे चिन्ता है।

"तुम किसी बात की चिन्ता मत करो।" यह कहकर किरण अरुण के कमरे में चला गया।

अब अग्नि-परीक्षा के लिए तैयार होकर लीला अपनी मा के कमरे की ओर चली। वसन्तपुर में उसे कैसी विपत्ति का सामना करना पड़ा है, यह तो मिसेज़ राय को कुछ मालूम नहीं था, अतएव उनकी ओर से अच्छे व्यवहार की आशा करना व्यर्थ था। लीला ने सोचा कि जो कुछ होना हो उसका शीघ्र ही हो जाना अच्छा है।

लीला जब मिसेज़ राय के कमरे में पहुँची तब वे बिस्तरे पर लेटी हुई थीं। लीला को देखते ही बड़े स्नेह से उन्होंने उसे अपने पास बैठने को कहा।

लीला आश्चर्य में आगई। उसने सोचा की आज तो क्रोध के आवेग में आकर उन्होंने मुझे डाँटा नहीं! आज उनका यह कैसा भाव है? क्या उन्हें मुझसे और कोई बात कहनी है?

मिसेज़ राय ने कहा—आज साँझ के समय तुमने बड़ा अनुचित कार्य किया था; किन्तु उसके लिए मैं तुम्हें कुछ कहना नहीं चाहती। खासकर इसलिए कि तुम बहुत क्लान्त हो। अच्छा, वसन्तपुर में क्या हुआ?

लीला किरण के यहाँ की सारी घटना कह गई। किस तरह वे दोनों विपत्ति के मुँह में पड़े थे और किस तरह उनका उद्धार हुआ, यह सब विस्तारपूर्वक बतलाकर उसने कहा—यहाँ का क्या हाल है मा? अरुण की तबीअत क्या अच्छी नहीं है?

मिसेज़ राय ने कहा—नहीं। इतनी रात को इस उपद्रव के समय भी उसके लिए मैंने डाक्टर बुलवाया था। आहा, सिर की पीड़ा के कारण कितना व्याकुल होकर मेरा बच्चा पड़ा है!

उद्वेग और भय के कारण लीला नीरव होकर ताकती रही। मानो वह तुरन्त ही कोई और भी बात सुनने की प्रतीक्षा कर रही थी!

आँखों से दो बूँद आँसू गिरा कर मिसेज़ राय ने कहा—तुम जब गई हो, उसके डेढ़ घंटा बाद वह लौट कर आया। उस समय

तक उसने कुछ नहीं खाया था। थक कर चर हो गया था। मस्तक और नेत्र की पीड़ा में व्याकुल हो रहा था। यहाँ आते ही तुम लोगों का हाल सुना। उसी क्षण बिना कुछ खाये-पिये उलटे पाँव वह फिर लौट गया, ताकि जितनी शीघ्रता से हो सके, तुम लोगों की सहायता के लिए पुलिस आदि भेज सके। कहने लगा कि जरा-सी भी देरी होगी तो उन लोगों के प्राणों की कुशल नहीं है। वहाँ उन लोगों की सहायता करनेवाला कोई नहीं है।

लीला ने कृतज्ञता-पूर्ण हृदय से कहा—यह बात तो सच है। और पाँच मिनट की देरी हो जाती तो हम लोगों को फिर यहाँ आने का अवसर न मिलता।

मिसेज राय ने कहा—यही बात तो मैं कह रही हूं। वह तो स्वयं न जाकर पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट को एक चिट्ठी भेज सकता था। ऐसा न करके वह तुरन्त ही दौड़ पड़ा, जिससे कहीं देरी न हो जाय और समय पर सहायता पहुँचने में अड़चन न पड़े। अरुण की इस निःस्वार्थपरायणता के लिए तुम दोनों को आजन्म कृतज्ञ रहना चाहिए।

यहाँ जो-जो हुआ था, वह सब एक एक करके मिसेज राय बतला गईं। मा की ये बातें सुनकर लीला को अपनी सारी थकान्ति भूल गई। अरुण की यह दुःखमय कहानी सुनकर उसके हृदय पर बड़ा आघात पहुँचा। वह बहुत ही खिन्न होकर माता की ओर चुपचाप ताकने लगी।

लीला ने सोचा कि अब तक तो किरण को भी सारी बातें मालूम हो गई होंगी। इतनी देर की हम लोगों की सारी आशा, सारा आनन्द और सारा उत्साह मिट्टी में मिल गया। अब मुझे फिर अपने पहले के जीवन में लौट कर जाना पड़ेगा।

लीला इसके लिए तैयार नहीं थी, अतएव अचानक ऐसा असह्य आघात पाकर वह बिलकुल ही अवसन्न हो उठी। मिसेज राय की बात समाप्त हो जाने पर वह उठकर बैठक में आई और एक सोफ़े

पर पड़ रही। मर्मान्तिक क्लेश के कारण उसका हृदय जल रहा था, किन्तु आँखों में आँसू की एक बूंद भी नहीं आई।

अरुण के कमरे में प्रवेश करके किरण ने देखा कि वह टेबिल के पास एक कुर्सी पर बैठा है, दोनों हाथों की टेक देकर वह अपना आलस्य से झुका हुआ मस्तक सम्भाले है, मानो लीला की प्रतीक्षा करते-करते ही अपना थका हुआ शरीर लिये सो गया है।

किरण के पैरों की आहट पाकर उसने अपना मुँह उठाया और बोला—कौन यहाँ आ रहा है? डाक्टर!

अरुण के स्वर में जीवन का कोई लक्षण नहीं था। उसका वह स्वर सुनकर किरण का हृदय काँप उठा। अरुण का चेहरा पीला पड़ गया था और वहाँ का रक्त बिलकुल सूख गया था, अतएव उसका मुंह मुर्दे का-सा जान पड़ता था। गले का स्वर भी विषादमय और शुष्क था, उसकी इस अवस्था ने किरण की सारी स्फूर्ति और आनन्द नष्ट कर दिया। क्या हुआ है, यह बात न जान कर भी वह निरुत्साहित हो उठा। उसने कहा—डाक्टर नहीं है, मैं हूँ किरण।

"किरण!" अरुण कुर्सी पर से उछल पड़ा और जिस ओर से आवाज़ आई थी उसी ओर ताकने लगा। "लीला! लीला कहाँ है?"

अरुण के मुँह की ओर ताकते ही किरण की अन्तरात्मा को अपार क्लेश हुआ और निराशा के कारण उसका दिल एकदम से टूट गया। अरुण के ज्योतिहीन नेत्रों को देखकर उसे बड़ा ही विस्मय हुआ। उसने कहा—लीला अच्छी तरह है। उसे लाकर मैंने घर पहुँचा दिया है। किन्तु यह क्या बात है अरुण? तुम्हारी यह कैसी अवस्था हो गई?

"अवस्था कैसी हो गई किरण? मैं अन्धा हूँ। मैं फिर अन्धा हो गया हूँ। मेरी इस संसार में रहने की अब क्या आवश्यकता

है ? अब तुम लोग मुझे जाने दो, मुझे छुट्टी दे दो। ओह, भग-वान्, फिर मैं अन्धा हो गया !

अरुण फिर कुर्सी पर बैठ गया और उसने दोनों हाथों से मुँह ढँक लिया। किरण ने देखा कि हृदय-विदारक रुलाई के कारण उसका शरीर रह-रह कर काँप उठता है।

सन्नाटे में आकर किरण खड़ा रहा। यह भूल नहीं है ! स्वप्न नहीं है ! सचमुच अरुण ने फिर अपनी दृष्टि खो दी है ! उस समय उसका हृदय एक अव्यक्त और आवृत यंत्रणा के कारण खंड-खंड हो जाना चाहता था। अपनी स्वार्थ-सिद्धि के सम्बन्ध में अभी तक वह जो-जो बातें सोच रहा था वे सब अरुण की करुण दशा को देखते ही जहाँ की तहाँ हो गईं।

किरण ने तुरन्त ही अपने को सम्हाल लिया और अरुण के पास खड़ा हो गया। वह बहुत ही कोमल और दयार्द्र होकर अरुण के मस्तक पर हाथ फेरने लगा।

*"और लोगों की अपेक्षा मैंने कौन-सा पाप किया है किरण,* जो मेरा जीवन इतना अधिक दुर्दशाग्रस्त हो गया है ?"

किरण ने बहुत ही धीर और मृदु स्वर से कहा—संसार में कितनी घटनायें होती रहती हैं। उनमें से एक का भी कारण तो हम लोग नहीं जान पाते ! आँखें मूँद कर भाग्य को मान लेने की अपेक्षा हम लोगों के लिए और उपाय ही क्या है ? सम्भव है कि जैसे तुम्हारा यह अनिष्ट हुआ है वैसे ही किसी उपाय से यह क्षति पूर्ण भी हो जाय।

किरण के स्नेहमय कोमल स्पर्श तथा नीरव एवं सहानुभूतिपूर्ण सान्त्वना से अरुण जरा-सा शान्त हुआ। रूमाल से उसने अपना मुँह पोंछ डाला, और भर्राई हुई आवाज़ से बोला—यह क्षति पूर्ण हो सकती है ? तुम यह बात कह रहे हो ? मेरी इस क्षति के पूर्ण होने का केवल एक ही उपाय है, जिसका मैं मन ही मन निरन्तर

ध्यान करता रहता हूँ। परन्तु क्या इस अभागे जीवन में फिर वह शान्ति लौटाल पाऊँगा ?

किरण ने उत्तर दिया---क्यों नहीं लौटाल पाओगे ? संदेह क्यो करते हो अरुण ?

वे दोनों ही लीला की चिन्ता कर रहे थे। उन दोनों में से एक दूसरे का मनोभाव किसी से छिपा नहीं था।

अरुण ने कहा---अपने संदेह का कारण मैं तुमसे खोल करके ही कहे देता हूँ किरण !" मैं कितनी यातना का अनुभव कर रहा हूँ, यह तुम न समझ सकोगे। मेरा हृदय नरक के समान विषाक्त हो उठा है। जिस समय मैं लौट कर आया और यह मालूम हुआ कि लीला तुम्हारे पास दौड़ी गई है, उस समय से पागल हो उठा हूँ। रात-दिन मैं तुमसे कितनी ईर्ष्या करता रहता हूँ, यह तुम कल्पना तक नहीं कर सकते हो। कितने बार तो यह इच्छा हुई कि एक गोली से मैं अपने इस विषादमय जीवन का अन्त कर डालूँ। परन्तु लीला निरापद हो गई है, उसे अब किसी प्रकार का भय नहीं है, यह समाचार जाने बिना मुझे मरने की भी इच्छा न हुई।

किरण ने कहा---यह सब व्यर्थ की बातें सोच-सोच कर तुम अपनी आत्मा को क्लेश क्यों देते हो अरुण ? लीला तुम्हारी ही है, इस विषय में तुम अपने हृदय में किसी प्रकार का भी संदेह न रहने दो।

किरण का होंठ काँप रहा था। आज उसने लीला के ऊपर से अपना सारा अधिकार उठा लिया। अब वह लीला का एक मित्र भर रह गया, इसके अतिरिक्त उसका उससे और कोई सम्बन्ध न रहा।

क्षण भर तक नीरव रहकर किरण ने फिर कहा---तुम तो आज साँझ के समय से बाहर निकले थे। तुम्हारी यह दशा कैसे हुई ?

"आज सबेरे से साँझ तक मैं बराबर लिखता रहा, इससे नेत्रों में बड़ी पीड़ा हो रही थी। डाक्टर ने मुझे बार-बार समझाया था

कि आँखों पर जोर न पड़ने देना। ऐसा कोई भी काम न करना, जिससे आँखों को शक्ति से अधिक परिश्रम करना पड़े। परन्तु इधर कई दिनों से मैं आँखों से बराबर अधिक परिश्रम लेता रहा। आज जिस समय मुझे यह मालूम हुआ कि रात्रि को विद्रोह होनेवाला है, उस समय आँखों में बड़ी यन्त्रणा मालूम पड़ रही थी। परन्तु ऐसा भयंकर समाचार पाकर तो मैं स्थिर नहीं रह सकता था। तुरन्त ही घर से निकल पड़ा। पहले-पहल दानापुर के कैन्टूनमेंट में जाकर मेजर स्मिथ से मुलाक़ात की। उनसे बातचीत करने पर मालूम हुआ कि यह बात उन्हें पहले से ही मालूम हो गई है। वे सब लोग सावधान हैं, मामला अधिक न बढ़ने पावेगा। वहाँ से लौटकर शहर गया और पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट से मुलाक़ात की। वहाँ भी सुनने में आया कि बहुत से विद्रोही गिरफ़्तार हैं और इस समय भी धर-पकड़ जारी है।

"मैंने सोचा कि अब यहाँ मेरे रहने की जरूरत नहीं है। इससे मैं वहाँ से चला आया। मैंने सोचा था कि घर पहुँचते ही डाक्टर को बुलाऊँगा। नेत्रों की पीड़ा के कारण सिर तक उड़ा जा रहा था। घर में पैर रखते ही तुम्हारी विपत्ति का हाल सुना। साथ ही यह भी मालूम हुआ कि यह सारी विपत्ति मस्तक पर लेकर लीला तुम्हारे पास दौड़ी गई है। इस घटना से मेरे हृदय को कितना क्लेश हुआ, यह दूसरा नहीं समझ सकता। अस्तु यह समाचार भी ऐसा ही शोकमय था कि जिसे सुनकर एक क्षण भी मैं शान्त नहीं रह सकता था। वैसे ही उलटे पैर मैं पुलिस के दफ़्तर को दौड़ा। वहाँ जाने पर मालूम हुआ कि पुलिस के सभी आदमी जगह-जगह विद्रोहियों की खोज में निकल गये हैं। बड़ी कठिनाई से टेलीफ़ोन करके उनमें से कुछ सिपाहियों को बुलाकर इकट्ठा किया, कुछ टेरीटोरियल सैनिक भी इकट्ठा किये और उन सबको मोटर में बैठाल कर रवाना कर दिया। तब लौट कर घर आया। उस

समय आँखें धुन्ध पड़ गई थीं। मैं अच्छी तरह से देख नहीं पाता था।

"डाक्टर आया। उसने कहा कि यदि तुम कम से कम सूर्यास्त के बाद भी मेरे पास आ गये होते तो मैं आपरेशन करके तुम्हारी दृष्टि बचा लेता। अब उसकी रक्षा करना मेरी शक्ति से परे है।"

अरुण की इन बातों से किरण बहुत ही दुखी हुआ। मर्मान्तिक वेदना से उसका मस्तक नीचा हो गया। वह सोचने लगा कि मेरे जीवन के सारे सुखों का तो अन्त हो ही गया है, साथ ही मेरे मित्र को भी जीवन-पर्यन्त दृष्टिहीन होकर रहना पड़ेगा। सारे क्लेश और करुणा से उसका हृदय व्यथित होता जा रहा था। अरुण से सच-मुच वह बहुत स्नेह करता था।

कई क्षणों के बाद एक लम्बी साँस लेकर उसने कहा—तो अब कोई आशा नहीं रह गई?

"कोई नहीं। एक लोशन और "नर्वटानिक" की सहायता से मेरे नेत्रों की पीड़ा कुछ कम हो गई है, किन्तु इससे क्या? दृष्टि लौटाल पाने की अब कोई आशा नहीं रह गई है। मैं भिखारी से भी बदतर हूँ। मेरा अब सभी कुछ जाता रहा।"

"इतने निराश क्यों हो रहे हो अरुण? सम्भव है कि अच्छे होने पर तुम फिर सुखी हो सको।"

"सुखी हो सकता था, जब यह जानता कि लीला अब भी मुझे वैसा ही चाहती है। परन्तु अब यह नहीं होना है। यदि वह सचमुच मुझसे प्रेम करती होती तो इस तरह पागल के समान तुम्हारे पास कभी न दौड़ी जाती। वह आशा अब मैंने छोड़ ही दी है। उसे तुम मेरी अपेक्षा अधिक सुखी कर सकोगे।"

किरण यह बात अच्छी तरह जानता था और यह ज्ञान उसे उन्मत्तप्राय किये दे रहा था। लीला के भावी जीवन का सुख नष्ट करके उसे दूसरे के हाथ में सौंप देने का किरण को क्या अधिकार

था? तो भी यह बात सच थी कि वह अन्धे के हाथ से लीला को छीन नहीं सकता था।

किरण को चुप देखकर अरुण ने फिर कहा—मैं कैसे इस बात का विश्वास करूँ कि वह तुमसे प्रेम नहीं करती? तुम तो उससे प्रेम करते हो?

अरुण का ईर्ष्या से कातर मुख देखकर किरण का चित्त बहुत दुखी हुआ। वह कहने लगा—उससे तो सभी लोग प्रेम करते हैं, किन्तु वह केवल तुम्हीं से प्रेम करती है।

"किरण! तुम्हारी इस बात ने मेरे हृदय की सारी वेदना हर ली। भगवान् करे कि तुम्हारी यह बात सच हो। मेरे जीवन का वह सर्वस्व है। मुझे वह त्यागना चाहती है तो मैं अब जीना नहीं चाहता।"

"वह किसी दिन भी तुम्हें त्यागने की इच्छा न करेगी अरुण! क्यों तुम ये बातें सोच कर अपना चित्त दुखी करते हो?"

किरण ने यह बात दृढ़ भाव से कह कर अरुण को प्रसन्न कर दिया। उसके अन्धकारमय जीवन के बीच में प्रकाश की आशा का सुखमय चित्र दिखाकर बड़ी देर तक इधर-उधर की बातचीत करके वह उसका चित्त बहुत कुछ ठिकाने पर ले आया। अब अरुण की मानसिक अवस्था बहुत कुछ परिवर्तित हो गई। अरुण की शोचनीय अवस्था, उसके भग्न हृदय तथा सान्त्वना की आवश्यकता ने एक क्षण में ही किरण के उदार चित्त की महानुभावता को जाग्रत् कर दिया था।

अरुण की तबीअत जब कुछ ठिकाने पर आई तब अपनी स्वार्थ-परायणता के लिए वह लज्जित हुआ। उसने कहा—मैं तुम लोगों का हाल पूछने को भूल गया था। जबसे तुम आये हो तब से अपनी चर्चा में ही व्यस्त हूँ। भला तुम लोग उस विपत्ति से कैसे बचे हो?

किरण ने उत्तर दिया—ये सब बातें बाद को लीला तुम्हें बतलायेगी। इस समय तुम चल कर बिस्तरे पर सो रहो। बहुत थके हुए मालूम पड़ते हो।

"यह तो सच है कि मैं बहुत क्लान्त हो गया हूँ। किन्तु मुझे सोने या कुछ करने की जरा भी इच्छा नहीं हो रही है।"

किरण ने कहा—यह सब केवल तुम्हारे हृदय की निराशा के कारण हो रहा है। अपने चित्त को प्रसन्न करो। मैं कहता हूँ, तुम फिर सुखी होगे। चलो, मैं तुम्हारे बिस्तरे पर तुम्हे सुला आऊँ।

अरुण ने बहुत ही व्यग्रभाव से दीनतामय शब्दों में कहा—क्या मैं इस समय लीला को एक बार न देख पाऊँगा?

किरण समझ गया था कि एकाएक इस प्रकार आशा भंग हो जाने के कारण लीला किस तीव्र यातना का उपभोग कर रही है। ऐसी अवस्था में इस समय अरुण से मुलाक़ात करने में उसकी अन्तरात्मा को बड़ा क्लेश होगा। अतएव इस अग्नि-परीक्षा से उसे दूर रखने के लिए किरण ने कहा कि आज वह थक कर चूर हो गई है। कम से कम दो घंटे उसे विश्राम करने और सोने की आवश्यकता है। अब सवेरा होने में देर ही कितनी है? कल तुम चाहे जितनी देर तक उसे अपने पास रखना। चलो, धैर्य रख कर थोड़ी देर तक सोओ।

अरुण को पकड़ कर किरण ले गया और उसे बिस्तरे पर लिटा दिया। दीपक बुझाकर जब वह अरुण से बिदा होने लगा तब अरुण ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—तुम मुझे क्षमा करना किरण! तुमने मेरे प्रति जो स्नेह किया है उसे मैं जीवन में कभी न भूल सकूँगा। तुम्हारे साथ मैंने बड़ा अनुचित व्यवहार किया है।

"कोई चिन्ता न करो। मेरी दृष्टि में तुम सदा के मेरे मित्र हो।" यह कह कर किरण ने अरुण से हाथ मिलाया और वहाँ से वह चला गया।

( ४६ )

बैठक में लीला तकिया में मुँह छिपाये हुए पड़ी थी, किरण धीरे-धीरे आकर उसके पास बैठ गया। हृदय के प्रबल आवेग को कने में असमर्थ होने के कारण किरण कुछ क्षण तक मुँह से कोई बात नहीं निकाल सका। अरुण के पास बैठ कर स्वाभाविक और सयत्न भाव से वह किस तरह इतनी देर तक बातचीत करता रहा, यही सोचकर उसे आश्चर्य हो रहा था।

रात प्रायः बीत चली थी। पूर्व का आकाश धीरे-धीरे उषाकाल के अरुण प्रकाश से अतिरंजित हो रहा था। बगीचे के बड़े बड़े वृक्ष उस समय धुँधले प्रकाश में अस्पष्ट भाव से दिखाई पड़ रहे थे। आम की घनी-घनी पत्तियों के बीच में बैठ कर कोयल अपनी धुन में अविश्रान्त भाव से कुहू-कुहू करने लगी थी। उस समय भी और-और चिड़ियों ने उठकर अपना प्रभातकालीन संगीत आरम्भ नहीं किया था।

विषाद की अधिकता से किरण का हृदय उद्विग्न हो उठा था। कुछ देर तक वह विह्वल नेत्रों से खिड़की से बाहर ताकता रहा। उस समय वह मानो किसी स्वप्नलोक में विचरण कर रहा था। लीला के साथ पहले-पहल की मुलाकात, उन दोनों की निष्कपट मित्रता, अरुण का आविर्भाव, उसके परिणामस्वरूप उन दोनों का पारस्परिक विच्छेद, ये सभी घटनायें सिनेमा के चित्रों के समान उसके मानसिक नेत्रों के समक्ष उदित हो रही थीं।

लीला के वियोग के कारण उसने रात-दिन कैसी मर्मान्तिक यातना का उपभोग किया है, यह बात किरण के मन में आई। उन थोड़े दिनों के मन-मुटाव के कारण लीला से पृथक् रहकर वह जीवन की समस्त सुख-शान्ति किस तरह खो बैठा था, संसार की सारी शोभा-सुन्दरता, सारा आनन्द-उत्सव, नीरस होकर उसकी दृष्टि में किस तरह नष्ट हो गया था, ये सब बातें फिर नई होकर

उसको याद आ गई। उन दिनों फिर भी उसे आशा थी कि लीला को मैं लौटा लूँगा, इस तरह की भूल उसे कभी न करने दूँगा, अन्त में मेरी लीला मेरी ही रहेगी। परन्तु आज ? आज तो लीला को फिर से पाने की कोई आशा ही नहीं रह गई। आज वह लीला को अपने हाथ से दूसरे को समर्पित करके अपनी सारी आशा का मूलोच्छेद कर आया है। लीला किरण के जीवन की सर्वस्व थी, आज वह उसकी दृष्टि में पर-स्त्री है, मित्र की पत्नी है। अब रोने में उसे लाभ ही क्या है ?

मर्माहत हृदय से किरण ने एक बार अपनी पार्श्ववर्तिनी की ओर ताका। लीला उस समय भी मुँह ढक कर चुप्पी साधे पड़ी थी। निस्तब्ध-रुदन के रुके हुए उच्छ्वास से रह-रहकर उसका शरीर काँप उठता था।

कल्याणपुर के महाराज के यहाँ जिस दिन उत्सव था, उस दिन की रङ्ग-बिरङ्गी बत्तियों की रोशनी से जगमगाती हुई रात, जब सारा राजभवन जनता की भीड़ से समाकीर्ण था और चारों ओर तरह-तरह के मनोरंजन के साधन उपस्थित थे, याद आ गई। उस दिन भी लीला उसी प्रमोद-भवन में मनोरंजन के असंख्य अवसरों की उपेक्षा करके आज की ही तरह एकान्त में चुपचाप रो रही थी ! किरण उससे रुष्ट था। बेचारी लीला वह मर्मान्तिक वेदना नहीं सहन कर सकी। किरण मुँह फुला कर उससे दूर हो गया था, इसी क्लेश से अधीर होकर वह रो रही थी। परन्तु आज ? आज किरण अपनी इच्छा से ही लीला से सारा सम्बन्ध तोड़कर कहाँ कितनी दूर चला जा रहा था ! आज इस दुःसह वेदना से लीला की रक्षा करने का कोई उपाय नहीं था। इसी तरह मौन रुदन से हृदय को पूर्ण करके, इसी तरह की दुःसह व्यथा अन्तरात्मा में छिपाये रखकर, आज का-सा ही जीवन व्यतीत करने के लिए लीला बाध्य होगी। उसकी सुखसुविधा के लिए

किरण को अब कोई उपाय ही नहीं करने को रह गया। लीला के साथ उसके सारे सम्बन्ध का अन्त हो गया!

बड़ी देर के बाद किरण ने किसी तरह अपने हृदय को सँभाला, तब उसने लीला के काँपते हुए दोनों कोमल हाथों को पकड़कर भर्राई हुई आवाज़ से कहा—बहुत सोच-विचार के बाद मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि अरुण तुम्हें छोड़कर किसी तरह भी नहीं रह सकता लीला! वह बहुत ही दुखी है, बहुत ही असहाय है! तुम्हारे बिना उसकी नहीं बीतेगी!

"मैंने तो जैसे ही उसका हाल सुना, वैसे ही यह समझ लिया।"

किरण ने कहा—अब मुझे तुमसे कुछ और नहीं कहना है। आज से तुम मुझे अपने एक सच्चे मित्र के रूप में, बल्कि बड़े भाई के रूप में समझना। मेरे पास जो कुछ है वह सब तुम्हारा है। मैं तुम्हारे लिए प्राण तक न्योछावर करने को तैयार रहूँगा। जीवन भर तुम मुझे इसी रूप में समझना। भूलोगी तो नहीं?

लीला विदीर्ण हृदय से चुपचाप रोने लगी।

"यदि तुम्हें कभी किसी तरह का क्लेश हो, जीवन में कभी किसी तरह के दुःख या विपत्ति में पड़ना, तब मुझे ख़बर देना मैं चाहे कितनी दूर भी रहूँ, इस बात को तुम किसी दिन भी न भूलना। समझ रखना, दूर रहकर भी आवश्यकता के समय मैं सदा तुम्हारे ही पास रहूँगा।"

लीला ने बड़ी कठिनाई से अपना जी कड़ा किया और आँसुओं से भींगा हुआ मुँह उठा कर वह बोली—यह बात मैं ख़ूब अच्छी तरह जानती हूँ किरण!

लीला के मुँह की ओर ताक कर किरण फिर कुछ देर तक निस्तब्ध रहा। भाग्य भी कैसी निष्ठुरता के साथ लोगों से ठठोली किया करता है! एक वह दिन था जब किरण के प्रति अपना

अनुराग जानकर भी——अपने न्यायनिष्ठ चित्त की सत्यता और विवेक के वश में आकर, किरण के सारे अनुनय-विनय और तर्क की उपेक्षा कर वह अपने निर्दिष्ट मार्ग पर ही चली थी। किरण का सारा प्रयत्न, सारी आशा, इतने दिन में बिलकुल ही निष्फल हो चली थी। जिस दिन लीला ने अपनी इच्छा से ही जाकर आत्मसमर्पण किया, उसी दिन एक असम्भव घटना हुई और उसी के कारण यह सम्भावना सर्वथा निर्मूल ही हो गई। नदी के बीच रास्ते में उसकी नौका कितने तूफ़ानों से, कितनी भयङ्कर लहरों से पार हो आई, और किनारे पर डूब गई!

"अरुण बहुत ही दुखिया है। मेरी अपेक्षा उसी को तुम्हारी अधिक आवश्यकता है। कल सवेरे ही तुम उससे मुलाक़ात करो, उसे सुखी करने का प्रयत्न करो। मैं यह जानता हूँ कि केवल तुम्हीं उसे सुखी कर सकोगी।"

लीला ने कहा——अरुण को सुखी करने के लिए मैं अपनी समस्त शक्ति से प्रयत्न करूँगी।

"अच्छा तो अब विदा होता हूँ लीला! इस समय कुछ दिनों के लिए विदा होता हूँ।"

आँसुओं के आवेग में उच्छ्वसित होकर लीला फिर कुशन पर लोट पड़ी।

उषाकाल के धुँधले प्रकाश में किरण शराबी की तरह लुढ़कता-लुढ़कता कमरे से बाहर हो गया।

( ४७ )

दूसरे दिन नींद टूटने पर अरुण जब उठकर बैठा तब दिन बहुत बढ़ आया था। एक तो वह दौड़-धूप के कारण थककर चूर हो गया था, दूसरे उसका चित्त भी बहुत ही उद्विग्न और चञ्चल था, इससे वह बड़ी देर तक सोता रहा।

नींद खुलने पर उठकर बैठते ही अरुण प्रतिदिन के अभ्यास के अनुसार कूद कर बिस्तरे पर से उठने लगा, किन्तु ठीक उसी समय उसे गत दिवस की सभी बातें याद आ गईं। वह जान गया कि अब मैं जीवन भर में नेत्रों से कभी न देख पाऊँगा।

बगीचे में चिड़ियों का सुमधुर कलरव वायु में मिल-मिलकर प्रवाहित हो रहा था, प्रतिदिन की ही तरह गृह-कार्य-सम्बन्धी तरह-तरह के शब्दों से वह स्थान मुखरित था। खिड़की के मार्ग से धूप की किरणें आ-आकर कमरे में पड़ रही थीं, ये सभी बातें उसने अनुभव से समझीं, सभी बातें उसे ज्ञात हो गईं, किन्तु उस दिन शय्या त्याग कर उठने की उसकी इच्छा नहीं हुई। यह शय्या यदि उसकी मृत्यु-शय्या हो जाती तो कदाचित् उसके हृदय को शान्ति मिलती!

हृदय-विदारक वेदना और निराशा के कारण अपना शिथिल शरीर लेकर वह फिर बिस्तरे पर लोट गया। उसकी सारी अवस्था निमेष-मात्र में ही उसके मनरूपी नेत्रों के समक्ष देदीप्यमान हो उठी। फिर उठकर अपनी अन्तरात्मा के साथ युद्ध करने का उत्साह उसे नहीं रह गया।

एक वह भी दिन था, जब उसे आशा थी कि किसी न किसी दिन मेरी यह बिगड़ी हुई नेत्रों की ज्योति फिर सुधर जायगी। परन्तु इस बार उसकी कोई आशा ही नहीं रह गई।

जिससे फिर कभी यह घटना न हो सके, उसके लिए अरुण को काफ़ी सचेत कर दिया गया था। परन्तु जिस समय उसे डाक्टर के पास जाना चाहिए था, उस समय वह और ही झंझटों में पड़ा था, डाक्टर के पास जाने का सुयोग ही नहीं मिला। परिणाम यह हुआ कि जीवन भर के लिए वह फिर अन्धा हो गया।

पहले की तरह अब उसकी फिर असहाय अवस्था हो गई। अब हर एक विषय में, हर एक काम-काज के लिए, जीवन भर

उसे दूसरे का ही आश्रित होकर रहना पड़ेगा। एक बार वह अन्धा था, देख न सकने के कारण जो क्लेश होता है उसे वह भोग चुका था, बाद को उसके नेत्रों में फिर ज्योति आ गई और हर एक चीज को वह भली-भाँति देखने लगा। बाद को वह फिर अन्धा होगया। इससे उसका क्लेश दुगुना बढ़ गया। यौवन की सारी शक्ति, सारा उत्साह, सारी कर्मपरायणता, सब कुछ ज्यों की त्यों बनी थी, फिर भी यह असहाय और अकर्मण्य जीवन कितने दिन तक वहन करना पड़ेगा? जीवन से वह बिल्कुल ही ऊब गया था।

अरुण को अन्धा होना आज की तरह इतना दुखमय, इतना निराशाजनक और कभी नहीं मालूम पड़ा। लीला उसकी वाग्दत्ता पत्नी है, शायद वह अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे, परन्तु क्या वह केवल शुष्क कर्तव्य-रक्षा के ही लिए तो ऐसा नहीं कर रही है? जहाँ उसके प्रेम के लिए हृदय में ज्वाला बढ़ी है, वहाँ केवल नीरस-कर्तव्य-निष्ठा से भला आत्मा को कहीं शान्ति मिल सकती है? यह चिन्ता उदित होकर छुरी के समान हृदय को फाड़कर धँसने लगी। स्वयं अपनी आवश्यकता और सुविधा के लिए वह एक दूसरे का भी जीवन नष्ट करेगा? अब संसार में उसकी कोई भी आवश्यकता नहीं है। इस जीवन की उसकी सभी आवश्यकताओं का अन्त हो चुका है।

चाय और जलपान की सामग्री से सजा हुआ 'ट्रे' लेकर एक नौकर ने कमरे में प्रवेश किया, किन्तु अरुण ने उस ओर ध्यान नहीं दिया।

नौकर के चले जाने पर अपना विदग्ध हृदय लेकर निराशा के अगाध सागर में पड़े-पड़े व्याकुल भाव से वह फिर छटपटाने लगा। वह बिस्तरे पर लेटा ही था कि लीला ने बाहर से दरवाजे में धक्का देकर पुकारा—अरुण!

उस परिचित और सुमधुर स्वर से अरुण के अन्तःकरण का कुहरा क्षण भर में ही जहाँ का तहाँ हो गया। प्रेम के प्रबल उच्छ्वास से उसका शरीर काँप उठा। परन्तु उसके बाद ही अरुण के मन में यह बात आई कि लीला का चन्द्रमा के समान चमकता हुआ मुँह और उसकी वही हँसती हुई बड़ी-बड़ी चमकीली आँखें अब मैं फिर कभी न देख सकूँगा।

लीला ने बाहर से ही फिर उसे पुकारा--अरुण, इतनी देर हो गई, और तुम अभी तक उठे नहीं!

उतावली के साथ बिस्तरे पर से उठते-उठते अरुण ने कहा--आज मैं बड़ा काहिल हो गया हूँ लीला!

"अभी तक बिस्तरे पर ही पड़े हो? खैर, मैं भीतर आ रही हूँ।"

लीला के इस प्रकार के प्रेम और मधुरता से परिपूर्ण हृदय का परिचय पाकर अरुण ने सोचा कि मेरे इस अन्धकारमय जीवन का पहला परिच्छेद आरम्भ हुआ है। यह सोचकर उसके निराश जीवन में फिर आशा का संचार हुआ।

"आओ लीला!"

यह बात अरुण के मुँह से समाप्त भी न हो पाई थी कि ढाके की साड़ी की मरमराहट सुनाई पड़ी। चारपाई के पास आकर उसके खड़े होने की आहट मिलते ही उसे टटोलने के लिए अरुण ने हाथ बढ़ाया।

लीला ने अरुण का हाथ पकड़ लिया। अरुण के गले में अपनी कोमल बाँह डालकर उसने उसका माथा खींच कर अपनी गोद में ले लिया। अन्त में स्नेह और आदर से भरे हुए स्वर में वह कहने लगी—नियम में व्यतिक्रम करके तुमने फिर यह उपद्रव खड़ा कर दिया न? परन्तु इससे हम लोगों का कोई हानि न होगी।

हम तुम ठीक पहले की ही तरह खूब आनन्द से अपना समय व्यतीत करेंगे। ठीक है न?

अरुण मुँह से कोई बात नहीं निकाल सका। आनन्द की अधिकता मे उसका गला रुँध गया था। अपना शरीर ढीला करके लीला के कन्धे पर मस्तक रक्खे हुए वह पड़ा रहा।

अरुण की तबीअत हरी करने के लिए लीला ने कहा--एक बड़ी अच्छी बात तुमने सुनी है? आज सबेरे जब मैं उठा तब मा कह रही थीं कि इस सप्ताह के अन्त में तुम्हारा और अरुण का विवाह होना निश्चित हुआ है। विवाह हो जाने पर हम-तुम अपने घर चलेंगे। तुम बहुत दिन से घर छोड़े हुए हो, अपने घर जाने की तुम्हारी बड़ी इच्छा होगी न?

अरुण ने अपने हृदय के अन्तस्तल से कहा--तुम्हारे साथ मैं जहाँ भी रहूं, वहीं मेरे लिए स्वर्ग है।

उस समय अरुण के हृदय में आनन्द का सागर उमड़ आया।

( ४८ )

सारे परिवार को शोकसागर में छोड़कर मिस्टर घोष को एकाएक संसार से बिदा हुए एक सप्ताह व्यतीत होगया। उनका सुविशाल भवन संध्या के अन्धकार में अस्पष्ट चित्ररेखा के समान स्थिरभाव से खड़ा था। उसमें बिलकुल निस्तब्धता थी, अतएव बाहर से देखने में ही शोक की छाया स्पष्ट झलकती थी। एक ही व्यक्ति के अभाव में सारा घर सूना और भयंकर मालूम पड़ रहा था। जिधर देखो, उधर ही सन्नाटा था। मनुष्य के चलने-फिरने या बातचीत की कोई आहट नही मिलती थी। घर के भीतर से केवल बीच-बीच में बुआ जी का धीमे गले का रोना और बिलाप की ध्वनि वायु में मिल कर आ रही थी।

बैठक मे मेज़ के पास एक कुर्सी पर निर्मला बैठी थी, उसके

सामने असित खड़ा था। मेज पर मुड़ा हुआ जरा-सा कागज पड़ा था, निर्मला की झुकी हुई दृष्टि उसी में लगी थी।

असित का मुँह गम्भीर और सूखा हुआ था। चेहरा रूखा और उतरा हुआ था, ललाट पर चिन्ता और वेदना की गम्भीर रेखा थी। उसे देखने पर जान पड़ता था, मानो दो दिन में ही उसकी अवस्था दस वर्ष अधिक हो गई है।

असित ने कहा—आज कई दिन से आने का विचार कर रहा था, किन्तु किसी तरह भी अवसर नहीं मिल सका। उस दिन जैसी अवस्था में तुम्हें छोड़कर मुझे यहाँ से चला जाना पड़ा था, उसके कारण भला कभी चित्त स्थिर रह सकता है? इधर कई दिनों से शायद अकेली ही रही हो?

निर्मला ने कहा—नहीं, समाचार पाने पर किरण बाबू आये थे। उन्होंने ही उस समय का सारा आवश्यक प्रबन्ध कर दिया था। यहाँ बुआ जी के साथ वे दिन भर रहे भी। उनके चले जाने पर मेरी सखी लीला आकर मेरे पास कई दिन रही। आज तीसरे पहर वह घर गई है। उन लोगों के कारण मुझे न तो कभी अकेली रहना पड़ा है और न किसी बात की चिन्ता ही करनी पड़ी है।

असित ने शान्ति की साँस ली। उसने कहा—अच्छा ही हुआ। वे लोग तुम्हारी सहायता करते रहे हैं और आवश्यकता पड़ने पर फिर भी करेंगे, यह जानकर मेरा मन निश्चिन्त हो गया। मेरे द्वारा तो तुम्हारा कोई उपकार हो ही नहीं सकता, बल्कि मेरे यहाँ रहने पर तुम्हें झंझट ही सहना पड़ेगा।

निर्मला ने अपनी म्लान दृष्टि उठाकर असित की ओर ताका।

असित की उस बात का मर्म वह भली भाँति हृदयङ्गम नहीं कर सकी, अतएव उसने फिर कहा—आज तुम्हारा चित्त स्वस्थ नहीं है निर्मला, पिता के दारुण शोक से तुम कातर हो। इधर

स्वयं मेरी अवस्था यदि पूछो तो वह भी वैसी ही है। आज मैं जिस व्यथा का उपभोग कर रहा हूँ उसे दूसरा कोई नहीं समझ सकेगा। अतएव उसे समझाने का प्रयत्न भी न करना ही अच्छा है। इसी लिए मैंने कहा था कि आज हम दोनों की जो अवस्था है, उसमें कोई विशेष महत्त्व की बात नहीं की जा सकती। तो भी संक्षेप में तुमसे दो-एक बात कहे बिना भी काम नहीं चलेगा। आज रात को ही मैं यहाँ से चला जा रहा हूँ। कहाँ, कितनी दूर और कितने दिन के लिए जाऊँगा, और वहाँ से कभी लौट सकूँगा या नहीं, यह कुछ भी निश्चय नहीं है। इसी लिए जाने से पहले थोड़ा-सा समय निकाल कर तुम्हारे पास चला आया हूँ!

निर्मला ने आँसुओं से भरी हुई अपनी विषादमय दृष्टि उठाकर कहा—तुम भी चले जा रहे हो? आज ही? तो मेरी क्या दशा होगी?

बहुत ही विचलित होकर असित कुछ क्षण तक निर्मला के मुँह की ओर ताकता रहा। बाद को उसने कहा—सचमुच! तुम्हारी अवस्था की ओर ध्यान जाते ही अपने चित्त को स्थिर करके मैं किसी प्रकार भी काम-काज में नहीं लग पाता हूँ। मेरा चित्त बहुत ही चंचल हो उठता है। स्वयं मेरा जीवन, जो इस तरह व्यर्थ हो गया है, इसके लिए मुझे किसी दिन किसी तरह का भी क्लेश नहीं मालूम पड़ा। परन्तु मेरे-जैसे अभागे और घुमक्कड़ के कारण तुम्हारा जीवन जो इस तरह मिट्टी होना चाहता है, इस बात की चिन्ता मुझे सदा ही बड़ा क्लेश देती है निर्मला! यह बात तो मुझे भी मालूम है कि हम दोनों एक दूसरे की अवस्था पर जिस रूप से भी विचार करें, और लोगों की तरह पास-पास कदापि नहीं खड़े हो सकेंगे। घटनाचक्र से मैंने जिस मार्ग का अवलम्बन किया है उसका परित्याग करना मेरे लिए असाध्य है। इसके अतिरिक्त मेरी माता के रक्त ने भी

मेरे और तुम्हारे बीच में एक ऐसा व्यवधान खड़ा कर रक्खा है कि उसे तोड़कर परस्पर एक दूसरे के समीप आना असम्भव है। वह व्यवधान इस जीवन में दूर भी नहीं हो सकेगा। तब तुम मेरे लिए चिर दिन क्लेश क्यों सहती रहोगी ?

इतनी देर तक मस्तक झुकाये हुए निर्मला असित की बात सुनती रही. उसकी बात का अन्तिम अंश सुनते ही मस्तक उठाकर उसने असित की ओर ताका। उसने कहा—यही तुममें एक बड़ी भारी भूल रह गई है। तुम्हें जितना क्लेश और अपमान सहना पड़ा है और तुम्हारा जीवन जो इस प्रकार नष्ट हुआ है, उसका उत्तरदायित्व मेरे पिता पर है, इस बात को मैं स्वीकार करती हूँ। वे स्वयं भी जीवन-पर्यन्त उस समस्त अपराध के लिए अपने को ही अपराधी समझते रहे और उन्होंने उसका समुचित प्रायश्चित भी किया है। उनकी इस तरह की आकस्मिक मृत्यु का कारण भी वही है। किन्तु इतने पर भी तुम लोग जो मन में लिये हीं चले आ रहे हो वह अन्याय उनके द्वारा नहीं हुआ, उन्होंने तुम्हारे कुल की कोई अप्रतिष्ठा नहीं की।

निर्मला की इस बात से विस्मित होकर असित ने कहा—तुम्हें ये सब बातें मालूम कैसे हुईं ? क्या मिस्टर घोष ने तुमसे—

निर्मला ने बात काट कर कहा—अपने मुँह से उन्होंने एक भी बात मुझसे नहीं बतलाई। ऐसा जान पड़ता है कि इन सब बातों को सोच-सोच कर जब वे बहुत ही दुःखी हो जाते थे, तब कदाचित मुझसे सारा हाल बतला कर वे अपने हृदय का भार कुछ हलका करना चाहते थे। किन्तु उनमें जो अत्यधिक शिष्टता और लज्जा वर्तमान थी, उसी के कारण मेरे सामने इस सम्बन्ध की कोई भी बात वे मुँह पर नहीं ला सके। जिस दिन तीसरे पहर एकाएक उनकी मृत्यु हुई है, उसी दिन दोपहर को उन्होंने मुझसे कहा था कि तुमसे मुझे जो कुछ कहना है वह सब लिखकर

मैंने अपने टेबिल की ड्राअर में रख दिया है। इस बीमारी से यदि मैं न बच सका तो तुम उसे पढ़कर सारी बातें जान लेना। अभी तक लीला मेरे पास थी, अतएव मैं इस ओर नहीं आई। आज जब वह चली गई तब इस कमरे में आकर मैंने यह कागज़ निकाला और इसे खोल कर पढ़ा।

टेबिल पर पड़े हुए कागज़ों को तरतीब से लगाकर निर्मला ने असित की ओर बढ़ाया और कहा कि तुम भी इन्हें एक बार पढ़ लो।

ज़रा-सा सहम कर इधर-उधर करते हुए असित ने कहा—मेरा यह सब देखना ठीक होगा निर्मला? वे अपने हृदय की जो कुछ बातें तुम्हें बता गये हैं उनमें से कुछ ऐसी भी होंगी जो दूसरे को न मालूम होनी चाहिए। क्या उन्हें—

असित को रोक कर निर्मला ने कहा—इसके लिए तुम कोई चिन्ता मत करो। इसमें जो कुछ लिखा है वह केवल तुम लोगों के ही सम्बन्ध में है और वह सब तुम्हें भी अच्छी तरह जान लेना चाहिए।

निर्मला ने उठकर असित की ओर एक कुर्सी बढ़ा दी। असित उस पर बैठ कर मिस्टर घोष के लिखे हुए कागज़ों को पढ़ने लगा। उनमें इस तरह लिखा था—

"निर्मला, मेरी बेटी, प्रथम यौवन में, अपनी बुद्धि के दोष से एक दिन एक अनुचित कार्य कर डाला था। उसकी स्मृति डंक मार-मार कर जीवन भर असह्य ज्वाला से जलाती आई है। जीवन के इन इने-गिने दिनों में भी, जो अभी अवशिष्ट हैं, उससे छुटकारा न पा सकूँगा, यह मैं निश्चित रूप से जानता हूँ।

"इधर कुछ दिनों से मुझे न जाने क्यों ऐसा लगता है, मानो मेरे दिन बीत चले हैं। अकस्मात् न जाने किस मुहूर्त में अन्तिम बुलावा आ जायगा, इसका कोई ठिकाना नहीं है। इसी लिए समय

रहते ही मुझे जो कुछ कहना है वह सब लिखकर रक्खे जा रहा हूं। जिस दिन मेरा नाम इस संसार से उठ जाय उसी दिन इस अनुतप्त बूढ़े की शोकमय गाथा पढ़कर तुम लोग मुझे क्षमा कर देना। अन्याय करके उसके लिए जो दंड जीवन भर भोगे जा रहा हूँ, उसे सोच कर मेरे ऊपर किसी प्रकार का रोष या अभिमान मत रखना। तुम लोगों से मेरा यही अन्तिम अनुरोध है।

"पिता जी की मृत्यु के बाद जिस दिन इतनी बड़ी जमींदारी का उत्तराधिकारी होकर घर में बैठा, उस दिन मेरी अवस्था बहुत थोड़ी थी। शायद चौबीस-पचीस वर्ष से अधिक न रही होगी। सुविधा पाकर मेरे कई हितैषी बन्धु-बान्धव आकर मेरे आस-पास जम गये। उनके प्रभाव से मै अपने को न बचा सका, अतएव शीघ्र ही उन लोगों के निर्देश से चलने लगा। अब मै रात-दिन आमोद-प्रमोद की चिन्ता में ही मग्न रहता।

"मेरी मित्र-मण्डली भर में हरनाथ ही मेरा सबसे बड़ा शत्रु निकला। परन्तु उसने इस तरह की चाल से मुझे अपनी मुट्ठी में कर रक्खा था कि मेरी दृष्टि में उसका-जैसा हितैषी मेरा और कोई नहीं था। मेरे पुराने कर्मचारी जो मेरी जमींदारी का सारा कारबार सँभाले हुए थे, मेरा यह अनुचित व्यवहार देख-देखकर मुझे प्रायः ऐसे लोगों का साथ छोड़ देने की सलाह देते और अपना कारबार स्वयं सँभालने के लिए अनुरोध करते। उस समय मुझे वे सब बातें अच्छी नहीं लगती थीं। इस सम्बन्ध में उन लोगों के साथ कभी-कभी मेरा मनमुटाव भी हो जाया करता।

"इसी तरह एक दिन बात बहुत बढ़ गई, इससे उन्होंने मेरे यहाँ काम करना छोड़ दिया। मैने भी दूसरे बार उनसे अनुरोध न करके उसी समय हरनाथ को सारा कागज-पत्र समझा देने को कहा।

"उस घटना के कारण हरनाथ एक-दम से स्याह-सफ़ेद का मालिक बन बैठा। जमींदारी-सम्बन्धी किसी भी झंझट में वह मुझे कभी न पड़ने देता। समय-असमय मुंह से निकलते ही वह मेरे सामने रुपयों का ढेर लगा देता। इससे बहुत ही प्रसन्न होकर मैं सोचता कि हरनाथ के कारण मुझे कोई क्लेश नहीं होने पाता और मेरा समय एक तरह आराम से कट रहा है।

"मेरी जमींदारी में स्थान-स्थान पर असामियों में हाहाकार मच उठा। इसमें सन्देह नहीं कि उस समय यह सब मुझे ज़रा भी नहीं मालूम था। बाद को जाँच करने पर सब सुना। असामी लोग मुझे बहुत ही निष्ठुर और अर्थ-पिशाच समझने लगे। वे लोग कहा करते कि हाथ में अधिकार आते ही इन्होंने तरह-तरह का अमानुषिक अत्याचार आरम्भ कर दिया है।

"उसी समय मण्डलगढ़ का परगना मैंने अपने पड़ोस के एक दूसरे जमींदार से ख़रीद लिया था। उसका सारा प्रबन्ध नये सिरे से करने के लिए हरनाथ वहाँ चला गया।

"वहाँ जाकर उसने क्या-क्या किया, यह मुझे कुछ भी नहीं मालूम हो सका। लौट कर जब वह आया तब मुझसे कहने लगा कि मण्डलगढ़ के असामी बहुत ही दुष्ट और उद्दण्ड हैं। वे सब अपने पुराने जमींदार से बड़ा प्रेम करते हैं। उन लोगों का कहना है कि हम तुम्हें लगान की एक पाई न देंगे, सारा रुपया अपने पुराने जमींदार को ही देंगे। उन लोगों को दबाने के लिए मुझे कुछ दिनों तक वहीं जाकर रहना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त थोड़े से मुड्ढ लोगों को, जिन्होंने उलटा-सीधा पढ़ाकर असामियों को भड़का रक्खा है, मामले-मुक़द्दमे में फँसा कर तंग भी करना होगा।

"इस विषय में मैंने आपत्ति का कोई कारण नहीं देखा। मैंने कहा—घर का पैसा ख़र्च करके जब परगना ख़रीदा है, तब जिस तरह भी हो सके, उसे अपने अधिकार में तो लाना ही पड़ेगा।

उसके लिए बल-प्रयोग किये बिना यदि विद्रोही असामी हाथ में नहीं आते तब विवश होकर वैसा करना ही पड़ेगा। मेरी यह बात सुन कर हरनाथ बहुत ही प्रसन्न हुआ और मण्डलगढ़ के लिए रवाना हो गया।

"इस घटना के प्रायः तीन महीने के बाद एक दिन सन्ध्या के समय मैं भीतरवाले बग़ीचे में बैठा था। उस समय मेरे पास और कोई नहीं था। एकाएक मैंने देखा कि एक पेड़ की आड़ से एक लम्बा-सा आदमी धीरे-धीरे निकला और मेरे पास आकर खड़ा हो गया। उस समय प्रायः अँधेरा हो गया था।

"उसे देखकर पहले तो मैं डर गया। तुम कौन हो, यहाँ किस तरह आये हो, इस तरह की कोई बात कह कर मेरे नौकरों के बुलाने का उपक्रम करते ही वह आदमी मेरे पास बढ़ आया और कहने लगा—डरिए न साहब, मैं केवल दो बातें करके चला जाता हूँ। आपसे एकान्त में मुलाक़ात करने के लिए मैंने बड़ा प्रयत्न किया है, किन्तु किसी तरह भी वैसा अवसर नहीं पा सका। अन्त में जब और कोई उपाय नहीं रह गया तब मुझे इस मार्ग का अवलम्बन करना पड़ा है। मैं हुज़ूर के मण्डलगढ़ परगने का असामी राम-गोविन्द दत्त हूँ।

"मण्डलगढ़ का नाम सुनते ही मुझे हरनाथ की बातें, वहाँ के विद्रोही असामियों का हाल, याद आ गया। उन सब पाजी-बदमाशों का इतना साहस कि मेरे मकान की चहारदीवारी फाँद कर सन्ध्या के अन्धकार में बग़ीचे के भीतर मुझसे मुलाक़ात करने आवें? इसका मतलब क्या है?

"क्रोध में आकर कर्कश स्वर से मैंने कहा—यदि कोई बात कहनी है तो कल सवेरे कचहरी में आना, सुनी जायगी। तुम लोगों ने मेरे वहाँ के सब असामियों को भड़का रक्खा है। मैंने अपने नायब से तुम लोगों की बदमाशी का सारा हाल सुना है।

"उस आदमी ने कहा--आपने कुछ भी नहीं सुना। मैं बराबर यही सन्देह करता आया हूँ कि शायद सच्चा हाल आपके कानों तक नहीं पहुँच पाता। बात भी यही है। मैं आपको वास्तविक परिस्थिति बतलाकर न्याय की भिक्षा माँगने आया हूँ।

"उससे मैंने सुना कि हरनाथ ने मुझसे जो कुछ कहा है वह सब बिलकुल ही असत्य है। जमींदारी खरीदी जाने पर कुछ दिनों तक वह पुराने जमींदार के अधिकार में थी। उस समय असामियों ने पहली किश्त का लगान उसी के नायब को दे दिया है। वहाँ जाकर हरनाथ उस किश्त के रुपये भी असामियों से माँगता है। इसके अतिरिक्त लगान की दर बढ़ाकर नये-नये क़ायदे जारी करता है। उसके आज्ञानुसार जो लोग अधिक रुपये देने में असमर्थता प्रकट करके अनुनय-विनय करते हैं उनकी प्रार्थना पर ज़रा भी ध्यान न देकर उनसे वह जमीन छीन लेता है और अधिक लगान पर दूसरे के नाम पट्टा कर देता है। असामियों ने उससे प्रार्थना की कि हम लोग एक किश्त का लगान दो बार देने में असमर्थ हैं, अतएव कृपा करके वह छोड़ दिया जाय, किन्तु हरनाथ के अत्याचारों के कारण उन्हें बाध्य होकर पाई-पाई चुकता कर देना पड़ा है। अब वह अधिक से अधिक नजराना लेकर एक आदमी की जमीन दूसरे के नाम पट्टा कर देता है। गाँव के दो-एक ग़रीब असामियों की स्त्रियों के साथ भी उसने अनुचित व्यवहार किया है। कुछ प्रधान-प्रधान व्यक्तियों ने मिलकर उसके इन सब दुष्कृत्यों का प्रतिवाद किया था। तब से वह सब लोगों को घूम-घूमकर धमकाता फिरता है। उसके अत्याचारों से सभी असामी हैरान हो उठे हैं। इसके अतिरिक्त शायद आगामी मास में उसके लड़के का अन्नप्राशन होनेवाला है। इसलिए कल सब लोगों को बुलाकर उसने कह दिया है कि इसका सारा खर्च मैं मण्डलगढ़ से ही वसूल करूँगा। यह बात सुनकर सारे असामी बहुत बिगड़ उठे हैं और

इन लोगों ने परस्पर मिलकर निश्चय कर लिया है कि यह अन्याय हम नहीं सहन करेंगे। यदि नजराना देना होगा तो जमींदार को देंगे। जो आदमी इलाके में पैर रखते ही हम लोगों को तरह तरह के क्लेश देने लगा, उसकी कोई भी बात अब हम लोग नहीं सहन कर सकेंगे।

"इसी लिए मैं आपको ये सारी बातें सूचित करने के लिए आया हूँ। अपने नायब के ही ऊपर एकदम से सारा भार न छोड़-कर आप भी कुछ दृष्टि रक्खा कीजिए। मण्डलगढ़ के असामी न तो बदमाश हैं और न विद्रोही हैं, परन्तु बार-बार चोट पहुँचा कर यदि उन्हें उत्तेजित ही किया जायगा तो उसका न जाने क्या परिणाम होगा? इतना जरूर है कि इससे राजा या प्रजा किसी का भी हित न होगा। आप यदि दो दिन के लिए भी वहाँ जाते, आपके नायब ने जिन लोगों की जमीन-जगह छीनकर जिन्हें दाने-दाने के लिए मोहताज कर रक्खा है, जिन लोगों के घर की स्त्रियों को पकड़वाकर अपमानित किया है, उन्हें बुलाकर शान्त करने की चेष्टा करते तो सारा असन्तोष दूर हो जाता और यदि आप इतना नहीं कर सकते तो कम से कम अपने नायब को बुलाकर डाँट दीजिए, जिससे वह यह सब अत्याचार करना बंद कर दे। इन दो बातों में से यदि आप एक भी नहीं कर सकते और हरनाथ का प्रताप ज्यों का त्यों बना रहता है तो इसका परिणाम अधिक कल्याणकर न होगा। समझ रखिए कि असामियों का पक्ष लेकर इन सब बातों का प्रतिवाद करने के लिए अन्त तक मैं हर स्थान पर उपस्थित रहूँगा। यह बात समाप्त होते ही वह जिस ओर से आया था उसी ओर चला गया, फिर वह एक सेकंड भी नहीं रुका।

"जरा देर तक अवाक् होकर मैं सोचता बैठा रहा। उसके मुख-मण्डल पर और नेत्रों में इतना तेज था, उसकी बातों में इतनी अद्भुत शक्ति थी कि मैं बिलकुल ही अभिभूत हो उठा था।

"ये बातें सारी रात मेरे चित्त को उद्वेलित करती रहीं। सवेरा होते ही हरनाथ को बुलाने के लिए आदमी भेज दिया। सोचा कि इस मामले की जाँच करनी चाहिए।

"सूचना पाते ही हरनाथ उस आदमी के साथ-साथ आकर उपस्थित हुआ। उसे एकान्त में बुलाकर मैंने सारी बातें साफ़-साफ़ कह दीं।

"पहले कुछ देर तक भौचक्का-सा होकर वह चुपचाप मेरे मुँह की ओर ताकता रहा, उसकी जबान तक न हिली।

"जरा-सी प्रतीक्षा करने के बाद मैंने विरक्त-भाव से कहा—कहो, क्या मामला है? ऐसी बातें मुझे क्यों सुननी पड़ीं? वहाँ जो-जो घटनायें हुई हों वह सब सच-सच मुझसे बतलाओ। मुँह से बोलते क्यों नहीं हो?

"हरनाथ ने कहा—बोलूँ क्या? तुम्हारी बात सुनकर तो मैं बड़े चक्कर में आ गया हूँ। उस बदमाश ने सचमुच यहाँ तक धावा कर दिया था? तब तो निमाई मुझसे जो कुछ कह रहा था, वह सभी सच है। मैंने उसकी बातों पर विश्वास नहीं किया, उल्टा डाँट कर उसको निकाल दिया। अब देखता हूँ कि उसने एक अक्षर भी मिथ्या नहीं कहा।

"मैंने कहा—व्यर्थ को बकबक करने से लाभ नहीं होगा, जो असली बात है, वही बतलाओ।

"हरनाथ ने कहा—बात यह है कि वे लोग मिलकर तुम्हारी हत्या कर डालने के सम्बन्ध में बातचीत कर रहे थे। मण्डलगढ़ के बूढ़े जमींदार के साथ तुम्हारे पिता की बहुत पुरानी शत्रुता थी। उनके साथ मामले-मुक़द्दमे लड़ते ही लड़ते उसका सारा कार-बार चौपट हो गया है। अन्त में उसकी इतनी अच्छी जमींदारी घूम-फिर कर तुम्हारे हाथ में आ गई, इसी कारण वर्तमान जमींदार यानी उस बुड्ढे का लड़का तुमसे बहुत चिढ़ा है। और क्या बात है? उसी ने कुछ दे-लेकर रामगोविन्द को अपनी ओर मिला

रक्खा है, और उसी के कहने में आकर सब असामी भी बिगड़े जा रहे हैं। वे सब एकत्र होकर एक दिन परस्पर बातचीत कर रहे थे। रामगोविन्द कह रहा था कि जिस तरह भी हो सके, उसे खोज कर मार ही डालना चाहिए। अपूर्व बाबू कहते थे कि चाहे जितना रुपया लगे, उसकी चिन्ता नहीं है, किन्तु किसी तरह भी उसे दखल न जमाने देना चाहिए। एक दूसरे आदमी ने कहा—बाबू साहब एक बार कह भर दें तो हम लोग बेटा को मारते-मारते चटनी कर देंगे। फिर उठ कर जमींदारी पर दखल लेने के लायक़ न रहेंगे।

"मेरे नौकर निमाई को कहीं से यह खबर मिल गई थी। उसने आकर मुझसे कहा। मैंने उसे डाँट दिया और कहा—क्या ऐसा कभी हो सकता है? बाबू साहब ने नीलाम में जमींदारी ली है। इसमें उनका अपराध क्या है? वे न भी खरीदते तो कोई न कोई खरीद ही लेता। इसके लिए वे लोग इन्हें मारेंगे? ऐसा हो ही नहीं सकता।

"हम लोग तो सीधे आदमी हैं, भला ये सब षड्यन्त्र की बातें क्या समझ सकें? परन्तु वह बदमाशों का सरदार जब यहाँ तक आ पहुँचा और तुम्हारे भीतर घुसकर तुम्हें भी धमकियाँ दे गया तब मुझे ऐसा जान पड़ता है कि शायद ये सब बातें मिथ्या नहीं हैं।

"हरनाथ की बातें सुनकर मैं दङ्ग रह गया। जमींदार तो हुआ था, लेकिन जमींदारी की चाल-ढाल कुछ जानता ही नहीं था। मुझे यह मालूम नहीं था कि एक साधारण-सी बात पर या निरर्थक ही लोग इस तरह की ईर्ष्या कर सकते हैं।

"मुझे चुप देखकर हरनाथ ने कहा—और तुम भी तो बड़े मजे के आदमी हो! तुम्हारे घर के भीतर आकर एक आदमी मनमाना तुम्हें डाँट गया और तुमने चुपचाप उसकी सारी धमकियाँ

सुन लीं ! उसे पकड़ नहीं सके ! क्या उस समय कोई नौकर-चाकर नहीं था ?

"उस समय मैं भी आवेश में आ गया। सोचने लगा—ठीक तो कहता है। मैंने उसकी ये सब अनर्गल बातें कैसे सुन लीं और इतनी आसानी से उसे क्यों छोड़ दिया ! जब मैं कापुरुष प्रमाणित होने लगा तब क्रुद्ध हो उठा। मैंने कहा—जैसे भी सम्भव हो, उन लोगों का दमन करना ही होगा। रुपये के लिए चिन्ता मत करना। मुझे और कुछ कहना-सुनना नहीं है। उन लोगों को दल-बल-सहित तुम शान्त भर कर दो।

"हरनाथ ने अपना चेहरा गम्भीर करके कहा—नहीं भाई, बल्कि तुम एक बार वहाँ हो आओ। तभी ठीक होगा। इन सब उपद्रवी आदमियों को दबाने के लिए उचित-अनुचित सब तरह के ढंग काम में लाने पड़ेंगे। बाद को कहीं फिर आकर कोई मेरी शिकायत कर जायगा और तुम मुझसे बुरा मान जाओगे। और चाहे जो हो, उसने सलाह तुम्हें अच्छी दी है। यहाँ तो तुम अपने इलाक़े में हो, चारों ओर नौकर-चाकर बने रहते हैं, हर तरह का (आक्रमणकारी के लिए) ख़तरा है। यहाँ तो तुम्हारी छाया तक का स्पर्श करने की सुविधा नहीं हो सकती। इससे अच्छा होगा कि तुम उन्हीं लोगों की सीमा के भीतर पहुँच जाओ। इससे वे लोग जी खोलकर तुमसे बातें भी कर सकेंगे। तुम अपनी ज़मींदारी भी देख लोगे और आवश्यकता पड़ने पर आसानी से अपना मस्तक भी दे दोगे। यह रामगोविन्द ही साला इतना घृणित आदमी है कि दूसरे के प्राण तक ले लेने में इसे ज़रा भी दया नहीं आती। आँखें नहीं देखीं उसकी ?

"मण्डलगढ़ के सम्बन्ध में हरनाथ को पूर्ण स्वतन्त्रता देकर मैं पहले की ही तरह फिर आनन्द-सागर में ग़ोते लगाने लगा।

हरनाथ के साथ प्रकट और अप्रकट रूप से रामगोविन्द का मामला मुक़द्दमा, मारपीट और लड़ाई-झगड़ा होने लगा।

"इसी प्रकार एक वर्ष व्यतीत हो गया। बाद को एक मुक़द्दमे में हम लोग हार गये। अब रामगोविन्द का क्या पूछना था? हरनाथ से सुना था कि हमारे दफ़्तर के सामनेवाली सड़क से दल-बल-सहित बाजा बजाता हुआ वह बड़ी धूम से निकला था, मुझे और हरनाथ को बहुत सी गालियाँ भी दी थीं।

"अत्यधिक क्रोध और आक्रोश से हरनाथ पींजड़े में बँधे हुए सिंह के समान गर्जता फिरता था। उसके मुँह से आद्योपान्त कथा सुनकर मैं भी क्रोधान्ध हो उठा। सोचने लगा कि यह दुर्दान्त आदमी किस तरह परास्त किया जाय?

"बड़ी रात बीतने पर हरनाथ आकर मेरी बैठक में बैठा। उस समय मेरी मित्र-मण्डली के और सब लोग उठ गये थे, मैं अकेला था।

"हरनाथ ने एक नई बोतल निकाली। मेरी अवस्था उस समय बहुत ही शोचनीय थी। तो भी उसने एक गिलास भर कर मेरी ओर बढ़ा दिया और कहने लगा—देखो, साँझ से सोचते-सोचते उस साले को ठंडा करने के लिए मैंने एक बहुत अच्छा उपाय सोच निकाला है। और सालों के विषैले दाँत तो तोड़ दिये हैं, अब इसी को ठंडा कर दूँ, बस, सारा झंझट दूर हो जाय! परन्तु जैसे वह पहले दरजे का बदमाश है, उसकी छाती पर वैसी ही कड़ी ठोकर भी मारनी पड़ेगी। तब तो वह सीधा होगा!

"ज़रा भी आपत्ति न करके मैंने गिलास खाली कर दिया। तब उससे पूछा—वह कौन-सी युक्ति है? वह बात मुँह से निकालने में शायद उसे लज्जा आ रही थी। इधर-उधर करके उसने मुझे दो-एक गिलास और पिला दिया। अन्त में उसने बहुत चुपके-चुपके कहा—उस साले की स्त्री बड़ी सुन्दरी है। सुनता हूँ, वह उसे

बहुत प्यार करता है। मेरी राय है कि एक दिन मौका पाकर उसकी स्त्री को पकड़ लाऊँ और अपने दफ्तरवाले मकान में घंटा दो घंटा रोक कर छोड़ दूँ। तब गाँववालों के बीच में उस साले का सिर नीचा हो जायगा। फिर वह कहीं भी मुँह न दिखा सकेगा और गाँव छोड़कर अपने आप भाग जायगा। तुम्हारी क्या राय है? मेरे इस विचार से सहमत हो न?

"आज ये सब बातें लिखते समय लज्जा और घृणा के कारण मेरे हृदय को बड़ी ग्लानि हो रही है, किन्तु उस समय मैं बहुत ही आह्लादित हो उठा था। उस समय मेरा दिमाग़ ठिकाने पर नहीं था। हरनाथ जो कुछ कहता, उसी को मस्तक हिलाकर स्वीकार करते-करते अचेत होकर मैं वहीं पड़ गया।

"इसके दूसरे ही दिन कलकत्ते से मामाजी का एक तार आया। उन्होंने लिखा था कि एक विशेष कार्य है, अतएव तार पाते ही तुम कलकत्ता चले आओ। बिस्तर आदि बाँध कर मैं तुरन्त ही रवाना हो गया।

"घर लौट कर आने में चार-पाँच दिन की देरी हुई। यहाँ आकर देखा तब हरनाथ मण्डलगढ़ लौट गया था। उस दिन रात को नशे के वश में आकर जब अचेत हो गया था तब उससे क्या कहा था, यह कुछ भी मुझे स्मरण नहीं था। ऐसी दशा में उस सम्बन्ध में मैं खोज ही खबर क्या लेता?

"क्वार का महीना था। दुर्गापूजा समीप थी। देवताओं के दालान में प्रतिमा बनने लगी थी। सामने के मैदान में नाटक होने-वाला था, अतएव स्टेज आदि बँध रहा था।

"साँझ को लोग अपना-अपना कार्य समाप्त करके चले गये थे। मैं अकेला ही घूम-घूम कर देख रहा था कि स्टेज कैसा बँध रहा है। मेरे पास आदमी अधिक नहीं थे।

"एकाएक मैदान के अँधेरे में से एक लम्बा-सा आदमी दानव

के समान बाण के वेग से दौड़ता हुआ आया, उसके हाथ में एक छुरा था, उजाला लगने से वह चमचमा रहा था।

"उस आदमी को इतने वेग से आता हुआ देखकर मैं बहुत ही भयभीत हुआ और चिल्ला उठा। उसी समय दो नौकर दौड़ आये और छुरा-सहित उसका उठता हुआ हाथ पकड़ लिया।

"मेरे नौकरों को धक्के देकर जिस समय वह अपने को छुड़ाने का प्रयत्न कर रहा था, उस समय अपनी व्याकुलता जरा-सी दूर करके देखा—वह वही मंडलगढ़ का बदमाशों का सरदार राम-गोविन्द था।

"उसके कपड़े मैले थे। बाल रूखे और बिखरे हुए थे, आँखें जवाकुसुम के समान लाल थीं, आँखों के भीतर से मानो आग की लपटें निकल रही थीं।

"मैं अवाक् होकर ताकता रह गया। मेरी ओर ताक कर उसने रुँधी हुई आवाज से कहा—दुरात्मा, नरपिशाच, आज बच गये हो, इससे यह न समझना कि अब मेरी विपत्ति दूर हो गई। मेरे शरीर में जब तक प्राण रहेंगे तब तक तुम्हारा रक्त-पान करने की तृष्णा निवृत्त न होगी। तुम्हारी भलाई के लिए मैं तुम्हें जो सत्परामर्श देने आया था उसके बदले में आज एक वर्ष से तुम मेरी तरह-तरह की दुर्दशा करते आये हो, अन्त में मुझे कहीं का न रहने दिया ! आज मेरी यह दशा हो गई है कि घर में मुट्ठी भर भी अन्न नहीं है, जीवन धारण करने का कोई अवलम्ब नहीं है ! परन्तु इतने पर भी तुम्हें सन्तोष नहीं हुआ। तुमने मेरे हृदय में नरक की अग्नि जला दी है ! इसका फल तुम्हें किसी न किसी दिन भोगना ही पड़ेगा। रामगोविन्द को मित्रभाव से तुम नहीं ग्रहण कर सके, शत्रुभाव से ग्रहण किया है ! अच्छी बात है, यही सही, फिर मुलाक़ात होगी।

"उसके शरीर में कितना असीम बल था ! एक बार

शरीर की सारी शक्ति संचित करके उसने जैसे ही धक्का दिया, उसका हाथ जो पकड़े हुए था वह चक्कर खाकर गिर पड़ा। निमेष-मात्र में ही दूसरे व्यक्ति को भी एक लट्ठ जमाकर न जाने कहाँ रफूचक्कर हो गया। फिर उसकी छाया तक कोई नहीं देख पाया।

"कुछ देर तक मैं भौंचक्का-सा खड़ा रहा। तो क्या हरनाथ जो-जो कह रहा था वह सब सच है ? बिना किसी कारण के भी अपूर्व मित्र ने इन लोगों को मेरा प्राणवध करने के लिए नियत कर रक्खा है ? परन्तु यह आदमी, जो इतने करुण किन्तु रोषमय शब्दों में बहुत-सी बातें कह गया है उन्हीं का क्या तात्पर्य है ? घर का पैसा ख़र्च करके मैंने जब ज़मींदारी मोल ली है तब उस पर दख़ल जमाने का प्रयत्न न करके बेवक़ूफ़ की तरह उन्हीं लोगों को सौंप देनी पड़ेगी ? हम लोग तो कोई अनुचित बात कर नहीं रहे है ! आज ही इन लोगों के नाम थाने में रिपोर्ट कर आना होगा। दिन-दिन ही मामला बढ़ता जा रहा है।

"मेरे दोनों नौकर उस समय भी वहीं खड़े थे। उनको बुलाकर मैंने कहा—यह क्या बात है रे नफ़रा ? यह आदमी अकारण ही मेरी हत्या करने क्यों आया ?

"उन दोनों ने मस्तक नीचा कर लिया। जान पड़ता था कि वे लोग कुछ कहना चाहते हैं। मैंने फिर पूछा—बोलते क्यों नहीं ? यदि कुछ जानते हो तो साफ़-साफ़ बतलाते क्यों नहीं ?

"नफ़रा ने कहा—सरकार, तीन दिन हुए, उनकी स्त्री तालाब में डूब कर मर गई है।

"मेरा सारा शरीर न जाने कैसे काँप उठा ! रामगोविन्द की स्त्री ? ऐसी तरह की कोई बात मुझे ज़रा-ज़रा याद आती थी, किन्तु ठीक-ठीक निश्चय नहीं कर पाता था। मैंने कहा—क्यों मरी ? क्या तुम लोगों को मालूम है ?

"उन दोनों ने फिर मस्तक झुका लिया और बहुत ही कुंठित भाव से कहा—सरकार, गुमास्ता साहब सब जानते हैं।

"मैंने कहा—जाओ। बुला लाओ। मेरी बैठक में भेजना। देखना, देरी न होने पावे।

"वे दोनों दौड़ते हुए चले गये। मैं भी कमरे में आकर बैठा। शशिभूषण सिपाही से सुना कि जब मैं कलकत्ता गया था तब एक दिन हरनाथ ने मेरे सभी नौकरों और सिपाहियों को लेकर रामगोविन्द के घर का दरवाजा तोड़ डाला था, और उसकी स्त्री को यहाँ पकड़ ले आया था। इस कमरे में ही उन्होंने उसे रात भर रोक रक्खा था। उस दिन रामगोविन्द किसी कार्यवश कहीं दूसरे गाँव में गया था। सवेरे हरनाथ ने जैसे ही उसकी स्त्री को छोड़ा, वह और किसी ओर भी न जाकर सीधे पिछवाड़ेवाले तालाब में कूद पड़ी। दूसरे वक्त जब उसका शरीर उतराया तब सब लोगों ने देखा। इस सम्बन्ध में हरनाथ को दो-एक आदमियों ने भला-बुरा भी कहा था; किन्तु उन्होंने उत्तर दिया कि बाबू साहब की आज्ञा से ही मैंने ऐसा किया है, स्वयं अपनी इच्छा से मैंने कुछ नहीं किया। यह सुनकर कोई और कुछ कहने का साहस नहीं कर सका।

"अब सारी बातें मुझे याद आ गईं। हरनाथ ने मेरी सम्मति किस तरह और कैसी अवस्था में ली थी, यह भी धीरे-धीरे याद आ गया। लज्जा, घृणा और पश्चात्ताप से मेरी अन्तरात्मा जली जा रही थी। मैंने यह क्या किया? मेरे कारण एक निरपराध स्त्री ने इस तरह अत्याचार सहकर प्राणत्याग किया! मैं ही इस स्त्री की हत्या का कारण हूँ! रामगोविन्द से मेरी कितनी ही शत्रुता क्यों न हो, उसका बदला मुझे रामगोविन्द से ही लेना चाहिए। उसकी स्त्री ने मेरा क्या बिगाड़ा था, जो मैंने उसे तना कठोर दण्ड दिया? मैं स्वयं चाहे कितना भी पतित होऊँ, मेरे द्वारा कभी

किसी स्त्री की मर्यादा नहीं नष्ट हुई। और उस दिन हरनाथ के भुलावे में आकर मेरे दिमाग़ में यह कैसी राक्षसी बुद्धि आ गई कि मैंने इतने बड़े अनुचित कार्य के लिए अनायास ही सम्मति देकर यह अनर्थ करवा दिया ?

"सारी रात सैकड़ों बिच्छुओं के डंक की-सी ज्वाला सहते-सहते कटी। सवेरा भी न हो पाया था कि सीधे मंडलगढ़ की ओर चल पड़ा, किसी से कुछ कहा-सुना नहीं। यह सुबुद्धि यदि और कुछ दिन पहले आई होती तो इतनी बड़ी शोकमय घटना न होती।

"बिना किसी तरह की सूचना दिये ही मैं इतने सवेरे जब एकाएक मंडलगढ़ में जा पहुँचा तब मुझे देखकर हरनाथ न जाने कैसे उद्विग्न-सा हो उठा।

"किसी तरह की भूमिका न बाँध कर मैंने एकदम से ही छेड़ दिया और उससे सारा हाल विस्तारपूर्वक बतलाने को कहा।

"उसने कहा—तुमने जो कुछ सुना है वह सब सच ही है। उस दिन मुक़दमा जीतने पर रामगोविन्द ने जैसी दुष्टता की थी उसके कारण मेरी आत्मा भीतर ही भीतर धधक रही थी। उसे दण्ड देने के लिए मैंने एकाएक एक कार्य कर डाला, किन्तु अब देखता हूँ कि वह कार्य अच्छा नहीं हुआ। मेरा भी चित्त बहुत दुखी हुआ। "यह स्त्री भी इतनी-सी बात पर एक ऐसा अनर्थ कर बैठेगी, यही मैं कैसे जान सकता था ? मैंने तो उसे आँख उठाकर देखा भी नहीं। सिपाहियों ने उसे कमरे में बन्द कर रक्खा था, छोड़ते ही यह हाल हो गया।

"हरनाथ की बातों का मुझे विश्वास न हुआ। उसकी बोली में और चेहरे पर पहले की-सी तेजी ज़रा भी न थी। मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो डर के मारे यह सब असत्य कह रहा है।

"ज़रा देर चुप रहकर उसने कहा—यह बात मैंने तुमसे भी कही थी। उस समय यदि तुमने रोक दिया होता तो भी यह

अनर्थकारी घटना न होती। परन्तु उस समय तुम्हारी भी बुद्धि काम नहीं दे सकी।

"मैंने डाँटकर उग्र स्वर में कहा—व्यर्थ की बातें मत बनाओ। तुम्हारे मन में सदा से ही इस तरन की कुबुद्धि वर्तमान थी, केवल अपनी बचत के लिए मेरे मुँह से यह बात निकलवा लेने की आवश्यकता थी। वह भी किस तरह और कैसी अवस्था में निकल-वाई थी, तुम स्वयं भी उस बात को अच्छी तरह जानते हो। ऐसे कौशल से अब तुम्हारे सत्कर्म छिपे न रह सकेंगे।

"हरनाथ को दफ्तर में वैठे रहने को कहकर मैं निकल पड़ा। रास्ते में ही गाँव के कई प्रतिष्ठित गृहस्थों से मुलाकात हो गई। मेरा परिचय पाते ही वे लोग बड़ी नम्रता और आदर के साथ मुझे अपने घर पर ले गये और आसन दिया। तब बात ही बात में एक-एक करके सभी बातें प्रकट हो गईं।

"यहाँ आते ही हरनाथ ने दीन और भोले-भाले असामियों को तरह-तरह से तंग करके उन पर अत्याचार करना आरम्भ कर दिया। रामगोविन्द तथा कुछ और समझदार आदमियों ने जब उसकी इस धाँधली के विरुद्ध आवाज उठाई तब और असामियों को छोड़कर वह इन्हीं लोगों को अपनी समस्त शक्ति से उत्पीड़ित करने लगा। अन्त में सभी लोग परास्त होकर बैठ गये, उसके विरुद्ध मुँह खोलन का साहस किसी में नहीं रह गया। वे सभी तो शान्ति-प्रिय गृहस्थ थे, रात-दिन अपने बाल-बच्चों और घर-गृहस्थी की चिन्ता में ही पड़े रहते थे। कितन दिन दूसरों के पीछे झगड़ा-झंझट करते फिरते? आखिर उन्हें अपना भी काम-काज तो सँभा-लना था। परन्तु रामगोविन्द था बड़ा त्यागी आदमी! न्याय की रक्षा के लिए मर मिटना उसी का काम था। इसके अतिरिक्त जो बात वह अपने मन में ठान लेता था उसके लिए कमर कस कर तैयार हो जाता और आदि से अन्त तक समान अध्यवसाय से

लड़ता रहता। हरनाथ के साधारण से अत्याचार की भी उससे उपेक्षा नहीं की जाती थी। परिणाम यह हुआ कि पहले तो आपस में दोनों आदमियों से कहा-सुनी हुई, बाद को धीरे-धीरे कुत्ते-जोगी का-सा वैर हो गया। हरनाथ ने देखा कि रामगोविन्द को जब तक यहाँ से न निकाल पाऊँगा तब तक अपना सिक्का अच्छी तरह से जमा कर रहने की आशा करना व्यर्थ है। तब वह रोज़ नये-नये मामले-मुक़द्दमे गढ़कर उनमें रामगोविन्द को फँसाने लगा। इस तरह धीरे-धीरे करके एकदम से उसकी जड़ काट दी। बीच में एक बार मुझसे मुलाक़ात करके रामगोविन्द ने इस विरोध का अन्त करने की चेष्टा की थी, यह बात भी उन लोगों के मुँह से सुनने में आई थी।

"रामगोविन्द मेरे पास तक शिकायत करने के लिए पहुँच गया था, यह सुनकर हरनाथ की क्रोधाग्नि और भी भभकी। उसके विरुद्ध मुझे भी उभाड़ने के लिए हरनाथ ने कितनी बातें बना-बना कर मुझसे कहीं। मेरी हत्या करने की सलाह, मुझसे अपूर्व मित्र की चिढ़, असामियों को बहकाने के लिए रामगोविन्द के उद्योग से लेकर मुक़द्दमा जीतने पर बाजे बजवाने और मुझे गालियाँ देने की बात, यह सभी हरनाथ की कल्पना थी। स्वयं अपनी कुप्रवृत्ति को चरितार्थ करने तथा रामगोविन्द को मर्मान्तिक क्लेश देने के लिए उसने शेषोक्त कृत्य किया था।

"दफ़्तर में लौट कर आने पर फिर वह नहीं दिखाई पड़ा। उसने जैसे ही मुझे यहाँ आते देखा, वैसे ही समझ गया कि मेरी सारी कारसाजी अब खुल जायगी, इससे वह गाँव छोड़कर भाग निकला।

"रामगोविन्द की मैंने बड़ी खोज की, किन्तु वह अपने दुध-मुँहे बच्चे असित को लेकर उस रात को ही न जाने कहाँ चला गया था, इसका कोई पता नही चल सका।

"मैं समझ गया। पहले उसकी धारणा थी कि यह सब अन्याय-अत्याचार हरनाथ के ही मस्तिष्क की उपज है, इसी लिए वह मेरे पास गया था कि सारी बातों की जाँच करके मैं स्वयं सारा झगड़ा मिटा दूँ और सब लोगों की शिकायतें दूर करके असामियों में शान्ति स्थापित करूँ। परन्तु उसके बाद भी जब मैं मंडलगढ़ नहीं गया और हरनाथ की दुष्टता क्रमशः बढ़ती ही गई तब उसे इस बात का पूर्ण विश्वास हो गया कि हरनाथ मेरा नियुक्त किया हुआ एक नौकर भर है। वह स्वाधीन भाव से कोई कार्य नहीं करता। वह मेरी आज्ञाओं और उपदेशों का पालन भर करता है। हरनाथ जानबूझ कर सारा अपराध मेरे ऊपर डालने के ही लिए मेरे यहाँ के सारे नौकरों को ले गया था और रामगोविन्द का दरवाजा तोड़कर उसकी स्त्री को निकाल ले आया। मंडलगढ़ के दफ्तर-वाले मकान में यदि वह उसे रोक रखता तो उसका अपराध हरनाथ के ऊपर जा सकता था, इसीलिए, तीन-चार कोस का रास्ता पार करके मेरे यहाँ ले आया और मेरे ही बैठने के कमरे में उसे बन्द किया! छुटकारा मिलने पर वह स्त्री मेरे ही पिछवाड़े के तालाब में डूब कर मरी भी है। इन्हीं सब बातों से रामगोविन्द को विश्वास हो गया कि इन सब बातों का कर्त्ता-धर्ता मैं ही हूँ। उस दिन मैं कलकत्ते में था, यह वह नहीं जान सका।

"इतने समय में सारा मामला अच्छी तरह मैं समझ सका। उस दिन सन्ध्या के अन्धकार में लपलपाता हुआ छुरा लेकर राम गोविन्द ने मेरा पीछा क्यों किया था, यह सभी बातें अब मैं अच्छी तरह समझ गया था। किन्तु बिलम्ब अधिक हो चुका था, समझने से कुछ फल न हुआ।

"अब मंडलगढ़ के तालुके का विरोध मिटने में बिलम्ब नहीं हुआ। वहाँ का सारा प्रबन्ध खूब अच्छी तरह करके अनुतप्त और मर्माहत हृदय से मैं घर लौट आया।

"उसके बाद मैं मैंने सभी बन्धु-बान्धवों का संसर्ग तथा आमोद-प्रमोद सभी कुछ त्याग दिया। उसी दिन से मैं स्वयं अपना सारा काम-काज देखने लगा। इलाक़े में गाँव-गाँव में घूम कर मैं कर्मचारियों के कार्यों का निरीक्षण करता, और असामियों की अवस्था के सम्बन्ध में भी जाँच-पड़ताल करता। कुछ दिनों के बाद घर में तुम्हारी मा आईं। उसके थोड़े ही दिन बाद भगवान के आशीर्वाद के रूप में तुमने भी आकर मेरे सूने और आनन्दहीन घर को आनन्द-कलरव मे परिपूर्ण कर दिया।

"सभी कुछ हुआ, किन्तु मैं अपनी मानसिक शान्ति फिर न लौटाल पाया। दारुण आत्मग्लानि और पश्चात्ताप के कारण मेरी अन्तरात्मा जल उठती—मेरी ही असावधानी से रामगोविन्द-जैसे विवेकशील तथा उदारचेता व्यक्ति को इस तरह के पैशाचिक अत्याचार सहने पड़े, मेरे ही कारण उन्हें अपनी पतिप्राणा पत्नी के जीवन से हाथ धोना पड़ा और वे दाने-दाने के लिए मुहताज होकर असह्य वेदना हृदय में लिये हुए देश छोड़ कर भाग गये, यह बात किसी तरह भी मुझे नहीं भूलती थी। तुम्हारी मा के मुस्कराते हुए सुन्दर और पवित्र मुँह की ओर ताकते ही मुझे रामगोविन्द की सुशील सहधर्मिणी की याद आजाती। अपनी गोद में पा जाने पर तुम्हें ज्यों ही प्यार से चिपका कर दुलारने लगता, त्यों ही मेरा हृदय बालक असित के लिए व्याकुल हो उठता। उसी फूल से भी कोमल छोटे-से बच्चे को लेकर उसका पिता पागल की भाँति निराश्रय होकर कहीं मारा-मारा फिरता होगा! ये सब बातें याद आने पर मैं और किसी ओर किसी भी काम में चित्त न लगा पाता।

"मेरा यह मानसिक रोग और अशान्ति दिन-दिन बढ़ने लगी। गम्भीर रात में सोते-सोते मैं डर के मारे चिल्लाकर जाग उठता—स्वप्न में मानो रामगोविन्द लाल-लाल आँखें निकाल कर छुरा

लिये हुए मेरी ओर दौड़ा आ रहा है। पसीने से सारा शरीर भीग जाता। मैं उठ बैठता और बड़ी देर तक थर-थर काँपता रहता। कुछ दिनों के बाद यही सब सोचते-सोचते मेरा दिमाग़ तक ख़राब हो चला। बाद को सोते-जागते सदा ही मुझे उसका वही लम्बा डील-डौल, चेहरे की वही रुक्षता तथा कालाग्नि की शिखा के समान अग्निमय नेत्र, हाथ में वही तेज़ छुरा, दिखाई पड़ता। जान पड़ता, मानो वह उल्का के समान वेग से मेरी ओर दौड़ा आ रहा है। मुझे अपना जीवन भार-सा मालूम पड़ने लगा। तब और कोई उपाय न देखकर अपनी सारी सम्पत्ति की देख-रेख का भार एक उपयुक्त व्यक्ति पर छोड़ कर तुम लोगों के साथ मैंने अपना निवासस्थान त्याग दिया।

"बेटी निर्मला, मेरे कलंकित जीवन का यही शोचनीय और विस्तृत इतिहास है। इसके बाद से मेरे जीवन में छिपाने या लज्जित होने के योग्य कोई भी बात नहीं है। प्रथम अवस्था में बुद्धि के दोष से एक दिन जो अन्याय किया था, उसी का दुष्परिणाम भोगते-भोगते सारा जीवन व्यतीत कर दिया। आज तक शान्ति नहीं पा सका।

"यहाँ आकर बिलकुल नये देश, नये साथी-संगी, और नई परिस्थिति में पड़ने के कारण मेरा समस्त मानसिक रोग बहुत कुछ दब गया, किन्तु हृदय के भीतर से वह सर्वथा निर्मूल नहीं हुआ। मैं हर पाँच वर्ष के बाद देश जाकर रियासत का हिसाब आदि समझ आता। रामगोविन्द की जितनी भर सम्पत्ति मामले-मुक़दमे में ऋण के कारण और हरनाथ के षड्यन्त्र से नष्ट हुई जा रही थी वह सब फिर पहले की तरह बनाकर उसका पक्का बन्दोबस्त कर दिया है। पचीस वर्ष में उसकी सम्पत्ति और नक़द रुपया मिलाकर एक अच्छे ज़मींदार की-सी हैसियत का हो गया है। उसके मकान की भी प्रतिवर्ष मरम्मत करवाता आया हूँ, जिससे

वह अभी तक बहुत अच्छी दशा में है । उसकी भी देख-रेख का भार वहीं के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति पर छोड़ रक्खा है । यह सब मैंने इसी लिए किया है कि किसी दिन असित मिल जायगा तो इसका वह उपभोग करेगा । मेरे भय से हरनाथ अपना रुपया-पैसा लेकर घर भागा जा रहा था, रास्ते में नाव डूब जाने के कारण वह मर गया। यह खबर मुझे मिल गई थी, किन्तु रामगोविन्द और असित के सम्बन्ध में बहुत खोजने पर भी कोई समाचार नहीं पा सका ।

"पचीस वर्ष इसी तरह बीत चले थे । उन दोनों का समाचार पाने की आशा जब हृदय से प्रायः लुप्त हो चुकी थी, उसी समय एक दिन पटना के जंगल में एकाएक असित से मुलाक़ात हो गई। मेरा परिचय पाते ही उसकी दृष्टि में जिस तरह की अग्नि की ज्वाला जल उठी थी, उसी से मैं समझ गया कि रामगोविन्द समस्त जीवन में भी मेरे प्रति प्रतिहिंसा का भाव भूल नहीं सका । असित के सज्ञान होते ही उसके पिता ने सारी बात उसे समझा-बुझा दी है । उसकी उस भयंकर प्रतिहिंसा की ज्वाला उसकी सन्तान के मर्म-मर्म में धधक रही है ! उसकी वह शिक्षा, वह उपदेश, कभी निरर्थक न होगा ।

"उसी दिन से मेरे हृदय में उस दीर्घ अतीत की स्मृति नवीन भाव से जाग्रत हो उठी है । वह अशान्ति, वह विभीषिकामय मृत्यु का चित्र, अब मैं किसी तरह नहीं भुला पाता हूँ । मैं जानता हूँ कि शायद किसी आकस्मिक क्षण में असित के हाथों से ही मेरी मृत्यु निश्चित है । तो भी उसके लिए मैं किसी को दोषी नहीं ठहराना चाहता हूँ । मैं जानता हूँ कि यह दण्ड पाना मेरे लिए न्यायसंगत ही है । उन लोगों के सुख-शान्तिपूर्ण गृह में क्या मैंने नरक की अग्नि नहीं जला दी ?

"जिसके हाथ में बहुत-से आदमियों के सुख-दुःख का भार रहता

है, वह यदि अपनी अयोग्यता और आलस्य के कारण उस कर्त्तव्य का पालन न कर सके तो उसका धर्म है कि वह उस पद या ऐश्वर्य से पृथक् हो जाय। मैंने तो वैसा किया नहीं बेटी! आज मैं सारा दोष हरनाथ के मत्थे मढ़कर और अपने को निर्दोष कहकर हृदय को कैसे समझाऊँ? हरनाथ को अन्याय करने का अवसर और सुविधा मैंने दी थी। तभी तो वह इस तरह का उपद्रव कर सका था। सारा अपराध मेरा ही है। मेरे हृदय में यह दृढ़ धारणा है कि अब दंड ग्रहण करने का समय आ गया है। यदि ऐसा न होता तो इतने दिन के बाद असित से फिर क्यों मुलाक़ात होती? वह मुझे अपना परम शत्रु समझने की शिक्षा ही जीवन भर पाता आया है। यही कारण है कि मेरे विरुद्ध उसके हृदय का सारा क्रोध, घृणा, विरक्ति और प्रतिहिंसा उद्दीप्त हुई है! परन्तु वह यदि जानता कि इतने दिनों से कितने आग्रह और कितनी आशा से मैं उसका और उसके पिता का अनुसन्धान करता आया हूँ!

"भाग्य यदि विपरीत न होता तो अपनी एकमात्र कन्या के बदले में उसे पाकर मैं पुत्र का अभाव दूर कर पाता, इस अन्तिम अवस्था में वह मेरे जीवन का अवलम्बन और आश्रय-स्वरूप हो सकता। बेटी, दुर्दैव हम लोगों का सम्बन्ध जिस तरह निर्दिष्ट करता आ रहा है, कार्यक्षेत्र में वह वैसा ही तो रहेगा!

"किन्तु तो भी उससे मुलाकात करने और उसे सारी परिस्थिति समझाने का साहस मुझमें नहीं है। वह कहाँ है, यह भी मुझे मालूम नहीं है। इसी लिए ये सारी बातें मैं लिखे जाता हूँ बेटी! किसी दिन यदि उससे मुलाक़ात हो तो उसे यह पत्र दिखलाना और कहना कि वह अपनी सारी रियासत का हिसाब-किताब समझ ले। साथ ही यह भी कहना कि यदि वह कर सके तो इस अनुतप्त वृद्ध को अपने हृदय से क्षमा कर दे। अपने पिता का सारा हाल जानकर तुम भी उसे क्षमा कर देना बेटी! भगवान्

तुम लोगों को सुखी रक्खे, मैं तुम्हें और उसे, दोनों को आशीर्वाद देकर जा रहा हूँ।"

( ४९ )

मिस्टर घोष की सुविस्तृत आत्मकथा समाप्त करके असित कुछ क्षण तक निस्तब्ध दृष्टि से ताकता रहा। निर्मला भी इतनी देर तक पत्थर की मूर्त्ति-सी बैठी हुई असित के मुँह से पिता की जीवनगाथा तन्मयता के साथ सुन रही थी, पत्र का अन्तिम अंश सुनते सुनते उसके नेत्रों से आँसू गिरने लगे। मिस्टर घोष के शोकमय जीवन की स्मृति उन दोनों ही की अन्तरात्मा में मर्मान्तिक वेदना जाग्रत करके उन्हें उद्विग्न कर रही थी।

अंचल से नेत्रों का जल पोंछ कर निर्मला ने रुंधे हुए कंठ से कहा—मेरे पिता, मेरे इस तरह के देवता-जैसे पिता ने इस तरह का दुःख और यातना भोग करके अपने जीवन का एक एक दिन व्यतीत किया है! सर्वथा निर्दोष होते हुए भी वे चित्त में एक दिन भी शान्ति न पा सके। जब कभी उनकी दशा याद आती है तब हृदय को विदीर्ण करके नेत्रों में केवल आँसू ही आते हैं।

विषादमय और गम्भीर मुख से एक लम्बी साँस लेकर असित ने कहा—अब मुझे किसी पर किसी प्रकार का क्रोध या दुःख नहीं करना है निर्मला। संसार की लीला देखते देखते मेरे हृदय में अब यह दृढ़ धारणा हो गई है कि मनुष्य अच्छा या बुरा कोई भी कर्म स्वयं अपनी इच्छा-शक्ति से नहीं कर सकता। वह पृथ्वी पर जिस दिन पैर रखता है, उस दिन से लेकर जीवन के अन्त तक किसी एक अदृश्य और प्रबल शक्ति के हाथ का खिलौना भर बनकर रहता है; स्वयं उसकी कोई स्वाधीन सत्ता नहीं रहती। तरह तरह का दुःख सहते सहते, कितनी आशाओं से वंचित होकर जगह जगह की ठोकरें खाते खाते मुझे यह ज्ञान हुआ है। किसके

कारण कौन दुःख पाता है, किसकी आशा की वस्तु किसके हाथ में चली जाती है, क्यों जाती है, क्या होता है, संसार की इन सब दुरूह समस्याओं का हम कोई भी समाधान नहीं कर पाते। केवल एक दूसरे को दोष देकर परस्पर मारपीट और लड़ाई-झगड़ा भर करते रहते हैं।

इन्हीं मिस्टर घोष को देखो। वास्तव में उन्होंने एक दिन भी तो मुझे हानि पहुँचाने की इच्छा नहीं की। उनके साथ मेरा वैर-विरोध तो दूर रहा, हम दोनों ने एक दूसरे को कभी आँख से देखा तक नहीं। तो भी देखो, उन्हीं को निमित्त मान कर इतने दिनों तक कैसी कैसी भयंकर घटनायें होती रहीं और एक साथ ही कितने व्यक्तियों का जीवन नष्ट हो गया।

मेरी मा एक पतित आदमी से लांछन सहकर आत्महत्या करने के लिए बाध्य हुई; मेरी घर-गृहस्थी और धन-सम्पत्ति सब चौपट हो गई; मेरे पिता असह्य अपमान और निरर्थक प्रतिहिंसा की अग्नि से जल-भुन कर असीम क्लेश सहते हुए पथ्य और चिकित्सा के बिना रास्ते में मर गये; घर रहकर मनुष्य बनने पर मेरा जीवन जिस प्रकार गठित होता, वैसा न हो पाया, जगह जगह की धूल छानते छानते मैं एक और ही प्रकार का जीव बन बैठा। मिस्टर घोष भी आजन्म दारुण मनोव्यथा सहन करते करते अन्त में अकाल-मृत्यु का वरण करने के लिए बाध्य हुए; और सबसे बढ़कर आश्चर्य की बात यह है कि बीच में आकर तुम भी हम लोगों के इस जाल में फँस गई हो। जिन लोगों को कभी देखा तक नहीं, जिन लोगों का नाम तक कभी तुम्हारे कानों में नहीं पड़ा, उन्हीं लोगों के जीवन की घटनाओं में पड़कर तुम्हारा भी भाग्य निरूपित हो गया। तुम्हारे इस तरुण जीवन की कली विकसित भी न हो पाई कि मुरझा गई।

स्थूल दृष्टि से विचार करने पर इन सब अनर्थों का उत्तर-

दायित्व मिस्टर घोष के मत्थे मढ़ा भी जा सकता है, परन्तु वास्तव में क्या कभी उन्होंने इस तरह की कल्पना भी की थी ? इस विषय में जैसे हम लोग निर्दोष हैं, क्या वैसे ही वे भी नहीं हैं ?

असित और निर्मला दोनों ही कुछ देर तक निस्तब्ध रहे। बाद को असित ने फिर कहा—मेरा भी भाग्य बड़ा खोटा है निर्मला ! बचपन में माता की मृत्यु हो जाने के बाद से कितने दुःख, कितने बड़े-बड़े तूफ़ान, मेरे मस्तक पर से होकर निकल गये हैं, इसे समझाने की शक्ति मेरी वाणी और शब्दों से परे है। सबसे बढ़कर दुःख मुझे इस बात का रहा कि जीवन में मैं कहीं जरा सा भी स्नेह, जरा सा भी प्रेम नहीं उपलब्ध कर सका। पिता जी शायद मुझसे स्नेह करते थे, किन्तु उनका वह स्नेह बाहर से कुछ मालूम ही नहीं पड़ता था। जान पड़ता है कि तरह तरह का दुःख-क्लेश सहते सहते उनका हृदय पत्थर हो गया था। उनसे केवल शिक्षा और उपदेश तथा विरक्ति और तिरस्कार को छोड़कर मैं अधिक कुछ भी नहीं पा सका। तो भी वे जब तक थे तब तक एक सहारा तो था ? उनके भी दिवंगत हो जाने पर मैं सर्वथा मार्ग का भिखारी हो गया। केवल रास्ते रास्ते भटक भटककर जिनका जीवन व्यतीत होता है, जिन्हें स्नेह और प्रेम प्राप्त करने का कहीं जरा भी उपाय नहीं होता, उन लोगों के ही समान मेरी भी प्रकृति दिन दिन शुष्क और नीरस हो उठी थी। रात-दिन केवल काम ही काम की न रहती। शुष्क-कर्तव्य ज्ञान के अतिरिक्त मेरे जीवन में और कुछ था ही नहीं। तुम्हें जिस दिन मैंने देखा था निर्मला, उस दिन मेरा जीवन एक नवीन मार्ग का प्रकाश देख सका। फिर मैं नये ढंग से सब बातों को सोचने-समझने लगा। मेरे जीवन की गति एक नये मार्ग से प्रवाहित हो उठी।

किन्तु तो भी देखो, मेरे-जैसे अभागे के लिए भी, जो सारी सुख-सुविधाओं से वंचित हो चुका है, स्नेह की एक ऐसी धारा

छिपी थी और मैं जीवन में उसका कभी सन्धान ही नहीं पा सका। सभी कुछ हो सकता था, धन-ऐश्वर्य, आमोद-प्रमोद तथा स्नेह-ममता आदि सभी कुछ पा सकता था। साथ ही सबसे अधिक प्रिय और कामना की वस्तु—तुम्हें—एकमात्र जिसकी मुझे अभिलाषा है, आसानी से प्राप्त कर सकता था! यह सब तो इस समय भी प्राप्त कर सकता हूँ, किन्तु अब तो वह सब होना नहीं है निर्मला! यह माना कि तुम्हारे पिता ने कुछ किया नहीं, फिर भी मेरे माता-पिता के सारे अपमान और दुःख के कारण तो वे ही हैं। इसके अतिरिक्त हृदय से सारा क्रोध और प्रतिहिंसा का भाव निकाल देने पर भी कार्यतः मिस्टर घोष की हत्या का कारण मैं ही हूँ। हम दोनों क्या कभी यह बात भूल सकेंगे? हम दोनों के मिलन से, हम दोनों के पास पास रहने से, क्या हर समय ये दुखमय घटनायें याद आ-आकर हम दोनों के ही जीवन को शोकाकुल न करती रहेंगी? इसी से कहता हूँ कि जो सौभाग्य का समय आने पर जीवन शायद धन्य हो जाता, आज उसका तो कोई उपयोग ही नहीं हो सकता। आज हम लोगों के जीवन का मार्ग जटिल और दुर्गम है, साथ ही तरह तरह की समस्याओं से पूर्ण है। आज अब उसके सम्बन्ध में समाधान या मीमांसा करने की चेष्टा करना निरर्थक है।

निर्मला मुँह नीचा किये हुए चुपचाप रो रही थी, वह कुछ बोली नहीं।

कुछ देर के बाद असित फिर कहने लगा—मनुष्य का हृदय दूसरे के हृदय को कितने आश्चर्यजनक भाव से आकर्षित करता है निर्मला, यही सोच-सोच कर मैं अवाक् हो जाता हूँ। आज मैं मिस्टर घोष की जीवन-घटनायें पढ़कर सारी बातें जान पाया हूँ। किन्तु जिस समय मैं यह कुछ भी नहीं जानता था, और अपने सारे दुःखों का उत्तरदायी उन्हीं को मानता था, उस समय अनेक

प्रयत्न करके भी उनके प्रति हिंसा या क्रोध को हृदय में नहीं ला पाता था। अपनी इस असमर्थता के लिए मैंने अपने को कितने बार धिक्कारा था, कापुरुष समझ कर मुझे अपने आप पर घृणा हो गई थी, किन्तु तो भी उनका वह स्नेह और वत्सलता से भरा हुआ मुख देखकर, जिस पर आनन्द की रेखा सदा विराजमान रहती थी, मेरा समस्त प्रतिहिंसा का भाव और क्रोध जहाँ का तहाँ हो जाता, मन में आता कि भला ऐसे व्यक्ति के द्वारा ऐसा नृशंसतापूर्ण कार्य भी हो सकता है ? मेरे अन्तःकरण में उनके प्रति कुछ विशेष क्रोध नहीं था। किन्तु घटनाचक्र से वे जान गये और यह बहुत कुछ सत्य भी है कि उनका हत्याकारी मैं ही हूँ। उस दिन मैंने समझा था कि ज्वर के अधिक आवेग के कारण हृदय की गति रुक जाने से उनकी मृत्यु हुई है। परन्तु आज मुझे ज्ञात हुआ कि बात वास्तव में ऐसी नहीं थी। वे मेरी ओर से सदा ही शंकित और भयभीत रहा करते थे, अतएव उस दिन जैसे ही मैं उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ा, मुझे देखकर भय से ही उनके प्राण निकल गये। कितने आश्चर्य और दुःख की बात हो गई !

एकाएक घड़ी की ओर दृष्टि जाते ही असित चौंक कर उठ खड़ा हुआ। उसने कहा कि बात ही बात में बहुत रात बीत चली है। आज रात की गाड़ी से ही मुझे बहुत दूर जाना है। तो अब चलता हूँ निर्मला, एक जगह स्थिर होकर जैसे ही मैं बैठ पाया, वैसे ही तुम्हें किसी न किसी प्रकार सूचना दूँगा।

निर्मला ने मुँह उठाकर कहा---पिता जी की चिट्ठी में तो सब देख लिया कि तुम्हारे ही पास इतना रुपया-पैसा और घर-द्वार है। अब तुम्हें गली-गली भटकने की क्या आवश्यकता है ? वहाँ का सारा काम-काज समझ लो और आनन्द से रहो। इस तरह भी तो तुम्हें किसी प्रकार का क्लेश नहीं हो सकता।

असित ने जरा-सा हँसकर कहा---यह सब अब नहीं होता

निर्मला । ऐसे भी दिन बीते हैं जब कि दस-बीस रुपये एक साथ हाथ में आ जाने पर मैं अपना बड़ा भाग्य समझता था । किन्तु अब ? अब मुझे स्वयं अपने लिए तो रुपयों की कोई आवश्यकता नहीं रह गई । इसके अतिरिक्त जैसा कि उस दिन मैंने तुमसे कहा था, तुम्हें याद है न ? हमारा एक दल है । वह एक ऐसे विद्रोह का आयोजन कर रहा था जो देशव्यापी रूप धारण कर सके । दल के एक आदमी की विश्वासघातकता के कारण यह बात पहले ही अधिकारियों के कानों तक पहुँच गई, इससे सारा भेद प्रायः खुल गया । अब चारों ओर गिरफ्तारियों की धूम है । हम लोगों में से अधिकांश पकड़ लिये गये हैं । सिपाहियों में से बहुतों को फाँसी हो गई । हम दो-चार आदमी इस समय भी जगह जगह छिटक कर अपने को छिपाये हुए हैं । तो भी पुलिस हम लोगों को घर में, बाहर, मैदान में, जंगल में सर्वत्र ही कुत्ते की तरह खदेड़ती फिरती है । इस समय हम लोगों को खड़े होने का स्थान नहीं है । इसी लिए दल के जो कुछ आदमी इस समय बाहर हैं, उनको निरापद रखने के लिए बहुत दूरी पर एक गुप्त स्थान की व्यवस्था की गई । इसी लिए रात को मुझे जाना पड़ेगा ।

असित की ये बातें सुनकर निर्मला काँप उठी । उसने भयभीत होकर कहा—तो क्या तुम अनार्किस्टों के दल में सम्मिलित हो गये हो ? ऐसा सांघातिक काम क्यों कर बैठे ?

असित के मुँह पर हँसी की जरा-सी रेखा उदित हो आई । उसने कहा—गवर्नमेंट ने अवश्य हम लोगों का यही नाम रक्खा है, किन्तु वास्तव में हम लोग यह सब कुछ नहीं हैं । हम लोग केवल देश की स्वाधीनता के अभिलाषी हैं । और भी बहुत से विवेकशील और विद्वान् अन्यान्य उपायों का अवलम्बन करके इसके लिए प्रयत्न कर रहे हैं । हमें भी जो मार्ग श्रेयस्कर प्रतीत हुआ उसी को हमने निर्वाचित कर लिया है । हमारे दल से इतने दिनों तक और

भी तरह तरह के काम होते रहे हैं, परन्तु एक इतने बड़े विद्रोह का आयोजन पहले ही पहल किया जा रहा था; वह सब चौपट ही हो गया। तने दिनों तक कितने लोगों की सम्मिलित शक्ति की सहायता से कितना डरते डरते प्रयत्न करके, बहुत जरा जरा-सा करके, यह विराट् आयोजन पूर्ण ही होने को था कि आरम्भ होने से दो दिन पहले ही एक व्यक्ति के कारण क्षण भर में ही व्यर्थ हो गया। यह व्यर्थता, यह आशा का भंग होना, कितना गुरुतर है !

बात समाप्त किये बिना ही एक लम्बी साँस लेकर अ'सत चुप हो गया। उसके दुःखी और मलिन मुख तथा बातों ने निर्मला के हृदय पर बड़ी चोट पहुँचाई। उसने मस्तक उठाकर कहा—तो तुम लोग अब क्या करोगे ?

"इसका तो अभी कुछ ठीक नहीं है निर्मला। अभी तो यह सब झमेला दूर होने में कुछ समय लगेगा। हम लोग थोड़ा-सा निश्चिन्त होकर बैठने का समय पा जायँ तब सोच कर देखें कि कहाँ तक क्या किया जा सकता है ? रुपयों के सम्बन्ध में जो तुम कह रही थीं; मुझे स्वयं अपने लिए उनकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है, किन्तु देश के काम के लिए बहुत-सा धन अपेक्षित है। स्थिर होकर बैठने पर यदि कोई उपाय सोच सका तो इन रुपयों की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु इतना तो निश्चय है कि हम लोग जिस मार्ग में अवतीर्ण हुए हैं, जीवन के अन्त तक उसी एक मार्ग से चलना पड़ेगा। विदेशी शासन की बदौलत दिन दिन हमारा जिस तरह का अधःपतन होता जा रहा है, दिन ही दिन सभी स्थानों और सभी कार्यों में पद-पद पर देश के ऊपर से लांछन और अवज्ञा का जो स्रोत बहा जा रहा है, उसे देखते हुए मस्तक नीचा करके हम सहन नहीं कर सकते। ऐसी दशा में स्वभावतः यह मार्ग छोड़ने का हमारे लिए कोई और उपाय ही नहीं है। जब तक जीवित रहेंगे तब तक हमारा यही लक्ष्य रहेगा।"

निर्मला ने कहा—देश के सम्बन्ध में मुझे कुछ मालूम ही नहीं है, किन्तु तुम्हारे ही मार्ग का अनुसरण मैं भी करूँगी। रुपये मेरे पास बहुत हैं। मेरे सब रुपये लेकर तुम देश के काम में लगाओ और मुझे भी अपने किसी एक कार्य का भार दो। मैं दूर रहकर तुम्हारे काम में लगी रहूँगी। अन्यथा मेरा ही समय कैसे व्यतीत होगा?

प्रसन्न होकर असित ने कहा—अच्छी बात तो है निर्मला, वह दिन और वह समय फिर आवे! सुधीर से कहे जाता हूँ। वह बीच-बीच में आकर तुम्हारा हाल लेता रहेगा। मेरा भी सारा हाल तुम्हें उसी से मिल जाया करेगा। अब मैं चलता हूँ।

असित चलने को ही था कि निर्मला ने अस्पष्ट और मृदु स्वर में कहा—एक बात और है। अब कितने दिन में फिर मुलाकात होगी।

असित घूमकर खड़ा हो गया। उसने कहा—रोओ न निर्मला। हम लोगों के भाग्य में यही लिखा है। कब तक मुलाकात होगी, यह तो मैं ठीक-ठीक अभी बता नहीं सकता। परन्तु जितनी ही शीघ्रता कर सकूँगा, उतनी शीघ्रता के साथ तुम्हें सूचना दूँगा।

असित बाहर आकर अन्धकार में अदृश्य हो गया।

निर्मला मन-ही-मन दुःखी होकर अचेत भाव से कुर्सी पर पड़ रही।

॥ समाप्त ॥